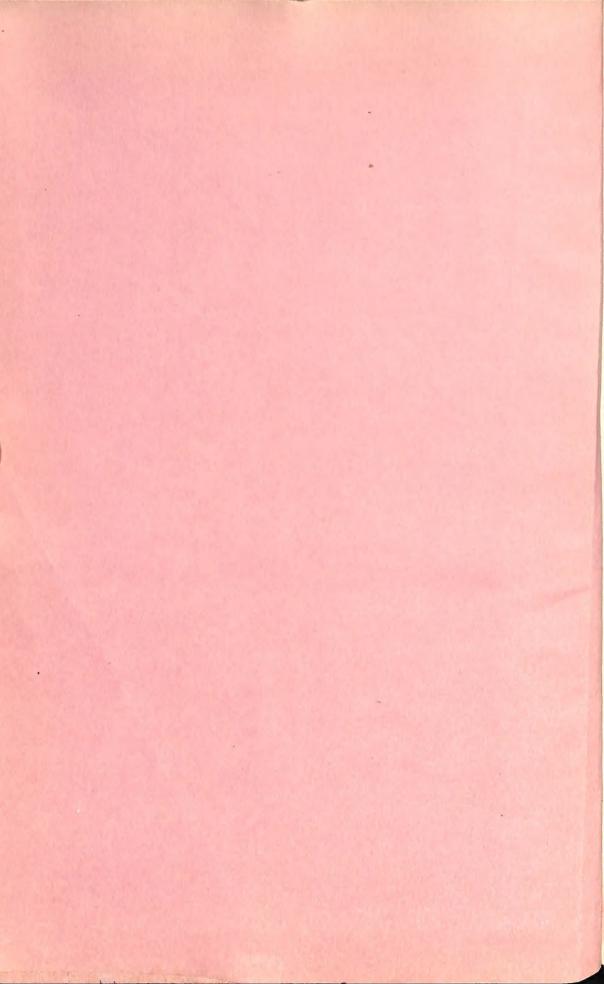
स्त्रिक्ति सन्दर्भः

शोवन्यहरियमीत—अर्गनात्त्रासंग्रहः वाज्यहरूमारिन्यहन्त्रास्त्रास्त्रास्त्रास्



WITH THE PRINT



स्मृति-सन्दर्भः

श्रोमनमहर्षिप्रणीत—धर्मशास्त्रसंग्रहः याज्ञवल्कयादिसप्तदशस्मृत्यात्मकः

ह्रतियो मागः



ताग प्रकाशक ११ एंू. ए., जवाहर नगर, दिल्ली-७

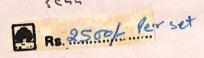
मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के आर्थिक अनुदान से प्रकाशित

नाग प्रकाशक

- 1. 11 A/U. A. जवाहरनगर, दिल्ली-110007
- 2. 8 A/3 U. A. जवाहरनगर, दिल्ली-110007
- 3. जलालपुरमाफी (चुनार-मिर्जापुर) उ० प्र०

ISBN: 81-7081-170-8 (Set)

संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण १६८८



नागशरण सिंह, नाग प्रकाशक, जवाहर नगर, दिल्ली-७ द्वारा प्रकाशित तथा न्यू ज्ञान आफसेट प्रिटर्स, शाहजादा बाग, दिल्ली द्वारा मुद्रित

SMRITI SANDARBHA

COLLECTION OF THE SEVENTEEN

DHARMASHASTRIC TEXTS

BY MAHARSHIES.

Volume III



NAG PUBLISHERS 11-A/U.A. JAWAHAR NAGAR (P. O. BUILDING) DELH-1110007

This Publication has been brought out with the financial assistance from the Govt. of India, Ministry of Human Resource Development.

(If any defect is found in this volume, please return the copy per VPP for postage to the Publisher for free exchange.)

NAG PUBLISHERS

- (i) 11A/ U.A. Jawahar Nagar, Delhi-110007
- (ii) 8A/3 U.A. Jawaharnagar, Delhi-110007
- (iii) Jalalpur Mafi (Chunar-Mirzapur) U. P.

ISBN 81-7081-170-8 (Set)

1988



PRINTED IN INDIA

Published by Nag Sharan Singh for Nag Publishers, 11A/U.A. Jawaharnagar, Delhi-110007 and printed at New Gian Offset Printers, Delhi.

॥ श्रीगणेशोऽञ्यात् ॥

अथ स्मृतिसन्दर्भस्य तृतीयभागस्थ मुद्रितस्मृतीनां नामनिदेशः।

	स्मृतिनामानि		वृष्ठाङ्काः
१५	याज्ञवलक्य स्ट्रतिः	DESCRIPTION OF THE PARTY OF THE	१२३५
१६	कात्यायन स्मृतिः	wanted	१३३५
30	आपस्तम्ब स्वृतिः	Ontraction	१३८७
35	लघुशंब स्वृतिः	Chronostelaco	१४०८
38	शङ्ख स्मृतिः	'established	8888
20	लिखित स्मृतिः	water and other	3877
२१	शङ्खलिखित स्मृतिः	everalment/20	१४६४
२२	वशिष्ठ स्मृतिः	On the control of the	१४६८
२३	औरानस संहिता		\$488
२४	औशनस स्मृतिः		३४४६

२५	बृहस्पति स्मृतिः		१६१०
38	लघुच्यास संहिता	Constitution .	१६१८
20	(वेद) व्यास स्मृतिः		१६३१
२८	देवल स्मृतिः	Ginations	१६प्र
35	प्रजापति स्मृतिः	-	१६६४
30	लघ्वाश्वलायन समृतिः		१६८३
38	बीधायन स्मृतिः		१७६७

-%::%-

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

स्मृतिसन्दर्भ तृतीयभाग की विषय-सूची

याज्ञवल्क्य स्मृति के प्रधान विषय

अध्याय

प्रधानविषय

वृष्टाहु

याज्ञवलक्य स्मृति में तीन अध्याय हैं। प्रथमा-ध्याय में संस्कार आश्रम, प्रह शान्ति आदि, द्वितीयाध्याय में राजधर्म, व्रतधर्म, राजसभा, वादिप्रतिवादि का निर्णय, ज्यवहार के भेद, गृहस्थ धर्म दण्डनीति, दायभाग आदि, तृतीयाध्याय में सृतक, अशोच, पाप, पापों का प्रायश्चित्त, वान-प्रस्थ और संन्यास के धर्मों का वर्णन है।

१ अथाचाराष्यायः - उपोद्घात प्रकरण वर्णनम् १२३५

उस देश का वर्णन जहां वर्णाश्रम धर्म का विधान है (१-२)। धर्म का लक्षण, धर्मशास प्रणेता मनु आदि बीस धर्मशास प्रणेताओं के नाम और धर्म की परिभाषा (३-६)।

१ ब्रह्मचारिप्रकरणवर्णनम्—

१२३६

चार वर्ण जिनके संस्कार गर्भाधान से अन्तिम दाह संस्कार तक होते हैं (१०)। संस्कारों के नाम तथा किस समय में कौनर संस्कार करने चाहिये (११-१४)। शौचाचार, ब्रह्मचारि के नियम, गुरु आचार्य की पूजा, वेदाध्ययन काल, गायत्री मन्त्र जप, नित्यकर्म, उपनयन काल की पराकाष्ट्रा, काल निकलने से ब्रात्यता आ जाती है अर्थात् संस्कार हीन हो जाता है (१६-३६)। ब्रह्मचारी को यज्ञ, हवन, पितरों का तपण और नैष्ठिक ब्रह्मचारी को आजीवन गुरु के पास रहने का विधान (४०-५१)।

१ विवाहप्रकरणवर्णनम् —

8580

ब्रह्मचर्य के बाद विवाह करने की आज्ञा और कन्या तथा वर के रक्षण (५२-५६)। ब्राह्म, आर्ष दैव, धर्म, राक्षस, पेशाच, आसुर और गान्धर्व आठ प्रकार के विवाहों का वर्णन। कन्या के देनेवारे पिता पितामह श्राता और साता न हो तो कन्या का स्वयंवर करने का अधिकार है। जो सनुष्य कन्या के दोषों को छिपा कर विवाह

करे उसको दण्ड का विधान (५७-६१)। कन्या देने का जिनको अधिकार है ऋतुकाल के पहले यदि कन्या को न दे तो माता पिता को भ्रूण हत्या का पाप (६२-६४)। बिना दोष के कन्या के त्यागने में दण्ड और पति को छोड़कर अपनी कामना के लिये दूसरे के पास जाती है उसे पुंछली कहते हैं। क्षेत्रज पुत्र किस विधि से उत्पन्न कराया जाता है इसका वर्णन (६४-६६)। व्यभिचार करनेवाली स्त्री को दण्ड का विधान (७०)। स्त्री को चन्द्रसा गन्धर्वादिको ने पवित्र बताया है (७१)। पति और पत्नी का परस्पर व्यवहार और जिन आचरणों से स्त्री की कीर्ति होती है उनका वर्णन (७२-७८)। भृतुकाल के अनन्तर पुत्रोत्पत्ति का समय और पुरुष को अपने चरित्र की रक्षा एवं खियों का सम्मान करने का धर्म कहा गया है (७६-८२)। स्त्री को सास स्वसुर का अभिवादन तथा पति के परदेश गमन पर रहन सहन के नियम (८३-८४)। स्त्री की रक्षा कुमारी काल में पिता, विवाह होने पर पति और वृद्धावस्था में पुत्र करे स्वतन्त्र न छोड़ दे (८५)। स्त्री को पति त्रिय रहने का माहात्म्य

और सवर्णा की के होने पर उसके साथ ही धर्मकाम करने का निर्देश किया गया है। सवर्णा स्त्री से जो पुत्र उत्पन्न होता है उसी को पुत्र कहते हैं (८६-६०)।

१ वर्णजातिविवेकवर्णनम् -

१२४३

अनुलोस और प्रतिलोम जो सन्तान होती है उनकी संज्ञा (६१-६६)।

१ गृहस्यधर्मप्रकरणवर्णनम्।

१२४४

स्नान, तर्पण, सम्ध्या, अतिथि सत्कार का वर्णन (६७-१०७)। गृहस्थी को अतिथि सत्कार सबसे बड़ा यहा बताया है (१०८-११४)। आचरण, सभ्यता और ब्राह्मण सन्निय आदि जातियों के विशेष कर्म (११४-१२१)।

अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचिमिन्द्रिय निग्रहः। दानं दया दमः शान्ति सर्वेषां धर्मसाधनम्।।

किसी की हिंसा न करना, सत्य कहना, किसी का द्रध्य न चुराना, पवित्र रहना, अपनी इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखना, दान देना, सब जीवों पर दया करना, मन को दसन करना, क्षमा करना ये मनुष्य मात्र के धर्म हैं (१२२)। यज्ञ करने का विधान (१२३-१३०)।

१ स्नातकधर्मप्रकरणवर्णनम्।

१२४७

बहाचारी के नित्य नैमित्तिक कभी का वर्णन किया गया है (१३१-१४२)। उपाकम और उत्सा का समय और विधान तथा ३० अनध्याय के काल बताये गये हैं (१४३-१५१)। ब्रह्मचारी और गृहस्थी के विशेष धम (१५२-१५५)। गृहस्थियों को जिन मनुष्यों से मिलजुल कर रहना चाहिये जैसे वैद्य इत्यादि (१५६-१५८)। सदाचार और जिनका अन्न नहीं खाना चाहिये उनका निर्देश (१५६-१६६)।

१ अक्षामक्ष्यप्रकर्णवर्णनम्।

१२५०

निषिद्ध भोजन की गणना (१६६-१७६)। मांस के सम्बन्ध में विचार और मांस न खाने का माहात्म्य (१७७-१८१)।

१ द्रव्यशुद्धिप्रकरणवर्णनस्।

१२५२

यज्ञ पात्रादि की शुद्धि। किस चीज से किस की शुद्धि होती है (१८२-१८६)। शुद्धि का वर्णन, जल की शुद्धि, स्थान की शुद्धि, पक्के मकान की शुद्धि आदि (१८७-१६८)।

१ दानप्रकरणवर्णनम्।

१२५३

ब्राह्मण की प्रशंसा और पात्र का लक्षण बताया है (१६६-२००)। गौ, पृथिवी, हिरण्य आदि का दान सत्पात्र को देनों में दोष (२०१-२०२)। गोदान का फल, गोदान की विधि और गोदान का माहात्म्य (२०३-२०८)। पृथिवी, दीपक, सवारी, धान्य, पादुका, छत्र शौर धूप आदि दान का माहात्म्य। जो ब्राह्मण दान लेने में समर्थ है वह न लेवे तो उसे बड़ा पुण्य होता है (२०६-२१२)। कुशा शाक, दूध, दही और पुष्प यह कोई अपने को अर्पण करें तो वापस नहीं करना चाहिये (२१३-२१४)।

श्राद्धप्रकरणवर्णनम् ।

१२५५

पुण्यकाल का वर्णन, जैसे-अमावस्या व्यतिपात

प्रधानविषय

१ तथा चन्द्र सूर्य प्रहण इनमें श्राद्ध करने का माहात्म्य तथा कीन ब्राह्मण श्राद्ध में पूजा के योग्य हैं और कौन निन्दित है इसका विवरण (२१४-२९७)। श्राद्ध की विधि तथा श्राद्ध की सामग्री श्राद्ध के पहले िएन ब्राह्मणों को निमन्त्रण देना, किन-किन मन्त्रों से पितरों का पूजन तथा किन-मन्त्रों से वैश्वदेव का पूजन बताया गया है (२२८-२४०। एकोदिष्ट श्राद्ध, तीर्थ श्राद्ध और काम्य श्राद्ध का विधान तथा पितरों को श्राद्ध से तृप्त करने में मनुद्यों को आयु, प्रजा, धन, विद्या, स्वर्ग और मोक्ष प्राप्त होता है (२५१-२७०)।

१ विनायकादिकल्पप्रकरणवर्णनम्।

१२६०

गणनायक की शान्ति और जिस पर उनका दोष हो उसके छक्षण। गणनायक के रुष्ट होने पर मनुष्य विक्षिप्त हो जाता है। यदि कन्या पर रुष्ट होता है तो उसका विवाह नहीं होता और यदि होता है तो सन्तान नहीं होती है (२७१-२७६)। विनायक की शान्ति तथा अभिषेक और हवन एवं शान्ति के अवसान में गौरी का पूजन (२७७-२६२)।

१ ग्रहशान्तिशकरणवर्णनम्।

१२६२

नवग्रह की शान्ति, प्रहों के यन्त्र, उनका दान और जप बताया गया है और अन्त में कहा गया है—

ग्रहाभीना नरेन्द्राणामुच्छ्याः पतनानि च । भवाभावौ च जगतस्तहमात् प्रस्वतमाः स्मृताः ॥

अर्थात् राजाओं की उन्नति तथा अवनति, संसार की भावना और अभावना सब प्रहचकों पर निर्भर रहता है। अतः प्रह शान्ति करनी चाहिये प्रह किस धातु का बनाना चाहिये यह भी बताया गया है (२६३-३०८)।

१ राजधर्म प्रकरण वर्णनम्।

१२६३

शासक राजा के लक्षण और उसकी योग्यता (३०६-३११)। राजा को कैसे मन्त्री और पुरोहितों ज्योतिषियों को रखना, उनके लक्षण। जो दण्डनीति और अथर्वविद्या में कुशल हो ऐसे मन्त्री और पुरोहित को रखना चाहिये। राजा का निवास स्थान नगर से दूर जंगल में हो और दुर्ग रचना किस प्रकार करनी चाहिये। अन्त श में प्रजा को अभय देना यह राजा का परम धर्म बतलाया गया है (३०६-३२३)। राजा की दिन-चर्या का वर्णन और प्रजा का पालन, दुष्ट राज-कमचारियों से तथा उत्कोच जीवियों का (रिश्वत छेनेवालों का) सब धन छीनकर राज्य से निकाल दे और उसके स्थान पर श्रेष्ठ जीवियों को सम्मान से रक्खे। जैसे—

अन्यायेन नृपो राष्ट्रात् स्त्रकोषं योऽभिवद्ध येत् । सोऽचिराद्विगतश्रीको नाशमेति सबान्धवः ॥

अर्थात् जो राजा अन्याय से राष्ट्र का रुपया अपने स्वजाने में जमा करता है वह राजा बहुत जल्दी सपरिवार नष्ट हो जाता है। जब राजा के हाथ में कोई नया देश आवे तब उसी देश का आचार, व्यवहार, कुछ स्थिति, मर्यादा जो वहां पहले से है उसी पर चलना चाहिये उसमें उलट-फेर नहीं करना चाहिये (३२४-३४३)। साम, दाम, दण्ड, भेद कहां पर प्रयोग करने चाहिये उनका वर्णन। दूसरे के राष्ट्र में कब घुसना उसकी परिस्थिति का वर्णन (३४४-३४८)। राजधर्म में यह बताया है कि पुरुषार्थ और भाग्य

२

१ दोनों को तराजू में तोलकर रक्खे एक से काम नहीं चलता (३४६-३५१)। राजा को मित्र बनाना सब से बड़ा लाभ है (३५२-३५३)। दण्ड का विधान—जो अपने स्थान से चलित हो उसको दण्ड देने का विधान। बाग् दण्ड, धनदण्ड, वधदण्ड और धिक्दण्ड ये चार प्रकार के दण्ड हैं। अपराध देश काल को देखकर इन दण्डों की व्यवस्था करे (३५४-३६८)।

उयवहाराध्याय:

तत्रादौ—सामान्यन्याय प्रकरणम्--- १२६६

राजा को व्यवहार देखने की योग्यता और अपने साथ सभासदों का नियोग तथा उनकी योग्यता। व्यवहार की परिभाषा—

रुमृत्याचार व्यपेतेन मार्गेणाधर्षितः परैः। आवेदयति चेद्राज्ञे व्यवहारपदं हि तत्।।

अर्थात् आचार और नियम विरुद्ध जो किसी को तंग करे उसपर राजा के पास जो आवेदन किया जाता है उसको व्यवहार कहते हैं (१-४)।

व्यवहार के चार बाद बतलाये हैं। जैसे-आवेद्न (द्राखास्त), प्रत्यर्थी के सामने लेख, सम्पूर्ण कार्य का वर्णन, प्रत्यर्थी के उत्तर, इंकरार लिखना (भूठा होने पर दण्ड होगा) (४-८)। जिस पर एक अभियोग हुआ है उसका फैसला नहीं होने तक दूसरा अभियोग नहीं लगाया जाता है। चौरी सारपीट का अभियोग इंसी समय लगाया जाता है। दोनों से जमानत लेनी चाहिये। भूठे मुकद्मे में दुगुना दण्ड लगाना चाहिये (६-१२)। मूठे बनावटी गवाह की पहचान-उसके पसीना आने लगता है तथा दृष्टि स्थिर नहीं रहती है (१३-१६)। दोनों पक्ष के साक्षी होने पर पहले वादी के साक्षी लेने चाहिये। जब बादी का पक्ष गिर जाय तब प्रतिवादी अपने पक्ष को साक्षी से पुष्ट करे इलादि। यदि भूठा मुकदमा हो तो उसे प्रत्यक्ष प्रमाणों से शुद्ध कर लेवे। जहां दो स्पृतियों में विरोध हो वहां व्यवहार से निर्णय करना। अर्थशास्त्र और धर्मशास्त्र के मिलने में विरोध आ जाय वहां धमेशास्त्र की ऊँचा स्थान देना चाहिये (१६-२०)। प्रमाण तीन प्रकार के होते

हैं — लेख (लिखित), भोग (कब्जा), साक्षी (गवाह) इन तीन प्रमाणों के न होने पर दिव्य (ईश्वर को पुकार कर) शपथ करते हैं (२१-२२)। बीस वर्ष तक भूमि किसी के पास रह जाय या दस वर्ष तक धन किसी के पास रह जाय और उसका मालिक कुछ न कहे तो व्यवहार का समय चला जाता है, किन्तु यह नियम धरोहर, सीमा, जड़ और वालक के धन पर लागू नहीं होगा (२३-२५)। आगम (अुक्ति) भोग (कन्जा) के सम्बन्ध में निर्णय (२६-३०)। राजा इनके निर्णय के लिये एक सभा बनावे और बल से एवं किसी उपाधि से जो व्यवहार किया गया है उसकी वापस कर देवे (३१-३२)। निधि (गड़ा हुआ धन) का निर्णय और उसमें से छठा हिस्सा राजा का एवं जो निधि राजा को नहीं बताये उसकी दण्ड (३३-३७)।

ऋणादान अकरणम्—

१२७३

भाग (कर्जा) की वृद्धि का दर और किसको किस का शरुण देना और नहीं देना इसका निर्णय— की केवल पति के साथ जो शरुण किया है उसको

- २ देगी और बाकी को नहीं। अनुण दुगुना तक हो सकता है, पशु की सन्तिति तथा धान तिगुना इत्यादि का वर्णन है। जब चुकाने पर धनी न लेवे तो उस तिथि से वृद्धि नहीं होगी (३८-६४)।
- २ उपनिधिप्रकरणवर्णनम्— १२७५ निक्षेप (धरोहर) वर्णन (६६-६८)।
- २ साक्षीप्रकरणविधिवर्णनस्— १२७६

साक्षी का प्रकरण—साक्षी कीन होना चाहिये और साक्षी के लक्षण—जिसको दोनों पक्ष स्वीकार करे वह एक भी साक्षी हो सकता है। साक्षी जब न्यायालय में जाय उसे न्यायाधीश यह सुनावे—

ये पातककृतांलोका महापातिकनान्तथा।
अग्निदानाश्च ये लोका ये च स्त्रीबालघातिनाम्।
तान् सर्वान् समचाप्नोति यः साक्ष्यमनृतं बदेत्।।
अर्थात् अतीव पापियों को जो नरक में जाना
पड़ता है, महापापियों को जो नरक भोगना
पड़ता है, आग लगानेवाले को और स्त्री तथा

र बालक मारनेवाले को जो नरक भोगना पड़ता है वह दोष उसे होगा जो न्यायालय में मठी साक्षो देगा। कूट (जाली) साक्षियों का वर्णन, कूट साक्षी को आठ गुना दण्ड होना चाहिये (६६-८५)।

२ लिखित प्रकरणम्—

१२७८

हेख में गवाह होना चाहिये तथा सम्बन्, महीना और दिन भी होना चाहिये, छेख की समाप्ति में ऋण छेनेवाला अपना हस्ताक्षर कर दे एवं अपना तथा अपने पिता का नाम लिख दे। छेख बिना साक्षी के भी हो सकता है जो अपने हाथ से लिखा हुआ हो किन्तु वह बलपूर्वक लिखाया हुआ न हो। रुपया जितना देता जाय उस कागज के पीछे लिखता जाय। धन चुक जाने पर उस कागज को फाड़ देवे या साक्षी के सामने ऋणी को वापस दे दे (८६-६६)।

२ दिव्य प्रकरणम्----

3059

जब कोई साक्षी आदि प्रमाण न मिले तव दिन्य कराया जाता है। दिन्य इसने प्रकार के होते हैं— र श्—तुला, र — अग्नि, ३ — जल, ४ — विष, ६ — कोश। ये दिव्य बड़े मामलों में किये जाते हैं छोटे व्यव-हार में नहीं। १ तुला — तराजू बनाकर तोला जाता है जो तोलने पर ऊपर या नीचे जाता है उसकी विधि पुस्तक में लिखी है। २ अग्नि — लोहे के गोले को गरम कर दोनों हाथों में लेकर चलना होता है जो शुद्ध हो उसके हाथ नहीं जलते हैं। ३ जल — नाभी मात्र गहरे जल में तीर डालकर धुलाना पड़ता है। ४ विष — शुद्ध को खिलाने पर उसे जहर नहीं लगता। ६ कोश — किसी देवता का जल पिलाने से उसको अगर चौदह दिनों तक अनिष्ट नहीं हुआ तो शुद्ध समका जाता है (६७-११६)।

२ दायविभाग प्रकरणम्

१२८१

पिता को अपनी इच्छा से विभाजन करने का अधिकार है (११६-११८)। पिता के बाद आई अपने आप विभाग किस प्रकार से करे और जो धन अविभाज्य है उसका वर्णन (११६-१२१)। भाईयों का बटवारा और भाईयों के छड़कों का विभाग उसके पिता के नाम से होगा। जिन

भाईयों का संस्कार नहीं हुआ उनका पैतृक धन से संस्कार और निर्वाह—बहनों को अपने हिस्से से चौथाई देकर विवाह करे (१२२-१२७)। जाति विभाग से बटवारा, अयोग से जो लड़का पैदा किया गया उसका भार (१२८-१३०)। बारह प्रकार के पुत्रों का वर्णन (१३१-१३५)। दासी पुत्र का हक और अपुत्र के धन विभाग का नियम (१३६-१३६)। वानप्रसा, संन्यासी और आचार्य के धन का विभाग (१४०)। समश्रृष्टि (मिले हुए) भाईयों का विभाग और उन लड़कों का वर्णन जिनको पिता की जायदाद में भाग नहीं मिलता है। जिनको भाग न मिला उनके लडकों को मिल सकता हैं (१४१-१४३)। उनके लडकों और खी को मिल सकता है (१४४-१४४)। श्री धन की परिभाषा तथा श्री धन को कोई नहीं हे सकता किन्तु आपत्ति काल में और धर्म कार्य में तथा विमारी में स्त्री का पति स्त्री के धन को हे सकता है (१४६-१५१)। जो पैतृक धन को . ब्रिपा दे उनका निर्णय साक्षी छेख और भाई विरादरी में पूछकर करना चाहिये (१४२)।

२ सीमाविवादप्रकरणवर्णनम्

१२८५

सीमा विभाग— गाँव की, खेत की सीमा के विभाग में वन में रहनेवाले ग्वाले, खेती करनेवाले इनसे सीमा के सम्बन्ध में पूछना चाहिये। पुल, खाई या खम्मे से सीमा का चिह्न बतलाना चाहिये। सीमा के सम्बन्ध में मूठ बोलनेवाले को कड़े दण्ड का विधान कहा है। दूसरे की जमीन पर कुंआ तालाब बनाना उसमें जिसकी भूमि है उसी का अधिकार रहेगा या राजा का (१५३-१६१)।

२ स्वामिपालविवादप्रकरणवर्णनम्-

१२८६

दूसरे के खेत में भेंस, गाय, बकरी चराने में जितना वे हानि करे उसका दूना दिलाना चाहिये बंजर भूमि पर भी गधा, ऊँट आदि को चराने पर वहां जितना घास पेदा हो सकता है उतना उनके स्वामियों से हानि रूप में लिया जाना चाहिये। ग्वालों को फटकारना और उनके स्वामियों को प्रायः दण्ड देना। सड़क गांव की बंजर जगहों में चराने में कोई दोष नहीं है। २ साँड वगैरह को छोड़ देना चाहिये। गायों को चरानेवाला ग्वाला जिसके घर से जितनी गाय ले जाय उसको उतनी ही सायंकाल लौटा देवे। जिस ग्वाले को वेतन दिया जाता है अगर अपनी गलनी से किसी पशु को नष्ट करवा दे तो मूल्य उससे लिया जाय। प्रत्येक गाँव में गोचर भूमि रक्ली जाय (१६२-१७०)।

२ अस्वामिविक्रयप्रकरणवर्णनम्----

१२८७

खरीद और अस्वामी विकय — लेनेवाले को चीज का दोष न बतला कर जो बेचा जाय उसे चोरी की सजा होगी। किसी के धन को दूसरा आदमी बेच लेवे तो धनवाले को मिल जाय और खरीददार अपना मूल्य ले जावे। खोया हुआ या गिरा हुआ द्रव्य किसी को मिल जाय तो उस वस्तु को पुलिस में जमा न देने पर पानेवाला दोष का भागी होता है। एक मास तक कोई न लेवे तो वह धन राजा का हो जाता है (१७१-१७७)।

२ दत्ताप्रदानिकप्रकरणवर्णनम् १२८८ अपने घर में जिस वस्तु को देने से विरोध न हो २ तथा श्री और बच्चों को छोड़कर गृहपित सब दान में दे सकता है। सन्तान होने पर सब दान नहीं कर सकता है तथा दी हुई वस्तु फिर दान नहीं हो सकती। जो दिया जाय वह राजकीय नियम से प्रकाशित कर दिया जाय (१७८-१७६)।

२ क्रीतानुशयप्रकरणवर्णनम्—

१२८८

क्रीतानुशय अर्थात् मूल्य होने पर वापस किया जा सकता है। दस दिन तक बीज (अन्न) हौटाया जा सकता है। होहे की चीजें एक दिन, बेह होने पर पांच दिन, रत्न की परीक्षा आठ दिन तक, गाय तथा अन्य जीव जन्तु तीन दिन तक, सोना आग में तपाने पर घटता नहीं है और चाँदी दो पह कम हो जायगी इस प्रकार खरीदी हुई वस्तु तीन दिन तक वापस की जा सकती है (१८०-१८४)।

अभ्युपेत्याग्रश्रूषाप्रकरणवर्णनम्---

3258

संविद्व्यतिक्रमप्रकरणवर्णनम्-

3258

संवित् व्यतिक्रम (अपने निश्चय को तोड़ना) जैसे

२ बल पूर्वक किसी को पकड़कर गुलाम बना लिया हो।

निजधर्माविरोधेन यस्तु सामयिको भवेत् । सोऽपि यत्नेन संरक्ष्यो धर्मी राजकृतश्च यः ॥

अपने धमं से मिला हुआ जो समय का धमं और राजा के धम को भी पालन करना चाहिये। जो समुदाय का धन लेवे और जो अपनी प्रतिज्ञा को तोड़ देवे उसका सब कुछ छीनकर देश से निकाल देवे (१८४-१६४)।

२ वेतनादानप्रकरणवर्णनम्-

१२६०

जो पहले वेतन ले लेवे और समय पर उस काम को छोड़ देवे उससे दूना धन लेना चाहिये। जबतक काम करे उसका वेतन चुका देना चाहिये (१६६-२०१)।

२ द्युतसमाह्यप्रकरणवर्णनम्—

१२६१

चोरों को पहचानने के लिये जूआ किसी स्थान पर करवाया जाता है और उसमें जीतनेवाले से राजा के लिये दस रुपया ले लेना चाहिये (२०२-२०६)।

२ वाक्पारुष्यप्रकरणवर्णनम्----

१२६१

वाक् पारुष्य (अपशब्द कहने का द्ण्ड) जैसे कोई किसी के मां बहन को गाली दे उसे पचीस पल दण्ड देना चाहिये। इसी प्रकार पातक तथा उपपातक को दण्ड के उपयोग है (२०७-२१४)।

२ दण्डपारुष्यप्रकरणवणनम्----

१२६२

किसी पर लाठी चलाना या किसी चीज से पीड़ा पहुंचाना इसमें सौ दण्ड, किन्तु रुधिर निकलने पर दुगुना दण्ड, हाथ पर टट जाय तो मध्यम साहस का दण्ड, किसी के मकान पर दारुण चीज फेंकने पर सोलह पल का दण्ड, पशुओं के अंग-चलेद करने पर दो पल दण्ड, पशु की इन्द्रिय काटने पर अथवा मृत्यु होने पर द्विगुण दण्ड और पेड़ों की टहनियों को काटने पर बीस पल का दण्ड देना चाहिये (२१५-२३२)।

२ साहसप्रकरणवर्णनम्—

१२६४

विक्रोयासम्प्रदानप्रकरणवर्णनम्-

१२६७

"सामान्य द्रव्य प्रसभ हरणान् साहसं स्पृतम्" वलपूर्वक किसी की वस्तु को छीनना इसको

साइस कहते हैं। जो जितने भूल्य की वस्तु छीन कर हे जावे उसको उससे दूना दण्ड दिलवाना चाहिये तथा छिपाने पर चार गुना दण्ड। स्वच्छन्दता से किसी विधवा स्त्री के साथ गमन करनेवाला या बिना कारण किसी को गाली देने वाला और मूठी शपथ करनेवाला तथा जिस काम के योग्य न हो उसको करने को तैयार हो जाना एवं दासी के गर्भ को नष्ट कर देना, पशु के लिङ्ग को काट देना, पिता पुत्र गुरु और स्त्री को छोड़ने वाले को सौ पल दण्ड का विधान बताया है। धोबी दूसरे के कपड़ों को अपने पास रक्खे तो उसको तीन पल दण्ड। पिता और पुत्र की लड़ाई में जो गवाही देवे उसे तीन पल दण्ड। तराजू और बाटों को जो छल कपट से बनाकर व्यवहार करे तो उसे पूरा दण्ड। जो कपट को सत्य और सत्य को कपट कहे उसे भी साहस प्रकरण का दण्ड। जो वैद्य मूठी द्वा बनावे उसको भी दण्ड। जो कर्मचारी अपराधी को छोड़ देवे उसको दण्ड। जो मृल्य लेकर वस्तु को नहीं देता है उसको भी दण्ड (२३३-२६१)।

२ सम्भ्यसमुत्थानप्रकरणवर्णनम्—

१२६७

कई आदमी मिलकर जो व्यापार करते हैं उनको उस व्यापार में लाभ और हानि बराबर उठानी पड़ेगी। या उन लोगों ने पहले जो प्रतिज्ञा कर ली हो (२६२-२६८)।

२ स्तेयप्रकरणवर्णनम् —

१२६८

चोर को पकड़ने वाले को पहले उसके पैरों के चिह्न से या पहले जो चोरो में पकड़े गये हों जुआरी वैश्यागामी तथा शराबी और बात में अटपट करे तो उनको पकड़ लेना चाहिये। चोरी में पूछने पर जो सफाई नहीं देवे उसे चोरी का दण्ड दिया जाता है। चोर को भिन्न भिन्न प्रकार से ताड़ना देकर चोरी पूछ लेनी चाहिये। इस प्रकरण में आया है—

विषाग्निदां पतिगुरुनिजापत्यप्रमापिणीम् । विकर्णकरनासोष्ठीं कृत्वा गोभिः प्रमापयेत् ॥

विष देनेवाली, अग्नि लगानेवाली, पति, गुरु और अपने बच्चों को मारनेवाली स्त्री के नाक कान काटकर जल में बहा देना चाहिये।

र क्षेत्रवेषमयनग्रामविवीतखलदाहकाः। राजपत्न्यभिगामी च दग्धन्यास्तु कटाग्निना।।

खेत, मकान और ग्राम इनको जलानेवाले को और राजा की ख्री के साथ गमन करनेवाले को आग में जला देना चाहिये (२६६-२८५)।

२ स्त्रीसंग्रहणप्रकरणवर्णनम्-

१३००

प्रकीर्णकप्रकरणवर्णनम्-

१३०१

किसी की के केशां को पकड़ने या उसकी करधनी या स्तन मरदन करना या अनुचित हँसी करना ये चिह्न व्यभिचार के समभे जायेंगे। की के ना कहने पर जबरद्स्ती हाथ लगावे तो सौ पल और पुरुष के ना करने पर दुगुना दण्ड। किसी अलंकृत कन्या को हरण करे उसको कड़ा दण्ड यदि लड़की की इच्ला हो तो दण्ड नहीं होता है। पशु के साथ व्यभिचार करनेवाले को सौ पल दण्ड। नौकरानी के साथ व्यभिचार करनेवाले को सौ पल को दण्ड। जो वेश्या पैसा लेकर बाद में रोके तो उसे दूना दण्ड। किसी लड़केसे या किसी साधुनी के साथ अप्राकृतिक मैथुन करनेवाले को

प्रधानविषय

र चौबीस पल दण्ड। राजा की आज्ञा में रहकर जो कम या विशेष लिखे उसको दण्ड। छल से खोटे सोने को बेचनेवाले तथा मांस के बेचनेवाले को अङ्ग हीन करना और उत्तम दण्ड देना चाहिये जो श्री अपने जार को चोर कहकर भंगा देवे उसे पांच सौ पल दण्ड देना चाहिये। राजा के अनिष्ट कहनेवाले को या राजा के भेद को खोलने बाले की जिह्ना काट लेनी चाहिये (२८६-३१०)।

३ आशौचप्रकरणवर्णनम् —

१३०३

दो वर्ष से कम उन्न के बन्ने को भूमि में गाड़ देना चाहिये। बन्ने के मरने पर सातवें या दसवें दिन दूध देना चाहिये (१-६)।

इसमें संसार की असारता बताई है। किसी के मरने पर ऐसा नहीं चाहिये यदि उसी दिन घर में दूसरे का जन्म हो जाय तो पहले के सूतक से वह शुद्ध हो जायगा। राजाओं को और यह में बठे हुए भृषियों को सूतक नहीं लगता है। इस प्रकार सृतक का वर्णन किया है (७-३४)।

३ आपद्धर्मप्रकरणवर्णनम्—

१३०७

आपित में ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य कर्म से निर्वाह कर सकता है। परन्तु मांस तिल आदि आपित में भी न बेचे।

लाक्षालवणमांसानि पतनीयानि विक्रये। पयोदिधि च भद्यञ्च हीनवर्णकराणि च।।

अर्थात् लाख, लवण और मांस बेचने से पतित हो जाता है। कृषि, शिल्प, नौकरी, चक्रवृद्धि, इक्का हाँकना और भीख मांगना इनसे आपित काल में जीवन निर्वाह कर सकता है (३४-४४)।

३ वानप्रस्थधर्मप्रकरणवर्णनम् ।

१३०८

वानप्रस्थ धर्म का वर्णन आया है। वानप्रस्थ स्त्री को अपने साथ ले जावे या अपनी सन्तान के पास छोड़ देवे। वानप्रस्थ इन्द्रियों को दमन करनेवाला, प्रतिग्रह न लेनेवाला, स्वाध्याय करने वाला होना चाहिये। चान्द्रायण आदि से समय ह्यतीत करे, वर्षा में ठण्डी जगह रहे, हेमन्त में गीले कपड़ों से रहे अर्थान् जितनी शक्ति हो उसी हिसाब से वन में तपस्या करता रहे (४४-४४)।

३ यतिधर्मप्रकरणवर्णनम्----

308

यित सम्पूर्ण प्राणीमात्र का हित करनेवाला, शान्त और दण्ड धारण करने वाला हो। यित के सब पात्र बाँस और मिट्टी के होते हैं इनकी शुद्धि जल से हो जाती है। यित को राग द्वेष का लाग कर अपने आपकी शुद्धि जिससे आत्मज्ञान का विकाश हो ऐसा करना चाहिये।

सत्यमस्तेयमकोधो हीः शौचं धीध तिर्दमः। संयतेन्द्रियता विद्या धर्मः सार्व उदाहृतः॥

सत्य, अस्तेय, अक्रोध, पिवत्रादि में सब धर्म बतलाये हैं (४६-६६)। अध्यात्म ज्ञान का प्रकरण आया है। जैसे तप्त लौह पिण्ड से चिनगारी निकलती है उसी प्रकार उस प्रकाश पुंज आत्मा से यह समष्टि व्यष्टि संसार रूपी चिनगारी निकलती है। आत्मा अजर अमर है शरीर में आने से इसे जन्म लेना कहते हैं। सूर्य की तपन से वृष्टि फिर औषधि तथा अन्न होकर शुक्र हो जाता है। स्त्री पुरुष के संयोग से यह पञ्चधातु मय शरीर पैदा होता है। एक एक तत्त्व से

३ शरीर की एक एक चीज का बनना लिखा है। चौथे महीने में पिण्डाकार बनता है तथा पाँचवें में अंग बनने लग जाते हैं। छठे महीने में बल, नख, रोम और सातवें आठवें में चमड़ा, मांस बनकर स्मृति पैदा हो जाती है। इस प्रकार जन्म मरण के दुःख को दिखाया गया है। मनुष्य शरीर में कितनी नस कितनी धमनी तथा मर्म-स्थान हैं इन सबका वर्णन कर शरीर को अस्थिर अनित्य नाशवान् बतला कर मोक्ष मार्ग में लगने का उपदेश किया गया है। योगशाख, उप-निषदों के पठन एवं वीणा वादन से मन की एकाप्रता बताई है।

वीणावादनतत्वज्ञः श्रुतिजातिविशारदः। तत्वज्ञश्राप्रयासेन मोक्षमार्गं नियच्छति॥

वीणा वादन के तत्त्व को जाननेवाला और ताल के ज्ञानवाला मोक्ष मार्ग पा लेता है। इस प्रकार मोक्ष मार्ग के साधन और संसार के अनित्य सुखों के वैराग्य का वर्णन तथा कुण्डलिनी योग, ध्यान, धारणा और सत्य की उपासना एवं वेद

३ का अभ्यास बताकर जीवन यात्रा का श्रेय नीचे लिखे श्लोक में स्पष्ट किया है—

न्यायागतधनस्तत्वज्ञाननिष्ठोऽतिथिप्रियः।

श्राद्रकृत् सत्यवादी च गृहस्थोऽपि हि मुच्यते।।

न्याय से आये हुए धन से जीवन विताने वाला, तत्त्व ज्ञान में जिसको निष्ठा हो, अतिथि सत्कार तथा श्राद्ध करनेवाला, सत्यवादी गृहस्थी भी इस जन्म मरण से छूट जाता है (६७-२०५)।

३ प्रायश्चित्तप्रकरणवर्णनम्—

१३२३

पापी महापापी कर्म के अनुसार नरक भोगने के अनन्तर जब मनुष्य योनि में आते हैं तब ब्रह्महत्यारा जन्म से ही क्षय रोगी होता है। परकी को हरनेवाला, ब्राह्मण के धन को हरने वाला ब्रह्मराक्षस होता है। जो पाप को सममने पर भी प्रायिश्वत्त नहीं करते हैं वे रौरव नरक में जाते हैं। इस प्रकार महानरकों का वर्णन आया है। महा पापी चार हैं—ब्रह्म हत्यारा, सोने को चुराने वाला, गुरु की स्त्री से गमन करने वाला और

मद्य पीनेवाला तथा जो इनके साथ रहता है वह भी महापातकी होता है। इसके बाद आगे के श्लोकों में उपपातकों की गणना की है। महा-पातकी को आमरणान्त प्रायश्चित्त बतलाया है। अन्य पापों की शुद्धि के लिये चान्द्रायण आदि व्रत वतलाये हैं। गर्भपात और भर्तृ हिंसा स्त्री के लिये महापाप है। शरणागत को मारने वाले की वचों को मारनेवाले, स्त्री के हिंसक और कृतन्त की कभी शुद्धि नहीं होती है। सान्तपन कुच्छ, पर्णकृच्छू, पाद्कुच्छू, तप्तकुच्छू, अतिकुच्छू, कुच्छातिकुच्छ्, तुला पुरुष, चान्द्रायण व्रत और कुच्छ्चान्द्रायणादि व्रत बतलाये गये हैं। ऋषियों ने याज्ञवल्क्य से धर्मों को सुनकर यह कहा कि जो इसको धारण करेगा वह इस लोक में यश का प्राप्त कर अन्त में स्वर्गलोक को प्राप्त होगा। जो जिस कामना से धारण करेगा .उसकी कामनाय पूर्ण सफल होंगी। ब्राह्मण इसको जानने से सत्पात्र, क्षत्रिय विजयी, वैश्य धनधान्य सम्पन्न, विद्यार्थी विद्यावान् होता है। इसको जानने और मनन करने से अश्वमेध यज्ञ के फल, को प्राप्त होता है (२०६-२३४)।

कात्यायन स्मृति के प्रधान विषय

१ यज्ञोपवीतकर्मप्रकरणवर्णनम्—

१३३५

यज्ञोपवीत बनाने का माप और घारण विधि (१-४)। मातृका, वसुधारा और नान्दी श्राद्ध का विधान (४-१८)।

२ नित्यनैमित्तिक(श्राद्ध)कर्मवर्णनम्-

१३३७

नित्य नैमित्तिक श्राद्ध विधि (१-१४)।

३ त्रिविधक्रियावर्णनम्—

१३३६

श्राद्धादि सम्पूर्ण कार्य अपनी अपनी शाखा के अनुसार करने का विधान (१-१४)।

४ श्राह्मप्रकरणवर्णनम्—

१३४०

सम्पूर्ण अध्याय में श्राद्ध की विधि वताई हैं (१-१२)।

थ आद्भाकरणवर्णनम्—

१३४१

वृद्धि श्राद्ध आदि अन्य पर्वो पर श्राद्ध का वर्णन (१-११)।

प्रधाङ्क

६ अनेककर्मवर्णनम्---

१३४३

आधान काल और तत्सम्बन्धि अग्निहोत्र तथा परिवेक्ति का वर्णन (१-१५)।

७ श्रमीगर्भाद्यनेकप्रकरणवर्णनम्----

१३४४

शमी गर्भ काष्ठ पीपल आदि का वर्णन। अमि मन्थन की प्रक्रिया, अरणी निर्माण, किस प्रकार काष्ठ की अरणी बनानी, अरणी मन्थन से निकाली हुई अग्नि ही यज्ञ में प्रशस्त होगी (१-१४)।

८ सयज्ञस्र वसिधलक्षणवर्णनम्—

१३४६

अरणी मन्थन विधान । दर्श पौर्णमास्य यज्ञ में समिधा का मान तथा समिधा हरण विधि (१-२४)।

६ सन्ध्याकालाद्युद्दिश्यकर्मवर्णनम्—

१३४८

सायंकाल का निर्णय एवं सार्वकालीन अग्निहोत्र का समय तथा विधि। प्रज्वलित अग्नि में ही आहुति देना, यदि प्रज्वलित नहीं, हो तो पंखे (व्यजन) से हवा देना मुख से नहीं (१-१५)।

१० प्रातःकालिकस्नानादिक्रियावर्णनम्-

१८४०

प्रातःकाल का स्नान, नदी की परिभाषा, नदी कितनी वेगवती धारा को कहते हैं। दन्तधावन, मुख और नेत्र प्रक्षालन की विधि। कूप स्नान भी गंगा स्नान के समान प्रहण आदि पर्व में होता है (१-१४)।

११ सन्ध्योपासनविधिवर्णनम्—

१३५१

सन्ध्योपासन का निर्देश—जबतक सन्ध्या न करे तबतक अन्य किसी देव एवं पितृ कार्य को करने का अधिकार नहीं है। सन्ध्या विधि एवं सूर्योपस्थान कर्म (१-१७)।

१२ तर्पणविधिवर्णनम्—

१३५३

देव, ऋषि तथा पितृ तर्पण की विधि बताई गई हैं (१-६)।

१३ पश्चमहायज्ञविधिवर्णनम्----

१३४४

पञ्च महायज्ञ—देवयज्ञ, भूतयज्ञ, ब्रह्मयज्ञ, पितृ-यज्ञ और मनुष्ययज्ञ इनको महायज्ञ कहा है तथा नित्य करने की विधि बताई है (१-१४)।

अध्याय	
-1-41-4	

वृष्ठाड

१४ ब्रह्मयज्ञविधिवर्णनम्—

१३५५

ब्रह्मयज्ञ का वर्णन (१-१५)।

१५ यज्ञविधिवर्णनम्-

१३५७

उपर्युक्त पश्च महायझों की विस्तार से विधि बताई गई है (१-२१)।

१६ श्राद्धे तिथिविशेषेणविधिवर्णनम्।

१३मध

श्राद्ध की तिथियों का निर्देश, तिथि परत्व श्राद्ध विधान (१-२३)।

१७ श्राद्धवर्णनम्।

१३६२

श्राद्ध की विधि का निद्र्शन (१-२४)।

१८ विवाहामिहोसविधानवर्णनम ।

१३६४

वैवाहिक अग्नि से प्रातः सायं हवन का विधान, चरु का वर्णन और कुशा विष्टर का मान (१-२३)

१६ सक्तं व्यतास्त्रीधर्मवर्णनम्।

१३६७

गृहकाअमी को स्त्री के साथ अग्निहोत्र का विधान। बियों में भ्रेष्ठ सी वही है जो सीभाग्यवती हो,

ब्राह्मणों में ज्येष्ठ श्रेष्ठ वही है जो विद्या एवं तप में श्रेष्ठ है। स्त्री को पित का आदेश मानकर अमिहोत्र करने से सौभाग्य बढ़ता है तथा पित की आज्ञा-नुसार चलने से इहलोक और परलोक दोनों में परम सुख प्राप्त होता ह (१-२३)।

२० द्वितीयादिस्त्रीकृतेसति वैदिकाग्निवर्णनम् १३६६

क्री के साथ ही यज्ञ की विधि। क्री के मृत होने पर भी गृहस्थाश्रम में रहता हुआ अग्निहोत्र करता रहे। श्लोक दस में श्रीरामचन्द्रजी का उदाहरण दिया है कि उन्होंने सीताजी की प्रतिमा बनाकर उसके साथ यज्ञ किया (१-१६)।

२१ मृतदाहसंस्कारवर्णनम्।

१३७१

मृतक का संस्कार बतलाया गया है (१-१६)।

२२ दाहसंस्कारवर्णनम्।

१३७२

मृतक के दाह संस्कार का वर्णन (१-१०)।

२३ विदेशस्थमृतपुरुषाणांदाहसंस्कारवर्णनम् १३७३

विदेश में मृत हुए पुरुष के दाह संस्कार के सम्बन्ध में कहा गया है (१-१४)। २४ सतकेकर्मत्यागःषोङ्शश्राद्धविधानवर्णनश्च । १३७५

सृतक में सब प्रकार के स्मातं कर्मों का त्याग किन्तु वैदिक कम हवन आदि सुष्क फलों से करता रहे। सपिण्डीकरण तक सोलह श्राद्ध करने से शुद्धि होती है (१-१६)।

२५ नवयज्ञेनविनानवान्नभाजनेप्रायिश्वत्तवर्णनम् १३७६

नवान्न भक्षण करने से पहले नवान्न यज्ञ करना चाहिये। विना यज्ञ में दिये अन्न भक्षण का प्रायश्चित्त (१-१८)।

२६ नवयञ्चकालाभिधानवर्णनम्।

१३७८

अन्वाहार्यलक्षणम्, होमद्वयात्ययादौपुनराधान वर्णनम् । १३७६

नव यज्ञ का समय—श्रावणी, कृष्णाष्ट्रमी, शरद् एवं वसन्त में नव यज्ञ (१-१७)।

२७ प्रायश्चित्तवर्णनम्।

१३८०

अन्वाहार्य तथा कर्म के आदि में शुद्धि के लिये प्रायिक्षत्त का विधान (१-२१)। प्रायश्चित्तवर्णनप्रपाकर्मणःफलनिरूपणवर्णनम्। १३८२

२८ स्तकादिनाश्रवणकर्मलोपे कर्मविशेषाभिधानम्,

प्रायश्चित्त वर्णनम्।

१३८३

प्रायश्चित्त उपाकर्म उत्सर्ग की विधि और काल (१-१६)।

२६ आद्धवर्णनम्, पञ्जाङ्गानां निरूपणवर्णनम् १३८४ पिण्ड श्राद्ध, आम श्राद्ध और गया श्राद्ध का वर्णन तथा श्राद्ध में कुशा आदि का वर्णन बताया है (१-१६)।

आपस्तम्बस्मृति के प्रधान विषय

१ गोरोधनादिविषये-गोहत्यायाञ्च प्रायश्चित्त-वर्णनम् । १३८७

> आपस्तम्ब ऋषि से सब मुनियों ने गृहस्थाश्रम में कृषि कम गो पालन में अनुचित व्यवहार से जो दोष हो जाय उसका प्रायश्चित्त पूछा। आपस्तम्ब ने बड़े सत्कार के साथ शृषियों को बताया— औषधि देने में, बालक को दूध पिलाने में साव-

१ धानी करने पर भी विपत्ति आ जाय तो उसका दोष नहीं होता है। किन्तु औषि तथा भोजन भी मात्रा से अधिक देना पाप है। दौमासो पाययेद्वत्सं द्वौमासो द्वौ स्तनौ दुहेत्, द्वौमासोवकवेलायां शेषकाले यथारुचि ।२१ दशरात्राद्धं मासेन गौस्तु यत्र विपद्यते, स शिखं वपनं कृत्वा प्राजापत्यं समाचरेत् ।।२२ गाय के बन्धन केसी रिस्सयों से कैसे कीले पर बांधना यह बताया है (१-३४)।

२ शुद्ध्यशुद्धिविवेकवर्णनम् । १३६० उदकशुद्धिनिरूपणं, वापीक्षपादीनां-शृद्धि

वर्णनम्।

१३६१

शुद्धि और अशुद्धि का वर्णन, जैसे— काम करने वाले मनुष्यों को जल पानी की छूतपात नहीं होती है। वापी, कूप, तड़ाग जहां खारिया जल निकलता हो वह अशुद्ध नहीं होता है। पेशाब मल तथा थूकने से जल अशुद्ध हो जाता है (१-१४)। ३ गृहेऽविज्ञातस्यान्त्यजातेर्निवेशने-बालादि विषये च प्रायश्चित्तम् । १३६२

अन्य जाति का परिचय न होने से अज्ञात दशा में घर में रह ज.य तो उस द्विजाति को चान्द्रा-यण या पराक प्राजापत्य व्रत करने का विधान। इसी प्रकार चाण्डाल कृप से जल आपत् दशा के बिना लेने से प्रायश्चित्त (१-१२)।

- श्वाण्डालकूपजलपानादो संस्पर्शे च प्रायश्चि १३६३
 चाण्डाल के कूप से जल पान पर प्रायश्चित्त (१-१३)
- भ वैश्यान्त्यजश्वकाकी च्छिष्टभोजने प्रायश्चित्त-वर्णनम्। १३६५

उच्छिष्ट भोजन (जूठा खाने पर) प्रायश्चित्त (१-१४)

- ६ नीलीवस्त्रधारणे नीलीभक्षणे च प्रायश्चित्तम् १३६७ नीलेरंग के वस्त्र धारण करने का प्रायश्चित्त (१-१०)
- अन्त्यजादि स्पर्शे रजस्वलाया विवाहादिषु
 कन्याया रजोदर्शने प्रायश्चित्तम् । १३६७
 रजस्वला स्त्री की अशुद्धि बताई है किन्तु रोग के

कारण जिस स्त्री का रज गिरता हो उसके स्पर्श करने से अशुद्ध नहीं होता है (१-२१)।

८ सुरादिद्षितकरस्यग्रुद्धिविधानवर्णनम् १४०० शूद्रान्नभोजने निन्दानिरूपणवर्णनम्। १४०१

वर्तनों के शुद्ध करने का वर्णन, हैसे कांशा भस्म से शुद्ध होता है। शूद्रान्न भक्षण शूद्ध के साथ भोजन का निषेध। जिसके अन्न को मनुष्य खाता है उस अन्न से जो सन्तान पैदा होती है वह उसी प्रकृति की होती है (१-२१)।

अपेयपानेऽभक्ष्यभक्षणे च प्रायश्चित्तवर्णनम् १४०२
 मिक्षकाकेशदृषितान्नभोजने प्रायश्चित्त वर्णनम् ।

शुल्केनकन्यादानेदोषाभिधानं, स शुद्धि वर्णनम्। १४०५

अपेय पान अभक्ष्य भक्षण में प्रायश्चित्त। स्वाध्याय तथा भोजन करते समय पैर में पादुका नहीं हो (१-४३)।

आ	-71	
91		1 -4

वृष्ठाञ्च

१० मोक्षाधिकारिणामभिधानवर्णनम्।

१४०६

8800.

विवाहोत्सवादिष्वन्तरामृत स्तके सद्यः शुद्धि वर्णनम् ।

भोजन करने का नियम। यम नियम की परि-भाषा। अग्निहोत्र त्याग करनेवाले को वीरहा कहते हैं। गृहस्थी को नित्य अग्निहोत्र करना चाहिये (१-१६)।

लघुशङ्खस्मृति के प्रधान विषय

8 .	इष्टापूर्तकर्मणोःफलाभिधानवर्णनम् ।	3808
	गङ्गायामस्थिप्रक्षेपेस्वर्गप्राप्तिः, वृषोत्सर्गादि	
	श्राद्ध वर्णनम्।	१४०६
	स्त्रियाःसपिण्डीकरणमनेकश्राद्धविवेकं	·
	ब्रह्मयातकलक्षणञ्च	१४११
	वाण्डालघटजलपानमीषघदानादिकमंणि	
	क्रोम्बेटोलाभावः ।	9093

मृताशीचमर्घवाससो जपहो मादि कियाणां निन्दा १४१५

१ इष्टापूर्त का माहात्म्य। गङ्गा में अस्थि प्रवाह का माहात्म्य। पितृ कर्म गया श्राद्ध का माहात्म्य। एको दिष्ट श्राद्ध न कर पार्वण श्राद्ध करना व्यर्थ है। प्रति सम्वत्सर क्षयाह पर श्राद्ध करने का निर्णय सिपण्डी करने की विधि। पिता जीवित हो तो माता की सिपण्डी दादी के साथ, पिता न हो तो पिता के साथ माता का सिपण्डीकरण श्राद्ध करे। अपुत्र स्त्री पुरुष का पावण श्राद्ध न करे केवल एको दिष्ट करे। संक्षिप्त प्रायश्चित्त का विधान वर्णन किया है (१-७१)।

शङ्खस्मृति के प्रधान विषय

१ ब्राह्मणादिनां कर्म वर्णनम्।

8884

चातुर्वर्ण्य के पृथक् पृथक् कर्म, यथा ब्राह्मण का यजन-याजन, अध्ययन-अध्यापनादि; इस प्रकार चार वर्ण के पृथक् पृथक् कर्मी का वर्णन (१-८)।

२ ब्राह्मणादिनां संस्कारवर्णनम्।

१४१६

गर्भाधान से उपनयन पर्यन्त संस्कारों का विधान (१-१२)।

३ ब्रह्मचर्याद्याचारवर्णनम्।

2885

ब्रह्मचर्य, विद्याध्ययन काल का आचरण तथा आचार्य गुरु उपाध्याय की व्याख्या। माता पिता गुरु के पूजन का महत्व। ब्रह्मचारी के नियम ब्रत तथा आचरण (१-१२)।

४ विवाहसंस्कारवर्णनम्।

१४२०

आठ प्रकार के विवाहों की विधि का वर्णन (१-१५)।

प्र पञ्चमहायज्ञाः-गृहाश्रमिणां प्रशंसा-अतिथि वर्णनम् ।

१४२१

पश्च महायज्ञ गृहस्थी के नित्य कर्म बताये हैं (१-१८)।

- द् वानप्रस्थधमिन्द्रपणं संन्यासधर्मप्रकरणञ्च १४२२ वानप्रस्थाश्रम की आवश्यकता और उसके धर्म का निरूपण (१-७)।
- ७ प्राणायामलक्षणं धारणा-ध्यानयोगनिरूपण वर्णनम्।

१४२४

ब्रह्माश्रमी के संन्यास की विधि। आत्मज्ञान प्राणा-यास, ज्यान धारणादि योग का निरूपण (१-३४)।

अध्य	ाय प्रधानविषय	<u>प्रशा</u>
6	नित्यनैमित्तिकादिस्तानानां लक्षणवर्णनम्	१४२८
	षट् प्रकार के स्नान-नित्य स्नान, नैमित्तिक स्न	ान,
	क्रिया स्नान, मलापकषंण स्नान, क्रियाङ्ग स् का समय तथा विधि [१-१६]।	नान
3	क्रियास्नानविधिवर्णनम् ।	१४२६
	क्रिया स्नान के मन्त्र तथा विधान (१-१६)।	
१०	आचमनविधिवर्णनम् ।	१४३१
	प्राजापत्य देवतीर्थादि वताकर आचमन करने	की
	विधि, अंग स्पर्श गा सन्ध्या करने से दीर्घायुः होना बताया है (१ -१ ।	का
११	अघमषेणविधिवर्णनम्।	१४३३
	अघमर्षण कुष्माण्डी ऋचा तथा पवित्र करनेव मन्त्रों का विधान (१-५)।	ाले
१२	गायत्रीजपविधिवर्णनम् ।	१४३४
	गायत्री मन्त्र जपने की विधि और माहात	य
	(१-३१) ।	

द्वऋषिपिस तर्पण के मन्त्र एवं विधि (१-१७)।

१४३७

१३ तर्पणविधि वर्णनम्।

१४ श्राद्धे बाह्यणपरीक्षावर्णनम्।

१४३८

श्राद्धे वर्ज्यब्राह्मणाः, पङ्क्तिपावनब्राह्मण-

निस्त्यणस्

१४३६

श्राद्धप्रकरणवर्णनम् ।

१४४१

पितृ कार्य में ब्राह्मण की परीक्षा करके निमन्त्रण करना तथा उनका किन किन मन्त्रों से पूजन करनी चाहिये इसका वर्णन किया है (१-३३)।

१५ जननमरणाशीचवर्णनम्।

१४४२

जन्म मरण में अशौच कितने दिन का किस वर्ण को होता है (१-२५)।

१६ द्रन्यगुद्धिः, मृन्मयादि पात्रगुद्धिवर्णनम् । १४४४ पात्रों के गुद्ध करने की विधि तथा अपने अंगों को गुद्ध करने का विधान बताया है (१-२४)।

१७ श्वतियादिवधे-यवाद्यपहारे-व्रतवर्णनञ्च

विवत्सादीनांक्षीरपानेशृद्रादीनामस्रभोजने वृत्तविधानम् ।

१४४६

5880

पृष्ठाञ्च

१७ मद्यभाण्डागतशृद्रोच्छिष्टकाकोच्छिष्टादीनां वृतवर्णनम्।

8848

पापों के प्रायश्चित्त । जिस पाप में जो प्रायन्नित्त कहा है उनकी विधि । पराक व्रत, कृच्छू व्रत तथा चान्द्रायणादि [१-६६]।

गोवचक्षीरं विवत्सायाः संधिन्यावच तथा पयः। संधिन्यमेध्यं भक्षित्वा पक्षन्तु वृत्तमाचरेत्।।२६ श्वीराणि यान्यभक्ष्याणि तद्विकाराश्चने बुधः। सप्तरात्रं व्रतं कुर्याद्यदेतच्चपरिकीर्तितम्।।३०

१८ अघमर्षण, पराक, वारुणकुच्छ्र, अतिकुच्छ्र, सान्तपनादि वृतम्। १४५३

अधमर्षण, पराक, सान्तपन तथा कुच्छू व्रत की विधि (१-१६)।

व्याङ्क

लिखितस्मृति के प्रधान विषय

१ इष्टापूर्तकर्मवृषोत्सर्गगयाप्रिण्डदानषोड्श-श्राद्धानांवर्णनम्।

8884

उदककुम्भदानं अग्निस्थानं अपुत्रिणामेको हिष्ट-श्राद्धवर्णनम् ।

६८५७

श्राद्धे-परश्राद्धमोक्तॄ-श्राद्धकर्त -श्राद्धमोक्तॄ नियमाः, नवश्राद्धे भुज्जानस्य प्रायश्चित्तम् १४६१

कुड्ज वामनादिषु परिवेदनं, गोवधसमं, चाण्डालघटोदकपान वर्णनम्—

१४६३

इष्ट के करने से स्वर्ग प्राप्ति और पूर्त से मोक्ष प्राप्ति का वर्णन किया है। वापी, कूप, तड़ाग, देव मन्दिर तथा पतितों का जो उद्घार करें उसे पूर्त तथा अग्निहोत्र वेश्वदेवादि कार्य करें उसे इष्ट कहते हैं। इष्टापूत कर्म का विधान तथा लक्षण बताया है।

गङ्गा में अस्थि प्रवाह का माहात्म्य तथा एकोहिष्ट श्राद्ध का वर्णन, श्राद्ध में भोजन करनेवालों के नियम तथा नव श्राद्धों का वर्णन एवं अशीच वर्णन तथा चाण्डाल के जल पान का निषेध (१-६६)

शङ्खलिखित स्मृति के प्रधान विषय

१ वैश्वदेवमकृत्वैवभुज्ञानस्यकाकयोनिवर्णनम् १४६४ अतिथिपुजनं, परान्नभोजनं, राजप्रशंसा,

ब्राह्मणप्रशंसनवर्णनम् ।

१४६७

बलि वैश्वदेव, अतिथि पूजन का महत्व बताया है।

परान्नं परवस्त्रं च परयानं परास्त्रियः। परवेश्मनि वासश्च शकस्यापि श्रियं हरेत्।।

इत्यादि सांस्कृतिक जीवन का वर्णन किया गया है (१-३२)।

बिचाप्ठ समृति के प्रधान विषय

१ धर्मजिज्ञासाधर्माचरणस्यफलधर्मलक्षणं आयीवर्तपंचमहापातकवर्णनम्।

2388

उपपातकत्राह्मविवाह त्राह्मणादिवणीचार-निरूपणम् ।

१८७१

धर्म का लक्षण, आयांवर्त की सीमा, देश धर्म, कुल

विद्याङ

धर्म का वर्णन। महापाप, पाप तथा उपपातकों का वर्णन। ब्राह्म, दैव, आर्ष और प्राजापत्य विवाह का वर्णन। सब वर्णों को ब्राह्मण से उपदेश प्रहण करने की विधि (१-४५)।

२ ब्राह्मणादीनांत्रधानकर्माणि-पातित्य हेतवः कृषिधर्म निरूपणम्। १४७१

वार्धुषिकान्नभक्षणे, ब्राह्मणराजन्ययोर्निषेधः १४७३

द्विजत्व की परिभाषा तथा आचार्य की श्रेष्ठता वताई है। ब्राह्मण के षट् कर्म का निरूपण, गुरु की आज्ञा पालन, प्रत्येक वर्ण की अपनी अपनी वृत्ति का वर्णन। धन अन्नादि की वृद्धि की सीमा और धन वृद्धि पर ब्राह्मण क्षत्रिय को निवेध वताया है (१-५६)।

३ अश्रोत्रियादीनां शूद्रसधर्मत्वमाततायिवध वर्णनञ्च। १४

१८७४

आचार्य लक्षणम्, श्रहत मृगादीनां ग्रुचित्त्र-वर्णनम्।

अनेक द्युद्धिः, कूद्रस्यासंस्कारे हेतुवर्णनम् १४७६

बाह्मण को वेद पढ़ना आवश्यक। बिना वेद विचा

पृष्ठाङ्क.

के अन्य शास्त्रों का पढ़नेवाला ब्राह्मण शूद्र कह-लाता है। धर्माधर्म निर्णेता वेद्ज्ञ हो। वेद्ज्ञ को ही दान देना। आततायों के लक्षण। आच-मन कव कव करना चाहिये। भूमि में गड़े हुए धन के सम्बन्ध में भूमि शोधन एवं पात्र शोधन का वर्णन (१-६४)।

४ मधुपकीदिषु-पशुहिंसनवर्णनम्।

8860

श्वाशीचवर्णनम्।

8868

ब्राह्मणादि वर्ण जिस प्रकार वेदों में बताये हैं उनका विशदीकरण। मधुपक का विधान, अशौच क्रिया के नियम, अशौच काल का वर्णन (१-३१)।

प्र आत्रेयी धर्म वर्णनम्।

१४८२

प्रथम स्त्री का कतव्य वह अपनी शक्ति का हास न होने दे एवं स्वतन्त्र न रहे, पिता, पित तथा पुत्रों की देख-रेख में रहे। रजस्वला काल में रहन-सहन तथा इन्द्र ने पाप देने के अनन्तर स्त्रियों को जो वरदान दिया उसका दिग्दर्शन।

अध्या	प्रधानविषय प्रधानविषय	पृष्ठाः
इ	आचारप्रशंसा, हीनाचारस्यनिन्दावर्णनम् ।	\$8 58
	नद्यादिषुमूत्रपुरीषोत्सर्गनिषेधशौचमृतिका-	
		१४८५
	सत्पात्र लक्षणमञ्जलिना जलं न पिवेदाचार	
	निरूपणश्च ।	१४८७
	सांस्कृतिक जीवनीवाले मनुष्य के आचार तथ	Γſ
	रहन-सहन की विधि (१-४०)।	
9	ब्रह्मचारिधमेवर्णनम् ।	१४८७
	ब्रह्मचारी के धर्म का वर्णन (१-१२)	
6	गृहस्थधर्मवर्णनम् ।	१४८८
	गृहस्थी के आचार एवं रहन-सहन का वर्णन (१-	१७)।
3	वानप्रस्थधमेवर्णनम्।	१४६०
	वानप्रस्थी के धर्म का वर्णन किया गया है (१-६)	1
१०	यतिधर्मवर्णनम् ।	17
	यति धर्म संन्यासाश्रम सबका त्याग करे किन्दु	Į
	वेदों का त्याग न करे। यथा—	

सन्यसेत्सर्वकर्माणि वेदमेकं न संन्यसेत्। एकाक्षरं परं ब्रह्म प्राणायामः परन्तपः ॥

भिक्षा लेने में हर्ष विषाद त्याग दे (१-२४)।

- ११ वैश्वदेवाति विश्वाद्धादीनांवर्णनम् । १४६२ श्राद्धभोजनसमयेभोक्त्रयन्नगुणत्याज्यवर्णनम् १४६५ प्रथम अध्यं अर्थात् पूजा के योग्य ऋत्विग्, कन्या का दान लेनेवाला वर, राजा, स्नातक, गुरु आदि तथा श्राद्ध विधि का वर्णन और ब्रह्मचारी के नियम बताये हैं (१-४६)।
- १२ स्नातकत्रतं, वस्त्रादिधारणविधिवर्णनम् । १४६७ स्नातकाचारवर्णनम् । १४६६ स्नातक के व्रत एवं आचार का वर्णन किया है (१-४४)।
- १३ उपाकर्मविधिवेदाध्ययनस्यानध्यायनिरूपणम् १५०० उपाध्यायाचार्यादीनांगुरुत्वमितिनिरूपणम् । १५०१ उपाकर्म की आवश्यकता तथा विधान । ऋत्विग् आचार्य के आतिथ्य करने के लिये घर पर पधारने पर सत्कार करने की आवश्यकता बताई है।

\$8	चिकित्सकादीनामन्नमोजने निषेधवर्णनम्।	१५०३
	काकादि संस्पृष्टान्नस्य पर्युषिताद्यन्नस्य च शुद्धि	११४०४
	अभोज्य अन्न विवाहादि यज्ञ में यदि काक आर्थ	
	से अन्न दूषित भी हो जाय वहां पर वह अभक्ष नहीं है (१-३७)।	य
9 u	दत्तकप्रकरणवर्णनम् ।	१५०६
९३	चरितवतानांपतितानां प्रत्युद्धारविधिवर्णनम्	· ·
	दत्तक पुत्र के सम्बन्ध में वर्णन किया गया	
	(१-१६)।	
१६	च्यवहारविधिवर्णनम् ।	१४०८
	साक्षिप्रकरणवर्णनम् ।	१५०६
	राजा मन्त्री की संसद् का वर्णन। साक्षी	_
	लक्षण, असत्य साक्षी का दण्ड तथा असत्य कह पर पाप बताया है (१-३२)।	न
919	पुत्रिणांप्रशंसावर्णनम् ।	१५१०
, -	औरसपुत्रादीनांलक्षणवर्णनम् ।	१५११
	आतृणां दायविमागवर्णनम्।	१५१३

पृष्ठाङ्क

पुत्ररहितस्यधनभाजनेक्रमवर्णनम् ।

१५१५

पुत्र के होने से पिता पिरुमृण से छुटकारा पा जाता है। पुत्रवान को स्वर्गादि लोक प्राप्ति, क्षेत्रज पुत्र उसका पुत्र है जिसने गर्भाधान किया है (१-३८)। एक पिता के कई पुत्र हां उनमें यदि एक भाई के भी पुत्र है तो सब भाई पुत्रवाले माने जाते हैं इसी प्रकार किसी के तीन चार श्ली हो उनमें यदि एक श्ली के भी सन्तान हो जाय तो सब पुत्रवती मानी जाती है। दायाद अदायाद सन्तति का वर्णन। स्वयमुपागत पुत्र के सम्बन्ध में हरिश्चन्द्र अजीगर्त का इतिहास तथा शुनशेप के यूपबन्धन का इतिहास जैसे वह विश्वामित्र का पुत्र हुआ। दाय विभाग का वर्णन, दायाद ६ पुत्र एवं अदायाद ६ पुत्रों का वर्णन (३८-७६)।

१८ चाण्डालादिजात्यन्तरनिरूपणम्।

१५१६

चाण्डाछादि जाति प्रतिलोम से बताई है, जैसे— ब्राह्मणी माता श्रुद्र पिता से जो सन्तान हो वह चाण्डाल होती है। इसका तात्पर्य यह है कि प्रत्येक मनुष्य अपनी अपनी जाति में विकाह करे उससे जो सन्तान होगी वह धार्मिक तथा मनुष्यता के व्यवहारवाली होगी यह बताया गया है (१-१६)।

१६ राजधर्माभिधानवर्णनम्।

१ म १ ७

अदण्डदण्डनेपुरोहितादेः प्रायश्चित्तम् ।

१४१६

राजा को सब वग के धर्म की रक्षा करनी चाहिये अपराधियों को बिना दण्ड दिये छोड़ने से राजा को पापी कहा है (१-३४)।

२० प्रायश्चित्तप्रकरणवर्णनम्।

१५२०

ब्राह्मणसुवर्णहरणेप्रायश्चित्तवर्णनम् ।

१४२३

विभिन्न प्रकार के प्रायश्चित ।

गुरुरात्मवतांशास्ता शास्ता राजा दुरात्मनाम्।

इह प्रच्छन्नपापानां शास्तावैवश्वतो यमः, इति ॥

भ्रूणहत्या और ब्रह्मध्न के प्रायश्चित्त का वर्णन (१-५२)।

२१ ब्राह्मणीगमने शूद्रवैष्यक्षत्रियाणां प्रायश्चित्त-

वर्णनम्।

१४२४

गोवधाद्यनेकप्रायश्चित्तवर्णनम्।

१५२५

प्रतिलोस विवाह में उप्र प्रायश्चित्त, यथा; शूद्र पुरुष

ब्राह्मणी के साथ सहवास करे उस शूद्र को अग्नि में जला देना। इस प्रायधित्त के देखने से विचार होता है शिष्ट शान्ति प्रधान धर्म प्रवक्ता होने पर भी प्रतिलोम विवाह पर अपने उम्र विचार को प्रकट करते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि प्रति-लोम सन्तान से संस्कृति का नाश हो जाता है। संस्कृति के नाश से राष्ट्र का नाश अवश्यम्भावी है (१-३६)।

२२ अयाज्ययाजनादि प्रायश्चित्तवर्णनम् । १५२७

यज्ञ करने में जिन असंस्कृत पुरुषों का अधिकार नहीं हैं और लोभवश जो ब्राह्मण उनसे यज्ञ करावें उस यज्ञ से सृष्टि में उत्पात होने के कारण उन ब्राह्मणों को प्रायश्चित्त करने को लिखा है (१-१०)।

२३ ब्रह्मचारिणः स्त्रीगमने प्रायिक्चत्तवर्णनम् । १५२८ रेतसः प्रवत्नोत्सर्गादिविषये प्रायिक्चत्तवर्णनम्१५२६ भ्रूणहत्यायांप्रायिक्चत्तान्तरकथनं, कुच्छ्विधि-वर्णनश्च । १५३१

> ब्रह्मचारी को स्त्री समागम होने से पातित्य का प्रायश्चित । भ्रूण हत्या, कुत्ता के काटने पर,

पृष्ठाङ्क

पतित चाण्डाल से सम्बन्ध करने पर कुच्छू व्रत, चान्द्रायणादि व्रतों को व्यवस्था बताई है (१-४३)।

२४ कुच्छ्रातिकुच्छ्विधिवर्णनम्।

१५३२

कुच्छ्रातिकुच्छ्र चान्द्रायण की परिभाषा (१-८)।

२५ रहस्यप्रायश्चित्तवर्णनम्।

१५३२

अविख्यापितदोषाणां पापानां महतां तथा।
सर्वेषां चोपपापानां छुद्धि वक्ष्याम्यशेषतः।।
गुप्त रखे हुए जो अपने पाप हैं उन रहस्य पापों का
पृथक्षृथक् प्रायश्चित्त बताये हैं (१-१२)।

२६ साधारणवावक्षयोवायविधानववर्णनम् ।

१ म इ ८

प्राणायाम, सन्ध्या, जप, सावित्री जप, पुरुष सूक्त आदि से पापों के क्षय होने का वर्णन किया है। धर्मशास्त्र के पढ़ने से पापक्षय होता है ऐसा बताया है (१-२०)।

२७ वेदाध्ययनप्रशंसावर्णनम् ।

१५३६

आहारशुद्धिनिरूपणम्।

१ ५ ३ ७

वेदरूपी अग्नि से पाप राशि नष्ट होती है इत्यादि

का वर्णन तथा वेद्र पढ़ने की प्रशंसा एवं आहार शुद्धि का वर्णन बताया है (१-२१)।

२८ स्वयंविप्रतिपन्नादीनां दृषितस्त्रीणांत्यागाभाव-कथनम् । १५३८

स्त्रीणांपतनहेतवः सर्ववेदपिवः भिधानवर्णनम् १५३६ बलात्कार से उपभुक्त स्त्री त्याज्य नहीं होती है यथा—

स्वयं विप्रतिपन्ना वा यदिवा विप्रवासिता । बलात्कारोपभुक्ता वा चोरहस्तगताऽपित्रा ॥ न त्याज्या दृषितानारी नास्यास्त्यागो विधीयते। पुष्पकालभ्रपासीत ऋतुकालेन ग्रुष्यति॥

स्त्री का त्याग (तलाक) करना स्मृति विरुद्ध है। शतरुद्रिय, अथर्वशिर, त्रिसुपर्ण, गोसूक्त और अश्व-सूक्त के पाठ करने से पापों से सुक्त हो जाता है। (१-२२)।

२६ दानादीनां फलनिरूपणवर्णनम्।

गोदान, छत्रदान, भूमिदान, पादुका दान, विविध प्रकार के दान तथा मौन व्रत का माहात्म्य [१-२२]

पृष्ठाङ्क

३० प्राणापिहोत्रविधिवर्णनम्।

१५४२

ब्राह्मण भोजन कराने का माहात्म्य तथा प्राणाग्नि-होत्र विधिका वर्णन किया है [१-११]।

औशनस संहिता के प्रधान विषय

अनुलोमप्रतिलोमजात्यन्तराणांनिरूपणवर्णनम् १५४४

अनुलोम विवाह की सन्तान तथा प्रतिलोम सन्तान की जातियों का वर्णन। सूत, वेणुक, मगध, चाण्डाल आदि जाति और इनके लोम विलोम जाति का विस्तार तथा उनकी वृत्ति एवं कार्य का वर्णन आया है [१-५१]।

औशनस स्मृति के प्रधान विषय

१ ब्रह्मचारिणांक्रमागतकर्तव्यवर्णनम्— १५४६ २ ब्रह्मचारिधर्मवर्णनम् । १५५१ ब्रह्मचारिणांधर्मसारवर्णनम् । १५५३

> इस अध्याय में शौनकादि स्रृषियों ने भागव को विनम्र भाव से प्रणाम कर धमशास्त्र का निर्णय पृद्घा। उत्तर में औशनस ने सांस्कृतिक जीवन

पृष्ठाङ्क

का स्तर विधिवत् उपनयन वेदाध्ययन से प्रारम्भ कर मनुष्य के आचरण का चित्रण वैज्ञानिक भित्ति पर किया जिस प्रकार के संस्कृत जीवन से मनुष्यता का सचा विकाश हो जाय (१-६४)।

२ ब्रह्मचारिप्रकरणे शौचाचारवर्णनम्।

१४४६

किस किस समय आचमन कर गुद्ध होना चाहिये यहां से प्रारम्भ कर ब्रह्मचारी के सम्पूर्ण कर्म शौचाचार ब्रह्मचारी की शिक्षा पद्धति का सुचारु निरूपण किया है।

ब्रह्मचारिप्रकरणेऽनेकप्रकरणवर्णनम् ।	१५६०
ब्रह्मचारिप्रकरणे गायत्रीमन्त्रसारवर्णनस्	१४६४
ब्रह्मचारिप्रकरणे ऽनेकविचारवर्णनम् ।	१४६७
ब्रह्मचारित्रकरणे नित्यनैमित्तिकविधिवर्णनम्	१४६६
नैसित्तिकश्राद्वविधिवर्णनम्-	१५७१
श्राद्धप्रकरणवर्णनम् ।	१५७३

विद्या पढ़ने की विधि, गुरु के प्रति व्यवहार, ब्रह्म-चारी के धर्म, वेदाध्ययन की आवश्यकता स्वाध्यायी ब्रह्मगित को प्राप्त करता है। भोजन की विधि, पञ्च प्राणाहुति की विधि, प्रातः कृत्य का विधान, पिण्डदान का माहात्म्य बताया है। अमावास्या अष्टका आदि श्राद्धकाल, पात्र ब्राह्मण श्राद्धकाल, अस्य संचयन, गया श्राद्ध माहात्म्य किस अन्न से पितरों की कितने काल तक तृप्ति होती है। श्राद्ध में किस किस अन्न को वर्जित किया है। पिण्डो-दक नवश्राद्ध आदि का विस्तृत वर्णन किया है (१-१४७)।

४ श्राइप्रकरणवर्णनम्।

१म७८

श्राद्ध में कैसे ब्राह्मणों को आमन्त्रण करना उनके लक्षण। मूर्ख ब्राह्मणों को भोजन कराने पर पितरों का पतन आदि का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है (१-३६)।

५ श्राइप्रकरणवर्णनम्—

S048

पिण्डदान विधि और उसके मन्त्र विस्तार से बताये गये हैं (१-६६)।

६ अशोचप्रकरणवर्णनम्।

१४८७

सूतक पातक अशौच कितने दिन का किसको

पृष्ठाङ्क.

होता है। सपिण्डता, सगोत्रता, समानोदक कितनी पीढ़ी तक है तथा सद्यः शौच कब होता है एवं पातक सूतक का वर्णन है (१-६१)।

७ गृहस्थानांत्रेतकर्मविधिवर्णनम् । १५६३ सपिण्डीकरणश्राद्धांवेधानवर्णनम्— १५६५ प्रेत क्रिया प्रथम दिन से द्वादश दिवस तक का

८ प्रायश्चित्तप्रकरणवर्णनम् ।

वर्णन किया है (१-२३)।

१५६६

महापापों का प्रायश्चित्त (१-२४)।

प्रायश्चित्तवर्णनम् । १५६६ प्रायश्चित्तप्रकरणेऽभक्ष्यवर्णनम् । १६०३ अनेकपापानांप्रायश्चित्तवर्णनम् । १६०५

अनेक प्रकार के पाप कामज क्रोधज अभक्ष्यादि पापों के पृथक् पृथक् प्रायश्चित्त विधान (१-१०६)।

बृहस्पति समृति के प्रधान विषय

ससुवर्ण पृथ्वीदानफलमहत्ववर्ण नस्।

१६१०

विधाह

गोचर्मलक्षणं पृथिबीदानफलवर्णं नम्।	१६११
सफलं नीलवृषभलक्षणं,भूमिहर्तुर्निन्दावर्णनम्	१६१३
अन्यायेनभूमिहरणेफलं—	
कन्यानृतादिविषयेदोषनिरूपणफलम्	१६१५
तडागादिनिर्माणफलाभिधानम	१६१७

इन्द्र ने शत यह समाप्त कर गुरु बृहस्पति से दान माहात्म्य एवं उत्कृष्ट दान पूछा। उत्तर में गुरु बृह-स्पति ने सुवर्ण दान और भूमिदान का माहात्म्य बताया किन्तु भूमिदान सुपात्र विद्यावान् तपस्वी ब्राह्मण को ही देना बताया, अपात्र (मूर्ख अतपस्वी) को देने से पाप भी बताया है (१-८१)।

लघुन्यास स्मृति के प्रधान विषय

१ सफलं स्नानविधिवर्णनम्---सफलं सन्ध्याकर्तव्यवर्णनम्—

१६१८

१६२१

प्रातःकाल ब्राह्म मुहूत में स्नान करना चाहिये। स्नान के पूर्व जिन वृक्षों के दतीन करने हैं उनका नाम तथा सूर्योपस्थान सन्ध्या प्रति दिन करने का

वृष्ठाङ्क

आदेश, बिना सन्ध्या किये जो कुछ पूजा दान करे वह निष्फल होता है (१-३१)।

२	कर्तव्यकमीविशेषवर्णनम्	१६२१
	शरीर छाड्डिवर्णनम्	१६२३
	नित्यकर्मवर्णनम्	१६२५
	पश्चमहायज्ञवर्णनम्	१६२७
	भोजनाद्यनेकप्रकरणवर्णनम्	१६२६

नित्यकर्म का विधान, देव यहा, पितृ यहादि पश्च यहा, जप करने की विधि तथा जपमाला कसी और किस वस्तु की होनी चाहिये यह बताया गया है। तीर्थस्तान एवं अध्मर्षण स्कू का माहात्म्य। शिवपूजन मन्त्र, वैश्वदेव कर्म भूत-बलि, अतिथि का पूजन, भोजन करने का नियम, काल, प्रहण काल में भोजन करने का नियम, श्रायन का नियम, कैसी सय्या होनी चाहिये तथा किस ओर शिर करना इत्यादि मानवाचार का विश्ववीकरण किया गया है (१-६२)।

(वेद) न्यास स्मृति के प्रधान विषय

१ धर्माचरणदेशप्रयुक्त-वर्ण-पोडशसंस्कारवर्णनम् १६३१ गर्भाधानादिषोडशसंस्कारवर्णनम्— १६३३

वर्ण विभाग अनुलोम प्रतिलोमों की भिन्न-भिन्न जाति की संज्ञा उनके कर्म गर्भाधानादि संस्कार यज्ञोपवीत धारण काल जाति परत्व एवं ब्रह्मचारी के ब्रत (१-४१)।

२ विवाहविधिवर्णनम्

१६३५

गृहस्थधर्मवर्णनं, स्त्रीधर्माभिधानवर्णनम्

१६३७

स्त्रीणांनित्यकर्म, सपातिव्रत-

रजस्वलाधर्मनिरूपणञ्च—

१६३६

यदि स्नातक द्वितीयाश्रम (गृहस्थाश्रम) में जाना चाहे तो विधिवत् सवर्ण कन्या के साथ विवाह करे अन्य से नहीं। पुरुष विवाह करने पर ही पूर्ण शरीरधारी होता है (१-१८)। स्नी के कर्तव्य का वर्णन आया है, यथा—

२ पत्युः पूर्व सम्रत्थाय देहशुद्धि विधाय च । उत्थाप्य शयनाद्यानि कृत्वा वेश्मविशोधनम् ॥

पति के जागने से प्रथम शयन से उठकर घर की शुद्धि, वस्तादिकों को यथा स्थान में रक्खे (१६-४१) पुरुष का कर्तव्य स्त्री के प्रति ''गच्छेशुग्मासुरात्रिषु" इत्यादि। यह भारतीय संस्कृति का नियम प्रत्येक गृहस्थी को आद्रणीय एवं आचरणीय है (४२-५७)।

3	सस्नानादि विधिपूर्वाह्नकृत्यवर्णनम्	१६४१
	तर्पणविधिवर्णनम्	१६४३
	पाकयज्ञादिविधिनिरूपणम्	१६५५
	गृहस्थाह्निकवर्णनम्	१६४७

गृहस्थी के नित्य नैमित्तिक काम्य कर्मों का निर्देश तथा उषाकाल में जागकर कर्म में प्रवृत्त होने की विधि। सन्ध्या कर्म, पितृ तर्पण वेदाध्ययन, धमशास्त्र इतिहास को प्रातःकाल पढ़ने का विधान (१-२०)। पाकयज्ञ विधान, दान का माहात्म्य, गुणवान को श्राद्ध में भोजन कराना वेदादि शास्त्र के ज्ञाता को ही ब्राह्मणत्व में हेतु बताया है।

प्रधानविषय

प्रशास्त्र

एक पाक्त में सबको समान भोजन देना, शूद्राञ्च भक्षण का दोषं (२१-७१)।

8	गृहस्थाश्रमप्रशंसाप्रविकतीर्थधमेवर्णनम्	१६४८
	दानधर्मप्रकरणवर्णनम्	१६४६
	दानधर्मप्रकरणेसत्पात्रनिरूपणवर्णनम्	१६५१
	ब्राह्मणप्रशंसनवर्णनम्	१६४३

सांस्कृतिक जीवनी का वर्णन, माता पिता ही परम तीर्थ है। दान के विषय में यथा—

यहदाति यदञ्नाति तदेव धनिनां धनम् । अन्ये मृतस्य क्रीडन्ति दारैरपि धनैरपि ॥

दान देना तथा धन का भोग करना यही अपना धन समभो। धन होने पर दाता भोक्ता बनो यह धार्मिक नैतिक अनुशासन बताया है। पढ़े हुए पुरुष का जीवन सफल और अनपढ़ का जीवन निरर्थक है। आचार्य आदि की परिभाषा, सुपात्र को दान देने से ही वह सफल होता है (१-७२)।

देवल स्मृति के प्रधान विषय

प्रायश्चित्तवणनम्—	१६५५
बलान्यलेच्छेनीतानां स्नीणांविषयेप्रायिश्वतम्	१६५६
स्लेच्छसम्बन्धित्रायश्चित्तवर्णनम्—	१६६१
सांतपनादिकुच्छ्चान्द्रायणान्तविधिवर्णनम्-	१६६३

समुद्र तट पर ध्यानावस्थित देवल से ऋषियों ने पूछा कि महाराज! म्लेच्लों के साथ जिनका सम्पर्क हो गया है अर्थात् जो पुरुष बलात् या स्वेच्ला से धर्म परिवर्तन कर चुका है उसको क्या करना चाहिये जिससे वह पुनः अपनी जाति में पावन हो जाय। इसके उत्तर में ऋषि देवल ने उन सबका प्रायश्चित्त विभिन्न प्रकार से बताया। प्रारम्भ में अपेय पान अभक्ष्य भक्षण से सब प्रकार के सांसर्गादि पातित्य कर्मों में पृथक् पृथक् प्रायश्चित्त कर सबकी शुद्धि बताई है। प्रायश्चित्त कर सबकी शुद्धि बताई है। प्रायश्चित्त कर नविद्यार से गङ्गा स्नान से शुद्धि बताई है। इस स्मृति में जाति शुद्धि, देह शुद्धि और समाज शुद्धि पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है (१-६०)।

१ प्रजापति स्मृति के प्रधान विषय

ब्रह्माणंप्रति रुचे:प्रक्नः, श्राह्यकालाभिधानञ्च	१६६४
श्राइप्रकरणवर्णनम्	१६६५
श्राद्धपाकाहस्त्रीणामभिधानम्	१६६६
ब्राह्मणनिमन्त्रणम्, श्राद्वाहबाह्माह्यणानां निरूपणम्	१६७१
श्राद्धक्रियमनिरूपणम्	१६७३
श्राद्धोपादेयानि, श्राद्धोपासनीयानिपात्राणि	१६७म
श्राद्घेऽत्याज्यवस्तुवर्णनम् ।	१६७७
श्राद्धकालाभिधानवर्णनम् ।	१६७६
श्राद्घेब्राह्मणसंख्या, पार्वणादिश्राद्घवर्णनम्।	१६८१

इस स्मृति में एक ही श्राद्ध कर्म का पूर्णाङ्ग पूर्ण विधि से वर्णन किया गया है। शुक्राचार्य के कथन से श्राद्धकल्प में उथल पुथल हो गई थी। श्राद्ध कर्म के न करने से द्विजाति बलहीन और राक्षस बल हरण करनेवाले हो गये थे। अतः श्राद्धकल्प पर प्रजा-पति श्राद्ध के सम्बन्ध में श्राद्ध के भेद, श्राद्ध विधि, श श्राद्ध के मन्त्र सम्पूर्ण कहे हैं। इस स्मृति के अध्य-यन से श्राद्ध कर्म की आवश्यकता तथा सम्पूर्ण विधि मालूम हो जायगी। श्राद्ध के नियम, श्राद्ध काल, आभ्युद्धिक श्राद्ध का माहात्म्य, श्राद्ध की सामग्री, श्राद्ध में पुण्य पाठ, श्राद्ध करने से पितरों की तृष्टि एवं श्राद्धकर्ता दीर्घायु, पुत्रवान, धनवान, ऐश्वर्थवान् होता है (१-१६८)।

लघ्वाहत्रलायन स्मृति के प्रधान विषय

?	आचारप्रकरणवर्णनम्।	१६८३
	ब्रह्मचारिगृहस्थधर्मवर्णनम्।	१६८५
	स्नानवस्नाचमनपूर्वकसन्ध्योपासनविधिवर्णनम्	१६८७
	गायत्रीमनत्रजपपूर्वकप्रातहीमविधिवर्णनम्	१६८६
	मध्याद्वस्नानादिविधिपूर्वकत्रह्मयञ्च.	
	विधानवर्णनम्	१६६१
•	ऋणत्रयविद्युक्त्यर्थदेविषं पितृतर्पणम्	१६६३
	सवैश्वदेवभूतबल्यतिथिभिक्षादानानांवर्णनम्।	१६६५
	परान्नत्यागिनामामान्नदानं, भोजनविध्यु-	
	च्छिष्टादिसंस्पर्शवर्णनम् ।	१६६७

प्रधानविषय

१ ब्रह्ममार्गाचारप्रकरणवर्णनम्--

१६६६

आश्वलायन गृह्यसूत्र के निर्माता भी हैं। इस स्मृति में शंख, औशनस, व्यास और प्राजापत्यादि स्मृतियों की रीति पर व्यवहार प्रकरण का स्थान नहीं है केवल धार्मिक और सांस्कृतिक आचार का ही विस्तृत वर्णन है। इससे इन स्मृतियों की प्राचीनता का अनुमान होता है। यथा--"धर्मेंकताना पुरुषाः यदासन् सत्यवादिनः" जब जनता धर्मपरायण रही उस समय सब सत्यवादी होते थे। इस कारण व्यवहार अर्थात् दण्डदापन राजशासन विधि की आवश्यकता न होने से व्यव-हार प्रकरण का विस्तार नहीं रखा गया है। इस अध्याय में मुनियों ने आश्वलायन आचार्य से द्विजातियों के धम कहकर भनुष्यों के सांस्कृतिक जीवन के आचार पर प्रश्न किया, साथ ही यह बताया कि इस प्कार के आचरण कर्नेवाले मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। द्विज शब्द यहाँ पर मनुष्य शब्द का वाचक है। प्रातःकाल ब्राह्म मुहूर्त में उठना, शौचाचार एवं स्नान के मन्त्रों का वर्णन किया है (१-३६)। सूर्यार्घ्य, सायं, प्रातः और

१ मध्याह संध्या तथा सूर्योपस्थान की विधि (४०-६८)।
अग्निहोत्र की विधि तथा स्त्री के साथ ही अग्निहोत्र
कर्म हो सकता है (६६-७२)। वेदाध्ययन की
विधि (७३-६०)। तर्पण विधि (६१-११३)।
श्राद्ध कर्म, बिल वेश्वदेव, हन्तकार एवं श्राद्धकाल
का वर्णन (११४-१४२)। पश्चमहायज्ञ, मधुपर्क
विधान, वेश्वदेव तथा काशी में शरीर त्याग से
मुक्ति का होना बताया है (१४३-१८६)।

२ स्थालीपाकप्रकरणम् –

8008

स्थाल्यादीनांप्रमाणं, नूर्णपात्रस्थापनादि-

कमनिरूपणम्-

१७०३

आज्वोत्पवन स्नुवसंस्कारादिकमाभिधानवर्णनम्१७०५ अग्नेरुपस्थानादिकमवर्णनम्— १७०७

इस सम्पूर्ण अध्याय में स्थालीपाक यज्ञ का साङ्गो-पाङ्ग विधान है। जो सामयिक गृहस्थी होते हैं उनको स्थालीपाक यज्ञ के पूर्व दिन पूर्णभासी को प्रायश्चित कर संकल्प करना चाहिये कि में कल स्थालीपाक यज्ञ करूँ गा। अन्वाधान कर स्थाली-पाक यज्ञ की एक हाथ चौरस वेदी बनाकर गोवर

- २ से लेपन कर रेखोल्लेखन, प्रोक्षण कर्म, अग्नि-स्थापन, अग्निपूजन, ध्यान, परिस्तरण, प्रोक्षणी पात्र, स्रुव चमस, आज्यपात्र, स्रुक् स्रुव स्थापन समिधा-हरण आदि सम्पूर्ण विधि लिखी है (१-८०)।
- ३ गर्भाघानप्रकरणम् । १७०८ गर्भाघान की विधि का वर्णन किया है (१-१६)।
- ४ पुंसवनानवलोभनसीमन्तोन्नयनप्रकरणव ० १७१० पुंसवन सीमन्त कर्म की विधि तथा समय का वर्णन है (१-१६)।
- ध जातकर्मप्रकरणवर्णनम्— १७१२ जातकर्मसंस्कार की विधि (१४)।
- ६ नामकरणप्रकरणवर्णनम् । १७१३ नामकरण की विधि और नाम किस अक्षर से किस बालक का करना इसका निर्णय लिखा है । कुमार के कान में मन्त्र जपकर पिता उसके नाम को कहे (१-७)।
- ७ निष्क्रमणप्रकरणवर्णनम्। १७१४ चतुर्थ मास में निष्क्रमण कर्म लिखा है (१-३)।

प्रधानविषय

पृष्ठाङ्क

८ अन्नप्राश्चनप्रकरणवर्णनम्—

१७१५

छठे महीने में अन्नप्राशन की व्यवस्था बताई है (१-५)।

६ चौल(चूड़ाकरण)कर्मप्रकरणवर्णनम्।

१७१४

चूड़ाकर्म संस्कार तृतीय वर्ष में जरने का विधान। चूड़ाकर्म से विवाह पर्यन्त लौकिकामि में हवन करने का विधान बताया है (१-२२)।

१० उपनयनप्रकरणवर्णनम्।

2808

उपनयन संस्कार की विधि। ब्राह्मण कुमार का अष्टम वर्ष में उपनयन संस्कार, मौज्जी कर्म, मेखला धारण, गायत्री उपदेश की विधि, स्विष्ट कृत, होमादि, उपनयन संस्कार की पूर्ण विधि बताई है (१-६१)।

११ महानाम्न्यादिवतत्रयप्रकरणम्

१७२४

उपनयन संस्कार के अनन्तर एक वर्ष होने पर उत्तरायण में महानाम्नी व्रत का विधान । द्वितीय वर्ष में महाव्रत, तृतीय वर्ष में उपनिषद् व्रत ये तीन व्रत ब्रह्मचारी को उपनयन संस्कार के अनन्तर तीन वर्ष के भीतर करने चाहिये (१-८)।

१२ उपाकमंत्रकरणवर्णनम् ।

१७२५

उपाकर्म का विधान श्रावण के महीने में हस्त नक्षत्र में करने का निर्देश किया है (१-१७)।

१३ उत्सर्जनप्रकरणवर्णनम् ।

१७२७

उत्सर्ग-षण्मास (ह्रै मास) में उत्सर्ग कर्म वेद जो पढ़े हैं उनकी पुष्टिके लिये उत्सर्ग कर्म करे (१-७)।

१४ गोदानादित्रयप्रकरणवर्णनम्

१७२८

गोदान कर्म में जो सोलहवें वर्ष की अवस्था में उपनयन के अनन्तर होता है चौल कर्म की रीति पर हवन कर ब्रह्मचारी को वस्त्रभूषा धारण करने की विधि बताई है (१-६)।

१५ विवाहप्रकरणवर्णनम्

3508

वित्राह का विधान (गृहस्थाश्रम) कन्या के विवाह की रीति पद्धति का वर्णन। ब्रह्मचर्याश्रम से गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने की विधि। विवाह संस्कार कर बधू को वर अपने घर में छावे उस समय के आचार यहादि का विधान (१-८०)।

१६ पत्नीकुमारोपवेशनप्रकरणवर्णनम्

१७३७

धर्म कार्यों में पत्नी को वाम भाग में, आशीर्वाद के समय दक्षिण भाग में बैठाने का विधान है। पुत्रोत्पत्ति से मौझीबन्धन कर्म तक कर्ता उत्तर में एवं पत्नी पुत्र के दक्षिण में बैठे (१-६)।

१७ अधिकारिनियमप्रकरणवर्णनम्--

१७३७

इस अध्याय में पुत्र के संस्कार करने में किस किस का अधिकार कब कब है इसकी विवेचना की गई है (१-५)।

१८ नान्दीश्राद्धोपतृप्रकरणवर्णनम्।

१७३८

आधान काल, सीमन्त, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, उपनयन, महान्नत, गोदान, संस्कार समावर्तन और विवाहादि सम्पूर्ण मंगल कार्यों में नान्दी श्राद्ध करने का नियम बताया है (१-६)।

१६ विवाहहोमेपरिवर्ज्यप्रकरणवर्णनम् ।

३६७१

किसी शुभ कार्य में नान्दी श्राद्ध होने के अनन्तर जबतक मण्डप का विसर्जन न हो तबतक सपि- ण्डता होने पर भी कोई अशुभ कर्म प्रेत कृत्य मुण्डनादि करने का निषेध बताया है (१-६)।

२० प्रेतकर्मविधिवर्णनम्।

१७४०

पुत्र को पिता आदि का प्रेत कर्म, शव दाह आदि प्रेत कर्म करने का विचार। अशौच का निरूपण दिखाकर अन्त में आत्मनिष्ठ को किसी प्रकार का अशौच नहीं लगता है (१-६२)।

२१ लोकेनिन्यप्रकरणवर्णनम्।

. १७४६

सदाचार श्रष्ट क्रियाहीन की निन्दा तथा निन्दित कर्म से उत्पन्न सन्तान असंस्कृत है जिनके यहाँ यजन करने वाले बाह्यणों को निन्दित बताया है (१-१६)।

२२ वर्णधर्मप्रकरणवर्णनम्

१७४१

वर्णधर्म जाह्मण की श्रेष्ठता यदि वह वेद्झ हो, वेदों का उपदेश कर्ता हो। ज्ञाह्मण का अपमान करना एवं उससे सेवा कराने में पाप बताया है (१-२४)।

२३ श्राद्धप्रकरणवर्णनम्।

१७५३

श्राद्ध कर्म की विधि एवं उसका माहात्म्य। इसे विधि पूर्वक करनेवाले की सब कामना सफल होकर सायुज्य मुक्ति होती है तथा पितरों की प्रसन्नता से वह सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त कर ज्ञाननिष्ठ होता है (१-११३)।

२४ श्राद्धोपयोगित्रकरणवर्णनम् ।

१७६४

श्राद्ध करने का माहात्म्य। जो व्यक्ति क्षयाह में आलस्य वा प्रमाद से माता पिता का श्राद्ध विधि-वत् नहीं करता है उसके पितर उस सन्तान से जैसे निराश होते हैं वैसे ही वह सन्तान भी अधोगति को प्राप्त होती है। जो माता पिता का विधिवत् अर्थात् श्राद्ध करने की जो विधि बताई है जैसे योग्य ब्राह्मण श्राद्ध में निमन्त्रित किये जाते हैं उस पूर्ण विधि से जो श्राद्ध करता है उसके पितर उप होते हैं। वह पुरुष आत्मनिष्ठ होकर स्वयं इस संसार से तरजाता है एवं दूसरों को भी तार देता है (१-३१)।

बीधायन स्मृति के प्रधान विषय

१प्रक्न१ सशिष्टधर्मवर्णनम्।

१७६७

आरङ्कादिनिषिद्धदेश्वगमनेप्रायिश्वतम्। १७६६

बौधायन स्पृति में धर्म की प्रधानता अर्थ की गौणता प्राचीन वैदिकाचार का वर्णन है। इसमें मुख्य तीन प्रश्नों का निर्णय है। प्रथम प्रश्न— "उपदिष्टो धर्मः प्रति वेदम्" "तस्यानुव्याख्यास्यामः" "स्मार्तो द्वितीयः" "तृतीयः शिष्टागमः"। "उपदिष्टो धर्मः प्रतिवेदम्" इसकी व्याख्या १२ अध्यायों में क्रमशः वर्णन की गई है। "शिष्टागम" की परि-भाषा स्वयं बौधायन ने की है। "विगतमत्सर—निरहंकारकुम्भीधान्या अलोलुपदम्भदपंलोभमोह—क्रोधविवर्जिताः" धर्म का ज्ञान वेदों से होता है। वेद के अभाव में रमृति प्रन्थों से शिष्ट पुरुषों द्वारा परिषद् का निर्णय। परिषद् का निर्णय इस प्रकार बताया है—

चातुर्वेद्यं विकल्पी च अङ्गविद् धर्मपाठकः। आश्रमस्थास्त्रयो वित्राः पर्वदेषा दशावरा।। वेदस्मृत्यादिज्ञान से रहित परिषद् को प्रमाणित नहीं बताया है । यथा—

यथा दारुमयोहस्ती यथा चर्ममयोमृगः। बाह्यणश्चानधीयानस्त्रयस्ते नामधारकाः॥

उत्तर तथा दक्षिण में जो आचार हैं उनपर विप्रतिपत्ति और आर्यावर्त की सीमा का वर्णन। यह धमेशास यज्ञ संस्कारादि आर्यावर्त महावर्त के लिये ही है (१-३७)।

२प्र०१ ब्रह्मचारिधर्मवर्णनम्।

०एए९

ब्रह्मचारी के नियम अष्टम वर्ष में ब्राह्मण का उप-नयन तथा मृतु परत्व उपनयन काल, वसन्त में ब्राह्मण, प्रीष्म में क्षत्रिय एवं शरद् में वैश्य का उपनयन समय, मौझीबन्धन, भेक्ष्यचर्या एवं ब्रह्मचारी को शिक्षा, अवकीणीं का दोष, ब्रह्मचर्य का माहात्म्य। यह प्रथय प्रश्न धर्म क्या है इस सम्बन्ध में आया है (१-५५)।

३प्र०१ स्नातकधर्मवर्णनम्।

१७७४

धर्म के निर्णय के सम्बन्ध में प्रथम प्रश्न के ही

अध्याय

प्रधानविषय

खाड

उत्तर में यह अध्याय है। इस अध्याय में स्नातक के नियम एवं व्रत हैं (१-१३)।

४प्र०१ कमण्डलुचर्याभिधानवर्णनम्।

१७७४

स्नातक के शौचाचार, कमण्डलु से जल के प्रयोग का विधान एवं रीति बताई गई है (१-२८)।

५प्र०१ गुद्धिप्रकरणवर्णनम्।

७७७

प्रथम प्रश्न के ही प्रसंग में इस अध्याय का वर्णन किया है। शुद्धि का विधान है। यथा— अव्भि: शुध्यन्ति गात्राणि बुव्धिक्षीनेन शुध्यति।

अहिंसया च भृतात्मा मनः सत्येन शुध्यित, इति ॥

यहां से शरीर, बुद्धि, देह और मन की शुद्धि बताकर यहापवीत धारण की रीति तथा उसकी शुद्धि, पादप्रक्षालनादि, नदी में स्नान की रीति, बस्तु भाण्डादि की शुद्धि, अविज्ञात भौतिक जीवों की षट् प्रकार की शुद्धि, आसन, शब्या और बस्न की शुद्धि के सम्बन्धं में, शाक, फल, पुष्पों की प्रक्षालन से ही शुद्धि बताई है।

अशौच में सपिण्डता को लेकर दस दिन में शुद्धि

१ होती है। कुत्ते के काटने पर प्राणायामादि से शुद्धि एवं अभक्ष्य का वर्णन। गाय का दूध गाय के सूतने पर दस दिन के अनन्तर शुद्ध होता है। इस प्रकार सब वातों की शुद्धि करनी धर्म का अक वताया है (१-१६३)।

६प्र०१ यज्ञाकृतिधिनिरूपणम्।

१७८७

मूत्रपुरीषाद्यु पहतद्रन्याणां शुद्धिवर्णनम् । १७८६

यह में जिन जिन द्रव्यों का आवश्यकता होती है उनका निरूपण तथा यह्मपात्र एवं वस्नादिकों की गुद्धि।

७प्र०१ पुनः यज्ञाङ्गविधिवर्णनम् ।

0309

आभ्यन्तर तथा बाह्य दो प्रकार के यज्ञ के अङ्ग बताये हैं। आभ्यन्तर अङ्ग, बाह्य मृत्विगादि इस प्रकार यहाङ्ग का संक्षिप्त निदर्शन और शुद्धि बताई ह (१-३०)।

८प्र०१ बाह्यणादिवणनिरूपणम् ।

१७६२

चातुर्वर्ण्य निरूपण, अनुलोमज की पृथक् पृथक् जाति, अनुलोमज, प्रतिलोमज की ब्रात्य संज्ञा कही

प्रधानविषय

वृष्ठाङ्क

गई है। इस कारण ब्रात्यता होने से उनको सावित्री उपदेश का अनिधकार कहा गया है (१-१६)।

९ प्र०१ सङ्करजातिनिरूपणम्।

53019

रथकारादि वर्णसङ्कर जाति की परिगणना कर इनको ब्रात्य कहा है (१-१६)।

१०प्र०१ राजधर्मवर्णनम्।

8301

वर्णानुकूल मनुष्यों को वृत्ति देना, कर लगाना, व्रह्महत्यादि महापापों का प्रायिश्चत्त, पाप के निर्णय में साक्षिता देखे, मिथ्या साक्षी को पाप तथा दण्ड एवं प्रायिश्चत्त व्रत (१-४०)।

११प्र०१ अष्टविवाहप्रकरणवर्णनम्।

0305

अगठ प्रकार के विवाहों की परिभाषा। उन विवाहों में चार शुद्ध और चार अशुद्ध। जैसा विवाह वैसी ही सन्तान। आसुरादि से अशुद्ध सन्तान। द्रव्य देकर प्रहण की हुई स्त्री पत्नी संज्ञा नहीं पाती है उसके साथ यज्ञादि कमें नहीं हो सकते हैं (१-२२)।

११ अनध्यायकारवर्णनम्।

3309

अनध्याय काल अष्टमी, चतुर्दशी आदि बताई हैं (२३-४३)।

१२प्र०१ पूर्वीक्तानेकविधप्रकरणवर्णनम्।

3303

संक्षिप्त से धर्म का निर्णय। यहां तक प्रथम प्रश्न के उत्तर में कहा गया है (१-२१)।

१प्र०२ प्रायश्चित्तप्रकरणवर्णनम् ।

2600

समुद्रसंयानादिपतनीयकर्मणां निरूपणम् १८०३ उपपातकवर्णनम् , तिलविक्रयनिषेधवर्णनश्च १८०५

(स्मार्तो धर्मः) इसके निर्णय में प्रथम अध्याय में प्राथित विधान बताया है। श्रूण इत्या करने वाले को १२ वर्ष तक प्रायिश्वत्त, इसी प्रकार ब्रह्म-इत्या करनेवाले को भी द्वादश वर्ष का प्रायिश्वत्त और मातृगामी को तम लोह में लेटाना तथा लिक्कच्लेद प्रायिश्वत्त इत्यादि प्रश्व महापातिकयों का पृथक् पृथक् प्रायिश्वत्त । ब्रह्मचारी श्ली प्रसंग करे उसे अवकीणीं कहकर उससे गर्दम यहा करावे इस प्रकार महापातिकयों के प्रायिश्वत्त का निरूपण किया गया है (१-६६)।

गण्याय	प्रधानविष्य	विश्वाद
२प्र०२	दायविभागववर्णनम्,	
·	औरसादिपुत्राणांवर्ण नश्च-	१८०६
	स्त्रिया अस्वातन्त्र्यकथनम् ।	१८०६
	अगम्यस्त्रीणामभिधानवर्णनम्।	१८११
द्ग	य विभाग, खियां की शक्ति को किसी	प्रकार
	ोण न होने देना इसके लिये पति, पुत्र एवं	
क	वत्तरदायित्व, अगम्या जो स्नी जिस पुर	ह्य को
also	उसका निरूपण।	
३प्र०२	देवादितर्पणविधिवर्णनम् ।	१८१२
	स्नातकव्रतवर्णनम्।	१८१३
स्र	तक के व्रत तथा आचार, पूज्यजनों से	कैसा
टर	वहार करना चाहिये (१-६६)।	
४ प्र०२	सन्ध्योपासनविधिवर्णनम् ।	१८१७
स	न्ध्या कर्म की विधि और कर्तव्यता (१-३	0),1
५५०२	मध्याह्नस्नानविधिवर्णनम् ।	१८१६
	त्रह्मयज्ञाङ्गतपंणवर्णनम् ।	१८२०
स्र	याह कम से प्रारम्भ कर ब्रह्मयज्ञाङ्क,	अग्नि,

प्रजापति, साम, रुद्रादि दैवत तर्पण विस्तार से निरूपण किया है (१-२१२)।

६प्र०२ पश्चमहायज्ञविधिवर्णनम्—

१८२७

आश्रमधर्मनिरूपण वर्णनम्-

१८२६

पांच यहायझों की विधि (१-४४)।

७प्र०२ शालीनयायावराणामात्मयाजिनां

प्राणाहुति च्याख्यानम्-

१८३०

शालीन ययावरों को प्राणाहुति की विधि तथा मन्त्रों का निरूपण (१-३०)।

८प्र०२ श्राद्धाङ्गाग्रीकरणादिविधिनिरूपणम् १८३३

त्रिमधु, त्रिणाचिकेत, त्रिसुपर्ण, पञ्चाग्नि, षडक्कवित् ज्येष्ठ सामक, स्नातक ये पङ्क्ति पावन बताये हैं। इनके द्वारा श्राद्ध में अग्नि कार्य के विधान का निरूपण किया है (१-३१)।

१प्र०२ सत्पुत्रप्रशंसावर्णनम्।

१८३६

सत्युत्र का वर्णन किया है "पुत्रेण लोकाञ्चयि" अच्छी सन्तान से पिता स्वर्गादि लोक में विजयी

होता है "सत्युत्रमुत्पाद्याऽऽत्मनं तारयित" सत्युत्र की महिमा कही है (१-१६)।

१०प्र०२ संन्यासविधिवर्णनम् ।

१८३७

भोजनेश्वन्यादीनांग्राससंख्यावर्णनम् १८४१

संन्यास की विधि—संन्यास का धर्म विस्तार से निरूपण कर इसी के परिशिष्ट १७ सूत्रों में उसका विधान, "शालीन यायावरों" का आचार, संन्यासी के त्रिद्ण्ड का माहात्म्य वताया है (१-८६)।

१प्र०३ शालीनयायावरादीनांधर्मनिरूपणम् १८४४

शालीन और यायावरों की वृत्ति तथा धर्म का निरूपण किया है। शाला में आश्रय करने से शालीन एवं श्रेष्ठ वृत्ति के धारण करने से यायावर। इनकी नौ प्रकार की वृत्ति बताई है। जैसे—१ षण्निवर्तनी, २ कौदाली, ३ कुल्या, ४ संप्रक्षा-लनी, ५ समूहा, ६ पालिनी, ७ शिलोच्छा, ८ कापोता, ६ सिद्धा। इनके अतिरिक्त दशम वृत्ति भी बताई है। आहितानि तथा यायावर की वृत्ति का वर्णन है (१-२०)।

अध्याय

प्रधानविषय

व्याह

२प्र०३ पिनवर्तन्यादिवृत्तीनांस्वरूपकथनम्

१८४६

षिनवर्त्तन्यादि वृत्तियों का स्पष्टीकरण है, षिन-वर्त्तनी, कौदाली आदि क्वा विश्वदीकरण है तथा शिलोब्छ वृत्ति की परिभाषा (१-३८)।

३प्र०३ पचमानकापचमानकमेदेनचानप्रस्थस्य-

द्वे विध्यवर्णनम्----

3828

दो प्रकार के वानप्रस्थ—पचमानक और अपच-मानक के लक्षण तथा उनके धर्म, वन में रहने का माहात्म्य (१-२५)।

मृगैः सहपरिस्पन्दः संवासस्ते(स्त्वे)भिरेव च । तैरेव सद्दशीवृत्तिः प्रत्यक्षं स्वर्गलक्षणम् ॥

४प्र०३ ब्रह्मचारिणअभक्ष्यभक्षणेप्रायिक्चत्तवर्ण० १८५१

ब्रह्मचारी को स्त्री के सहवास तथा निषेध पदार्थीं के भक्षण में प्रायिश्वत्त का निरूपण (१-११)।

४प्र०३ अघमर्षणकल्पन्याख्यानवर्णनम् । १८४२

तीर्थ में जाकर सूर्याभिमुख होकर अघमर्षण सूक्त प्रातः, मध्याह और सायं तीन काल में एक सौ बार पाठ करने से ज्ञाताज्ञात उपपातकों से शुद्ध हो जाता है (१-७)।

६प्र०३ आत्मकृतदुरितोपशमायप्रसृत-यावकस्यहवनविधिवर्णनम्।

१८५३

दुरित क्षयार्थ एक प्रस्थ यव के हवन का विधान (१-२१)।

७प्र०३ कूष्माण्डहोमविधिवर्णनम् ।

१८४४

कूष्माण्डी भृचा "यहेवा देव हेऽनं" इत्यादि तीन मन्त्रों से हवन करने से ब्रह्मचारी के स्वप्नदोष आदि प्रायश्चित्त का विधान है (१-२२)।

८प्र०३ चान्द्रायणऋल्पाभिधानवर्णनम्।

१८४६

चान्द्रायण कल्प का विधान बताया है (१-४०)।

६प्र०३ अनदनत्परायणविधिन्याख्यानम् । १८४६

निराहार त्रत या फलाहार त्रत कर जो मन्त्र इसमें लिखे हैं उनसे हवन करने से चक्कु का प्रकाश बढ़ेगा (१-२१)। अध्याय

प्रधानविषय

विवास

१०प्र०३ याप्यकर्मणापेतस्थनिष्क्रयार्थ जपादिनिरूपणम् ।

१८६१

अयाज्य याजन जिसका दान नहीं लेना उसका दान लेना इत्यादि कर्मी का प्रायश्चित्त, जप आदि का निरूपण (१-१८)।

१प्र०४ चक्षुःश्रोत्रत्वग्घाणमनोन्यतिक्रमादिषु-प्रायश्रित्तम् ।

१८६३

विवाहात्प्राक्कन्यायारजोदर्शनेदोषनिरूपणम् १८६५ प्रकीणं प्रायश्चित्तों का वर्णन है, यथा जिस अंग से जो पाप किया गया उनका पृथक् पृथक् प्रायश्चित्त तथा संकीणं पापों का प्रायश्चित्त (१-३२)।

२प्र०४ प्रायश्चित्तविधिवण नम्।

१८६७

प्रायश्चित्त की विधि बताई है (१-२०)।

३प्र०४ प्रायश्चित्तविधिवर्णनम्।

१८६६

छोटे छोटे पापों का प्रायश्चित्त एवं विधि। अघ-मर्पण सूक्त तथा कृष्माण्डी मन्त्रों से प्रायश्चित्त (१-१६)।

900	54	
ভা		

प्रधानविषय

विद्याङ

४प्र०४ प्रायश्चित्तविधिव०

१८७०

स्वल्पापराध के प्रायश्चित (१-१०)।

४प्र०४ कुच्छ्रशान्तपनादित्रतविधिवर्णनम्

3605

कुच्छ्र, सांतपनादि व्रत की विधि बताई है (१-३३)।

६प्र०४ मृगारेष्टिः पवित्रष्टिश्चवर्णनम्

8608

मृगारेष्टि पवित्रेष्टि का विधान। अपातक कमें छोटे व्यवहार वर्जित कर्मी के शोधनार्थ (१-१०)।

७प्र०४ वेदपवित्राणामभिधानवर्णनम्

१८७६

पाप कर्म से निवृत्त होकर पुण्य कर्म में प्रवृत्त होने पर वैदिक मन्त्रों के पाठ से प्रोक्षण (१-१०)।

८प्र०४ गणहोमफलमेतद्घ्यापनादौ-

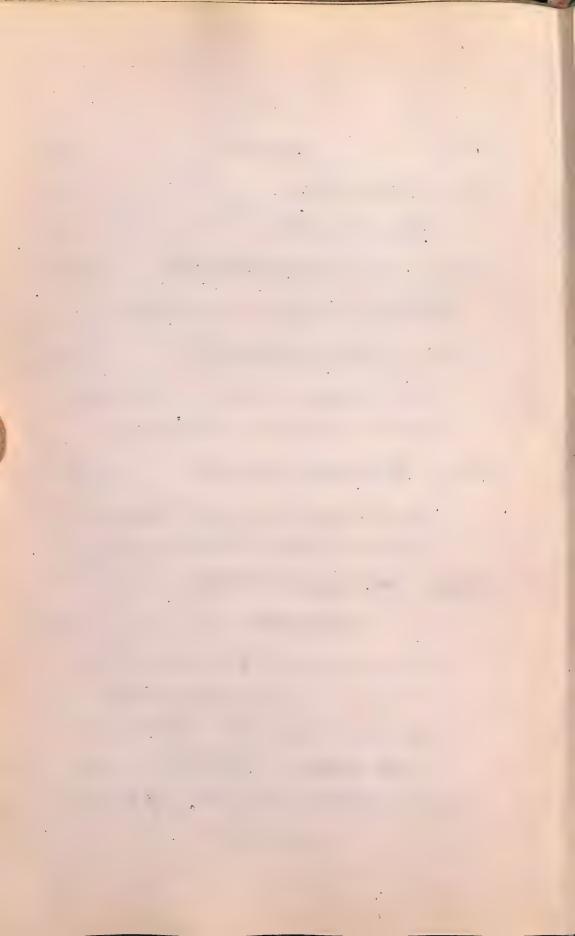
फलनिरूपणञ्च ।

9200

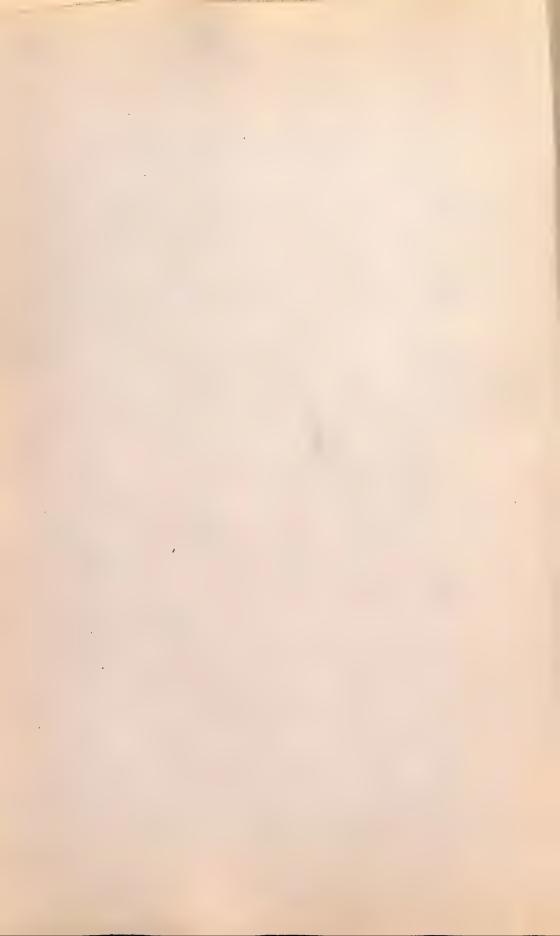
गण होम, अग्नि वायु आदि देवताओं का पूजन तथा स्मृति के पाठ और ज्ञान का माहात्म्य। स्मृति शास्त्र के परिशीलन तत् प्रदर्शित संस्कार सम्पन्नता से ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है (१-१७)।

।। स्वृति संदर्भ के वृतीय भाग की विषय-सूची समाप्त ।।

॥ शुभम् भूयात् ॥







॥ अथ ॥

श्रीयाज्ञवल्कयस्मृतिः।

श्रीगणेशाय नमः।

॥ प्रथमोऽध्यायः॥

अथाचाराध्यायः - उपोद्धातप्रकरणवर्णनम्।

योगीश्वरं याज्ञवल्क्यं सम्पूज्य मुनयोऽत्रुवन् । वर्णाश्रमेतराणां नो ब्रूहि धम्मांनरोषतः ॥१ मिथिलाख्यः स योगीग्द्रः क्षणं ध्यात्वाब्रवीन्मुनीन् । यस्मिन् देशे मृगः कृष्ण स्तस्मिन् धम्मांत्रिबोधत ॥२ पुराणन्यायमीमांसा धर्मशास्त्राङ्गमिश्रिताः । वेदाः खानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश ॥३ मन्वत्रिविष्णुहारीत्तयाद्यात्रक्योशनोङ्गिराः । यमापस्तम्बसम्बन्धो कात्यायनवृहस्पती ॥४ पराशरव्यासशङ्खलिखिता दक्षगौतमौ । शातातपो वशिष्ठश्च धर्मशास्त्र प्रयोजकाः ॥५ देशकाल उपायेन द्रव्यं श्रद्धा समन्वितम् । पात्रे प्रदीयते यत्तत् सकलं धर्मलक्षणम् ॥६ श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः । सम्यक् सङ्कल्पजः कामो धम्मेमूलिमदं स्मृतम् ॥७ इज्याचारदमाहिसादानं स्वाध्यायकम्मे च । अयं तु परमो धम्मी यद्योगेनात्मदर्शनम् ॥८ चत्वारो वेदधम्मेज्ञाः पर्षत् त्रैविद्यमेत्र वा। सा त्रूते यं स धम्मेः स्यादेको वाध्यात्मवित्तमः ॥६

अथब्रह्मचारिप्रकरणवर्णनम्।

ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्रा वर्णास्त्वाद्यास्त्रयो दिजाः। निषेकादि श्मशानाः तास्तेषां वै मन्त्रतः क्रियाः ॥१० गर्भायानमृतौ पुंसः सवनं स्पन्दनात् पुरा। षष्ठेऽप्रमे वा सीमन्तः प्रसवे जातकर्मम च ॥११ अहन्येकादशे नाम चतुर्थे मासि निष्क्रमः। षष्ठेऽन्नप्राशनं मासि चूड़ा कार्या यथ कुलम् ॥१२ एवमेनः शमं याति बीजगर्भसमुद्भवम्। तृष्णोमेताः क्रियाः स्त्रीणां विवाहस्तु समन्त्रकः ॥१३ गर्भाटमे इसे वाब्दे ब्राह्मणस्योपनायनम्। राज्ञामेकादशे सैके विशामेके यथाकुरुम्।।१४ उपनीय गुरः शिष्यं महाव्याहतिपूर्वकम् ! वेदमध्यापये देनं शौचाचारांश्च शिक्षयेत् ॥१४ दिवासन्ध्यासु कर्णस्य त्रहासूत्र उदङ्मुखः। कुर्यानमूत्रपुरीषे तु रात्रौ चेहिसणामुखः ॥१६

ऽध्यायः] आचाराष्यायः- हह्मचारिप्रकरणवर्णनम् ।

गृहीतशिश्नश्चोत्थाय मृद्धिरभ्युद्द्रुतैज्जेरेः। गन्धलेपक्षयकरं कुर्याच्छौचमतन्द्रितः ॥१७ अन्तर्जानुः शुचौ देश उपविष्ट उदङ्मुखः। प्राग्वा ब्राह्मेण तीर्थेन द्विजो नित्यमुपस्पृशेन् ।।१८ कनिष्ठादेशिन्यङ्गुष्ठमूल्यान्यमं करस्य च। प्रजापति पितृब्रह्मदेवतीर्थान्यनुक्रमात् ॥१६ त्रिः प्राश्यापो द्विरुन्मृज्यात् खान्यद्भिः समुपस्परोत्। अद्भिरतु प्रकृतिस्थाभिहींनाभिः फेनबुद्बुदैः ॥२० हृत्कण्ठतालुगाभिस्तु यथा संख्यं द्विजा**त**यः। शुद्धचरन् स्त्री च शूद्रश्च सक्रतसृष्टाभिरन्ततः ॥२१ स्नानमन्दैवतैर्मन्त्रैमार्जनं प्राणसंयमः। सूर्यस्य चाप्युपस्थानं गायत्र्याः प्रत्यहं जपः॥२२ गायत्री शिरसा साद्धं जपेद् व्याहृतिपूर्विकाम्। प्रतिप्रणवसंयुक्तां त्रिरयं प्राणसंयमः ॥२३ प्राणानायस्य सम्प्रोक्ष्य च्यृन्वेनाब्दैवतेन तु । जपन्नासीत सावित्रीं प्रत्यगातारकोद्यात्। २४ सन्ध्यां प्राक् प्रातरेवं हि तिष्ठे दासूर्यदर्शन त्। अग्निकार्यं ततः कुर्यात् सन्व्ययोक्तभयोरपि ।.२४ ततोऽभिवादयेद् वृद्धानसावहमिति ब्रुवन्। गुरुव्चेवा युपासीत स्वाध्यायार्थं समाहितः। २६ आहूतश्चाप्यधीयीत लब्धं चारमें निवेद्येत्। हितं चास्याचरेन्नित्यं मनोवाक्कायकर्म्भाभः ॥२७

कृतज्ञोऽद्रोही मेवावी शुचिः(कुल्योऽनप्त्यका):कल्याणसुचकाः। अध्याप्याः धर्मतः साधुशक्ताप्रज्ञानवित्तदाः ॥२८ द्ण्डाजिनोपवीतानि मेखलाञ्चैव धारयेत्। ब्राह्मणेषु चरेद्रैक्षमनिन्देष्वात्मवत्तये ॥२६ आदिमध्यावसानेषु भवच्छन्दोपलक्षिता। ब्राह्मणस्तियविशां भैक्षचर्या यथाक्रमस्।।३० कृताग्निकार्यो भुञ्जीत वाग्यतो गुर्व्वनुज्ञया। आपोशानिकयापूर्वं सत्कृत्यात्रमकुत्सयन् ॥३१ ब्रह्मचर्ये स्थितोनैक मन्नमदादनापदि। बाह्यणः काममश्नीयाच्छ्राद्धे व्रतमपीडयन् ॥३२ मधुमांसाञ्जनोच्छिष्टशुक्तस्त्रीप्राणिहिंसनम्। भास्करालोकनाश्लीलपरिवादांश्च वर्जयेत्।।३३ स गुरुर्यः क्रियाः कृत्वा वेद्मस्मै प्रयच्छति । उपनीय द्द्द्वेद्माचार्यः स उदाहृतः ॥३४ एकदेशमुपाध्याय ऋत्विग् यज्ञकृदुच्यते। एतं मान्या यथःपूर्वमेभ्यो माता गरीयसी ॥३५ प्रतिवेदं ब्रह्मचर्यं द्वाद्शाब्दानि पञ्च वा। प्रहणान्तिकसित्येके केशान्तश्चेव षोडशे ॥३६ आ षोडशाब्दाद् द्वाविशाचतुर्विशाच वत्सरात्। ब्रह्मक्षत्त्रविशां काल औपनायनिकः परः ॥३७ अत ऊर्द्ध पतन्त्येते सर्वधर्मवहिष्कृताः। सावित्रीपतिता ब्रात्या ब्रात्यस्तोमादते क्रतोः ॥३८

ऽध्यायः]

मातुर्यद्ये जायन्ते द्वितीयं मौक्षिबन्धनात्। व्राह्मणक्षत्त्रयविशस्तःमादेते द्विजाः स्मृताः ॥३६ यज्ञानां तपसाञ्चैव शुभानां चैव कर्मणाम्। वेद एव द्विजातीनां निःश्रेयसकरः परः ॥४० मधुना पयसा चैव स देवां स्तर्पयेद् द्विजः। पितृंश्च मधुसपिभ्यांमृचोऽधीते तु योऽन्वहम्।।४१ यज्ंषि शक्तितोऽधीते योऽन्वहं स घृतामृतैः। प्रीणाति देवानाज्येन मधुना च पितृंस्तथा ॥४२ स तु सोमघृतैर्देवां स्तर्भयेद्योऽन्वहं पठेत्। सामानि तृपित कुर्याच पितृणां मधुसपिषा ॥४३ मेद्सा तर्पये हेवानथर्वाङ्गिरसः पठन्। पितृंश्च मधुसर्पिभ्यामन्वहं शक्तितो द्विजः ॥४४ वाकोवाक्यं पुराणञ्च नाराशंसीश्च गाथिकाः। इतिहासां स्तथा विद्यां योऽधीते शक्तितोऽ वहम् ॥४५ मांसक्षीरौदनमधुतर्पणं स दिवौकसाम्। करोति तृष्तिञ्च तथा पितृगां मधुसर्पिषा ॥४६ ते तृप्तास्तर्भयन्त्येनं सर्वकामफलैः शुभैः। यं यं ऋतुमधीये च तस्य तस्याप्नुयात् फलम् ॥४७ त्रिर्वित्तपूर्णेषृथिवीदानस्य फलसरनुते। तपसश्च परस्येह नित्यं स्वाध्यायवान् द्विजः ॥४८ नैष्ठिको ब्रह्मचारी तु वसेदाचार्यसिन्नधौ। तद्भावेऽस्य तनये पत्न्यां वैश्वानरेऽपि वा ॥४६

अनेन विधिना देहं साधयन् विजितेन्द्रियः। ब्रह्मछोकमवाप्नोति न चेहा जायते पुनः॥५० अथ विवाहप्रकरणवर्णनम्।

गुरवे तु वरं दस्वा स्नायीत तद्नुज्ञया। वेदं ज्ञतानि वा पारं नीत्वाप्युभयमेव वा ॥५१ अवि लुनब्रह्मचर्यो लक्षण्यां स्नियमुद्रहेत्। अतन्यपूर्विकां कान्तामसपिण्डां यवीयसीम् ॥५२ अरोगिणीं भ्रात्मतीमसमानर्षिगोत्रजाम्। पश्चमःत् सप्तमादूष्त्रं मातृतः पितृतस्तथा ॥५३ दशपृरुषिविख्याताच्छ्रोत्रियाणां महाकुलात्। रकोताइपि न सञ्चारिरोगदोषसमन्वितात् ॥५४ एतेरेव गुणैर्युक्तः सवर्णः श्रोत्रियो वरः। यत्नात् परोक्षितः पुंस्त्वे युवा धीमान् जनप्रियः ॥ १५ यदुच्यते द्विजानीनां शूद्राइ।रोपसंग्रहः। न तन्मम मतं यस्मात्तत्रात्मा जायते स्त्रयम्।।५६ तिस्रोवर्णानुपूर्चेण द्वे तथैका यथाक्रमम्। ब्राह्मणक्षतित्रयविशां भार्या स्वा शूद्रजन्मनः ॥५५ ब्राह्यो विवाह आहूय दीयते शक्तयलङ्कृता ! तज्ञ पुनात्युभयतः पुरुषानेकविशतिम् ॥६८ यज्ञस्यमृत्विजे देव आदायार्षस्तु गोद्वयम्। चतुर्दश प्रथमजः पुनात्युत्तरजश्च पट् ॥५६ इत्युक्तवा चरतां धर्मं सह या दीयतेऽधिने। स कायः पावयत्पद्यः षट्षड्वंश्यान् सहात्मना ॥६० **अयायः**

आसुरो द्रविणादानाद् गान्धवः समयान्मिथः। राक्षसो युद्धहरणात् पैशाचः कन्यकाच्छलात् ॥६१/ पाणिर्वाद्यः सवर्णासु गृह्वीयांत् क्षत्त्रिया शरम्। वश्या प्रतोदमाद्द्याद्वेदने त्वय्रजन्मनः ॥६२ पिता पितामहो भ्राता सकुरयो जननी तथा। कन्याप्रदः पूर्वनाशे प्रकृतिस्थः परः परः ॥६३ अप्रयच्छन् समाप्नोति भ्रूणह्यामृतावृतौ । गम्यन्त्वभावे दातृणां कन्या कुर्यात् स्वयम्बरम्।।६४ सकृत् प्रदीयते कन्या हरंस्तां चौरदण्डभाक्। दत्तामपि हरे न् पूर्वाच्छ्रे यांश्चेद्वर आव्रजेत् ॥६४ अनाख्याय द्दहोषं द्ण्ड्य उत्तमसाहसम्। अदुष्टाञ्च त्यजन् कन्यां दूषयंश्च मृषा शतम्।।६६ अक्षता वा क्षता चैव पुनर्भूः संस्कृता पुनः। स्वैरिणी या पति हित्वा सवर्णं कामतः श्रयेन् ॥६७ अपुत्रां गुर्वनुज्ञातो देवरः पुत्रकाम्यया। सिपण्डो वा सगोत्रो वा घृताभ्यक्त ऋतावियात्।।६८ आगर्भ सम्भवाद् गच्छेत् पतितरहवन्यथा भवेत्। अनेन विधिना जातः क्षेत्रजः स भवेत् सुतः ॥६६ हृताधिकारां मलिनां पिण्डमात्रोपजीविनीम्। परिभूतामध शय्यां वासयेद् व्यभिचारिणीम् ॥७० सोमः शौचं ददौ तासां गन्धर्वाश्च शुभां गिरम्।

पावकः सर्वभक्ष्यत्वं मेध्या वे योषितो ह्यतः ॥७१

व्यभिचाराहती शुद्धिर्गर्भे त्यागो विधीयते। गर्भं अर्तृवधादी च तथा मह्ति पातके ॥७२ सुरापी व्याधिता धूर्ता वन्ध्यार्थवन्यप्रियभ्वदा। क्वीप्रसूखाधिवेत्तव्या पुरुषद्वेषिणी तथा।।७३ अधिविन्ना तु भर्तव्या महदेनोऽन्यथा भवेत्। यत्रानुकूल्यं दम्पत्योक्षिवर्गस्तत्र वर्द्धते ॥ ७४ सृते जीवति वा पत्यौ या नान्यमुपगच्छति। सेह कीर्तिभवाप्नोति मोइते चोमया सह।।७४ आज्ञासम्पादिनीं दक्षां वीरसूं प्रियवादिनीम्। त्यजन् दाप्यस्त्रतीयांशमद्रव्यो भरणं खियाः ॥७६ स्रीभिर्भर्तृवचः कार्यमेषधर्मः परः स्त्रियाः। आ शुद्धे: संप्रतीक्यो हि महापातकदृषित: ॥७७ छोकानन्त्यं दिशः प्राप्तिः पुत्रपौत्रप्रपौत्रकैः। यस्मात्तस्मात् स्त्रियः सेव्या भर्त्तव्याश्च सुरक्षिताः ॥७८ /षोडशर्त्तुनिशाः स्त्रीणां तासु युग्मासु संविशेत्। ब्रह्मचार्येव पर्वाण्याद्यः अतस्रत्तु वज्येत् ॥७६ एवं गच्छन् स्त्रियं क्षामां मघां मूलञ्च वर्जयेत्। शस्त इन्दौ सक्कत् पुत्रं लक्षण्यं जनयेत् पुमान् ॥८० यथा कामी भवेद्वापी स्त्रीणां वरमनुस्मरन्। स्वदारनिरतश्चेव स्त्रियो रक्ष्या यतः स्मृताः ॥८१ भर्तभात्पितृज्ञातिश्वश्रूश्वशुरदेवरैः। बन्धुभिश्च स्त्रियः पूज्या भूषणाच्छादनाशनैः ॥८२ /

संयतोपस्करा दक्षा हृष्टा व्ययपराङ्मुखी । कुर्याच्छ्रशुरयोः पादवन्दनं भर्तृतत्परा ॥८३ क्रीडां शरीरसंस्कारं समाजोत्सवदर्शनम्। हास्यं परगृहे यानं त्यजेत् प्रोधितभर्तृका ॥८४ रक्षेत् कन्यां पिता विन्नां पतिः पुत्रास्तु वाद्धं के। अभावे ज्ञातयस्तेषां स्वातन्त्रयं न कचित् स्त्रियाः ॥८५ /पितृमात्सुतंभ्रातृशः श्रूश्वशुरमातुलैः । हीना न स्याद्विना भत्र्जा गईणीयान्यथा भवेत्।।८६ पतिप्रियहिते युक्ता स्वाचारा संयतेन्द्रिया। इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुपमं सुखम्।।८७ सत्यामन्यां सवर्णायां धर्मकार्यं न कारयेत्। सवर्णासु विधौ धर्मे ज्येष्ठया न विनेतराः ॥८८ द्राहियत्वाग्निहोत्रेण स्त्रियं वृत्तवती पतिः। आहरेद्विधिवहारानग्नीश्चैवाविलम्बयन्।।८६

अथ वर्णजातिविवेकवर्णनम्। सवर्णभ्यः सवर्णासु जायन्ते वै सजातयः। अनिन्द्येषु विवाहेषु पुत्राः सन्तानवर्द्ध नाः ॥६५ / विप्रान्सूर्द्धाभिषिक्तो हि क्षत्त्रियाणां विशः स्त्रियाम्। अम्बष्टः शूद्यां निषादो जातः पारशवोऽपि वा ॥६१ वैश्याशू योस्तु राजन्यान्माहिष्योग्रौ सुतौ समृतौ। वैश्यात्तुं करणः शूद्यां विन्नाक्ष्येषविधिः स्मृतः ॥६२ बाह्यण्यां क्षत्रियात् सूतो वैश्याद्वेदेहकस्तथा । शूद्राजातस्तु चाण्डालः सर्वधर्मवहिष्कृतः ॥६३

क्षत्रिया मागधं वैश्याच्छूद्रात् क्षत्तारमेव तु । श्रूद्रादायोगवं वेश्या जनयामास वे सुतम् ॥६४ माहिष्येण करण्यान्तु रथकारः प्रजायते । असरसन्तस्तु विज्ञेयाः प्रतिलोमानुलोमजाः ॥६५ जात्युत्कर्षा युगे ज्ञेयः सप्तमे पश्चमेऽपि वा । व्यत्यये कर्मणां साम्यं पूर्ववचोत्तराधरम ॥६६

अथ गृहस्थधमेप्रकरण वर्णनम्। कर्म स्मार्स विवाहामी कुर्वीत प्रत्नहं गृही। दायकालाहते वाऽपि श्रीतं वैतानिकाग्निषु ॥८७ शरीरचिन्तां निर्वर्त्यं कृतशौचिविधिर्द्धिजः। प्रातः सन्ध्यामुपासीत दन्तधावनपूर्वेकम् ॥८८ हुत्वाग्नीन् सूर्यदेवत्यान् जपेन्मन्त्रान् समाहितः। वेदार्थानधिगच्छेत शास्त्राणि विविधानि च ॥६६ उपेयादीश्वरङ्चेव योगञ्जेमार्थसिद्धये। स्नात्वा देवान् पितृंश्चैव तर्पयेद्ईयेतथा ॥१०० वेदाथर्वपुराणानि सेतिहासानि शक्तितः। जपयज्ञप्रसिद्ध-वर्थ विद्याश्वाध्यात्मिकीं जपेत्।।१०१ बिकर्मस्वधाहोमस्वध्यायातिथिसिकयाः। भूतपित्रमरब्रह्ममनुष्याणां महामखाः ॥१०२ देवेभ्यश्च हुतादन्नाच्छेषाद् भूतविंछ हरेत्। अनं भूमी श्वचण्डालवायोभ्यश्चैव निक्षिपेत् ॥१०३ अन्नं पितृमनुष्येभ्यो देयमप्यन्वहं जलम्। स्वाध्यायसन्वहं कुर्यात् न पचेदन्नमात्मनः ॥१०४

बालं सु(स्व)वासिनीवृद्धगर्भिण्यातुरकन्यकाः। सम्भोज्यातिथिभृत्यांश्च दम्पत्योः शेषभोजनम् ॥१०४ आपोशानेनोपरिष्टाद्धस्ताद्श्नता तथा। अनग्नममृतञ्चेव कार्यमन्नं द्विजन्मना ॥१०६ अतिथित्वेऽपि वर्णभ्यो देयं शक्तयानुपूर्वशः। अप्रणोद्योऽतिथिः सायमपि वाग्भूतृणोद्कैः,।।१०७ (सत्कृत्य भिक्षवे भिक्षा दातच्या सुव्रताय च। भोजयेचागतान् काले सखिसम्बन्धिवान्धवान् ॥१०८ महोक्षं वा महाजं वा श्रोत्रियायोपकल्पयेत्। सिकयाश्वासनं स्वादु भोजनं सुनृतं वचः ॥१०६ प्रतिसम्बसरं त्वर्घाः स्नातकाचार्यपार्थिवाः । प्रियो विवाह्यश्च तथा यज्ञं प्रत्यत्विजः पुनः ॥११० अध्वनीनोऽतिथिज्ञयः श्रोत्रियो वेदपारगः। मान्यावेतौ गृहस्थस्य ब्रह्मलोकमभीप्सतः ॥१११ परपाकरुचिर्न स्याद्निन्द्यामन्त्रणाहते। वादगणिपादचापल्यं वर्जयेचातिभोजनम् ॥११२ अतिथि श्रोत्रियं तृतमासीमान्ताद्नुवजेत्। अहः शेषं सहासीत शिष्टेरिष्टेश्च बन्धुभिः ॥११३ उपास्य पश्चिमां सन्ध्यां हुत्वाग्नीं स्तानुपास्य च। भृत्यः परिवृतो भुक्ता नातितृप्योऽथ संविशेत्।।११४) ं ब्राह्मे मुहूर्त उत्थाय चिन्तयेदात्मनोहितम्। धर्मार्थकामान् स्वे काले यथाशक्ति न हापयेत् ११४

विद्याकर्मवयोबन्धुवित्तैर्मान्या यथाक्रमम्। एतैः प्रभूतैः शूद्रोऽपि वार्द्धक्ये मानसहित ॥११६ वृद्धभारिनृपस्नातस्रीरोगिवरचिक्रगाम्। पन्थादेयोनृपस्तेषां मान्यः स्नातस्तु भूपतेः ॥११७ इज्याध्ययनदानानि वैश्यस्य क्षत्त्रियस्य च। प्रतिप्रहोऽधिको विप्रे याजनाध्यापने तथा ॥११८ प्रधानं क्षत्त्रिये कर्म प्रजानां परिपालनम्। कुसीदकुषिवाणिज्यं पासुपाल्यं विशः रमृतम् ॥११६ शूद्रस्य द्विजशुश्रूषा तयाऽजीवन् वणिग्भवेत्। शिल्पैर्वा विविधैर्जीवेद्द्विजातिहितमाचरन् ॥१२० भार्यारतिः शुचिर्भृ त्यभता श्राद्धक्रियारतः। नमस्कारेण मन्त्रेण पश्चयज्ञान् न हापयेत् ॥१२१ अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचिमन्द्रियनिग्रहः। दानं दया दमः क्षान्तिः सर्वेषां धर्मसाधनम् ॥१२२ (वयोबुद्ध चर्थवाग्वेषश्रुताभिजनकर्मणाम्। आचरेत् सदशीं वृत्तिमजिह्यामशठां तथा ॥१२३ त्रैवार्षिकाधिकान्नो यः स तु सोमं पिवेद्द्विजः। प्राक्सौमिकाः क्रियाः कुर्याद्यस्यानं वार्षिकं भवेत्।।१२४ प्रतिसम्बत्सरं सोमः पशुः प्रत्ययनं तथा। कर्तव्याप्रयेणेष्टिश्च चातुर्मास्यानि चैव हि ॥१२४ एषामसम्भवे कुर्यादिष्टि वैश्वानरी द्विजः। हीनकर्लं न कुर्वीत सति द्रव्ये फलप्रद्रम्।।१२६

ऽध्यायः] आचाराध्यायः स्नातकधर्मप्रकरणवर्णनम्।

चण्डालो जायते यज्ञकारणाच्छूद्रभिक्षिता। यज्ञार्थं लब्धमदद्द्रासः काकोऽपि जायते।।१२७ कुपूल कुम्भीधान्यो वा च्येहिकोऽश्वस्तनोपि वा। जीवेद्वापि सिलोब्छेन श्रेयानेषां परः परः।।१२८

अथ स्नातकधर्मप्रकरणवर्णनम्। न स्वाध्याय विरोध्यर्थमीहेत न यतस्ततः। न विरुद्ध प्रसङ्गेन सन्तोषो च सदा भवेत्।।१२६ राजान्तेवासियाज्येभ्यः सीद्निच्छेद्धनं क्षुधा। दम्भिहैतुकपाषण्डिवकवृत्तीश्च वर्जयेत्।।१३०/ ⁽शुक्लाम्बरधरो नीचकेशस्मश्रुनखः शुचिः। न भाय्यःदर्शनेऽश्नीयान्नेकवासा न संस्थितः ॥१३१ न संशयं प्रपद्येत नाकस्माद्प्रियं वदेत्। नाहितं नानृतं चैव न स्तेनः स्यान्नवार्द्घुषिः ॥१३२ दाक्षायणी ब्रह्मसूत्री वेणुमान् सकमण्डलुः। कुर्यात्प्रदक्षिणं देवमृद्गो विप्रवनस्पतीन् ॥१३३ न तु मेहेन्नदोच्छायावत्मगोष्टाम्बुभस्मसु । न प्रत्यकां प्रिगोसोमसन्ध्याम्बु स्त्री द्विजन्मनः ॥१३४ नेक्षेतार्कं न नग्नां स्त्रीं न च संस्पृष्टमेथुनाम्। नच सूत्रपुरीषं वा नाशुचीराहुतारकाः ॥१३५ अयं मे वज्र इत्येवं सवेमन्त्रमुदीरयन्। वर्षत्यप्रावृतो गच्छेत् स्वप्यात् प्रत्यक्शिरा न च ॥१३६ ष्ठीवनास्त्रक्शकुन्मूत्ररेतांस्यप्सु न निक्षिपेत्। पादी प्रतापयेत्राग्नी न चैनमसिल्ड्डयेत् ॥१३७

जलं पिबेन्नाञ्जलिना शयानं न प्रबोधयेत्। नाक्षेः क्रीडेन्न धर्मध्नैट्याधितैट्यां न संविशेत् ॥१३८ विरुद्धं वर्जयेत् कर्म्भ प्रेतधूमं नदीतरम्। केशभस्म तुषाङ्गार कपालेषु च संस्थितिम्।।१३६ नाचक्षीत धयन्तीं गां नाद्वारेण विशेत् कचित्। न राज्ञः प्रतिगृज्ञीयाल्लुब्धस्यो च्छः स्ववर्तिनः ॥१४० प्रतिप्रहे सूनिचक्रिञ्चजिवेश्या नराधिपाः। दुष्टा दशगुणं पूर्जात् पूर्वादेते यथोत्तरम् ॥१४१ अध्यायानामुपाकम्म श्रावण्यां श्रवणेन वा। हस्तेनौवधि भावे वा पञ्चम्यां श्रावणस्य तु ॥१४२) (पौषमासस्य रोहिण्यामष्टकायामथापि वा। जिलान्ते च्छन्दसां कुर्यात्तदुत्सर्गं विधि वहिः ॥१४३ त्र्यहं प्रतेष्वनध्यायः शिष्यर्त्वग्गुरुबन्धुषु । उपाकम्मेणि चोत्सर्ग स्वशाखाश्रोत्रिये मृते ।।१४४ सन्ध्यागर्जितनिर्घात भूकम्पोलकानिपातने । समाप्य वेदं द्युनिशमारण्यकमधीत्य च ॥१४५ पञ्चदृश्यां चतुर्दश्यामष्टम्यां राहुसूतके। भृतुसन्विषु भुक्ता वा श्राद्धिकं प्रतिगृह्य च ॥१४६ पशुमण्डूक नकुलमार्जारश्वाहि मूर्षिकैः। कृतेस्तरे त्वहोरात्रं शत्रु(शक्त्र)पाते तथोच्छ्ये ॥१४७ श्वक्रोष्टु गर्दभोॡ्कसामवाणार्तनःस्वने। अमेध्यशवशूद्रान्त्यश्मशानपतितान्तिके ॥१४८

देशेऽशुचावात्मनि च विद्युतस्तनितसंप्लवे। भुक्ताईपाणिरम्भोऽन्तरई रात्रेऽतिमाहते ॥१४६ पांशुवर्षे दिशां दाहे सन्ध्यानीहारभीतिषु। धावतः पूतिगन्धे च शिष्टे च गृहमागते ॥१५० खरोष्ट्रयानहस्त्यश्वनौवृक्षेरिणरोहणे। सप्तत्रिंशदनध्यायानेतां स्तात्कालिकान् विदुः ॥१५१ देवर्त्वक्सातकाचार्यराज्ञां छायां परिखयाः । निकामेद्रक्तविण्मूत्रष्टीवनोद्दर्तनादि च ॥१५२ विप्राहिक्षत्रियात्मानो नावज्ञेयाः कदाचन । आमृत्योः श्रियमाकांक्षेत्र कञ्चिन्मर्मणि स्पृशेत् ॥१५३ दूरादुच्छिष्टविण्मूत्रपादाम्भांसि समुत्सृजेत्। श्रुतिसमृत्युदितं सम्यक् नित्यमाचारमाचरेन् १५४ गोत्राह्मणानलान्नानि नोच्छिष्टानि पदासपूरोत्। न निन्दा ताड़ने कुर्यात्सुतं शिष्य व ताड़येत्।।१४४! (कर्मणा मनसा वाचा यहाद्धरमं समाचरेत्। अस्वर्ग्यं लोकविद्विष्टं धर्ममण्याचरेन्न तु ॥१५६ मातृपित्रतिथिभ्रातृज्ञातिसम्बन्धिमातुर्हैः। वृद्धबालातुराचार्य्यवैद्यसंश्रितबान्धवैः ॥१५७ भृत्विक्पुरोहितापत्य भार्यादास सनाभिभिः। विवादं वर्जयित्वा तु सर्वां लोकान् जयेद् गृही ॥१५८) पिश्वपिण्डाननुद्धृत्य न स्नायात् परवारिषु। स्नायान्नदी देवखातगर्त्त प्रस्रवणेषु-च ॥१५६

परशय्यासनोद्यानगृह्यानानि वर्जयेत्।
अदत्तान्यग्निहीनस्य नान्नमद्यादनापदि ॥१६०
कद्य्यंवद्वचौराणां क्लोवरङ्गवतारिणाम्।
वैणाभिशस्तवाद्यूषिगणिकागणदीक्षिणाम् ॥१६१
चिकित्सकातुरकुद्धपुंश्रलीमत्तविद्विषाम्।
क्रूरोग्रपतितत्रात्यदाम्भिकोच्छिष्टभोजिनाम् ॥१६२
अवीरस्नीस्वर्णकारस्नीजितग्रामयाजिनाम्।
शस्त्रविक्रयिकम्मारतुत्रवायश्वजीविनाम्।।१६३
नृशंसराजरजककृतध्नवधजीविनाम्।
चेलधावसु(धा)राजीविसहोपपतिवेश्मनाम्।।१६४
पिश्चनानृतिनोश्चेव तथा चाक्रिकवन्दिनाम्।
एषामन्नं न भोक्तव्यं सोमविक्रयिणस्तथा।।१६४)

अथ भक्ष्याभक्ष्यप्रकरणवर्णनम्।

रअनर्ज्ञितम् वृथामांसं केशकीटसमन्वितम् ।

शुक्तं पर्च्युषितोच्छिटं श्वस्पृष्टं पतितेक्षितम् ॥१६६

उद्द्यास्पृटसंघुष्टं पर्च्यायाङ्गञ्च वर्जयेत् ।

गोव्रातं शक्रनोच्छिटं पद स्पृष्टञ्च कामतः ॥१६७

श्रूद्रेषु दासगोपालकुलिमत्राद्धं सीरिणः ।

भोज्याङ्गानापितश्चेव यख्रात्मानं निवेदयेत्॥१६८

अन्नं पर्युषितं भोज्यं स्नेहाक्तं चिरसंस्थितम् ।

अस्नेहा अपि गोधूमयवगोरस विक्रियाः॥१६६

सन्धिन्यनिर्दशाऽवत्सगोः पयः परिवर्जयेत्।

औष्ट्रमैकशफं स्नैणमारण्यकमथाविकम् ॥१७०

देवतार्थं हविः शिप्रुं लोहितान् त्रश्चनांस्तथा। अनुपाकृतमांसानि विड्जानि करकाणि च ।।१७१ क्रव्याद् पक्षिद्रात्यूह् शुकप्रत्युद्दिष्टिभान्। सारसेकराफान् हंसान् सर्वाश्च प्रामवासिनः ॥१७२ कोयष्टिप्लवचकाह्ववलाकवकविष्किरान्। वृथाकृषरसंयावपायसापूपशष्कुलीः ॥१७३ कलविङ्कं सकाकोलं कुररं रज्जुदालकम्। जालपादान् खञ्जरीटानज्ञातांश्च मृगद्विजान् ॥१७४ चाषांश्च रक्तपादांश्च सौनं वल्लूरमेव च। मत्स्यांश्च कामतो जम्भ्वा सोपवासस्त्र्यहं वसेत्।।१७४ पलाण्डुं विड्वराहञ्च छत्राकं शामऋषक्रटम् । ल्युनं गृञ्जनञ्चीव जम्बा चान्द्रायणं चरेत्।।१७६/ ¹ भक्ष्याः पञ्चनखाः सेधागोधाकच्छपशहकाः। (शश्च मत्स्येष्वपि हि सिंहतुण्डकरोहिताः ॥१७७ तथा पाठीनराजीवसशलकाश्च द्विजातिभिः। अतः शृणुत मांसस्य विधि भक्षणवर्ज्जने ॥१७८ प्राणात्यये तथा श्राद्धे प्रोक्षितं द्विजकाम्यया । देवान् पितृन् समभ्यच्च खादन् मांसं न दोषभाक् ।१७६ वसेत् स नरके घोरे दिनानि पशुरोमभिः। सम्मितानि दुराचारो योहन्त्यविधिना पशून् ॥१८० सर्वान् कामानवाप्नोति वाजिमेधफलं तथा। गृहेऽपि निवसन् विप्रो मुनिर्मासस्य वर्जनात् ॥१८१)

30

अथ द्रव्यशुद्धिप्रकरणवर्णनम्। सीवर्णराजताञ्जानामृद्ध्वपात्रप्रहाश्मनाम्। शाकरज्जुमूलफलवासोविद्लचर्मणाम् ॥१८२ पात्राणाश्वमसानाश्व वारिणा शुद्धिरिष्यते। चरुसुक्सुवसस्नेहपात्राण्युष्णेन वारिणा ॥१८३ स्पयशूर्पाजिनधान्यानां मुख्लोदूखलानसाम् । प्रोक्षणं संहतानाञ्च वहूनां चैव वाससाम् ॥१८४ तक्षणं दारुशृङ्गास्थनां गोवालैः फलसम्भुवाम् । 97 मार्ज्जनं यज्ञपात्राणां पाणिना यज्ञकर्मण ॥१८४ सोषैहदक गोमूत्रैः शुद्धयाविककौशिकम्। सश्रीफलैरंशुपट्टं सारिष्णैः कुतपन्तथा ॥१८६) सगौरसर्वपैः श्लीमं पुनःपाकान् महीमयम्। कारुहस्तः ग्रुचिः पण्यं भैक्षं योषिन्मुखस्तथा ॥१८७ भूशुद्धिर्मार्जनादाहात् कालाद् गोक्रमणात्तथा। सेकादुल्छेखनाल्छेपात्गृहं मार्जनलेपनात् ॥१८८ गोवातेऽत्रे तथा कीटमक्षिकाकेशदृषिते। संिळ भस्म मृद्वारि प्रक्षेप्तव्यं विशुद्धये ॥१८६ त्रपुक्षीसकताम्राणां क्षाराम्छोदकवारिभिः। भस्माद्धिः कांस्यलौहानां ग्रुद्धिः प्लावो द्रवस्य च ॥१६० अमेण्याक्तस्य मृत्तोयैः शुद्धिर्गन्धापकर्षणात्। बाक्शस्तमम्बुनिणिक्तमज्ञातव्य सदा शुचि ॥१६१ शुचि गोतृप्तिकृतोयं प्रकृतिस्थं भहीगतम्। तथा सांसं स्वचण्डालकञ्यादादिनिपातितम् ॥१६२

रिमरमी रजच्छाया गौरश्वो वसुधानिलः। विश्रुषोमक्षिका स्पर्शे बत्सः प्रस्रवणे शुचिः ॥१६३ अजाश्वं मुखतो मेध्यं न गौर्न्न नरजामलाः। पन्थानश्च विशुद्ध्यन्ति सोमसूर्य्यांशुमारुतैः ॥१६४ युखजा विप्रुषोमेध्यास्तथाचमनविन्दवः। श्मश्रु चास्यगतं दस्तसक्तं मुक्ता ततः शुचिः ॥१६५ स्नात्वा पीत्वा क्षुते सुप्ते भुक्ते रथ्योपसर्पणे । आचान्तः पुनराचामेद्वासोविपरिधाय च ॥१९६ रथ्याकर्दमतोयानि स्पृष्टान्यन्त्यश्ववायसैः। मारुतेनैव शुःयन्ति पक्वेष्टकचितानि च ॥१६७ अथ दानप्रकरणवर्णनम्। तपरतत्वाऽसृजद्ब्रह्या ब्राह्मणान् वेद्गुप्तये । तृप्तवर्थं पितृदेवानां धर्मसंरक्षणाय च ॥१६८) सर्वस्य प्रभवो विप्राः श्रुताध्ययनशालिनः। तेभ्यः क्रियापराः श्रेष्ठास्तेभ्योऽप्यध्यात्मवित्तमाः ॥१६६ न विध्या केवलया तपसा वाऽपि पात्रता। यत्र वृत्तिममे चोभे तिद्ध पात्रं प्रकीर्तितम्।।२०० (गोभूतिलहिरण्यादि पात्रे दातव्यमर्चितम्। नापात्रे विदुषा किञ्चिदात्मनः श्रेय इच्छता ॥२०१ विद्यातपोभ्यां हीनेन न तु प्राह्यः प्रतिप्रहः। गृह्णन् प्रदातारमधोनयत्यात्मानमेव च ॥२०२, दातव्यं प्रत्यहं पात्रे निमित्तेषु विशेषतः। याचितेनापि दातव्यं श्रद्धापूतव्य शक्तितः॥२०३

हेमशृङ्गी शफरोप्यैः सुशीला वस्त्रसंयुता। सकांस्यपात्रा दातव्या क्षीरिणी गौः सदक्षिणा ॥२०४ दातास्याः स्वर्गमाप्नोति वत्सराह्यों मसम्मितान्। कपिला चेत्तारयति भूयश्चा सप्तमं कुलम्।।२०५ स वतारीमतुल्यानि युगान्युभयतोमुखीम्। दातास्याः स्वर्गमाप्नोति पूर्णेन विधिना दृद्त् ॥२०६ याबद्वत्सस्य पादौ ह्रौ सुखं योनौ च दृश्यते। तावद् गौः पृथिवी ज्ञेया यावद् गर्भं न मुश्वित ॥२०७ यथा कथिवहत्त्वा गां घेनुं वाऽघेनुमेव वा। अरोगामपरिक्विष्टां दाता स्वर्गे महीयते ॥२०८) (श्रान्तसम्वाहनं रोगि परिचर्या सुरार्चनम्। पादशौचं द्विजोच्छिष्टमार्जनं गोप्रदानवत् ॥२०६ भूदीपाश्वान वस्नाम्भिस्तिलसिं प्रतिश्रयान्। नैवेशिकं स्वर्णधुर्यं दस्वा स्वर्गे महीयते ॥२१० गृह्धान्याभयोपानच्छत्रमाल्यानुलेपनम्। यानं वृक्षं प्रियं (जलं) शय्यां दस्वात्यन्तं सुखी भवेत् ॥२११ सर्वदानमयं ब्रह्म प्रदानेभ्योऽधिकं यतः। तइदृत् समवाप्नोति ब्रह्मलोकमविच्युतम् ॥२१२ प्रतिप्रहसमर्थोऽपि नादत्ते यः प्रतिप्रहम्। ये छोका दानशीलानां स तानाप्नोति पुष्कलान्।।२१२) कुशाः शाकं पयो मत्स्यागन्धाः पुष्पं दिधि क्षितिः। मांसं शय्यासनं धानाः प्रत्याख्येयं न वारि च ॥२१४

अयाचिता हतं त्राह्ममिप दुष्कृतकर्मणः। अन्यत्र कुलटाषण्डपतितेभ्य स्तथा द्विषः॥२१५ देवातिथ्यर्चनकृते गुरुभृत्यादिवृत्तये। सर्वतः प्रतिगृह्णीयादात्मवृत्तार्थमेव च॥२१६

अथ श्राद्धप्रकर्णम्। अमावास्याष्टका वृद्धिः कृष्णपक्षोऽयनद्वयम् । द्रव्यं ब्राह्मणसम्पत्तिर्विषुवत् सूर्यसंक्रमः ॥२१७ व्यतीपातो गजच्छाया प्रहणं चन्द्रसूर्ययोः। श्राद्धं प्रति रुचिश्चैव श्राद्धकालाः प्रकीर्तिताः ॥२१८ अग्याः सर्वेषु वेदेषु श्रोत्रियो ब्रह्मविद्यवा। वेदार्थविज्ज्येष्ठसामा त्रिमधु स्निसुपर्णैकः ॥२१६ ऋदिवक् स्वस्त्रीयजामातृयाज्यश्वशुरमातुलाः। तृणाचिकेत दौहित्र शिष्यसम्बन्धिबान्धवाः ॥२२० कर्मनिष्ठा स्तपोनिष्ठाः पञ्चाग्निब्रह्मचारिणः। पितृसातृपराश्चैव ब्राह्मणाः श्राद्धसम्पदः ॥२२१ रोगी हीनातिरिक्ताङ्गः काणः पौनर्भव स्तथा। अवकीर्णि कुण्डगोली कुनखी श्यावदन्तकः ॥२२२ भृतकाष्यापकः (क्रूरः) हीवः कन्यादूष्यभिशस्तकः । मित्रध्रुक् पिशुनः सोमविक्रयी च विनिन्द्कः ॥२२२ मातापितृ गुरुत्यागी कुण्डाशी वृषलात्मजः। परपूर्वापितः स्तेनः कर्मदुष्टाश्च निन्दिताः ।।२२४ निमन्त्रयीत पूर्वेद्युत्रीह्मणानात्मवान् शुचिः। तैश्चापि संयतैर्भाव्यं मनोवाक्कायकर्मभः ॥२२४

अपराह्वे समभ्यर्च स्वागतेनागतांस्तु तान्। पवित्रपाणिराचान्तानासनेषूपवेशयेत्।।२२६ युग्मान् देवे यथाशक्ति पित्रयेऽयुग्मांस्तथैव च। परिश्रिते हुचौ देशे दक्षिणाप्तवने तथा ॥२२७) द्वि। देवे प्राक्त्रयः पित्रये उद्गेकेकमेय वा। मातामहानामप्येवं तन्त्रं वा वैश्वदेविकम् ॥२२८ पाणिप्रक्षालनं दत्त्वा विष्टरार्थं कुशानिप । आवाहयेद्नुज्ञातो विश्वेदेवास इत्यृचा ॥२२६ यवैरन्वदकीर्याथ भाजने सपवित्रके। शन्नो देव्या पयः क्षिप्त्वा यवोऽसीति यवां स्तथा ॥२३० या दिञ्या इति मन्त्रेण हस्तेष्त्रध्यं विनिःक्षिपेत्। द्स्वोद्कं गन्धमाल्यं घूपं वासः सद्योपकम् ॥२३१ तथाच्छादनदानञ्च करशौचार्थमम्बु च। अपसन्यं ततः कुत्वा पितृणामप्रदक्षिणम् ॥ द्विगुणांस्तु कुशान् दस्वा ह्युशन्तस्तेत्यृचा पितृन्।।२३२ आवाह्य तद्नुज्ञातो जपेदायान्तु नस्ततः। यवार्थास्तु तिलैः कार्याः कुर्याद्ध्यादिपूर्ववत्।।२३३ द्त्वार्घ्यसंस्रवां स्तेषां पात्रे कृत्वा विधानतः। पितृभ्यः स्थानमसीति न्युब्जं पात्रं करोत्यधः ॥२३४ अग्नौ करिष्यक्रादाय पुच्छत्यन्नं घृतष्ठुतम्। कुरुष्वेत्यभ्यनुज्ञातो हुत्वाग्नौ पितृयज्ञवत्।।२३४

हुतशेषं प्रद्यात् भाजनेषु समाहितः। यथा लाभोपपन्नेषु रौप्येषु तु विशेषतः ॥२३६ द्त्वान्नं पृथिवी पात्रमिति पात्राभिमन्त्रणम्। कुत्वेदं विष्णुरित्यन्ने द्विजाङ्कुष्ठं निवेशयेत्।।२३७ सव्याहतिकां गायत्रीं मधुवाता इति त्यृचम्। जप्त्वा यथा सुखं वाच्यं भुझीरंस्तेऽपि वाग्यताः ॥२३८ अन्निष्टं ह्विष्यञ्च द्द्याद्क्रोधनोऽत्वरः। आतृप्तेस्तु पवित्राणि जप्त्वा पूर्वजपन्तथा।।२३६ अन्नमादाय तृप्ताः स्थ शेषं चैवानुमन्य च। तद्रनं विकिरेद् भूमौ दद्याचापः सकृत् सकृत्।।२४० सर्वमन्रमुपादाय सतिलं दक्षिणामुखः। उच्छिष्टसनिधौ पिण्डान् प्रदद्यात् पितृयज्ञवत् ॥२४१ मातामहानामप्येवं द्यादाचमनं ततः। स्वस्ति वाच्यं ततः कुर्यादक्षय्योदकमेव च ॥२४२ द्त्वा तु दक्षिणां शत्तया स्वधाकारमुदाहरेत्। वाच्यतामित्यनुज्ञातः प्रकृतेभ्यः स्वधोच्यताम् ॥२४३ ब्रू युरस्तु स्वधेत्येवं भूमौ सिञ्चेत्ततो जलम्। विश्वेदेवाश्च प्रीयन्तां विप्रैश्चीक्त इदं जपेत्।।२४४ दातारो नोऽभिवद्धं न्तां वेदाः सन्ततिरेव च। श्रद्धा च नो माव्यगमद्वहु देयभ्व नोऽस्त्वित ॥२४४ अन्नञ्च नो बहु भवेद्तिथींश्च लभेमहि। याचितारश्च नः सन्तु मा च याचिष्म कञ्चन ॥२४६

इत्युक्ता तु प्रिया वाचः प्रणिपत्य विसर्जयेत्। वाजे वाजे इति प्रीतः पितृपूर्वं विसर्जनम् ॥२४७ यस्मिस्ते संस्रवाः पूर्वमर्घ्यपात्रे निवेशिताः। पितृपात्रं तदुत्तानं कृत्वा विप्रान् विसर्जयेत्।।२४८ प्रदक्षिणमनुब्रज्य भुङ्गीत पितृसेवितम्। ब्रह्मचारी भवेत्तान्तु रजनीं ब्राह्मणैः सह ॥२४६ एवं प्रदक्षिणं कृत्वा वृद्धौ नान्दीमुखान् पितृन्। यजेत द्धिकर्कन्धूमिश्रान् पिण्डान् यवैः क्रिया ॥२५०) (एकोहिष्टं दैवहीनमेकाध्येकपवित्रकम्। आवाहनामीकरगरहितं द्यपसञ्यवत् ॥२५१ उपतिष्ठतागित्यक्षय्यस्थाने विप्रविसर्जने । अभिरम्यतामिति वदेद् ब्रू युस्तेऽभिरताः स्म इ ॥२५२ गन्धोदकतिलैं युंक्तं कुर्यात् पात्रचतुष्ट्यम्। अर्घार्थं पितृपात्रेषु प्रेतपात्रं प्रसेचयेत् ॥२५३ ये समानाइति द्वाभ्यां शेषं पूर्ववदाचरेत्। एतत् सपिण्डीकरणमेकोहिष्टं स्त्रिया अपि ॥२५४ अर्वाक् सपिण्डीकरणं यस्य सम्वत्सराद्भवेत्। तस्याप्यन्नं सोदकुम्भं दद्यात् सम्बत्सरं द्विजे ॥२५५ यृताहिन तु कर्त्तव्यं प्रतिमासन्तु वत्सरम्। प्रतिसम्बत्सरब्चेव आद्यमेकाद्शेऽहनि ॥२४६ पिण्डांस्तु गोऽजविष्रभयो द्द्याद्ग्री जलेऽपिवा। प्रक्षिपेत् सत्सु विप्रेषु द्विजोच्छिष्टं न मार्जयेत् ॥२५७

हविष्यान्नेन वै मासं पायसेन तु वत्सरम्। मात्त्यहारिणकौरभ्रशाकुनच्छागपार्षतैः ॥२५८ ऐणरीरववाराहशाशौमींसैर्यथाक्रमम्। मासवृद्धचा हि तृष्यन्ति दत्तेरिह पितामहाः ।।२४६ खड्गामिषं महाशल्कं मधु मुन्यन्नमेव च। लोहामिषं महाशाकं मांसं वाद्धींणसस्य च ॥२६० यहदाति गयास्रश्च सर्वमानन्त्यमुच्यते। तथा वर्षात्रयोदश्यां मघासु च न संशयः ॥२६१ कन्यां कन्यावेदिनश्च पशून् मुख्यान् सुतानपि । द्युतं कृषिञ्च वाणिज्यं द्विशफैकशफांस्तथा ॥२६२ ब्रह्मवर्चस्विनः पुत्रान् स्वर्णरूप्ये सकुप्यके । ज्ञातिश्रेष्ठं सर्वकामानाप्तोति श्राद्धदः सद्। ॥२६३ प्रतिपत्त्रभृतिष्वेतान् वर्जयित्वा चतुईशीम्। शक्षण तु हता ये वै तेभ्यस्तत्र प्रदीयते ॥२६४ स्वर्गं ह्यपत्यमोजश्च शौर्यं क्षेत्रं वलं तथा। पुत्रान् श्रेष्ठ्यभ्व सौभाग्यं समृद्धि मुख्यतां शुभम् ॥२६४ प्रवृत्तचक्रताञ्चैव वाणिज्यं प्रभुतां तथा। अरोगित्वं यशो वीतशोकतां परमां गतिम् ॥२६६ धनं विद्यां भिषक्सिद्धं कुप्यं गा अप्यजाविकम्। अश्वानायुश्च विधिवद् यः श्राद्धं सम्प्रयच्छति ॥२६७ कृत्तिकादिभरण्यन्तं स कामानाप्नुयादिमान्। आस्तिकः श्रद्धानश्च व्यपेतमद्मत्सरः ॥२६८

वसुरुद्रादितिसुताः पितरः श्राद्धदेवताः । श्रीणयन्ति मनुष्याणां पितृन् श्राद्धेन तर्पिताः ॥२६६ आयुः प्रज्ञां धनं विद्यां स्वर्गं मोक्षं सुखानि च । श्रयच्छन्ति तथा राज्यं श्रीता नृणां पितामहाः ॥२७०)

अथ विनायकादिकल्पप्रकरणम् विनायकः कर्मविन्नसिद्धचर्थं विनियोजित । गणानामाधिपत्याय रुद्रेण त्राह्मणा तथा ॥२७१ तेनोपसृष्टो यस्तस्य लक्षणानि निवोधत। स्वप्नेऽवगाहतेऽत्यर्थं जलं मुण्डांख्य पश्यति ॥२७२ काषायवाससश्चेव कञ्यादांश्चाधिरोहति। अन्यजेर्गर्देभैराष्ट्रैः सहैकत्रावतिष्ठते ॥२७३ व्रजन्तञ्च तथात्मानं मन्यतेऽनुगतं परः। विसना विफलारम्भः संसीद्द्यनिमित्ततः ॥२७४ तेनोपसृष्टो लभते न राज्यं राजनन्दनः। कुमारी न च भत्तीरमपत्यं नच गर्भिणी ॥२७५ आचार्यत्वं श्रोत्रियश्च न शिष्योऽध्ययनं तथा। विणग्लाभं नचाप्नोति कृषिञ्चैव कृषीवलः ॥२७६) रह्मपनं तस्य कर्तव्यं पुण्येऽह्नि विधिपूर्वकम्। गौरसर्षपकल्केन साज्येनोत्सादितस्य च ॥२७७ सर्वीषधैः सर्वगन्धैः प्रलिप्तशिरसस्तथा । भद्रासनोपविष्टस्य स्वस्तिवाच्या द्विजाः शुभाः ॥२७८ अश्वत्थानाद्गजस्थानाद्वल्मीकात् सङ्गमाद्घ्रदात्। मृत्तिकां रोचनां गन्धान् गुग्गुलुञ्चाप्सु निक्षिपेत् ॥२७६

ऽध्यायः] आचाराध्यायः विनायकाद्किलपप्रकरणवर्णनम् । १२६१

या आहता एकवर्णेश्चतुर्भिः करुशैह दात्। चर्मण्यानडुहे रक्ते स्थाप्यं भद्रासनं तथा ॥२८० सहस्राक्षं शतं धारमृषिभिः पावनं कृतम्। तेन त्वामभिषिश्वामि पावमान्यः पुनन्तु ते ॥२८१ भगं ते वरुणो राजा भगं सूर्यो बृहस्पतिः। भगमन्त्रश्च वायुष्ट भगं सप्तर्षयो ददुः ॥२८२ यत्ते केशेषु दौर्भाग्यं सीमन्ते यच मूर्द्ध नि। ललाटे कर्णयोरहणोरापस्तद् चन्तु ते सदा ॥२८३ स्नातस्य सार्षपं तेलं सुवेणौदुम्बरेण च। जुहुयान्मूर्द्ध नि कुशान् सब्येन परिगृह्य च ॥२८४ मितश्च संमितश्चेव तथा सालकटङ्कटः। कूष्माण्डो राजपुत्रश्च जपेत् स्वाहासमन्वितैः २८५ नामभिर्वालमन्त्रेश्च नमस्कार समन्वितैः। द्धाचतुष्पथे शूर्पे कुशानास्तीर्य सर्वतः ॥२८६ कृताकृतांस्तण्डुलांश्च पललौदनमेव च। मत्स्यान् पकांस्तथैवामान् मांसमेतावदेव तु ॥२८७ पुष्पं चित्रं सुगन्ध च सुराञ्च त्रिविधामपि। मूलकं पूरिकापूपांस्तथै(वोड्ड रक)वैरण्डिकाः स्रजः ॥२८८ द्ध्यन्न' पायसञ्चेव गुडपिष्टं समोदकम्। एतान् सर्वानुपाहत्य भूमौ कृत्वा ततः शिरः ॥२८६ विनायकस्य जननीमुपतिष्ठेत्ततोऽम्बिकाम्। दूर्वासर्षप(कल्केन)पुष्पाणां दस्वार्घं पूर्णमञ्जलिम् ॥२६०

रूपं देहि यशो देहि भाग्यं भगवति ! देहि मे । पुत्रान् देहि धनं देहि सर्वान् कामांश्च देहि से ।।२६१ ततः शुक्काम्बरधरः शुक्कगन्धानुहेपनः। ब्राह्मणान् भोजयेद्द्याद्वस्त्रयुग्मं गुरोरपि ॥२६२) एवं विनायकं पूज्यं ग्रहांश्चेवं विधानतः। कर्मणां फलमाप्नोति श्रियञ्चाप्नोत्यनुत्तमाम् ॥२६३ आदित्यस्य सदा पूजां तिलकस्वामिनस्तथा। महागणपतेश्चैव कुर्वन् सिद्धिमवाष्न्यात् ॥२६४ अथ प्रहशान्तिप्रकरणम्। (श्रीकामः शान्तिकामो वा प्रहयज्ञं समाचरेत्। वृष्ट्यायुः पृष्टिकामो वा तथैवाभिचरत्ररीन् २६४ सूर्यः सोमो महीपुत्रः सोमपुत्रो वृहस्पतिः। शुक्रः शनैश्वरो राहुः केतुश्चेति प्रहाः स्पृताः ॥२८६ ताम्रिकात् स्फटिकाद्रक्तचन्द्रनात् स्वर्णकादुभौ। रजताद्यसः सीसात् कांस्यात् कार्यप्रहाः क्रमात्।।२६७ स्वैर्वर्णीर्वा पटे लेख्या गन्धमण्डलकेषु वा । यथावर्णं प्रदेयानि वासांसि कुसुमानि च ॥२६८ गन्धाश्च बलयश्चेव धूपो देयश्च गुगगुलुः। कर्तव्या मन्त्र(तन्त्र)वन्तश्च चरवः प्रतिदेवतम् ॥२६६ आकृष्णेन इमं देवा अग्निमूद्धी दिवः ककुत्। उद्बुध्यस्वेति च ऋचो यथासंख्यं प्रकृतिताः ॥३०० वृहस्पते अतिअद्रय्यस्तथैवान्नात् परिश्रुतः। शस्रो देवीस्तथा काण्डात् केतुं कृण्विनमाः क्रमात्।।३०१ अर्कः पलाशखद्रिगवपामार्गोऽथ पिप्पलः। उदुम्बरः शमी दूर्वा कुशाश्च समिधः क्रमात्।।३०२ एकैकस्य त्वष्टशतमष्टाविंशतिरेव वा। होतव्या मधुसर्पिभ्यां दध्ना क्षीरेण वा युता ॥३०३ गुलौदनं पायसञ्च हविष्यं क्षीरषाष्ट्रिकम्। दध्योदनं हवि(पूपान्)श्रूणं मांसं चित्रान्नमेव च ॥३०४ द्याद् प्रहक्रमादेतद् द्विजेभ्यो भोजनं बुधः। शक्तितो वा यथालाभं सत्क्रय विधिपूर्वकम् ॥३०५ घेतुः शङ्क स्तथानड्वान् हेम वासो हयस्तथा। कृष्णा गौरायसं छाग एता वै दक्षिणाः क्रमात् ॥३०६ यश्च यस्य यदा दुःस्थः स तं यत्नेन पूजयेत्। **ब्रह्मणैषां वरो दत्तः** पूजिता पूजियदयथ ॥३०७ प्रहाधीना नरेन्द्राणा मुच्छ्याः पतनानि च । भावाभावो च जगतस्तस्मात् पूज्यतमाः स्मृताः ॥३०८)

अथ राजधर्मप्रकरणवर्णनम्।

⁽महोत्साहः स्थूललक्ष्यः कृतज्ञो वृद्धसेवकः ।

विनीतः सत्वसम्पन्नः कुलीनः सत्यवाक् ग्रुचिः ॥३०६

अदीर्घसूत्रः स्मृतिमानक्षुद्रोऽपरुषस्तथा ।

धार्मिको(दृहमक्तिश्च)ऽज्यसनश्चेव प्राज्ञः शूरो रहस्यवित्।।३१०

स्वरन्ध्रगोप्तान्वीक्षिक्यां दण्डनीत्यां तथैव च । विनीतस्त्वथ वार्तायां अय्याञ्चैव नराधिपः ॥३११ /

स मन्त्रिणः प्रकुर्वीत प्राज्ञान् मौलान् स्थिरान् शुचीन्। तैः साद्धं चिन्तयेद्राज्यं विप्रेणाथ ततः स्वयम् ॥३१२

पुरोहित च कुर्वीत दैवज्ञ मुदितोदितम्। दण्डनीत्याञ्च कुशलमथर्वाङ्गिरसे तथा ॥३१३ श्रीतस्मार्त्तकियाहेतोर्द्व णुयादृत्विजस्तथा। यज्ञांश्चेव प्रकुर्वीत विधिवद् भूरिदक्षिणान् ॥३१४ भोगांश्च दद्याद्विप्रभयो वसूनि विविधानि च। अक्षयोऽयं निधी राज्ञां यद्विप्रेषूपपादितम् ॥३१५ अस्कन्नमन्ययश्चैव प्रायश्चित्तरदृषितम्। अग्ने: सकाशाद्विप्रास्यं पूतं श्रेष्ठमिहोच्यते ॥३१६ धर्मेण लब्धुमीहेत लब्धं यत्नेन पालयेत्। पालितं वर्द्ध येन्नीत्या वृद्धं पात्रेषु निःक्षिपेत् ॥३१७ द्दाद् भूमि निबन्धं वा कृत्वा हेख्य च कारयेत्। आगामिभ(क्षु)द्रनृपतिपरिज्ञानाय पार्थिवः ॥३१८ पटे वा ताम्रपट्टे वा स्वमुद्रोपरिचिह्नितम्। अभिलेख्यात्मनो वंश्यानात्मानश्च महीपतिः ॥३१६ प्रतित्रहपरीमाणं दानाच्छेदोपवर्णनम्। स्वहस्तकालसम्पन्नं शासनं कारयेत् स्थिरम् ॥३२० रम्यं पशव्यमाजीव्यं जाङ्गळं देशमावसेत्। तत्र दुर्गाणि कुर्वीत जनकोषात्मगुप्तये ।।३२१ तत्र तत्र च निष्णातानध्यक्षान् कुराळान् शुचीन्। व्रकुर्याद्यकर्मान्तव्ययकर्मसु चोद्यतान्।।३२२ नातः परतरो धर्मो नृपाणां यदुपार्जितम् (रणार्जितम्)। विप्रेभ्यो दीयते द्रव्यं प्रजाभ्यश्चाभयं तथा ॥३२३)

(य आहवेषु वध्यन्ते भूम्यर्थ मपराङ्मुखाः। अकृटैरायुधैर्यान्ति ते स्वर्गं योगिनो यथा ॥३२४ पदानि ऋतुतुल्यानि भग्नेष्वविनिवर्त्तिनाम्। राजा सुक्रुतमाद्ते हतानां विपलायिनाम्।।३२४ तवाहं वादिनं क्लीवं निर्हेतिं परसङ्गतम्। न हन्याद्विनिवृत्तञ्च युद्धप्रेक्षणकादिकम्।।३२६ कृतरक्षः सदोत्थाय पश्येदायव्ययौ स्वयम् । व्यवहारांस्ततो दृष्ट्रा स्नात्वा भुञ्जीत कामतः ॥३२७ हिरण्यं व्यापृतानीतं भाण्डागारेषु निःक्षिपेत्। पश्येचारांस्ततो दूतान् प्रेरयेनमन्त्रसंयुतः ॥३२८ ततः स्वैरविहारी स्यान्मन्त्रिभिव्वा समागतः। बंळानां दर्शनं कृत्वा सेनान्या सह चिन्तयेत् ॥३२६ सन्ध्यामुपास्य शृणुयाचाराणां गूढ्भाषितम्। गीतनृत्येश्च मुङ्जीत पठेत् स्वाध्यायमेव च ॥३३० संविशेत्तूर्य्यघोषेण प्रतिबुध्येत्तथैव च। शास्त्राणि चिन्तयेद् बुद्ध्या सर्वकत्तव्यतान्तथा ॥३३१ प्रेषयेच ततश्चारान् स्वेषु चान्येषु साद्रम्। भृत्विक्पुरोहिताचाय्येराशीर्भिरभिनन्दितः ॥३३२ दृष्टा ज्योतिर्विदो वैद्यान् द्याद् गां काश्वनं महीस्। नैवेशिकानि च तथा श्रोत्रियाणां गृहाणि च ॥३३३ ब्राह्मणेषु क्षमी क्षिग्धेष्वजिन्भः क्रोधनोऽरिषु। स्याद्राजा भृत्यवर्गेषु प्रजासु च यथा पिता ॥३३४

पुण्यात् षड्भागमादत्त न्यायेन परिपालयन्। सर्वदानाधिकं यस्मात् प्रजानां परिपालनम् ॥३३४ चाटुतस्करदुव्ये त्तमहासाहसिकादिभिः। पीड्यमानाः प्रजा रक्षेत् कायस्थैश्च विशेषतः ॥३३६ अरक्ष्यमाणाः कुर्वनित यत् किञ्चित् किल्विषं प्रजाः। तस्माच नृपतेरर्द्धं यस्माद् गृह्णात्यसौ करान्।।३३७ ये राष्ट्राधिकृता स्तेषां चारेंर्ज्ञात्वा विचेष्टितम्। साधून् संस्पालयेद्राजा विपरीतांस्तु घातयेत्।।३३८ उत्कोचजीविनो द्रव्यहीनान् कृत्वा प्रवासयेत्। सम्मानदानसत्कारैः श्रोत्रियान् वासयेत् सदा।।३३६ अन्यायेन नृपो राष्ट्रात् स्वकोषं योऽभिवर्द्ध येत्। सोऽचिराद्विगतश्रीको नाशमेति सवान्धवः ॥३४० प्रजापीड्नंसन्तापसमुद्भूतो हुताशनः। राज्ञः कुछं श्रियं प्राणान् नाद्ग्धा विनिवर्त्तते ॥३४१ य एव धर्मो नृपतेः स्वराष्ट्रपरिपालने । तमेव कृत्स्नमाप्नोति परराष्ट्रं वशं नयन् ॥३४२ यस्मिन् देशे य आचारो व्यवहारः कुलस्थितिः ! तथैव परिपाल्योऽसौ यदा वशमुपागतः ॥३४३) मन्त्रमूलं यतो राज्यमतो मन्त्रं सुरक्षितम्। (कुर्याद्यथान्ये न विदुः कर्मणामाफलोद्यात्।।३४४ अरिर्मित्रमुदासीनोऽनन्तरस्तत् परः परः। क्रमशो मण्डलं चिन्त्यं सामादिभिरनुक्रमैः ॥३४४

उपायाः साम दानश्च भेदो दण्डस्तथैव । सम्यक् प्रयुक्ताः सिद्धे युद्ण्डस्त्वगतिका गतिः ॥३४६ सन्धि विग्रहं यानमासनं संश्रयं तथा। द्वैधीभावं गुणानेतान् यथावत् परिकल्पयेत् ॥३४७ यदा सम्यग्गुणोपेतं परराष्ट्रं तदा व्रजेत्। परश्च हीन आत्मा च हृष्टवाहनपूरुवः ॥३४८) दिवे पुरुषकारे च कर्मसिद्धिर्व्यवस्थिता। तत्र दैवमभिन्यक्तं पौरुषं पौर्वदेहिकम् ॥३४६ केचिद्देवात् स्वभावाच कालात् पुरुषकारतः। संयोगे केचिदिच्छन्ति फलं कुशलबुद्धयः ॥३५० यथा ह्येकेन चक्रेण न रथस्य गतिर्भवेत्। एवं पुरुषकारेण विना दैवं न सिद्धचित ॥३५१ हिरण्यभूमिलाभेभ्यो मित्रलन्धिर्वरा यतः। अतो यतेत तत् प्राप्तौ रक्षेत् सत्यं समाहितः ॥३६२ स्वाम्यमात्यो जनोदुर्गं कोषो दण्डस्तथैव च। मित्राण्येताः प्रकृतयो राज्यं सप्ताङ्गमुच्यते ॥३५३ तद्वाप्य नृपो दण्डं दुर्व तेषु निपातयेत्। धर्मो हि दण्डरूपेण ब्रह्मणा निर्मितः पुरा ॥३५४ स नेतुं न्यायतोऽशक्यो छुच्धेनाकृतबुद्धिना। सत्यसन्धेन शुचिना सुसहायेन धीमता ॥३५५ यथाशास्त्रं प्रयुक्तः सन् सदेवासुरमानुषम्। जगदानन्द्येत् सर्वमन्यथा तु प्रकोपयेत् ॥३५६

अधर्मदण्डनं स्वर्गकीर्ति लोकविनाशनम्। सम्यक् च दण्डनं राज्ञः स्वर्गकीर्त्ति जयावहम् ॥३५७ अपि भ्राता सुतोऽच्यों वा श्वशुरो मातुलोऽपि वा। नादण्ड्यो नाम राज्ञोऽस्ति धर्माद्विचलितः स्वकात्।।१५८ यो दण्ड्यान् दण्डयेद्राजा सम्यग्वध्यांश्च घातयेत्। इष्टं स्यात् क्रतुभिस्तेन सहस्रशतदक्षिणैः ॥३५६ इति संचिन्त्य नृपतिः ऋतुतुल्यफलं पृथक्। व्यवहारान् स्वयं पश्येत् सभ्यः परिवृतोऽन्वहम् ॥३६० कुछानि जातीः श्रेणीश्च गणान् जानपदांस्तथा। स्वधर्म्भचिलतात्राजा विनीय स्थापयेत् पथि ॥३६१ जालसूर्यमरीचिस्थं त्रसरेणुरजः स्मृतम्। तेडही लिक्षा तु तास्तिस्रो राजसर्षप उच्यते ॥३६२ गौरस्तु ते त्रयः षट् ते यवो मध्यस्तु ते त्रयः। कृष्णलः पश्च ते माषस्ते सुवर्णस्तु षोड़श ॥३६३ पछं सुवर्णाश्रत्वारः पञ्च वाऽपि प्रकीर्तितम्। हें कृष्णले रूप्यमाषोधरणं षोड्शैव ते ॥३६४ शतमानस्तु दशभिर्धरणैः पलमेव च। निष्कः सुवर्णाश्चत्वारः कार्षिकस्ताम्निकः पणः ॥३६५ साशीतिः पणसाहस्री दण्ड उत्तमसाहसः। तद्दुं मध्यमः शोक्तस्तद्दुं मधमः स्मृतः ॥३६६ धिग्दण्डस्त्वथ वाग्दण्डो धनदण्डो वधस्तथा। खोज्या न्यस्ताः समस्ता वा अपराधवशादिमे ॥३६७

ऽध्यायः] व्यवहाराध्यायः सामान्यन्यायप्रकरणवर्णनम्। १२६६

ज्ञात्वापराधं देशभ्व कालं बलमथापि वा । वयः कर्म्भ च वित्तभ्व दण्डं दण्डेषु पातयेत्।।३६८

इति याज्ञवल्क्यीये धर्मशास्त्रे आचारोनाम प्रथमोऽध्यायः।

।। द्वितीयोऽध्यायः ॥

अथ व्यवहाराध्यायः।

तत्रादी-सामान्यन्यायप्रकरणम्।

व्यवहारान् नृपः पश्येद्विद्वद्भि र्वाह्यणैः सह । धर्मशाखानुसारेण क्रोधलोभनिवर्जितः ॥१ श्रुताध्ययनसम्पन्ना धर्मज्ञाः सत्यवादिनः । राज्ञा सभासदः कार्या रिपौ मित्रे च ये समाः ॥१ अपश्यता कार्यवशाद् व्यवहारान् नृपेण तु । सभ्येः सह नियोक्तव्यो ब्राह्मणः सर्वधर्मनित् ॥३ रागाह्योभाद्भयाद्वापि स्मृत्यपेतादिकारिणः ।

सभ्याः पृथक् पृथक् दण्ड्या विवादाद् द्विगुणं (धनम्)दमम् ॥४ (समृत्याचारव्यपेतेन मार्गेणाधर्षितः परेः। आवेदयति चेद्राज्ञे व्यवहारपदं हि तत्॥५ प्रत्यर्थिनोऽप्रतो लेख्यं यथावेदितमर्थिना। समामासतद्र्द्वाहोर्नामजात्यादिचिह्नितम्॥६ श्रुतार्थस्योत्तरं लेख्यं पूर्वावेदकसन्निधौ। ततोथीं लेखयेत् सद्यः प्रतिज्ञातार्थसाधनम् ॥७ त्तिद्धौ सिद्धिमाप्नोति विपरीतमतोन्यथा। चतुष्पाद्व्यवहारोऽयं विवादेषूपदर्शितः ॥८ ? ⁽अभियोगमनिस्तीर्य नैनं प्रत्यभियोजयेत्। अभियुक्तश्व नान्येन नोक्तं विप्रकृतं नयेत् ॥६ कुर्यात् प्रत्यभियोगश्व कलहे साहसेषु च। उभयोः प्रतिभूर्याद्यः समर्थः कार्यनिर्णये ॥१० निह्नवे भावितो द्द्याद्धनं राज्ञे च तत्समम्। मिथ्याभियोगी द्विगुणमभियोगाद्धनं हरेत्।।११ साहसस्तेयपारुष्यगोभिशायात्यये श्वियाम्। विवादयेत् सद्य एव कालोऽन्यत्रेच्छया रमृतः ॥१२ देशाहेशान्तरं याति सृकणी परिलेढ़ि च। ललाटं खिचाते यस्य मुखं वैवर्णमेति च ॥१३ परिशुष्यत्स्खलद्वाष्योविरुद्धं बहु भाषते । वादचक्षुः पूजयति नो तथोष्ठौ निर्भुजत्यपि ॥१४ स्वभावादिकृतिं गच्छेन् मनोवाक्रायकर्मभिः। अभियोगे च साक्ष्ये वा दुष्टः स परिकीर्तितः ॥१५ / र्मन्दिग्धार्थं स्वतन्त्रो यः साधयेद्यश्च निष्पतेत्। नचाहूतो वदेत् किश्चिद्धीनो दण्ड्यश्च स स्मृतः ॥१६ साक्षिषूभयतः सत्सु साक्षिणः पूर्ववादिनः। पूर्वपक्षेऽधरीभूते भवन्त्युत्तरवादिनः ॥१७

अयायः] व्यवहाराध्यायःसामान्यन्यायप्रकरणवर्णनम् । १२७१

सपणश्चेद्विवादः स्यात्तत्र हीनन्तु दापयेत्। दण्डञ्च स्वपणं राज्ञे धनिने धनमेव च ।।१८ **छलं निरस्य भूतेन व्यवहारान्नयेन्नृपः**। भूतमप्यनुपन्यस्तं हीयते व्यवहारतः ॥१६ निह्नुते लिखितं नैकमेकदेशविभावितः। दाप्यः सर्वं नृपेणार्थं न प्राह्यस्वनिवेदितः ॥२०) ⁽स्मृत्योर्विरोधे न्यायस्तु बलवान् व्यवहारतः। अर्थशास्त्रात्तु बलवद्धर्मशास्त्रमिति स्थितिः ॥२१ प्रमाणं लिखितं भुक्तिः साक्षिणश्चेति कीर्तितम्। एषामन्यतमाभावे दिन्यान्यतममुच्यते ॥२२) (सर्वेष्वथ विवादेषु बलवत्युत्तरा क्रिया। आधौ प्रतिगृहे क्रीते पूर्वा तु बलवत्तरा ।।२३ पश्यतो ब्रुवतो भूमे हानिविशतिवार्षिकी। परेण भुज्यमानाया धनस्य दशवार्षिकी ॥२४ आधिसीमोपनिःक्षेपजड्बालधनैर्विना । तथोपनिधिराजस्त्रीश्रोत्रियाणां धनैरपि ॥२४) आध्यादीनां हि हत्तीरं धनिने दापयेद्धनम्। द्रण्डश्व तत्समं राज्ञे शत्त्यपेक्ष मथापि वा ॥२६ आगमोऽभ्यधिको भोगाद्विना पूर्वक्रमागतात्। आगमोऽपि बलं नैव भुक्तिस्तोकापि यत्र नो ॥२७ आगमस्तु कृतो येन सोऽभियुक्तस्तमुद्धरेत्। न तत्सुतस्तस्सुतो वा भुक्तिस्तत्र गरीयसी ॥२८

योऽभियुक्तः परेतः स्यात्तस्य रिक्थी तमुद्धरेत्। न तत्र कारणं भुक्तिरागमेन विनाकृता।।२६ आगमेन विशुद्धेन भोगो याति प्रमाणताम्। अविशुद्धागमो भोगः प्रामाण्यं नैव गच्छति ॥३० नृपेणाधिकृताः पूगाः श्रेणयोऽथ कुलानि च। (पूर्व पूर्व गुरु ज्ञेयं व्यवहारविधी नृणाम्।।३१ बलोपधिविनिवृ तान् व्यवहारान्निवर्त्तयेत्। स्त्रीनक्तमन्तरागारवहिः शत्रुकृतां स्तथा ॥३२ (मत्तोन्मत्तार्तव्यसनिबालभीतादि योजितः। असम्बद्धकृतश्चैव व्यवहारो न सिद्धचित ॥३३ प्रणष्टाधिगतं देयं नृपेण धनिने धनम् । विभावयेन्न चेलिङ्गैस्तत्समं दण्डमईति ॥३४ राजा लब्ध्वा निधि दद्याद् द्विजेभ्योऽद्धं द्विजः पुनः। विद्वानशेषमाद्यात् स सर्वस्य प्रभुर्यतः ॥३४ इतरेण निधौ लब्धे राजा षष्टांशमाहरेत्। अनिवेदितविज्ञातो दाप्यस्तं द्ण्डमेव च ॥३६ देयं चौरहतं द्रव्यं राज्ञा जानपदाय तु । अददद्धि समाप्नोति किल्विषं यस्य तस्य तत् ॥३७)

इति सामान्यप्रकरणम् ।

अथ ऋणदानप्रकरणम्।

अशीतिभागो वृद्धिः स्यान्मासि मासि सवन्धके। वणक्रमाच्छतं द्विश्चित्रुः पञ्चकमन्यथा ॥३८ कान्तारगास्तु दशकं सामुद्राविशकं शतम्। द्युवा स्वकृतां वृद्धि सर्वे सर्वासु जातिषु ॥३६ सन्ततिस्तु पशुक्षीणां रसस्याष्ट्रगुणा परा। वस्त्रधान्यहिरण्यानां चतुस्त्रिद्विगुणाः स्मृताः ॥४० प्रपन्नं साधयन्नर्थं न वाच्यो नृपतेर्भवेत्। साध्यमानो नृपं गच्छन् दण्ड्यो दाष्यश्च तद्धनम्।।४१ गृहीता तु क्रमाद्दाप्यो धनिनामधमर्णिकः। द्स्वा तु ब्राह्मणायेव नृपतेस्तद्नन्तरम् ॥४२ राज्ञाधमणिकोदाप्यः साधितादशकं शतम्। पञ्चकञ्च शतं दाप्यः प्राप्तार्थो ह्युत्तमर्णकः ॥४३ हीनजातिं परिक्षीण मृणार्थं कमं कारयेत्। ब्राह्मणस्तु परिक्षीणः शनैद्राप्यो यथोद्यम् ॥४४ दीयमानं न गृह्वाति प्रयुक्तं यः स्वकं धनम्। मध्यस्थस्थापितं तत्स्याद्वद्वते न ततः परम् ॥४५ अविभक्तेः कुटुम्बार्थे यद्दणभ्व कृतं भवेत्। द्युस्तद्दिश्यनः प्रेते प्रोषिते वा कुटुम्बिन ॥४६ न योषित्पतिपुत्राभ्यां न पुत्रेण कृतं पिता। द्द्यादते कुदुम्बार्थात्र पतिः स्त्रीकृतं तथा ॥४७

सुराकामद्यूतकृतं दण्डशुक्वावशिष्टकम्। वृथादानं तथैवेह पुत्रो दद्यान्न पैतृकम्।।४८ गोपशौण्डिकशैलुषरजकव्याधयोषिताम्। भृणं द्यात् पतिस्तेषां यस्माद्वृत्तिस्तदाश्रया ॥४६ व्रतिपन्नं स्त्रिया देयं पत्या वा सह यत् कृतम्। स्वयं कृतं वा यदृणं नान्यत् स्त्री दातुमईति ॥५० पितरि प्रोषिते प्रेते व्यसनाभिष्छुतेऽथवा । पुत्रपीत्रैऋणं देयं निह्नवे साक्षिभावितम् ॥५१ ऋक्थप्राह ऋणं दाप्यो योषिद्प्राहस्तथैव च। पुत्रोऽनन्याश्रितद्रव्यः पुत्रहीनस्य ऋक्थिनः ॥५२ भ्रातृणामथद्म्पत्योः पितुः पुत्रस्य चैव हि । प्रातिभाव्य मृणं साक्ष्यमविभक्ते न तु समृतम् ॥५३ दर्शने प्रत्यये दाने प्रातिभाव्यं विधीयते। आद्यो तु वितथे दाप्यावितरस्य सुता अपि ॥५४ दर्शनप्रतिभूर्यत्र मृतः प्रात्ययिकोऽपिवा। न तत् पुत्रा भृणं दद्यु द्यु द्यानाय ये स्थिताः ॥५५ बहवः स्यूर्यदि स्वांशैर्दचुः प्रतिभुवो धनम्। एकच्छायाश्रितेष्वेषु धनिकस्य यथारुचि ॥५६ प्रतिभूदािपतो यत्तु प्रकाशं धनिनो धनम्। द्विगुणं प्रतिदातव्यमृणिकस्तस्य तद्भवेत् ॥५७ सन्ततिः स्त्रीपशुष्वेव धान्यं त्रिगुणमेव च। वसं चतुर्गुणं प्रोक्तं रसभ्राष्ट्रगुणस्तथा ॥५८

आधिः प्रणश्येद् द्विगुणे धने यदि न मोक्ष्यते।
काले कालकृतं नश्येत् फलभोग्यो न नश्यित ॥६६
गोप्याधिभोगे नो वृद्धिः सोपकारेऽथ हापिते।
नष्टो देयो विनष्टश्च देवराजकृताहते॥६०
आधेः स्वीकरणात् सिद्धीरक्ष्यमाणोऽप्यसारताम्।
यातश्चेदन्य आधेयो धनभाग्वा धनी भवेत्॥६१
चरित्रवन्धककृतं सवृद्ध्या दापयेद्धनम्।
सत्यङ्कारकृतं द्रव्यं द्विगुणं प्रतिदापयेत्॥६२
उपस्थितस्य मोक्तव्यआधिस्तेनोऽन्यथा भवेत्।
प्रयोजकेऽसित धनं कुले न्यस्याधिमाप्नुयात्॥६३
तत्कालकृतमृल्यो वा तत्र तिष्ठेदवृद्धिकः।
विनाधारणकाद्वापि विक्रणीत स साक्षिकम्॥६४
यदा तु द्विगुणीभूतमृणमाधौ तदा खलु।
मोच्य आधिस्तदुत्पन्ने प्रविष्टे द्विगुणे धने॥६४

इति ऋणादानप्रकरणम्।

अथ उपनिधिप्रकरणम्। वासनस्थमनाख्याय हस्तेऽन्यस्य यद्पितम्। द्रव्यं तदौपनिधिकं प्रतिदे्यं तथैव तत्।।६६ न दाप्योऽपहतं तत्तु राजदैविकतस्करैः। भ्रेषश्चेन्मार्गितेऽदत्ते दाप्यो दण्डश्च तत्समम्।।६७ आजीवन् स्वेच्छया दण्ड्यो दाप्यस्तश्चापि सोदयम्। याचितान्वाहितन्यासनिःक्षेपादिष्वयं विधिः।।६८

इति उपनिधिप्रकरणं!।

अथ साक्षिप्रकरणम्।

तपस्त्रिनो दानशीलाः कुलीनाः सत्यवादिनः । धर्मप्रधाना मृजवः पुत्रवन्ते धनान्विताः ॥६६ ज्यवराः साक्षिणो ज्ञेयाः पश्चयज्ञित्रयारताः । यथाजाति यथावणं सर्वेसर्वासु वा पुनः ॥७० श्रोत्रियास्तापसावृद्धा ये च प्रत्रजिताद्यः । असाक्षिणस्तेवचनान्नात्रहेतुरुदाहृतः ॥७१ ज्ञोवृद्धवालिकतवमत्तोन्मत्ताभिशस्तकाः । रङ्गावतारिपाषण्डिकूटकृद्विकलेन्द्रियाः ॥७२ पतिताप्तार्थसम्बन्धिसहायरिपुतस्कराः । साहसी दृष्टदोषश्च निर्धृतश्चेत्यसाक्षिणः ॥७३ उभयानुमतः साक्षी भवत्येकोऽपि धर्मवित् । सर्वः साक्षी संप्रहणे दण्डपारुष्यसाहसे ॥७४

साक्षिणः श्रावयेद्वादिप्रतिवादिसमोपगान्। ये पातककृतां लोका महापातकिनान्तथा ॥७४ अग्निदानाञ्च ये लोका ये च स्त्रीबालघातिनाम्। तान् सर्व्यान् समवाप्नोति यः साक्ष्यमनृतं वदेत्।।ऽ६ सुकृतं यस्त्रया विःश्विज्ञन्मान्तरशतैः कृतम्। तत्सर्वे तस्य जानीहि यं पराजयसि यं मृषा ॥७७ अनुवन् हि नरः साक्ष्यमृणं स दशबन्धकम्। राज्ञा सर्व प्रदाप्यः स्यात् षट्चत्वारिंशकेऽह्नि ॥७८ न ददाति च यः साक्ष्यं जानन्नपि नराधमः। स कूटसाक्षिणां पापैस्तुल्योदण्डेन चैव हि ।।७६ द्वैधे बहूनां वचनं समेषु गुणिनां तथा। गुणिद्वैधे तु वचनं प्राह्यं ये गुणवत्तमाः ॥८० यस्योचुः साक्षिणः सत्यां प्रतिज्ञां स जयी भवेत्। अन्यथावादिनो यस्य ध्रुवं तस्य पराजयः ॥८१ उक्तेऽपि साक्षिभिः साक्ष्ये यद्यन्ये गुणवत्तराः। द्विगुणा वान्यथा ब्र्युः कूटाः स्युः पूर्वसाक्षिणः ८२ पृथक् पृथक् दण्डनीयाः कूटकृत् साक्षिणस्तथा । विवादाद्द्रिगुणं द्रव्यं 💛 विवास्यो ब्राह्मणः स्मृतः ॥८३ यः साक्ष्यं श्रावितोऽन्येननिहुते तत्तमोवृतः। स दाप्योऽष्ट्रगुणं द्रव्यं त्राह्मणन्तु विवासयेत्।।८४

वर्णिनान्तु वधो यत्र तत्र साक्ष्यनृतं वदेत्।
तत्पावनाय कर्तव्यश्चरुः सारस्वतो द्विजैः॥८५
इति साक्षिप्रकरणम्॥

।। अथ लिखितप्रकरणम्।।

यः कश्चिद्थी निष्णातः स्वरुच्या तु परस्परम्। लेख्यं वा साक्षिमत् कार्यं तस्मिन् धनिकपूर्वकम् ॥८६ समामासतद्धाहोनामजातिस्वगोत्रकैः। सत्रह्मचारीकात्मीयपितृनामादि चिह्नितम् ॥८७ समाप्तेऽर्थे ऋणी नाम स्वहरतेन निवेशयेत्। मतं मेऽमुकपुत्रस्य यद्त्रोपरिलेखितम्।।८८ साक्षिणश्च स्वहस्तेन पितृनामकपूर्वकम्। अत्राहममुकः साक्षी छिखेयुरिति ते समाः ॥८६ अलिपिज्ञ ऋणी यः स्यात् स्वमतं लेखयेत् तु सः। साक्षी वा साक्षिणान्येन सर्वसाक्षिसमीपगः॥ उभयाभ्यर्थितेनेदन्मया ह्यमुकसूनुना । लिखितं त्वमुकेनेति लेखकोऽन्ते ततो लिखेत्।।६० विनापि साक्षिभिर्छेख्यं स्वहस्तिखितन्तु यत्। तत्त्रमाणं ऋतं लेख्यं बलोपधिकृताहते ॥६१

ऋणं लेख्यकृतं देयं पुरषिक्षिभिरेव तु ।
आधिस्तु भुज्यते तावद्यावत्तन्न प्रदीयते।। ६२
देशान्तरस्थे दुर्लेख्ये नष्टोन्भृष्टे हृते तथा ।
भिन्ने दग्धेतथाच्छिन्ने लेख्यमन्यत्तु कारयेत् ।।६३
सन्दिग्धलेख्यगुद्धिः स्यात् स्वहस्तलिखितादिभिः ।
युक्तिप्राप्तिक्रियाचिह्नसम्बन्धागमहेतुभिः ।।६४
लेख्यस्य पृष्ठेऽभिलिखेइत्त्व दत्त्वा धनं ऋणी ।
धनी चोपगतं दद्यात् स्वहस्तपरिचिह्नितम् ।।६५
दत्त्वणं पाटयेल्लेख्यं गुद्धेय वान्यत्तु कारयेत् ।
साक्षिमच भवेद्यद्वा तद्दात्त्व्यं ससाक्षिकम् ।। ६६

इति लिखितप्रकरणम्।

अथ दिन्यप्रकरणम्।

तुलाग्न्यापो विषं कोशो दिव्यानीह विशुद्धये।
महाभियोगेष्वेतानि शीर्षकस्थेऽभियोक्तरि।।६७
रच्या वान्यतरः कुर्यादितरो वर्त्तयेच्छिरः।
विनापि शीर्षकात् कुर्यान्नुपद्रोहेऽथ पातके।।६८
सचैलस्नातमाहूय सूर्योदय उपोषितम्।
कारयेत् सर्वदिव्यानि नृपन्नाह्मणसन्निधौ।।६६

तुला खीवालवृदा(र्त)न्धपङ्गुन्नाह्मणरोगिणाम्। अप्रिर्जलं वा शूद्रस्य यवाः सप्त विषस्य च ॥१८० नासहस्राद्धरेत् फालं न विषं न तुलां तथा। नृपार्थेष्वभियोगेषु वहेयुः शुचयः सदा ॥१०१ सहस्रार्थे तुलादीनि कोशमप्लेऽपिकारयेत्। पश्चारा दापयेच्छुद्धमशुद्धो दण्डभाग्भवेत्।। तुलाधारणविद्वद्भिरभियुक्तस्तुलाश्रितः। प्रतिमानसमीभूतो छेखाः कृत्वावतारितः ॥१०२ त्वं तुले! सत्यधामासि पुरा देवैर्विनिर्मिता। तत्सत्यं वद कल्याणि ! संशयान्मां विमोचय ॥१०३ यद्यस्मि पापकुन्सात ! स्ततो मां त्वमधो नय । शुद्ध श्वेद् गमयोर्घ्यं मां तुलामित्यभिमन्त्रयेत् ॥१०४ करी विमृद्तित्रीहेर्छक्षयित्वा ततो न्यसेत्। संक्षाश्वत्थस्य पत्राणि तावत्सूत्रेण वेष्टयेत् ॥१०५ त्वमग्ने ! सर्वभूतानामन्तश्चरसि पावक !। साक्षिवत् पुण्यपापेभ्यो ब्रूहि सत्यं करे मम ॥१०६ तस्येत्युक्तवतो लोहं पञ्चाशत्पलिकं समम्। अग्निवर्णं न्यसेत्पण्डं(क्षित्रं)हस्तयोरुभयोरपि ॥१०७ स तमादाय सप्तेव मण्डलानि शनैबेजेत्। षोडशाङ्कुलिकं ज्ञेयं मण्डलं तावदन्तरम्।।१०८ मुक्ताप्ति में दितन्नीहिरदग्धः शुद्धिमाप्नुयात्। अन्तरा पतिते पिण्डे सन्देहो वा पुनर्हरेत्।।१०६

सत्येन माभिरक्ष(स्व) त्वं वरुणेत्यभिशाप्य कम् ।
नाभिद्द्नोद्दकस्थस्य गृहीत्वोरू जलं विशेत् ॥११०
समकालमिषु मुक्तमानयेत् यो जवी नरः ।
गते ऽन्यस्मिन्निमग्नाङ्गं पश्येबेच्लुद्धिमाप्नुयात् ॥१११
त्वं विष ! ब्रह्मणः पुत्र ! सत्यधर्मे व्यवस्थितः ।
त्रायस्वास्मान्मभिशापात् सत्येन भव मेऽमृतम् ॥११२
एव मुक्ता विषं शाङ्गं भक्षयेद्धिमशैलजम् ।
यस्य वेगैर्विना जीणं तस्य शुद्धि विनिर्दिशेत् ॥११३
देवानुग्रान् समभ्यर्च्य तत्स्नानोद्कमाहरेत् ।
संश्राव्य पाययेत्तस्माज्ञलात्तु प्रसृतित्रयम् ॥११४
अर्वाक् चतुर्दशाद्द्वो यस्य नो राजदैविकम् ।
व्यसनं जायते घोरं स शुद्धः स्यान्न संशयः ॥११४

इति दिव्यप्रकरणम्।

अथ दाय विभागप्रकरणम्।

विभागं चेत् पिता कुर्यात् स्वेच्छया विभजेत्सुताम् । ज्येष्ठं वा श्रेष्ठभागेन सर्वे वा स्युः समांशिनः ॥११६ यदि दद्यात् समानंशान् पत्न्यः कार्याः समांशिकाः । न दत्तं स्त्रीधनं यासां भर्त्रा वा श्रसुरेण वा ॥११७ शक्तस्यानीहमानस्य किश्विहत्वा पृथक् क्रिया । न्यूनाधिकविभक्तानां धर्मः पितृकृतः स्मृतः ॥११८

विभजरन् सुताः पित्रोरुध्वं रिक्थमृणं समम्। मातुर्दु हितरः शेषमृणात्ताभ्य ऋतेऽन्वयः ॥११६ पितृद्रव्या(विनाशेन)विरोधेन यद्न्यत् स्वयमार्जितम्। मैत्रमौद्वाहिकव्चैव दायादानं न तद्भवेत् ॥१२० क्रमादभ्यागतं द्रव्यं हतमभ्युद्धरेत्तु यः। दायादेभ्यो न तहचादिचया लब्धमेव च।।१२१ यत्कि चित् पितरि प्रेते धनं ज्येष्ठोऽधिगच्छति। भागो यवीयसां तत्र यदि विद्यानुपालिनः ॥१२२ सामान्यार्थसमुत्थाने विभागस्तु समः स्पृतः। अनेकपितृकाणान्तु पितृतो भागकल्पना ॥१२३ भूयां पितामहोपात्ता निबन्धो द्रव्यमेव वा। तत्र स्यात् सदृशं स्वाम्यं पितुः पुत्रस्य चोभयोः ॥१२४ विभक्तेषु सुतो जातः सवर्णायाः विभागभाक्। दृश्याद्वा तद्विभागः स्यादायव्ययविशोधितात् ॥१२५ पितृभ्यां यस्य यहत्तं तत्तस्यैव धनं भवेत्। पितुरूद्धं विभजतां माताऽत्यंशं समाप्नुयात्।।१२६ असंस्कृतास्तु संस्कार्या भ्रातृभिः पूर्वसंस्कृतैः। भगिन्यश्च निजादंशाहत्वांशं तु तुरीयकम्।।१२७ चतुस्त्रिद्येकभागीनाः वर्णशो ब्राह्मणात्मजाः। क्षत्त्रजास्त्रिद्धेकभागा विड्जास्तु द्वेयकभागिनः ॥१२८ अन्योन्यापहृतं द्रव्यं विभक्ते यत्र दृश्यते। तत्पुनस्ते समैरंशैर्विभजेरन्निति स्थितिः १२६

अपुत्रेण परक्षेत्रे नियोगोत्पादितः सुतः। उभयोरप्यसौ रिक्थी पिण्डदाता च धर्मतः ॥१३० औरसो धर्मपत्नीजस्तत्समः पुत्रिकासुतः। क्षेत्रजः क्षेत्रजातस्तु सगोत्रेणेतरेण वा ॥२३१ गृहे प्रच्छन्न उत्पन्नो गृहजस्तु सुतो मतः। कानीनः कन्यकाजातो मातामहसुतोमतः ॥१३२ अक्षतायां क्षतायां वा जातः पौनर्भवस्तथा। द्यान्माता पिता वा यं स पुत्रो दत्तको भवेत्।।१३३ क्रीतस्तु ताभ्यां विक्रीतः क्रुत्रिमस्तु स्वयं कृतः। दत्तात्मा तु स्वयं दत्तो गर्भे विन्नः सहोढजः ॥१३४ उत्सृष्टो गृह्यते यस्तु सोऽपिबद्धो भवेत् सुतः। पिण्डदोंऽशहरश्चेषां पूर्वाभावे परः परः ॥१३४ सजातीयेष्वयं प्रोक्तस्तनयेषु मया विधिः। जातोऽपि दास्यां शूद्रेण कामतोंऽशहरो भवेत् १३६ मृते पितरि कुयुरतं भ्रातरस्त्वर्द्धभागिनम् । अभारको हरेत्सर्वं दुहितृणां सुताहते।।१३७ पत्नी दुहितरश्चैव पितरी भ्रातरस्तथा। तत्सुतो गोत्रजो बन्धुः शिष्यः सब्रह्मचारिणः ॥१३८ एषामनावे पूर्वस्य धनभागुत्तरोत्तरः। स्वर्यातस्य हापुत्रस्य सर्ववर्णेष्त्रयं विधिः ॥१३६ वानप्रस्थयतिब्रह्मचारिणामृक्थभागिनः। क्रमेणाचार्यसच्छिष्यधर्मश्राजेकतीर्थिनः ॥१४०

संसृष्टिनस्तु संसृष्टी सोदरस्य तु सोदरः। द्दाचोपहरेदंशं जातस्य च मृतस्य च ॥१४१ अन्योद्यंस्तु संसृष्टी नान्योद्यो धनं हरेत्। असंसृष्ट्यपि चाद्दात् संसृष्टो नान्यमातृजः ॥१४२ क्कीबोऽथ पतितस्तज्ञः पङ्गुरुन्मत्तको जडः। अन्धोऽचिकित्स्यरोगी च भर्त्तव्याः स्युर्निरंशकाः ॥१४३ औरसाः क्षेत्रजारतेषां निर्दोषा भागहारिणः। सुताश्चैषां प्रभक्तव्याः यावद्वे भर्तृसात्कृताः ॥१४४ अपुत्रा योषितश्चेपां भर्त्तव्याः साधुवृत्तयः। निर्वास्या व्यभिचारिण्यः प्रतिकूलास्तथैव च ॥१४४ पितृमातृपतिभ्रातृद्त्तमध्यग्नयुपागतम्। आधिवेदनिकाद्य श्रीधनं परिकीर्तितम्।।१४६ बन्धुदत्तं तथा शुल्कमन्वाधेखकसेव वा । अतीतायामप्रजसि बान्धवास्तद्वाप्नुयुः ॥१४७ अप्रजः स्त्रीधनं भर्त्तुर्बाह्यादिषु चतुष्त्रीपि । दुहितृणां प्रस्ता चेत् शेषेषु पितृगामि तत् ॥१४८ दत्त्वा कन्यां हरन् दण्ड्योऽव्ययं द्दाच सोदयम्। मृतायां दत्तमादद्यात्परिशोध्योभयव्ययम् ॥१४६ दुर्भिक्षे धर्मकार्ये च व्याधी सम्प्रतिरोधके। गृहीतं स्त्रीयनं भर्ता न स्त्रिये दातुमहिति ॥१५० अधिवित्रस्त्रिये द्दादाधिवेद्निकं समम्। न दत्तं स्त्रीधनं यस्यै दत्ते त्वद्धं प्रकीर्तितम् ॥१५१

विभागनिह्नवे ज्ञातिबन्धुसाक्ष्यभिलेखितैः। विभागभावना ज्ञेया गृहक्षेत्रेश्च यौतकैः॥१५२

इति दायविभागप्रकरणवर्णनम्।

अथ सीमाविवादप्रकरणवर्णनम्।

सीम्रो विवादे क्षेत्रस्य सामन्ताः स्थविराद्यः। गोपाः सीम्नः कृषाणोऽन्ये सर्वे च वनगोचराः ॥१५३ नयेयुरेतैः सीमान्तं स्थूळाङ्गारतुषद्रमैः । सेतुवल्मीकनिम्नास्थिचैत्याद्यैरुपलक्षितम् ॥१५४ सामन्ता वा समग्रामाश्चत्वारोऽष्ट्रौ द्शापि वा। रक्तस्रग्वसनाः सीमां नयेयुः क्षितिधारिणः ॥१५५ अनृते च पृथग्दण्ड्या राज्ञा मध्यमसाहसम्। अभावे ज्ञानचिह्नानां राजा सीम्नः प्रवर्तिता ।।१४६ आरामायतनयामनिपानोद्यानवेश्मसु। एष एव विधिर्ज्ञेयो वर्षाम्बुप्रवहादिषु ॥१५७ मर्यादायाः प्रभेदे तु सीमातिक्रमणे तथा। क्षेत्रस्य हरणे दण्डा अधमोत्तममध्यमाः ॥१४८ न निषेव्योऽस्पबाधस्तु सेतुः कल्याणकारकः। परभूमि हरन् कूपः स्वलपक्षेत्रो बहूदकः ॥१५६

स्वामिने योऽनिवेद्येव क्षेत्रे सेतुं प्रवर्त्तयेत्।

उत्पन्ने स्वामिनो भोगस्तदभावे यहीपतेः ॥१६०

फालाहतमपि क्षेत्रं यो न कुर्याम्न कारयेत्।

तं प्रदाप्यः कृष्टफलं (अकृष्टशदं) क्षेत्रमन्येन कारयेत्॥१६१

इति सीमाविवादप्रकरणवर्णनम्।

अथ स्वामिपालविवादप्रकरणवर्णनम्।

माषानष्टी तु महिषी शस्यघातस्य कारिणी ।
दण्डनीया तद्र क्तु गौस्तद्र मजाविकम् ॥१६२
भक्षियत्वोषविष्टानां यथोक्ताद् द्विगुणो दमः ।
सममेषां विवीतेऽपि खरोष्ट्रं महिषीसमम् ॥१६३
यावच्छस्यं विनश्येत तावत् क्षेत्री फलम् लभेत्।
गोपा(पाल)स्ताड्यस्तु गोमी तु पूर्वोक्तं दण्डमहिति ॥१६४
पथि प्रामविवीतान्ते क्षेत्रे दोषो न विद्यते ।
अकामतः कामचारे चौरवद्दण्डमहिति ॥१६४
महोक्षोत्सृष्टपशवः सृतिकागन्तु(कीचगौः)काद्यः ।
पालो येषान्तु ते मोच्या देवराजपरिष्ठुताः ॥१६६
यथार्पिताम् पश्च गोपः सार्यं प्रत्यपयक्ताः ॥१६६

पाळदोषितनाशे च पाले दण्डो विधीयते।
अर्ह्स त्रयोदशपणः स्वामिनो द्रव्यमेव।।१६८
प्राम्येच्छया गोप्रचारो भूमिराजवशेन वा।
द्विजस्रणेधपुष्पाणि सर्वतः स्ववदाहरेत्।।१६९
धनुः शतं परीणाहो प्रामक्षेत्रान्तरं भवेत्।
द्वे शते कर्पटस्य स्याजगरस्य चतुः शतम्।।१७०

इति स्वामिपालविवादप्रकरणवर्णनम्।

अथास्वामिविकयप्रकरणवर्णनम्।
स्वं लभेतान्यविकीतं क्रेतुर्दोषोऽप्रकाशिते।
हीनाद्रहो हीनमूल्ये वेलाहीने च तस्करः।।१७१
नष्टापहृतमासाद्य हर्तारं प्राह्येक्चरम्।
देशकालातिपत्ती च गृहीत्वा स्वयमर्पयेत्।।१७२
विक्रेतुर्दर्शनाच्छुद्धिः स्वामी द्रव्यं नृपो दमम्।
क्रेता मूल्यमवाप्नोति तस्माद्यस्तस्य विक्रयी।।१७३
आगमेनोपभोगेन नष्टं भाव्यमतोऽन्यशा।
पश्चवन्धो दमस्तत्र राज्ञो तेनाविभाविते।।१७४
हतं प्रणष्टं यो द्रव्यं परहस्ताद्वाप्नुयात्।
अनिवेद्य नृपे दण्ड्यः स तु षण्णवित पणान् ।।१७४

शौल्किकैः स्थानपालैर्वा नष्टापहृतमाहृतम् । अर्वाक् सम्वत्सरात् स्वामी हरेत(लभेत)परतो नृपः ॥१७५ पणानेकशफे दद्याचतुरः पञ्च मानुषे । महिषोष्ट्रगवां द्वौ द्वौ पादं पाद्मजाविके ॥१७७ इत्यस्वामिविक्रयप्रकरणवर्णनम् ।

अथ दत्ताप्रदानिकंप्रकरणवर्णनम्।
स्वं कुटुम्बाविरोधेन देयं दारसुताहते।
नान्वये सति सर्वस्वं यचान्यस्मे प्रतिश्रुतम्।।१७८
प्रतिप्रहः प्रकाशः स्यात् स्थावरस्य विशेषतः।
देयं प्रति श्रुतब्चेव दन्त्वा नापहरेत् पुनः।।१७६
इति दत्ताप्रदानिकंनामप्रकरणवर्णनम्।

अथ क्रीतानुशयप्रकरणवर्णनम्।

दशैकपश्चसप्ताहमासन्यहार्द्ध मासिकम्।
वीजायोवाद्यरत्नस्त्रीदोह्यपुंसां परीक्षणम्।।१८०
अग्नौ सुवर्णमक्षीणं रजते द्विपळं शतम्।
अष्टौ त्रपुणि सीसे च ताम्रो पश्चदशायसि।।१८१
शते दश पळा वृद्धिरोणें कार्पाससौत्रिके।
मध्ये पश्चपळा सूत्रो सूक्ष्मे तु त्रिपळा मता।।१८२

ऽध्यायः] अभ्युपेत्याशुश्रूषाप्रकरणं संविद्वयतिक्रमप्रकरणवर्णनम् १२८६

चार्मिके रोमबद्धे च त्रिंशद्भागः क्षयो मतः।
न क्षयो न च वृद्धिः स्यात् कौशेये वल्कलेषु च ॥१८३
देशं काल्ध्व भोगध्व ज्ञात्वा नष्टे बलाबलम्।
द्रव्याणां कुशला ब्रूयुर्यत्तद्दाप्यमसंशयम्॥१८४
इति क्रीतानुशयप्रकरणवर्णनम् ।

अधाभ्युपेत्याशुश्रूषाप्रकरणवर्णनम् । बलाद्दासीकृतश्चौरैर्विक्रीतश्चापि मुच्यते । स्वामिप्राणप्रदो भ(भा)क्तत्यागाक्तिक्क्रयाद्दपि ॥१८५ प्रव्रज्यावसितो राज्ञो दासश्चामरणान्तिकः । वर्णानामानुलोम्येन दास्यं न प्रतिलोमतः ॥१८६ कृतशिल्पोऽपि निवसेत् कृतकालं गुरोर्गृहे । अन्तेवासी गुरुप्राप्तभोजनस्तत्फलप्रदः ॥१८७ इत्याभ्युपेत्याशुश्रूषाप्रकरणवर्णनम् ।

अथ संविद्व्यतिक्रमप्रकरणवर्णनम्।
राजा कृत्वा पुरे स्थानं ब्राह्मणान्त्यस्य तत्र तु।
त्रैविद्यं वृत्तिमद् ब्रूयात् स्वधर्मः पाल्यतामिति ॥१८८
निजधर्माविरोधेन यस्तु सामयिको भवेत्।
सोऽपि यत्नेन संरक्ष्यो धर्मो राजकृतश्च यः॥१७६
गणद्रव्यं हरेद्यस्तु संविदं लङ्घयेच यः।
सर्वस्वहरणं कृत्वा तं राष्ट्राद्विप्रवासयेत्॥१६०
कर्तव्यं वचनं सर्वेः समृहहितवादिनाम्।
यस्तत्र विपरीतः स्यान् स दाप्यः प्रथमं दमम्॥१६१

समृहकार्य आयातान् कृतकार्यान् विसर्जयेत्।
स दानमानसत्कारैः पूजियत्वा महीपितः ॥१६२
समृहकार्यप्रहितो यस्नभेत तद्पयेत्।
एकादशगुणं दाप्यो यस्मी नापयेत् स्वयम् ॥१६३
मर्भझाः (वेद्झाः) शुचयोऽलुब्धा भवेयुः कार्यचिन्तकाः।
कर्तव्यं वचनं तेषां समृहहितवादिनाम् ॥१६४
श्रेणिनैगमपाषण्डिगणानामप्ययं विधिः।
भेदञ्चेषां नृपो रक्षेत् पूर्ववृत्तिश्व पालयेत् ॥१६५
इति सम्विद्व्यतिक्रमप्रकरणवर्णनम्।

अथ वेतनादानप्रकरणवर्णनम्।
गृहीतवेतनः कर्म त्यजन् द्विगुणमावहेत्।
अगृहीते समं दाप्यो भृत्येर्दक्ष्य उपस्करः ॥१६६
दाप्यस्तु दशमं भागं वाणिज्यपशुसस्यतः।
अनिश्चित्य भृति यस्तु कारयेत् स महीक्षिता ॥१६७
देशं कालभ्य योऽतीयात् लामं कुर्याच योऽन्यथा।
तत्र स्यात् स्वामिनश्लन्दोऽधिकं देयं कृतेऽधिके ॥१६८
यो यावत् कुरुते कम तावत्तस्य तु वेतनम्।
उभयोरप्य(शाष्ट्यं)साध्यञ्चेत् साध्ये(शाठये)कुर्याद्यथाश्रुतम् ॥१६६
अराजदैविकं नष्टं भाण्डं दाप्यस्तु वाहकः।
प्रस्थानविष्नकृष्वेव प्रदाप्यो द्विगुणां भृतिम्।।२००

अध्याय:] व्यवहाराध्याथः वाक् पारुध्यप्रकरणवर्णनम् । १२६१

प्रकान्ते सप्तमं आगं चतुर्थं पथि संत्यजन् । भृतिमद्धं पथे सर्वां प्रदाप्यस्त्याजकोऽपि च ॥२०१ इति वेतनादानप्रकरणवर्णनम् ।

अथ धुतसमाह्वयप्रकरणवर्णनम्।

ग्छहे शतिकवृद्धे स्तु (गलस्मिकवृद्धिस्तु) सभिकः पञ्चकं शतम्। गृह्णीयाद् धूर्मकितवादितराहशकं शतम्।।२०२ स सम्यक् पालितो द्याद्राज्ञे भागं यथाकृतम्।

जितमुद्प्राहयेज्जेत्रो द्द्यात् सत्यं वचः क्षमी ॥२०३ प्राप्ते नृपतिना भागे प्रसिद्धे घूर्तमण्डले । जितं ससभिके स्थाने दापयेदन्यथा न तु ॥२०४ ब्रष्टारो व्यवहाराणां साक्षिणश्च त एव हि । राज्ञा सचिह्ना निर्वास्याः कूटाक्षोपधिदेविनः ॥२०४

धूतमेकमुखं कार्यं तस्करज्ञानकारणात्।
एष एव विधिज्ञेयः प्राणिद्यते समाह्वये।।२०६
इति द्युतसमाह्वयाख्यंप्रकरणवर्णनम्।

अथ वाक्पारक्यप्रकरणवर्णनम् । सत्यासत्यन्यथास्तोजैन्यूनाङ्गेन्द्रियरोगिणाम् । क्षेपं करोति चेहण्ड्यः पणानद्वीत्रयोदश ॥२०७

अभिगन्तासि भगिनीं मातरं वा तवेति च। शपन्तं दापयेद्राजा पञ्चिवंशतिकं दमम्।।२०८ अद्धीऽधमेषु द्विगुणः परस्नीपृत्तमेषु च। दण्डप्रणयनं कार्यं वर्णजात्युत्तराधरैः ॥२०६ प्रतिलोम्यापवादेषु द्विगुणा(चतुः)ह्यिगुणा द्माः। वर्णानामानुलोम्येन तस्माद्द्वाद्धं हानतः ॥२१० बाहुप्रीवानेत्रसिक्थिवनाशे वाचिके द्मः। सत्यस्तदृद्धिकः पाद्नासाकर्णकरादिषु ॥२११ अशक्तस्तु वद्न्नेवं द्ण्डनीयः पणान् द्श । तथा शक्तः प्रतिभुवं दाप्यः क्षेमाय तस्य तु ॥२१२ पतनीये कृते क्षेपे दण्ड्यो मध्यमसाहसः। उपपातकयुक्ते तु दाप्यः प्रथमसाहसम्।।२१३ त्रैविद्यनृपदेवानां क्षेप उत्तमसाहसः। मध्यमो जातिपूगानां प्रथमो प्रामदेशयोः ॥२१४ इति वाक् पारुव्यप्रकरणवर्णनम्।

अथ दण्डपारुष्यप्रकरणवर्णनम् । असाक्षिकहते चिह्ने र्युक्तिभिश्चागमेन च । द्रष्टव्यो व्यवहारस्तु कृटचिह्नकृताद् भयात् ॥२१५ यत्रनोक्तो दमः सर्वेः प्रमादेन महात्मभिः । तत्र कार्य परिज्ञाय कर्तव्यं दण्डधारणम् । भस्मपङ्करजःस्पर्शे दण्डो दशपणः स्मृतः। अमेध्यपार्षिणनिष्ठ्यू तस्पर्शने द्विगुणः स्मृतः ॥२१६ समेव्वेवं परस्त्रीषु द्विगुणन्तूत्तमेषु च। हीनेष्वद्धंदमो मोहमदादिभिरदण्डनम्।।११७ विप्रपीडाकरं छेचमङ्गमत्राह्मगस्य तु। **उद्**गूर्णे प्रथमो दण्डः संस्पर्शे तु तदर्द्धिकः ॥२१८ उद्गूर्णे हस्तपादे च दशविंशतिको दमौ। परस्परं तु सर्वेषां शस्त्रे मध्यमसाहसः ॥२१६ पादकेशांशुककरालुब्छनेषु पणान् दश । पीडाकर्षा(जना)शुकावेष्ट्यपादाध्यासे शतं दमः । २२० शोणितेन विना दुःखं कुर्वन् काष्ठादिभि र्नरः। द्वात्रिंशतं पणान् दाप्यो द्विगुणं दर्शनेऽसृजः ॥२२१ करपादद्तोभङ्गे च्छेद्ने कर्णनासयोः। मध्यो दण्डो त्रणोद्धेदे मृतकल्पहते तथा ॥२२२ चेष्टाभोजनवाष्रोधे नेत्रादिप्रतिभेदने। कन्धराबाहुसक्थ्नाञ्च भङ्गे मध्यमसाहसः।।२२३ एकं इनतां बहूनाञ्च यथोक्ताद् द्विगुणो द्मः। कलहापहृतं दे्यं दण्डश्च द्विगुणः स्मृतः ॥२२४ दुःखमुत्पाद्येचस्तु स समुत्थानजं व्ययम्। दाप्यो दण्डश्च यो यस्मिन् कछहे समुदाहृतः ॥२२४ अभिघाते तथाच्छेदे भेदे कुड्यावपातने। पणान् दाप्यः पञ्च दश विंशतिन्तद्द्वयं तथा ॥२२६

दुःखोत्पादि गृहे द्रव्यं क्षिपन् प्राणहरन्तथा।

षोडशाद्यः पणान् दाप्यो द्वितीयो मध्यमं दमम्।।२२७

दुःखे च शोणितोत्पादे शाखाङ्गच्छेदने तथा।

दण्डः क्षुद्रपश्न्नाञ्च द्विपणप्रभृतिक्रमात्।।२२८

लिङ्गस्य च्छेदने मृत्यो मध्यमो मृल्यमेव च।

महापश्नामेतेषु स्थानेषु द्विगुणो दमः।।२२६

प्ररोहिशाखिनां शाखास्कन्धसर्वविदारणे।

उपजीव्यद्रुमाणाञ्च विंशतेद्विगुणो दमः।।२३०

चैत्यश्मशानसीमासु पुण्यस्थाने सुरालये।

जातद्रुमाणां द्विगुणो दमो वृक्षेऽथ विश्रुते।।२३१

गुल्मगुच्छक्षुपलताप्रतानौषधिवीरुधाम्।

पूर्वस्मृताद्द्व दण्डः स्थानेषुक्तेषु कर्त्तने।।२३२

इति दण्डपारुष्यप्रकरणवर्णनम्।

अथ साहसप्रकरणवर्णनम्।

सामान्यद्रव्यप्रसभहरणात् साहसं स्मृतम्।
तन्मृल्याद् द्विगुणो दण्डो निह्नवे तु चतुर्गुणः।।२३३
यः साहसं कारयति स दाप्यो द्विगुणं दमम्।
यश्चैवमुत्त्वाहं दाता कारयेत् स चतुर्गुणम्।।२३४

ऽध्यायः ो व्याबहाराध्यायः साहसप्रकरणवर्णनम् । अर्घ्याक्रोशातिक्रमकृद् भ्रातृभार्याप्रहारदः। सन्दिष्टस्याप्रदाता च समुद्रगृहभेदकृत्।।२३५ सामन्तकुलिकादीनामपकारस्य कारकः। पञ्चाशत्पणिको दृण्ड एषामिति विनिश्चयः ॥२३६ स्वच्छन्दं विधवागामी विक्रुष्टेऽनाभिधावकः । अकारणे च विक्रोष्टा चाण्डालश्चोत्तमान् स्पृशन् ॥२३७ शूद्रः प्रव्रजितानाभ्व देवे पिज्ये च भोजकः। अयुक्तं शपथं कुर्वन्नयोग्योऽयोग्यकर्मकृत् ॥२३८ वृषक्षुद्रपशूनाञ्च पुंस्त्वस्य प्रतिघातकृत्। साधारणस्यापलापी दासीगभैविनाशकृत् ॥२३६ पितापुत्रस्वसृभ्रातृदुम्पत्याचार्यशिष्यकाः । एषामपतितान्योऽन्यत्यागी च शतद्ण्डभाक्।।२४० वसानस्त्रीन् पणान् दण्ड्यो (दाप्या) रजकरतु परांशुकम्। विक्रयावक्रयाधानयाचितेषु पणान् दश ॥२४१ पितापुत्रविरोधे तु साक्षिणां त्रिपणो (द्विशतो) द्मः। अन्तरे च तयोर्थः स्यात्तस्याप्यष्ट(शतो)गुणो द्मः ॥२४२ तुलाशासनमानानां कूटकृत्राणकस्य च । एभिश्र व्यवहर्ता यः स दाष्यो दण्ड(दत्र)मुत्तमम्।।२४३ अकूर्ट कूटकं ब्रुते कूटं यश्चाप्यकूटकम्।

स नाणकपरीक्षी तु दाप्य उत्तमसाहसम्।।२४४

भिषङ् मिथ्याचरन् दाप्यितर्यक्षु प्रथमं दमम्। मानुषे सध्यमं राजमानुषेषूत्तमं दमम्।।२४५

अवन्ध्यं यश्च वध्नाति वन्ध्यं यश्च प्रमुश्चति । अप्राप्तव्यवहारञ्च स दाप्यो दण्डमुत्तमम्।।२४६ मानेन तुलया वाऽपि यो ंऽशमष्टमकं हरेत्। दण्डं स दाप्यो द्विशतं वृद्धौ हानौ च कल्पितम्।।२४० भेषजस्तेहलवणगन्धधान्यगुडादिषु। पण्येषु प्रक्षिपन् हीनं पणान् दाप्यस्तु षोडश ॥२४८ मृचर्ममणिसूत्रायः काष्टवल्कलवाससाम्। अजातौ जातिकरणे विक्रेयाऽष्ट्गुणो दमः ॥२४६ समुद्गपरिवर्तञ्च सारभाण्डञ्च कृत्रिमम्। आधानं विक्रयं वाऽपि नयतो दण्डकल्पना ॥२५० भिन्ने पणे तु पञ्चाशत् पणे तु शतमुच्यते। द्विपणे द्विशतो दण्डो मृल्यवृद्धौ च वृद्धिमान् ॥२५१ सम्भ्य कुर्वतामर्घं सावाधं कारुशिल्पिनाम्। अर्घस्य हासं वृद्धिं वा साहस्रो दम उत्तमः ॥२५२ सम्भूय वणिजां पण्यमनर्घणोपरुन्धताम्। विक्रीणतां वा विहितो दण्ड उत्तमसाहसः ॥२५३ राजनि स्थाप्यते योऽर्घः प्रत्यहं तेन विक्रयः। क्रयो वा (विक्रयावापि)निःस्रवस्तस्माद्वणिजां लाभतः स्मृतः॥२५४ स्वदेशपण्ये तु शतं वणिग्गृह्णीत पञ्चकम्। दशकं पारदेश्ये तु यः सद्यः क्रयविक्रयी ॥२५५ पण्योस्योपरि संस्थाप्य व्ययं पण्यसमुद्भवम्। अघीऽनुमहकृत् कार्यः क्रतुर्विक्रतुरेव च ॥२४६

इति साहसप्रकरणवर्णनम्।

अथ विक्रीयासंप्रदानप्रकरणम्।

गृहीतम्लयं यः पण्यं क्रेतुनैंव प्रयच्छति ।
सोदयं तस्य दाप्योऽसौ दिग्लामं वा दिशां गते ॥२६७
विक्रोतमपि विक्रेयं पूर्वक्रेतर्यगृहति ।
हानिश्चेत् क्रेतृदोषेण क्रेतुरेव हि सा भवेत् ॥२६८
राजदैवोपघातेन पण्ये दोषमुपागते ।
हानिर्विक्रेतुरेवासौ याचितस्याप्रयच्छतः ॥२६६
अन्यहस्ते च विक्रीतं दुष्टं वाऽदुष्ट्वद् यदि ।
विक्रीणीत दमस्तत्र मूल्यात्तु द्विगुणो भवेत् ॥२६०
क्षयं वृद्धिच बणिजा पण्यानां तु विजानता ।
क्रीत्वा नानुशयः कार्यः कुर्वन् षड्भागदण्डभाक् ॥२६१

इति विक्रीयासम्प्रदानप्रकरणवर्णनम्।

अथ सम्भूयसमुत्थानप्रकरणवर्णनम् ।
समवायेन वणिजां लाभार्थं कर्म कुर्वताम् ।
लाभालाभौ यथाद्रव्यं यथा वा सम्विदाकृता ॥२६२
प्रतिषिद्धमनादिष्टं प्रमाद।द्यञ्च नाशितम् ।
स तद्द्याद्विप्रवाञ्च रक्षिता दशमांशभाक्॥२६३

अर्घप्रक्षेपणाद्विशं भागं शुल्कं नृपो हरेत्।

ग्यासिद्धं राजयोग्यश्व विक्रीतं राजगामि तत्।।२६४

मिथ्या वदन् परीमाणं शुल्कस्थानादपासरन्।

दाप्यस्वष्टगुणं यश्च स व्याजक्रयविक्रयी।।२६५
तारिकः स्थलजं शुल्कं गृह्णन् दाप्यः पणान् दशः।

ब्राह्मणप्रातिवेश्यानामेतदेवानिमन्त्रणे।।२६६
देशान्तरगते प्रेते द्रव्यं दायादवान्धवाः।

ज्ञातयो वा हरेयुस्तदागतेस्तैर्विना नृपः।।२६७
जिह्यं त्यजेयुर्निर्लाभमशक्तोऽन्थेन कारयेत्।
अनेन विधिनाख्यातमृत्विक्कर्षककर्मिणाम्।।२६८

इति सम्भूयसमुत्थानप्रकरणवर्णनम्।

अथ स्तेयप्रकरणवर्णनम् ।

प्राहकेर्णृद्यते चौरो लोप्नेणाथ पदेन वा ।

पूर्वकर्मापराधी च तथा चाशुद्धवासकः ॥२६६

अन्येऽपि शङ्कया प्राद्या ज्ञातिनामादिनिह्नवैः ।

द्यूतस्त्रीपानसक्ताश्च शुष्किभिन्नमुख्रस्वराः ॥२७०

परद्रव्यगृहाणा च प्रच्छका गूढचारिणः ।

निराया व्ययवन्तश्च विनष्टद्रव्यविक्रयाः ॥२०१

गृहीतः शङ्कया चौर्य्यं नात्मानं चेद्विशोधयेत्। दापयित्वा हृतं द्रव्यं चौरदण्डेन दण्डयेत्।।२७२ चौरं प्रदाप्यापहृतं घातयेद्विविधैर्वधैः। सचिह्नं ब्राह्मणं कृत्वा स्वराष्ट्राद्विप्रवाशयेत्।।२७३ घातितेऽपहृते दोषो ब्रामभर्तुरनिर्गते। विवीतभर्त्तुस्तु पथि चौरोद्धर्त्तुरवीतके ॥२७४ स्वसीम्नि द्याद् प्रामस्तु पदं वा यत्र गच्छति। पञ्चष्रामी वहिःक्रोशाद्दशप्राम्यथवा पुनः ॥२७५ वन्दियाहांस्तथा वाजिकुञ्जराणाश्च हारिणः। प्रसद्यघातिनश्चैव शूलमारोपयेन्नरा**न्** ॥२७६ उत्सेपकप्रन्थिभेदौ करसन्दंशहीनकौ। कार्यौ द्वितीयेऽपराधे करपादैकहीनकौ ॥२७७ क्षुद्रमध्यमहाद्रव्यहरणे सारतो दमः। देशकालवयःशक्ति संचिन्त्यं दण्डकर्मणि ॥२७८ भक्तावकाशाग्न्युदक्मन्त्रोपकरणव्ययान् । दत्त्वा चौरस्य हन्तुर्वा जानतो दग्ड उत्तमः॥२७६ शस्त्रावपाते गर्भस्य पातने चोत्तमो द्मः। उत्तमो वाऽथमो वाऽपि पुरुषस्त्रीप्रमापणे ॥२८० विप्रदुष्टां (विषप्रदां) स्त्रियञ्चैव पुरुषण्डनीमगर्भिणीम् । सेतुभेदकरीश्वाप्सु शिलां बद्घ्वा प्रवेशयेत्।।२८१ विषाग्निदां पतिगुरुनिजापत्यप्रमापिणीम्। विकर्णकरनासोष्टीं कृत्वा गोभिः प्रमापयेत् ॥२८२

अविज्ञातहतस्याशु कलहं सुतवान्धवाः।
प्रष्टव्या योषितश्चास्य परपुंसि रताः पृथक् ॥२८३
स्त्रीद्रव्यवृत्तिकामो वा केन वार्यं गतः सह।
मृत्युदेशसमासन्नं पृच्छेद्वापि जनं शनैः॥२८४
क्षेत्रवेश्मवनप्रामविवीतखलदाहकाः।
राजपत्न्यभिगामी च दःधव्यास्तु कटाग्निना॥२८५
इति स्तेयप्रकरणवर्णनम्।

अथ स्त्रीसंग्रहणप्रकरणवर्णनम्।

पुमान् संग्रहणे प्राह्यः केशाकेशि परिक्षयाः।
साद्यौ वा कामजेश्चिद्धः प्रतिपत्तौ द्वयोस्तथा।।२८६
नीवीस्तनप्रावरण(नामि)सिक्थकेशाभिमर्शनम्।
अदेशकालसम्भाषां सहैकस्थानमेव च।।२८०
स्वीनिषिद्धा शतं द्वाद् द्विशतन्तु दमं पुमान्।
प्रतिषेधे द्वयोईप्डो यथा संग्रहणे तथा।।२८८
स्वजातावृत्तमो दण्ड आनुलोम्ये तु मध्यमः।
प्रातिलोम्ये वधः पुंसः श्लीणां नासादिकर्त्तनम्।।२८६
अलड्ड्तां दरन् कन्यामुत्तमस्वन्यथाधमम्।
दण्डं द्वात् सवर्णासु प्रातिलोम्ये वधः स्मृतः।।२६०

Sच्यायः] व्यवहाराध्यायः स्त्रीसंग्रहणप्रकरणवर्णनम् । १३०१

सकामास्वनुलोभासु न दोषस्त्वन्यथा (धमः)दमः। दूषणे तु करच्छेद उत्तमायां वधस्तथा।।२६१ शतं स्त्री दूषणे दद्याद् द्वे तु मिथ्याभिशंसने। पशून् गच्छन् शतं दाप्यो हीनां स्त्री गाञ्च मध्यमम्।।२६२ अवरुद्धासु दासीषु भुजिष्यासु तथैव च। गम्यास्वपि पुमान् दाप्यः पञ्जाशत् पणिकं दमम्।।२६३ प्रसद्य दास्यभिगमे दण्डो दशपणः स्पृतः। बहूनां यद्यकामासौ चतुर्विशतिकः पृथक् ॥२६४ गृहीतवेतना वेश्या नेच्छन्ती द्विगुणं वहेत्। अगृहीते समं दात्यः पुमानप्येवमेव च ॥२६५ अयोनौ गच्छतो योषां पुरुषं वाऽपि मोहतः। चतुर्विशतिको दण्डस्तथा प्रत्रजितागमे ॥२६६ अन्त्याभिगमने त्वड्क्यः कु (क)बन्धेन प्रवासयेत्। शूद्रस्तथान्त्य एव स्याद्न्त्यस्यार्घ्यागमे वधः ॥२६७ इति स्त्रीसंप्रहप्रकरणवर्णनम्।

अथ प्रकीर्णकप्रकरणवर्णनम्।

ऊनं वाष्यधिकं वाऽिष लिखेद् यो राजशासनम्।

पारदारिकचोरौ वा मुश्वतो दण्ड उत्तमः।।२६८

अभक्ष्येण द्विजं दृष्यन् दण्ड्य उत्तमसाहसम्। क्षत्त्रयं मध्यमं वैश्यं प्रथमं शूद्रमर्द्ध किम्।।२६६ कूटस्वर्णव्यवहारी विमांसस्य च विक्रयी। ज्यङ्गहीनस्तु कर्तव्यो दाप्यश्चोत्तमसाहसम्।।३०० चतुष्पाद्ऋते दोषो नापेहीति प्रजल्पतः। काष्ट्रलाष्ट्रेषुपाषाणवाहुयुग्यकुनस्तथा ॥३०१ ब्रिन्ननस्येन यानेन तथा भन्नयुगादिना। पश्चाचैवापसरता हिंसने स्वाम्यदोषभाक् ॥३०२ शक्तो ह्यमोक्षयन् स्वामी दंष्ट्रिणां श्रङ्गिणां तथा । प्रथमं साहसं दद्यादिकुष्टे द्विगुणं ततः ॥३०३ जारं (चोरं) चौरेत्यभिवदन् दाप्यः पञ्चशतं दमम्। <mark>उपजीव्य धनं मुञ्चंस्त रेवाष्ट्रगु</mark>णीकृतम् ॥३०४ राज्ञोऽनिष्टप्रवक्तारं तत्यैवाक्रोशकारिणम् । तन्मन्त्रस्य च भेत्तारं जिह्नां छित्त्वा प्रवासयेत्।।३०४ मृताङ्गलप्नविकेतुर्गुरोस्ताडियतुस्तथा। राज(शय्या)यानासनारोढुईण्ड उत्तम(मध्यम)साह्**सः ॥३०**ई द्विनेत्रभेदिनो राजदिष्टादेशकृतस्तथा। विप्रत्वेन च शूद्रस्य जीवतोऽष्टशतो द्मः ॥३०७ दुहँ ष्टांस्तु पुनर्द ष्ट्रा व्यवहारान्नृपेण तु । सभ्याः सजयिनो दण्ड्या विवादाद् द्विगुणं दसम्।।३०८ यो मन्येताजितोऽस्मीति न्यायेन पि पराजितः। तमायान्तं पुनर्जित्वा दापयेद् द्विगुणं दमम्।।३०६

Sध्यायः] प्रायश्चित्ताध्यायः-अशीचप्रकरणवर्णनम् । १३०३

राज्ञाऽन्यायेन यो दण्डोऽगृहीतो वरुणाय तम्। निवेद्य दद्यादिप्रेभ्यः स्वयं त्रिंशद्गुणीऋतम्।।३१०

इति श्रीयाज्ञवल्क्यीये धमशास्त्रे व्यवहारोनाम द्वितीयोऽध्यायः।

॥ वृत्तीयोऽध्यायः ॥

अथ प्रायश्चित्ताध्यायः।

तत्रादावशौचप्रकरणवर्णनम्।

उनद्विवर्षं निखनेत्र कुर्यादुदकं ततः।
आ श्मशानादनुत्रज्य इतरो ज्ञातिभिर्मृतः॥१
यमसूकं यमी गाथां जपद्भिर्लीकिकाप्निना।
स दग्धव्य उपेतश्चदाहिताग्न्यावृतार्थवत्॥२
सप्तमादृशमाद्वापि ज्ञातयोऽभ्युपयन्त्यपः।
अप नः शोशुचद्धमनेन पितृदिङ्मुखाः॥३
एवं मातामहाचार्य(प्रत्त)प्रेतानामुदकित्या।
कामोदकं सिखप्रत्तास्वस्रीयश्वशुर्दिवजाम्॥४
सकुत्प्रसिञ्चन्त्युदकं नामगोद्रेण वाग्यताः।
न ब्रह्मचारिणः दुर्युहदकं पतितास्तथा॥५
पाषण्डमाश्रिताः स्तेना भर्तृष्ट्यः कामगादिकाः।
सुराप्य आत्मत्यागिन्यो नाशौचोदकभाजनाः॥६

कृतोदकान् समुत्तीर्णान् मृदुशाद्वलसंस्थितान्। स्नातानपवदेयुस्तानितिहासैः पुरातनैः।।७ मानुष्ये कद्हीस्तम्भनिःसारे सारमार्गणम्। यः करोति स संमूढो जलबुद्बुद्सन्निभे ॥८ पश्चधा सम्भृतः कायो यदि पश्चत्वमागतः। कर्मिभः स्वशरीरोत्थेस्तत्र का परिवेदना ॥६ गन्त्री वसुमती नाशमुद्धिदेवतानि च। फेनप्रख्यः कथं नाशं मर्त्यलोको न यास्यति ॥१० श्लेष्माश्रु बान्धवैर्मुक्तं प्रेतो भुङ्क्ते यतोऽवशः। अतो न रोदितज्यन्तु क्रियाः कार्याः स्वशक्तितः ॥११ इति संश्रुत्य गच्छेयुर्गृ हान् वालपुरःसराः। विदश्य निम्बपत्राणि नियताद्वारि वेश्मनः ॥१२ आचम्याग्न्यादिसिछिछं गोमयं गौरसर्षपान्। प्रविशेयुः समालभ्य दत्वाश्मनि पदं शनैः ॥१३ प्रवेशनाधिकं कर्म प्रेतसंस्पर्शिनामपि। इच्छतां तस्क्षणाच्छुद्धिः परेषां स्नानसंयमात् ॥१४ आचार्यपित्रुपाष्यायान्निह् त्यापि त्रती त्रती। स कटान्नं न चाश्नीयन्नच तेः सह संवसेत्॥१४ क्रीतलब्धाशिनो भूमौ स्वपेयुस्ते पृथक् पृथक्। पिण्डयज्ञावृता देयं प्रेतायात्रं दिनत्रयम्।।१६ जलमेकाह्माकारो स्थाप्यं क्षीरञ्च मृण्मये। वैतानोपासनाः कार्याः क्रियाश्च श्रुतिदर्शनात् ॥१७

त्रिराजं दशराजं वा शावमाशौचमुन्यते ।

ऊनद्विवर्षमुभयोः सूतकं मातुरेव हि ॥१८

पित्रोस्तु सूतकं मातुरतदस्यदर्शनाद् घ्रुवम् ।

तद्हर्न प्रदूष्येत पूर्वषां जन्मकारणात् ॥ १६

अन्तरा जन्ममरणे शेषाहोभित्रिग्रुद्धचित ।

गर्भस्रावे मासतुल्या निशाः ग्रुद्ध स्तु कारणम् ॥ २०

हतानां नृपगोविप्रैरन्वक्षश्वात्मवातिनाम् ।

प्रोषिते कालशेष स्यात् पूर्णे दत्तोदकं ग्रुचिः ॥२१

ब्राह्मणस्य द्शाहं तु भवति प्रेतसूतकम् ।

क्षत्त्रस्य द्वादशाहानि विशः पश्चदशैव तु ।

त्रिंशहिनानि शूद्रस्य (प्रेतसूतकमुन्यते) तद्द्धं न्यायवर्तिनः ॥२२

आद्न्तजन्मनः सद्य आचूडान्नेशिकी स्मृता।
त्रिरात्रमात्रता देशाद्दशरात्रमतः परम्।।२३
आहस्त्वद्त्तकन्यासु बालेषु च विशोधनम्।
गुर्वन्तेवास्यनूचानमातुलश्रोत्रियेषु च ।।२४
अनौरसेषु पुगेषु भार्यास्वन्यगतासु च।
निवासराजनि प्रेते तद्दः शुद्धिकारणम्।।२५
गोनृपत्रह्महतानामन्वक्षं चात्मघातिनम्।
प्रायानाशक शस्त्राप्तिविषादौरिच्छतां स्वयम्।
त्राह्मणेनानुगन्तव्यो न शूद्रो (हि) न (मृतः) द्विजः कचित्।
अनुगन्यान्भसि स्नात्वा स्पृट्राप्तिं घृतभुक् शुचिः।।२६

महीपतीनां नाशीचं हतानां विद्युता तथा। गोब्राह्मणार्थे संप्रामे यस्य नेच्छति भूमिपः ॥२० ऋत्विजां दीक्षितानाञ्च यज्ञियं कर्म कुर्वताम्। सत्रिव्रतिब्रह्मचारिदातृब्रह्मविदां तथा ॥२८ दाने विवाहे यहो च संप्रामे देशविष्ठवे। आपद्यपि च कष्टायां सदा शौचं विधीयते ॥२६ उद्क्याशौचिभिः स्नायात् संस्पृष्टस्तैरूपस्पृशेत्। अब्लिङ्गानि जपेचैव सावित्रीं मनसा सकृत्।।३० कालोऽग्निः कर्म मृद्वायुमनोज्ञानं तपो जलम्। पश्चात्तापो निराहारः सर्वेऽमी शुद्धिहेतवः ॥३१ अकार्यकारिणां दानं वेगो नद्यास्तु शुद्धिकृत्। शोध्यस्य मृच तोयञ्च संन्यासो वै द्विजनमनाम् ॥३२ तपो देदविदां क्षान्तिर्विदूषां वर्ष्मणो जलम्। जपः प्रच्छन्नपापानां मनसः सत्यमुच्यते ॥३३ भूतात्मनस्तपोविद्ये बुद्धे ज्ञानं विशोधनम्। क्षेत्रज्ञस्येश्वरज्ञानाद्विशुद्धः परमा मता ॥३४ इत्याशौचप्रकरणवर्णनम्।

अथापद्धर्मप्रकरणवर्णनम् ।

क्षात्रेण कर्मणा जीवेद्विशां वाप्यापदि द्विजः। निस्तीर्य तामथात्मानं पावयित्वा न्यसेत् पथि ॥३४ फलोपलक्षौमसोममनुष्यापूपवीरुधः। तिलौदनरसक्षारान् दिध क्षीरं घृतं जलम्।।३६ शस्त्रासवं मघूच्छिष्टं मधु लाक्षाश्च वर्हिषः। मृचर्मपुष्पकुतपकेशतक्रविषक्षितीः ॥३७ कौरोयनीलीलवणमांसैकराफसीसकान्। शाकाद्रोर्षधिपिण्याकपशुगन्धांस्तथैव च ॥३८ वैश्यवृत्यापि जीवन्नो विक्रीणीत कदाचन । धर्मार्थं विक्रयं नेयास्तिला धान्येन तत्समाः ॥३६ लाक्षालवणमांसानि पतनीयानि विक्रये। पयोदिध च मद्यश्व हीनवर्णकराणि च ॥४० आपद्गतः सम्प्रगृह्वन भुञ्जानो वा यतस्ततः। न लिप्येतैनसा विप्रोज्ज्वलनार्कसमो हि सः ॥४१ कृषिः शिल्पं भृतिर्विद्या कुसीदं शकटं गिरिः। सेवाऽनूपं नृपो भैक्षमापत्ती जीवनानि तु ॥४२ बुभुक्षितरत्र्यहं स्थित्वा धान्य(धन)मन्नाह्मणाद्धरेत्। प्रतिगृह्य तदाख्येयमभियुक्तेन धर्मतः ॥४३ तस्य. वृत्तं कुछं शीछं श्रुतमध्ययनं तपः 🖯 ज्ञात्वा राजा कुटुम्बच्च धर्म्या वृत्ति प्रकल्पयेत् ॥४४ इत्यापद्धर्मप्रकरणवर्णनम्।

अथ वानप्रस्थधर्मप्रकरणवर्णनम्।

सुतविन्यस्तपत्नोकस्तया वानुगतो वनम्। वानप्रस्थो ब्रह्मचारी साग्निः सोपासनो (क्षमी)व्रजेत्।।४४ अफाल्क्ट्रेनाग्नीश्च पितृदेवातिथीस्तथा । भृत्यांस्तु तर्पयेत् रमश्रुजटालोमभृ इात्मवान् ॥४६ अह्वो मासस्य षण्णां वा तथा संवत्सरस्य वा। अर्थस्य सञ्चयं कुर्यात् कृतमाश्त्रयुजे त्यजेत् ॥४० दान्तिषवणस्नायी निवृत्तश्च प्रतिप्रहात्। स्वाध्यायवान् दानशीलः सर्वसत्वहिते रतः।।४८ दन्तोलूखलिकः कालपकाशी वाऽश्मकुट्टकः। श्रीतं स्मात्तं फलस्नेहै: कर्म कुर्यात् क्रियास्तथा ॥४६ चान्द्रायणैर्नयेत्कालं कुच्छ्रैवा वर्त्तयेत्सदा। पक्षे गते वाप्यश्नीयान्मासे वाऽहनि वा गते ॥५० स्वप्याद्भूमौ शुची रात्रौ दिवा संप्रपदैनेयेत्। स्थानासनविहारेवा योगाभ्यासेन वा तथा ॥५१ मीष्मे पञ्चाग्निमध्यस्थो वर्षासु स्थण्डिलेशयः। आर्द्रवासास्तु हेमन्ते शत्तया वाऽपि तपश्चरेत् ॥५२ यः कण्टकैर्वितुद्ति चन्द्नैर्यश्च लिम्पति। अक्रुद्धोऽपरितुष्टश्च समस्तस्य च तस्य च ॥५३ अग्नीन् वाप्यात्मसात् कृत्वा वृक्षावासी मिताशनः । वानप्रस्थगृहेष्वेव यात्राथं भैक्षमाचरेत् ॥५४

प्रामदाहृत्य वा प्रासानष्टौ भुञ्जीत वाग्यतः। वायुभक्षः प्रागुदीची गच्छेदावर्ष्म संक्षयात्॥५५ इति वानप्रस्थधर्मप्रकरणवर्णनम्।

अथ यतिधर्मप्रकरणवर्णनम्। वनाद् गृहाद्वा भत्वेष्टिं सर्ववेदसदक्षिणाम्। प्राजापत्यां तदन्ते तानग्नीनारोप्य चात्मनि ॥५६ अधीतवेदो जपकृत् पुत्रवानन्नदोऽग्निमान्। शक्तया च यज्ञक्र मोक्षे मनः कुर्यात्तु नान्यथा ॥५६ सर्वभूतहितः शान्तिखदण्डी सकम डलुः। एकारामः परिव्रज्य भिक्षार्थी व्राममाश्रयेत् ॥६८ अप्रमत्तश्चरेद्भेक्षं सायाह्वे नाभिलक्षितः। रहिते भिक्षुर्केर्यामे यात्रामात्रमलोलुपः ॥५६ यतिपात्राणि मृद्वेणुदार्वलाबुमयानि च। सिंखेः शुद्धिरेतेषां गोवालैश्चावघर्षणात् ॥६० सन्निरुध्येन्द्रियमामं रागद्वैषौ विहास च। भयं हत्वा च भूतानाममृती भवति द्विजः ॥६१ कर्तव्याशयशुद्धिस्तु भिक्षुकेण विशेषतः। ज्ञानोत्पत्तिनिमित्तत्वात् स्वातन्त्र्यकरणाय च ॥६२ अवेक्योगर्भवासश्च कर्मजा गतयस्तथा। आधयो व्याधयः क्रेश जरारूपविपर्ययाः ॥६२

भवो जातिसहस्रेषु प्रियाप्रिय विपर्य्ययः। ध्यानयोगेन संपश्येत् सूक्ष्म आत्मात्मनि स्थितः ॥६४ नाश्रमः कारणं धर्मे क्रियमाणो भवेद्धि सः। अतो यदात्मनोऽपथ्यं परस्य न तदाचरेत् ॥६४ सत्यम स्तेयः मक्रोधो हीः शौचं धीधृ तिर्द्मः। संयतेन्द्रियता विद्या धर्मः सार्व उदाहृतः ॥६६ निःसरन्ति यथा छोहपिण्डात्तस्माः। स्फुलिङ्गकाः। सकाशाद्रसनस्तद्वदात्मनः प्रभवन्ति हि ॥६७ तत्रात्मा हि स्वयं कि श्वित् कर्म कि श्वित् स्वभावतः। करोति किञ्चद्भ्यासाद्धर्माद्धम्भयात्मकम् ॥६८ निमित्तमक्षरः कत्तां बोद्धा त्रह्म गुणी वशी। अजः शरीरब्रहणात् स जात इति कीर्त्यते ॥६६ सर्गादौ स यथाकाशं वायुं ज्योतिर्ज्ञ महीम्। सृजत्येकोत्तरगुणांस्तथादत्ते भवन्नपि ॥७० आहुत्याप्यायते सूर्यस्तस्माद्वृष्टिरथौषधः। तद्त्रं रसरूपेण शुक्र(क्छ)त्वमुपगच्छति ॥७१ स्त्रीपुंसयोस्तु संयागे विशुद्धे शुक्रशोणिते। पञ्चधातु स्त्रयं षष्ठानादत्ते युगपत् प्रभुः॥७२ इन्द्रियाणि मनः प्राणो ज्ञानमायुः सुखं धृतिः। धारणा प्रेरणं दु:खिमच्छाहंकार एव च ॥७३ प्रयत्न आकृतिर्वर्णः स्वरद्वेषौ भवाभवौ। तस्यैतद्वात्मजं सर्वमनादेरादिमिच्छतः ॥७४

प्रायश्चिताध्यायः यतिधर्मप्रकरणवर्णनम्। ऽध्यायः । प्रथमे मासि संक्लेदभूतो धातुविमूर्च्छितः। मास्यर्वुदं द्वितीये तु तृतीयेऽङ्गेन्द्रियेर्युतः ॥७५ आकाशहाघवं सौक्ष्म्यं शब्दं श्रोत्रं बलादिकम्। वायोस्तु स्पर्शनं चेष्टां व्यूहनं रौक्ष्यमेव च ॥७६ पित्त तु (अग्नेस्तु) दर्शनं पक्तिमौडण्यं रूपं प्रकाशिताम्। रसात्तु रसनं शैत्यं स्नेह क्लेदं समाईवम् ॥७७ भूमेर्गन्धं तथा घाणं गौरवं मूर्तिमेव च। आत्मा गृह्वात्यजः सर्वं तृतीये स्पन्दते ततः ॥७८ दोहदस्याप्रदानेन गर्भो दोषमवाप्नुयात्। वैरूप्यं मरणं वाऽपि तस्मात् कार्य्यं प्रियं स्त्रियाः ॥७६ स्थैय्यं चतुर्थे त्वङ्गानां पश्चमे शोणितोद्भवः। षष्ठे बलस्य वर्णस्य नखरोम्णाञ्च सम्भवः॥८० मनश्चेतन्ययुक्तोऽसौ नाड़ीस्नायुशिरायुतः। सप्तमे चाष्टमे चैव त्वङ्मांसस्मृतिमानपि ॥८१ पुनर्द्धात्री पुनर्गर्भमोजस्तस्य प्रधावति । अष्टमे मास्यतो गर्भी जातः प्राणैर्वियुज्यते ॥८२ नवमे दशमे वाऽपि प्रबल्धे सूनिमारुतैः। निःसार्य्यते वाण इव यन्त्रचिद्रद्रेण सज्वरः ॥८२

तस्य वो(षो)ढा शरीराणि षट्त्वचो धारयन्ति च । षड्ङ्गानि तथास्थ्नाञ्च सह षष्ट्या शतत्रयम्॥८४

स्थालैः सह चतुःषष्टिर्दन्ता वै विशतिर्नेखाः । पाणिपादशलाकाश्च तासां स्थानचतुष्टयम् ॥८५

षष्ट्यङ्गुरीनां द्वे पाष्ण्योर्गुरुफेषु च चतुष्रयम्। चत्वार्य्यरिकास्थीनि जङ्गयोस्तावदेव तु ॥८६ द्वे द्वे जानुकपोलोरफलकांससमुद्भवे। अक्षः स्थालूषके श्रोणीफलके च विनिर्द्दिशेत्।।८७ भगारथेकं तथा पृष्ठं चत्वारिंशच पञ्च च। त्रीवा पञ्चदशास्थिः स्याज्जन्वेके**कं तथा हनुः** ॥८८ तन्मूले द्वे ललाटास्थिगण्डनासाघनास्थिका। पारवंकाः स्थालकैः सार्द्धमर्वुदैश्च द्विसप्ततिः ॥८६ द्दी शङ्ककौ कपालानि चत्वारि शिरसस्तथा। **उरः सप्तदशास्थीनि पुरुषस्यास्थिसंत्रहः ॥६०** गन्धरूपरसस्पर्शशब्दःश्च विषयाः स्मृताः। नासिका लोचने जिह्ना त्वक् श्रोत्रं चेद्रियाणि च ॥६१ हस्ती पायुरुपस्थश्च वाक्पादी चेति पश्च वै। कर्मेन्द्रियाणि जानीयान्मनश्चैवोभयात्मकम् ॥६२ नाभिरोजो गुढं शुक्रं शोणितं शङ्खकौ तथा। मूर्द्धासकण्ठहृद्यं प्राणस्यायतनानि तु ॥६३ वपावसावहननं नाभिः क्लोम यकृत् प्रिहा। क्षुद्रान्त्रं वककौ वस्तिः पुरीषाधानमेव च ॥१४ आमाशयोऽथ हृद्यं स्थूलान्त्रं गुद्मेव च। उदर्श्व गुदः कोष्ठ्यो विस्तारोऽयमुदाहृतः ॥६६ कनोनिके साक्षिकूटे शष्कुली कर्णपत्रकी। कणीं शङ्कौ भू वी दन्तावेष्टावोष्टी ककुन्द्री ॥६६

वङ्कणी वृषणी वृक्की श्लेष्मसङ्घातजी स्तनी। उपजिह्ना स्फिचौ बाहू जङ्घोरुषु च पिण्डिका ॥६७ ताळूदरं वस्ति शीर्षं चिबुके गलशुण्डिके। अवटुश्चैवमेतानि स्थानान्यत्र शरीरके ॥६८ अक्षि(वर्त्म)क्षणेचतुष्कञ्च पद्धस्तहृद्यानि च। नवचिद्रद्राणि तान्येव प्राणस्यायतनानि तु ॥६६ शिराः शतानि सप्तैव नवस्नायुशतानि च। धमनीनां शते द्वे च पेशी पञ्चशतानि च ॥१०० एकोनत्रिंशह्रक्षाणि तथा नवशतानि च। षट्पञ्चाशच जानीत शिराधमनिसंज्ञिताः ॥१०१ त्रयोछक्षास्तु विद्योयाः रमश्रुकेशाः शरीरिणाम् । सतो(अष्टो)तरं मर्म्मशतं ह्रे च सन्धिशते तथा ॥१०२ रोम्णां कोट्यश्च पञ्चाशचतस्रः कोट्य एव च। सप्तषष्टिस्तथा लक्षाः साद्धाः खेदायनैः सह ॥१०३ वयवीयैर्विगण्यन्ते विभक्ताः परमाणवः। यद्य येकोऽनुवेद्धां भावनाब्चेव संश्थितिम्।।१०४ रसस्य नव विहोया जलस्याञ्जलयो दश। सप्तैव तु पुरीषस्य रक्तस्याष्टी प्रकीर्तिताः ॥१०५ षट्इलेब्मा पञ्च पित्तश्व चत्वारो मूत्रमेव। वसा त्रयो द्वौ तु मेदो मज्जैकाऽद्ध न्तु मस्तके ॥१०६ श्लेष्मौजसस्तावदेव रेतसस्तावदेव तु। इत्येतद्स्थिरं वर्ष्म यस्य मोक्षाय कृत्यसौ ॥१०७

द्वासप्तति सहस्राणि हृद्याद्भिनिःसृता। हिताहितानामनाड्यस्तासां मध्ये शशिप्रभम् १०८ मण्डलं तस्य मध्यस्थ आत्मा दीप इवाचलः। स ज्ञेयरतं विदित्वेह पुनरायतने न तु ।।१०६ होयं चारण्यकमहं यदादित्यादवाप्तवान्। योगशास्त्रञ्च मत्रोक्तं होयं योगमभीप्सता ॥११० अनन्यविषयं ऋत्वा मनोबुद्धिस्पृतीन्द्रियम्। ध्येय आत्मा स्थितो योऽसौ हृद्ये दीपवत् प्रभुः ॥१११ यथाविधानेन पठन् साम गायत्यविध्ययम्। सावधानस्तंद्भ्यासान् परं त्रह्याधिगच्छति ॥११२ अपरान्तकमुङ्लीप्यं मद्रकं प्रकरीन्तथा । औवेणकं सरोविन्दुमुत्तरं गीतकानि च ॥११२ मृग्गाथा पाणिका दक्षविहिता ब्रह्मगीतिकाः। **होयमेतत्तद्भ्यासकरणान्मोक्षसं**ज्ञितम् ॥११४ वीणावादनतत्त्वज्ञः श्रुतिजातिविशारदः । तालज्ञश्चाप्रयासेन मोक्षमार्गं नियच्छति ॥११५ गीतज्ञो यदि(यागेन)गीतेन नाप्नोति परमं पद्म्। रुद्रस्यानु चरो भूत्वा तेनेव सह मोदते ॥११६ अनादिरात्मा कथितस्तस्यादिस्तु शरीरकम्। आत्मनश्च जगत् सर्वं जगतश्चात्मसम्भवः ॥११७ कथमति हिमुद्यामः सदेवासुरमानवम्। जगदुद्भूतमात्मा च कथं तस्मिन् वदस्व नः ॥११८

मोहजालमपास्येदं पुरुषो दस्यते हि यः। सहस्रकरपन्नेत्रः सूर्यवर्चाः सहस्रशः ॥११६ स आत्मा चैव यज्ञ विश्वरूपः प्रजापतिः। विराजः सो(म)ऽल्ररूरेण यज्ञत्वमुपगच्छति ॥१२० यो द्रज्यदेवतात्यागसम्भूतो रस उत्तमः। देवान् सन्तर्प्य स रसो यजमानं फलेन च ॥१२१ संयोज्य वायुना सोमं नीयते रश्मिभस्ततः। भृग्यजु सामविहितं सौरं धामोपनीयते ॥ १२२ स्वमण्डलाद्सी सूर्यः सृजत्यमृतमुत्तमम्। यज्जन्म सर्वभूतानामशनानशनात्मनाम् ॥१२३ तस्माद(न्नान्) त्नान् पुनर्यज्ञ पुनरन्नं पुनः कृतुः। एवमत इनाचन्तं चकं सम्परिवर्तते ॥१२४ अनादिरात्मा सम्भूतिर्भिचते नान्तरात्मनः। समवायी तु पुरुषो मोहेच्छाद्वेषकर्मजः ॥१२५ सहस्रातमा मया यो व आदिदेव उदाहतः। मुखवाहूरुपजाः स्युस्तस्य वर्णा यथाक्रमात् ॥१२६ पृथिवी पादतरतस्य शिरशो चौरजायत । नस्तः प्राणा दिशः श्रोत्रात् स्पर्शा(त्वचो)द्वायुर्मुखाच्छिखी ॥१२७ मनसञ्चनद्रमा जातश्रक्षुषश्च दिवाकरः। जघनाद्न्तरिक्षञ्च जगच सचराचरम् ॥१२८ यद्येवं स कथं ब्रह्मन् पापयोनिषु जायते।

ईश्वरः स कथं भावरनिष्टेः संप्रयुज्यते ॥१२६

करणेरिवतस्यापि पूर्वज्ञानं कथञ्च न। वेत्ति सवगतां कस्मात् सर्वगोऽपि न वेदनाम् ॥१३० अन्त्यपक्षिस्थावरतां मनोवाकायकर्मजेः। दोषै. प्रयाति जीवोध्यं भवं योनि(जाति) शतेषु च ॥१३१ अनन्ताश्च यथा भावाः शरीरेषु शरीरिणाम्। रूपाण्यपि तथैवेह सर्वयोनिषु देहिनाम् ॥१३२ विपाकः कर्म्मणां प्रत्य केषाश्चिदिह जायते। इह चामुत्र चैकेषां भावस्तत्र प्रयोजनम् ॥१३३ परद्रव्याण्यभिध्यायं स्तथा निष्टानि चिन्तयन् । वितथाभिनिवेशी च जायन्तेऽन्त्यासु योनिषु ॥१३मृ पुरषोऽनृतवादी च पिशुनः पुरुषरतथा। अनिबद्ध प्रछापी च मृगपक्षिषु जायते ॥१३४ अदत्तादान निरतः परदारोपसेवकः। हिंसक् आविधानेन स्थावरेष्वभिजायते ॥१३६ आत्मज्ञः शौचवान् दान्तस्तपस्वी विजितेन्द्रियः। धर्मकृद् वेदविद्याभिः सात्त्विको देवयोनिषु १३७ असत्कार्यरतोऽधीर आरम्भी विषयी च यः। स राजगो मनुष्येषु मृतोजन्माधिगच्छति।।१३८ निद्रालु[.] क्रूरकुल्लुब्ध नास्तिको याचकस्तथा। प्रमादवान् भिन्नवृत्तोभवेत्तिय्देश्च तामसः ॥१३६ रजसा तमसा चैव समाविष्टो भ्रमनिह । भावैरनिष्टैः संयुक्तः संसारं प्रतिपद्यते ॥१४०

मिलनो हि यथादशी रूपालोकस्य न क्षमः। तथाऽविपककरण आत्मा ज्ञानस्य न क्षमः ॥१४१ कटूर्वारौ यथाऽपके मधुरः सन् रसोऽपि न। प्राप्यते ह्यात्मनि तथा नापककरणे ज्ञाता ॥४२ सर्वात्रयां निजे देहे देही विन्दति वेदनास्। योगी युक्तश्च सर्वेषां यो नावाप्नोति वेदनाम् ॥१४३ आकाशमेक हि यथा घटादिषु पृथग्भवेत्। तथात्मेकोऽप्यनेकस्तु जलाधारेष्विवांशुमान् ॥१४४ ब्रह्मखानिलतेजांसि जलं भूश्चति धातवः। इमे लोका एप चात्मा तस्माच सचराचरम्।।१४४ गृह(मृद्)दण्डचक्रसंयोगात् कुम्भकारो यथा घटम्। करोति तृणमृत्काष्ठेर्गृहं वा गृहकारकः ॥१४६ हेममात्रमुपादय रूप्यं (रूपं) वा हेमकारकः। निजलालासमायोगात् कोशं वा कोशकारकः ॥१४७ कारणान्येवमादाय तासु तास्विह योनिषु। सृजलात्मानमात्मा च सम्भूय करणानि च ॥१४८ महाभूतानि सत्यानि यथात्मापि तथेव हि। कोऽन्यथैकेन नेत्रेण दृष्टमन्येन पश्यति ॥१४६ वाचं वा को विजानाति पुनः संश्रुत्य संश्रुताम्। अतीतार्थस्मृतिः कस्य को वा स्वप्नस्य कारकः ॥१५०

जातिरूपवयोवृत्तिविद्यादिभिरहङ्कृतः । शब्दादिविषयो(सक्तः)द्योगं कर्म्भणा मनसा गिरा ॥१५१

स सन्दिग्धमतिः कर्मफलमस्ति न वेति वा। विष्ठुतः सिद्धमात्मानमसिद्धोऽपि हि मन्यते ॥१५२ मम दारसुनांमात्या अहमेषामिति स्थितः। हिताहितेषु भावेषु विपरीतमतिः सदा ॥१५३ होडहो प्रकृतो चैव विकारे वाडविशेषवान्। अनाशका(ग्निप्रवेश)नलापातजलप्रपतनी समी ॥१५४ एवं वृत्तोऽविनोतातमा वितथाभिनिवेशवान्। कर्मणा द्वेषमोहाभ्यामिन्छ्या चैव बध्यते। १५५ आचाय्योपासनं वेदशास्त्र(म्याथं)षु विवेकिता । तत्कर्मणामनुष्ठानं सङ्गः सङ्गिर्गिरः शुभाः ॥१५६ क्यालोकालम्भविगमः सवभूतात्मद्रश्नम्। त्यागः परिव्रहाणाञ्च जीर्णकाषायधारणन् ॥१५७ विषयेन्द्रियसंरोधस्तन्द्रचालस्यविवर्जनम्। शरीरपरिसं(ख्यानं)स्थानं प्रवृत्तिष्वघदर्शनम् ॥१६८ नीरजस्तमता सत्त्वशुद्धिर्निःस्पह्ता शमः। एतैरुपायैः संगुद्धः सत्वयुक्तोऽमृतीभवेत् ॥१५६ तस्वरमृतेकपस्थानात् सत्वयोगात् परिक्षयात्। कर्म्यणा सन्निक र्षांच सतां योगः प्रवर्तते ॥२६० श्रारीरसंक्षये यस्य मनः सत्त्वस्थमीश्ररम्। अविष्युतस्मृतिः सम्यक् स जातिस्मरतामियात् ॥१६१ यथा हि भरतो वर्णेवंतंयत्यात्मनस्तन्म । नानारूपाणि बुध्रीणस्तथातमा कर्मजस्तनुम् ॥१६२

कालकस्मीत्मनी जानां दोषैमीतुस्तर्थन च। गर्भस्य वैकृतं दृष्टम(ना)ङ्गहीनाद् जन्मतः ॥१६३ अहङ्कारेण मनसा गत्या कम्प्रेफलेन च। शरीरेण च नात्मायं मुक्तपूर्वः कथञ्चन ॥१६४ दाता सत्यः क्षमी प्राज्ञः शुनकर्मा जितेन्द्रियः। तपस्वी योगशीलश्च न रोगैः परिभूयत । वःयाधारस्तेहयोगाद् यथा दीपस्य संश्वितिः। विक्रियापि च दृष्टैवसकाले प्राणसंक्षयः ॥१६५ अनन्ता रहमयस्तस्य दोपवद् यः स्थितो हृदि । सितासिताः कद्रुनीलाः कपिलाः पीतलोहिताः ॥१६६ उर्ध्वमेकः स्थित्तिषां यो भित्वा सूर्यमण्डलम्। ब्रह्मलोकमतिक्रम्य तेन याति परां गतिम् ॥१६७ यद्स्यान्यद्रश्निशतमूद्धं मेव व्यवस्थितम्। तेन देवशरीराणि संधामानि प्रपयते ॥१६८ येऽनेकरूपाश्चाधस्ताद्रश्मयोऽस्य मृदुप्रभाः। इह कम्मीपभोगार्थस्तैः संसरति सो ज्वशः ॥१६६ वेदैः शास्त्रः सविज्ञानैर्जन्मना मरणेन च। आध्या गत्या तथागत्या सत्येन ह्यनृतेन च ॥१७० श्रेयसा सुखदुःखाभ्यां कर्मभिश्च शुभाशुभैः। निमि तशकुनज्ञानैर्यहसंयोगजैः फलैः ॥ ७१ तारानक्षत्रसञ्चारैर्जागरैः स्वप्नजैरपि । आकाशपवनज्योतिर्जलभूतिमिरैस्तथा ॥१७२ मन्वन्तरैर्युगप्राप्त्या मन्त्रौषधिबछैरपि। वित्तात्मानं विद्यमानं कारणं जगत(सदा)स्तथा ॥१७३ अहङ्कारः स्मृतिर्मेधा द्वेषो बुद्धिः सुखं घृतिः ।
इन्द्रियान्तरसञ्चार इच्छाधारणजीविते ॥१०४
स्वर्गः स्वप्तश्च भावानां प्रेरणं मनसो गतिः ।
निमेषश्चेतना यत्न आदानं पाञ्चभौतिकम् ॥१०५
यत एतानि दृश्यन्ते छिङ्गानि परमात्मनः ।
तस्माद्स्ति परो देहादात्मा सर्वग ईश्वरः ॥१०६
बुद्धोन्द्रियाणि सार्थानि मनः कर्मेन्द्रियाणि च ।
अहङ्कारश्च बुद्धिश्च पृथित्र्यादीनि चैव हि ॥१०७
अव्यक्तमात्मा क्षेत्रज्ञाः क्षेत्रस्यास्य निगद्यते ।
ईश्वरः सर्वभूतस्थः सन्नसन् सदसञ्च (सः)यः ॥१७८
बुद्धे स्त्पत्तिरव्यक्तात्ततोऽइङ्कारसम्भवः ।

तन्मात्रादीन्यहङ्कारा(तस्मात्वादीनिजायन्ते)देकोत्तरगुणानि च ॥१७६ शब्दः स्पर्शश्च रूप च रसो गन्धश्च तदुगुणाः।

यो यस्मान्निःसृतश्चेषां (यो यस्मिन्ना जिततेस्पी) सतस्मिन्नेव लीयते ॥१८०

यथात्मानं सृजत्यात्मा तथा वः कथितो मया।
विपाकात्त्रिप्रकाराणां कमणामीश्वरोऽपि सन् ॥१८१
सत्त्वं रजस्तमश्चैव गुणास्तस्यैव कीर्तिताः।
रजस्तमोभ्यामाविष्टश्चक्रवद् श्राम्यते हि सः॥१८२
अनादिरादिमांश्चैव स एव (य एव) पुरुषः परः।
छिङ्गोन्द्रयैप्राह्यरूपः सविकार उदाहृतः॥१८३
पितृंयाणोऽजवीथ्याश्च यदगस्यस्य चान्तरम्।
तेनाग्निहोत्रिणो यान्ति स्वर्गकामा (प्रजाकामा)दिवं प्रति॥१८४

१३२१

ये च दानपराः सम्यगष्टाभिश्च गुणैर्युताः। तेऽपि तेनैव मार्गेण (गच्छन्ति) सत्यत्रतपरायणाः ॥१८४ तत्राष्ट्राशीतिसाहस्रा मुनयो गृहमेधिनः। पुतरावर्तिनो वोजभूता धर्मप्रवर्तकाः ॥१८६ सप्तर्पिनागवीथ्यन्तर्देवलोकसमाश्रिताः। तावन्त एव मुनयः सर्वारम्भविवर्जिताः ॥१८७ तपसा ब्रह्मचर्येण सङ्गत्यागेन मेधया। तजीव तावत्तिष्ठन्ति यावदाभूतसंद्रवम् ॥१८८ यवो वेदाः पुराणञ्च विद्योपनिषद्स्तथा। श्लोकाः सूत्राणि भाष्याणि यच किञ्चन वाड्ययम् ॥१८६ वेदानु वचनं यज्ञो ब्रह्मचर्यं तरो द्मः। श्राद्धोपवासः स्वातन्त्र्यमात्मनो ज्ञानहेतत्रः ॥१६० स ह्याश्रमे (निद्ध्यास्यः) विजिज्ञास्यः समस्तैरेवमेव तु । द्रष्टव्यस्त्वथ मन्तव्यः श्रोतत्र्यश्च द्विजातिभिः ॥१६१ य एवमेनं विन्द्न्ति ये चारण्यकमाश्रिताः। उपासते द्विजाः सत्यं श्रद्धया परया युताः ॥१६२ क्रमात्ते सम्भवन्त्यर्चिरहः शुक्तं तथोत्तरम्। अयनं देवलोकञ्च सवितारं सवैद्युतम् ॥१६३ ततस्तान् पुरुषोऽभ्येत्य मानसो ब्रह्मछौकिकान् । करोति पुनरावृत्तिस्तेषामिह न विद्यते ॥१६४ यज्ञेन तपसा दानैर्ये हि स्वर्गजितो नराः। धूमं निशां कृष्णपक्षं दक्षिणायनमेव च ॥१६४

पिरुलोकं चन्द्रमसं वायुं (नभो)वृष्टिं जलं महीम्। कमात्ते सम्भवन्तीह पुनरेव व्रजनित च ॥१६६ एतद् यो न विजानाति मार्गद्वितयमात्मवान्। दन्दशूकः पतङ्गो वा भवेत् कीटोऽथ वा कृमिः ॥१६७ **ऊरस्थोत्तानचरणः सब्ये न्यस्येत**रं करम्। उत्तानं किञ्चिदुन्नम्य मुखं विष्टभ्य चोरसा ॥१६८ निमोलिताक्षः सत्वस्थो दन्तं तानसंस्पृशन्। तालुस्थ.चरुजिह्नश्च संवृतास्यः सुनिश्चलः ॥१६६ सन्निरुध्येद्रियमामं नातिनीचाच्छितासनः। हिगुणं त्रिगुणं वार्ऽाप प्राणायामसुपक्रमेत् ॥२०० ततो ध्येयः स्थितो योऽसौ हःये दोपवत् प्रभुः। धारयेत्तत्र चात्मःनं धारणां धारयन् बुधः ॥२०१ अन्तर्द्धानं स्मृतिः कान्तिर्देष्टिः श्रोत्रइता तथा। निजं शरीरमुंत्सृज्य परकायप्रवेशनम् ॥२०२ अथीनां छन्रतः सृष्टियीगसिद्धे स्तु लक्षणम्। सिद्धे योगे त्यजः देहममृतत्वाय कल्पते ॥२०३ अथवा यभ्यसन् वेदं न्यातकर्मा वने (सुतं) वसन्। अयाचिताशी मित्रभुक् परां सिद्धिमवाष्तुयात् ॥२०४ न्यायागतधनस्तत्त्वज्ञाननिष्ठोऽतिथिप्रियः। श्राद्धकृत् सत्यवादी च गृहस्थोऽपि हि मुच्यते ॥२०४ इति यति धर्म प्रकरणवर्णनम्।

अथ प्रायश्चित्तधर्मप्रकरणवर्णनम्। महापातकजान् घोरान्नरकान् प्राप्य गर्हितान्। कर्मक्षयात् प्रजायन्ते महापातकिनस्त्विह ॥२०६ मृगश्वशूकरोष्ट्राणां ब्रह्महा योनिमृच्छति । खरपुक्क(ल्कस)श वेनानां सुरापो नात्रसंशयः।।२०७ कृमिकीटपतङ्गत्वं स्वर्णहारी समाप्नुयात्। तृणगुलमलतात्त्रश्व क्रमशो गुरुतलपगः॥२०८ व्रह्महा क्षयरोगी स्यात् सुरापः श्यावदन्तकः। हेमहारी तु कुनखी दुश्चर्मा गुरुनल्पगः ॥२०६ योषेन संवसत्येषां सप्तहिङ्गोऽभिजायते। (या येन संविपत्येषां सतिलङ्कोऽभिज्ञायते) अन्नहर्तामयावी स्यान्मूको वागपहारकः।।२१० धान्यमिश्रोऽतिरिक्ताङ्ग पिशुनः पृतिनासिकः। तैं छहत्ते छपायो स्यात् पूतिवक्त्रस्तु सूचकः ॥२११ परस्य योषितं हत्वा ब्रह्मस्वमपहृत्य च। अरण्ये निर्ज्ज(ले)ने घोरे(देशे)भवति ब्रह्मराक्षसः ॥२१२ हीनजातौ प्रजायन्ते परस्त्रापहारकः। पत्रशाकं शिखी हत्वा गन्धं रहुच्दुन्द्रिः शुभान् ॥२१३ मूषिको धान्यहारी स्याद्यानमुष्ट्ः फलं कपिः। जलं प्रवः (अजः पशुं) पयः काको गृहकारी ह्युपस्करम्।।२१४ मधु दंशः पलं गृध्रो गां गोधाम्नि वकस्तथा। श्वित्री वस्तं श्वा रसन्तु चीरी लवणहारकः ॥२१५

प्रदर्शनार्थमेतत्तु मयोक्तं स्तेयकर्मणि । द्रव्यप्रकारा हि यथा तथैव प्राणिजातयः ॥२१६ यथाकर्मफर्छ प्राप्य तिर्यक्त्वं कालपर्ययात्। जायन्ते रुक्षणश्रष्टा दरिद्राः पुरुवाधमाः ॥२१७ ततो निष्करमधीमूताः कुले महति भोगिनः। जायन्ते विद्ययोपेता धनधान्यसमन्विताः । २१८ विहितस्याननुष्ठानान्निन्दितस्य च सेवनात्। अनिप्रहाचेन्द्रियाणां नरः पतनमृच्छति ॥२१६ तस्मात्तेनेह कर्तव्यं प्रायश्चित्तं विशुद्धये। एवमस्यान्तरात्मा च लोकश्चैव प्रसीद्ति ॥२२० प्रायश्चित्तमकुर्याणाः पापेषु निरता नराः। अपश्चात्तापिनः कष्टान्नरकान् यानित द्रारुणान् ॥२२१ तामिस्रं लोहशङ्कञ्च महानिरयशल्मली। रौरवं कुड्मलं पूतिमृत्तिकं कालसूत्रकम् ॥२२२ संघातं लोहितोद्ञ सविषं सम्प्रतापनम्। महानरककाकोलं संजीवनमहा(नदी) पथम् ॥२२३ अवीचिमन्धतामिस्रं कुम्भीपाकं तथैव च। असिपत्रवनब्चैव तपनब्चैकविशकम् ॥२२४ महापातकजेघीरैहपपातकजेश्तथा। अन्वितायान्यचरितप्रायश्चित्ता नराधमाः । २२४ प्रायश्चित्तरपैत्येनोयद्शानकृतं भवेत्। कामतो व्यवहार्यस्तु वचन दिह जायते । २२६

१३२४

ब्रह्महा मद्यपः स्तेनोगुरुतल्पग एव च। एते महापातकिनो यश्च तैः (संपि बेत्समाम्)सह संवसेत् ॥२२७ गुरुणामत्यधिक्षेपो वेदनिन्द्या सुहृद्वधः। ब्रह्महत्यासमं ज्ञेयमधीतस्य च नाशनम् ॥२२८ निषिद्धभञ्जणं जैह्ययमुत्कषेश्व वचोऽनृतम्। रजस्वलामुखास्वादः सुरापानसमानि तु ॥२२६ अश्वरत्नमनुष्यस्वीभूधेनुहरणं तथा। निक्षेपस्य च सर्वं हि सुवर्णस्तेयसंम्मितम् ॥२३० स्विभार्याकुमारीषु स्वयोनिस्वन्त्यजासु च। सगोत्रासु सुतस्रोषु गुरुतल्पसमं स्मृतम् ॥२३१ पितुः स्वसारं मातुश्च मातुलानीं स्नुषामपि। मातुः सपत्नीं भगिनीमाचार्य्यतनयां तथा ॥२३२ आचार्यपत्नीं स्वसुतां गच्छंस्तु गुरुतलपगः। ब्रित्वा लिङ्गं बयस्तस्य सकामायाः स्त्रिया अपि ॥२३३ गोबधो ब्रात्यया स्तेयमृणानाञ्चानपिक्रया। अनाहिताम्रिताऽपण्यविक्रयः परिवेदनम् ॥२३४ भृताद्ध्ययनादानं भृतकाध्यापनं तथा। पारदार्य्यं पारि भित्रयं बाद्धुं(ज्यं) प्यं लवणक्रिया ॥२३४ स्वीशूद्रविट्श्रत्रबधो निन्दित थीपजीवनम्। नास्तिम्यं व्रतलोपश्च सुतानाज्यैव विक्रयः ॥२३६ धान्यरूपयगुत्रेयमयाज्यानाञ्च याजनम्। ेपितृमातृगुरुत्यागस्तडागारामविक्रयः ॥२३७

कन्यासंदूषणञ्चैव परिवेदकयाजनम् । कन्याप्रदानं तस्यैव कौटिल्यं व्रतलोपनम् ॥२३८ आत्मार्थं च क्रियारम्मो मद्यस्त्रीनिषेवणम्। स्वाध्यायाग्रिसुतत्यागो बान्धवत्याग एव च ११-३६ इन्धनार्थं दुमच्छं दः स्त्रीहिस्रीषधि जीवनम्। हिंस्रयन्त्रविधानश्च व्यसनान्यात्मविक्रयः॥२४० असच्छास्राधिगमनेमाकरेष्वधिकारिता । भार्याया विक्रयश्चेषामेकैकमुपपातकम्।।२४१ शिरः कपाली ध्वजवान् भिक्षाशी कर्म वेदयन्। ब्रह्महा द्वादशाव्दानि मितभु रू शुद्धिमा नुयात्।।२४२ ब्राह्मणस्य परित्राणाद्गवां द्वादशकस्य वा । तथाश्वमेधावभृथस्नानाद्वा शुद्धिमाप्नुयात् ॥२४३ दीघंतीब्रामययस्तं ब्राह्मणं गामथापि वा। रृष्ट्रा पथि निरातङ्कं कृत्वा वा ब्रह्महा शुचिः ॥२४४ आनीय विप्रसर्वस्वं हतं घातित एव वा। तन्निमित्तं क्षतः शस्त्रेजीवन्नपि विशुद्धचित ॥२४५ लोमभ्यः स्वाहेत्येवं हि लोमप्रभृति व तनुम्। मजान्तं जुहु याद्वापि मन्त्रेरेभिर्यथाक्रमम् ॥२४६ संप्रामे वा हतो लक्ष्यभूतः शुद्धिमवाप्नुयान्। मृतकल्यः प्रहारातों जीवन्नपि विशुद्धचित ॥२४७ अरण्ये नियतो जप्तवा त्रिकृत्वोवेदसंहिताम्। मुच्यते वा मिताशीत्वा प्रतिश्रोतः सरस्वतीम् ॥२४८

पात्र धनं वा पर्य्याप्तं दत्त्वा शुद्धिमवानुयात्। आदातुश्च विशुद्धचर्यमिष्टिवश्वानरी रमृता ॥२४६ यागस्थक्षत्रविड्घाती चरेद्बह्यहणो व्रतम्। गर्भहा च यथावणं तथात्रेयीनिषृदकः ॥२५० चरेद् व्रतमहत्वापि घातार्थं बचेत् समागतः। हिगुणं सवनस्थे तु ब्राह्मणे व्रतमादिशेत् ॥२५१ सुराम्बृष्टुतगोम्त्रपयसः मग्निसन्निभम्। सुरापोऽन्यतमं पीत्वा मरणाच्छुद्धिमृच्छति ॥२५२ बालवासा जटी वाऽपि ब्रह्महत्याव्रतश्चरेत्। पिण्याकं वा कणां वाऽपि अक्षयेश्त्रिसमां निशि ॥२५३ अज्ञानात्त सुरां पीत्वा रेतो विण्मृत्रमेत्र वा। पुनः संस्कारमर्हन्ति त्रयो वर्णा द्विजातयः ॥२५४ पतिलोकं न सा याति ब्राह्मणीया सुरां पिवेत्। इहैव सा शुनी गृधी सूकरी चाभिजायते ॥२४४ बाह्यणः स्वर्णहारी तु राहो मूसलमप्येत्। स्वकर्भ ख्यापयंस्तेन हता मुक्तोऽपि वा शुचिः ॥२५६ अनिवेद्य मृपे शुद्रैय सुरापन्नतमाचरेत्। आत्मतुल्यं सुवर्णं वा दद्याद्वा विप्रतुष्टिकृत्।।२५७ तातेऽयः शयने सर्द्धमायस्या योषिता स्वपेत्। गृहीत्वोत्कृत्य वृषणौ नैऋ त्याम्बोत्सृजेत्तनुम्।।२६८ त्राजापत्यं चरेत्कुच्छ्रं समां वा गुरुव्हरगाः। चान्द्रायणं वा त्रीन्मासानभ्यसन् वेदसंहिताम् ॥२५६ रजकव्याधशैल्यवेगुचर्मापजीविनः। बाह्यण्येतान् यदा गच्छेत् कुच्छ्ं चान्द्रःथणं चरेत्।। श्वपाकं पुरुकसं म्लेच्छं चण्डाछं पतितं तथा। एतांस्तु त्राह्मणी गत्वा चरेबान्द्रायणत्रयम्।।

एभिरतु संवसेद् (संपिदेद्) यो वै वत्सरं सोऽपि तत्समः। कन्यां समुद्रहेदेषां सोपवासामकिञ्चनाम्।।२६० चान्द्रायणं चरेत् सर्वानपक्रशन्निहस्य तु। श्रूद्रोऽधिकारहीनोऽपि कालेनानेन शुध्यति ॥२६१ मिथ्याभिशंसिनो दोषो द्विगुणोऽनृतवादिनः। मिथ्याभिशस्तपापञ्च समादत्ते मृषा वर्न्।।२६२ पञ्चगव्यं पिदेद् गोध्नो मासमासीत संयतः। गोष्ठेशयो गोऽनुगामी गोप्रदानेन शुद्धचित ॥२६३ कुच्छ्रं चैवातिकुच्छ्ञच चरेद्वापि समाहितः। दद्यात्त्रिरात्रं वोषोष्य वृषभैकादशास्तु गाः ॥२६४ उपपातकशुद्धिः स्यादेवञ्चान्द्रायणेन वा । पयसा वाऽपि मासेन पराकेणाथवा पुनः २६५ ऋग्भैकसहस्रा गा दद्यात् क्षत्रवधे पुमान्। ब्रह्महत्याव्रतं वाऽपि वत्सरिवतयं चरेत्।।२६६ वैश्यहाद्दं चरेदेतद्द्याद्वैकशतं गवाम् । षण्मासान् शूद्रहा ह्येतद्याद्धे नुर्दशापि वा ॥२६७ दुर्वृ र्ता ब्रह्मविट्क्षत्त्रशूद्रयोषाः प्रमाप्य तु । दृति धनुर्वस्तमिं क्रमाइद्याद्विशुद्धये ॥२६८ अप्रदुष्टां स्त्रियं हत्वा शूद्रहत्याव्रतश्चरेत्। अस्थिमतां सहस्रश्व तथानस्थिमतामनः २६६ मार्जारगोधानकुलमण्डूकश्वपतत्रिणः। हत्वा ज्यहं पिवेत् क्षीरं कुच्छ्ं वा पादिकं चरेत्।।२७०

गजे नीलवृषाः पञ्च शुके वत्सो द्विहायनः। खराजमेषेषु वृषो देयः क्रौञ्चे त्रिहायनः ॥२७१ हंसश्येनकपिकव्याज्जलस्थलशिखण्डिनः। भासञ्ज हत्वा दद्याद् गामक्रज्यादस्तु वित्सकाम्।।२७२ उरगेष्वायसो दण्डः पण्डके त्रपु(सःषकः)सीसकम्। कोले घृतघटो देय उष्ट्रे गुञ्जा हयेंऽशुकम्।।२७३ तित्तिरौ तु तिलेद्रोणं गजादीनामशक्तुवन्। दानं दातुञ्चरेत् कुन्छ्रमेकैकस्य विशुद्धये।।२०४ फलपुष्पात्ररसजसत्वघाते घृताशनम्। किञ्चित्सास्थिवचे देयं प्राणायामस्त्वनस्थिके ॥२७५ वृक्षगुल्मलतावीरु ब्रेदने जप्यमृक्शतम्। स्यादोषधिवृथाच्छेदे क्षीराशी गोनुगोदिनम् ॥२७६ पुंश्रळीवानरखरेर्दृष्टश्चोष्ट्रादिवायसैः। प्राणायामं जले कृत्वा घृतं प्राश्य विशुध्यति ॥२७७ यनमेद्यरेत इत्याभ्यां स्कन्नं रेतोऽनुमन्त्रयेत्। स्तनान्तरं भ्रुवोर्म्भध्यं तेनानामिकया शृशेत्।।२७८ मिय तेज इतिच्छायां स्वां दृष्ट्राम्बुगतां जपेत्। गायत्रीमशुचौ दृष्टे चापल्ये चानृतेऽपि च ॥२७६ अवकीणीं भवेद् गत्वा ब्रह्मचारी तु योषितम्। गईभं पशुमालभ्य नैर्मृत्यं स विशुध्यति ॥२८० भैक्षाप्रिकार्य्य त्यकुा तु सप्तरात्रमनातुरः। कामावकीर्ण इत्याभ्यां जुहुयादाहुतिद्वयम् ॥२८१

उपस्थानं ततः कुर्यान् सं मा सिञ्बत्यनेन तु। मधुमांसाशने कार्यः कुन्छः शेषव्रतानि च ॥२८२ प्रतिकूलं गुरोः कृत्वा प्रसाद्यैव विशुध्यति । कुन्छ्त्रयं गुरुः कुर्यान् म्रियेत प्रहितो यदि ॥२८३ औषधान्नप्रदानाद्यैभिषग्योगाद्यपक्रमैः। क्रियमाणोपकारें तु मृते विप्रे न पातकम्। विपाके गोवृषाणाञ्च भेषजाग्निकियासु च ॥२८४ महापापोपपापाभ्यां योऽभिशंसेन्सृवा परम्। अब्भक्षो मासमासीत स जापी नियतेन्द्रियः ॥२८५ अभिशस्तो मृषा कुच्छूं चरेदाग्नेयमेव वा। निर्वपेच पुरोडाशं वायव्यं पशुमेव वा ।।२८६ अनियुक्तो भ्रातृजायां गच्छश्चान्द्रायणश्चरेत्। त्रिरात्रान्ते घृतं प्राश्य गत्वोद्क्यां विशुद्यति ॥२८७ त्रीन् कुन्छानाचोद् त्रात्ययाजकोऽभिचरत्रपि। वेद्यावी यवाश्यव्दं त्यक्ता च शरणागतम् ॥२८८ गोध्डे वसन् ब्रह्मचारी मासमेकं पयोव्रतः। गायत्रीजापनिरतो मुच्यते उसत्प्रतिप्रहात् ॥२८६ प्राणायामी जले सात्वा खरयानोष्ट्रयानगः। नमः सात्वा च (मुप्तवा)भुका च गत्वा चैव दिवा स्त्रियम् २६० गुरुं त्वंकृत्य हुंकृत्य विष्ठं निर्जित्य वाद्तः । हत्वावबध्य वा क्षिप्रं प्रसाद्योपवसेहिनम्।।२६१ विप्रदण्डोसमे कृच्छ्रस्यतिकृच्छ्रो निपातने। कुच्छातिकुच्छोऽसम्पाते कुच्छोऽभ्यन्तरशोणिते २६२

देशं कालं वयः शक्ति पापं चावेक्य यवतः। प्रायश्चित्तं प्रकल्प्यं स्याद् यत्र चोक्ता न निष्कृतिः ॥२६३ दासीकुम्भं बहिर्घामान्निनयेयुः स्ववान्थवाः। पतितस्य वहिष्कुर्य्युः सर्वकार्य्येपु चैव तम् ॥२६४ चरितव्रत आयाते निनयेरत्रवं घटम्। जुगुप्सेरन चाप्येनं संपिवेयुश्च सर्वशः ॥२६५ पतितानामेष एव विधिः स्त्रीणां प्रकीर्तितः। वासो गृहान्तिके देयमन्नं वासः सरक्षणम्।।२६६ नीचाभिगमनं गर्भपातनं भर्तृहिंसनम्। विशेषपतनीयानि स्त्रीणामेतान्यपि भ्रुवम् ॥२६७ शरणागतबालस्त्रीहिंसकान् सं(पिवेन्न)वसेन तु। चीर्णव्रतानिप सदा कृतव्नसहितानिमान् ॥२६८ घटेऽपवर्जिते ज्ञाति मध्यस्थः प्रथमं गवाम्। प्रद्यात् यवसं गोभिः सत्कृतस्य हि सत्क्रिया ॥२६६ विख्यातदोषः कुर्व्वीत पर्षदोऽनुमतं व्रतम्। अनभिख्यातदोपस्तु रहस्यं व्रतमाचरेन् ॥३०० त्रिरात्रोपोपितो जप्त्वा त्रह्महा त्वधमर्षणम्। अन्तर्जले विशुध्येत गां द्त्त्वा च पयस्विनीम् ॥३०१ लोमभ्यः स्वाहेत्यथवा दिवसं मारुताश्वनः। जले स्थित्वाभिजुहुयाचत्वारिंशद्घृताहुतीः ॥३०२ त्रिरात्रोपोषितो भृ(हु)त्वा कुष्माण्डीभिष्ट् तं शुचिः। सुरापः स्वर्णहारी तु क्ट्रजापो जले स्थितः ॥३०३ 82

सहस्रशीर्षा(दि)जापी तु मुच्यते गुरुतल्पगः। गौर्देया कर्म्मणोऽस्यान्ते पृथगेभिः पयस्विनी ॥३०४ प्राणायामशतं कार्यं सर्वपापापनुत्तये। उपपातकजाताना(मनिर्दिष्टस्य)सनादिष्टस्य चैव हि ॥३०४ ओङ्काराभिष्टुतं सोमसिळळं पावनं पिवेत्। कृत्वा तु (कृतोपवासनं)रेतोविण्मूत्रप्राशनश्व द्विजीत्तमः॥३०६ निशायां वा दिवा वाऽपि यद्ज्ञानकृतं त्वघम्। त्रेकाल्यसन्ध्याकरणात्तत् सर्वं विप्रणश्यति ॥३०७ शुक्रिया(मन्त्रविशेष)रण्यकजपो गायज्याश्च विशेषतः। सर्वपापहरा ह्येते रुद्रैकाद्शिनी तथा ॥३०८ यत्र यत्र च संकीर्णमात्मानं मन्यते द्विजः । तत्र तत्र तिलेहोंमो गायत्र्या (जप) वार्चनन्तथा ॥३०६ वेदाभ्यासरतं क्षान्तं महा(पंच)यज्ञक्रियारतम्। न शृशन्तीह पापानि महापातकजान्यपि ॥३१० वायुभक्षो दिवा तिष्ठत्रात्रिं नीत्वाप्सु सूर्य्यदृक्। जप्ता सहस्रं गायच्याः शुध्येद् ब्रह्मवधादते ॥३११ ब्रह्मचर्यं द्या क्षान्तिध्यानं सत्यमकल्कता। अहिंसास्तेयमाधुर्य्यद्माश्चेति यमाः स्मृताः ॥३१२ स्नानमौनोपवासेज्यास्वाध्यायोपस्थनित्रहाः । नियमागुरुगुश्रूषाशौचाक्रोधप्रमातृताः ॥३१३ गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दिध सर्पिः कुशोदकम्। जम्बा परेऽह्न्युपवसेत् कुच्छ्रं सान्तपनं चरन्।।३१४

पृथक्सान्तपनद्रव्यैः षडहः सोपवासकः। सप्ताहेन तु कृच्छ्रोऽयं सहासान्तपनः स्मृतः ॥३१४ पर्णौदुम्बरराजीवबिल्वपत्रकुशोदकैः। प्रत्येकं प्रत्यहं पीतैः पर्णकृच्छ् उदाहृतः ॥३१६ तप्तक्षीरघृताम्बूनामेकैकं प्रसहं पिबेत्। एकरात्रोपवासश्च तप्तकुच्छ् उदाहृतः ॥३१७ एकभक्तेन नक्तेन तथैवायाचितेन च। उपवासेन चैकेन पादकुच्छूः प्रकीर्तितः ॥३१८ यथाकथि वित्रगुणः प्राजापत्योऽयमुच्यते । अयमेवातिकृच्छः स्यात् पाणिपूरान्नभोजिनः ॥३१६ कुच्छातिकुच्छः पयसा दिवसानेकविंशतिम्। द्वादशाहोपवासेन पराकः परिकीर्तितः ॥३२० पिण्याकाचामतक्राम्बुसक्तूनां प्रतिवासरम्। एकरात्रोपवासश्च कुच्छुः सौम्योऽयमुच्यते ॥३२१ एषां त्रिरात्रमभ्यासादेकैकस्य यथाक्मम्। तुलापुरुष इत्येष ज्ञेयः पाञ्चद्शाह्निकः ॥३२२ तिथिवृद्धचा चरेत् पिण्डान् शुक्ले शिख्यण्डसम्मितान्। एकैकं हासयेत् कृष्णे पिण्डं चान्द्रायणं चरेन् ॥३२३ जथाकथि चत् पिण्डानां चत्वारिंशच्छतद्वयम्। मासेनैवोपभुङ्जीत चान्द्रायणमथापरम् ॥३२४ कुर्यात्तिषवणस्त्राची कुच्छ्रं चान्द्रायणं तथा। पवित्राणि जपेत् पिण्डान् गायज्या चासिसन्त्रसेत्।।३२५

अनादिष्टेषु पापेषु शुद्धिश्चान्द्रायणेन तु । धम्मार्थं यश्चरेदेतचन्द्रस्यैति स लोकताम् ॥३२६ कुच्छ्रकुद्धम्मेकामस्तु महतीं श्रियमाप्नुयात्। यथा गुरुक्रतुफलं प्राप्नोति च समाहितः ॥३२७ श्रुत्वेमानृषयो धर्मान् याज्ञवलक्येन भाषितान्। इदमुचुर्महात्मानं योगीन्द्रममितौजसम् ॥३२८ य इदं धारयिष्यन्ति धर्मशास्त्रमतन्द्रिताः। इहलोके यशः प्राप्य ते यास्यन्ति त्रिविष्टपम् ॥३२६ विद्यार्थी प्राप्नुयाद्विद्यां धनकामोधनन्तथा। आयुकामस्तथैवायुः श्रीकामो महतीं श्रियम् ॥३३० ऋोकत्रयमपि ह्यस्माद् यः श्राद्धे श्राविचयति । पितृणां तस्य तृष्तिः स्याद्क्षया नात्र संशयः ॥३३१ ब्राह्मणः पात्रतां याति क्षत्रियो विजयी भवेत्। वैश्योऽपि धान्यधनवानस्य शास्त्रस्य धारणात् ॥३३२ य इदं श्रावयेद्विप्रान् द्विजान् पर्वसु पर्वसु । अश्वमेधफलं तस्य तद्भवाननुमन्यताम्।।३३३ श्रुत्वेतद्याज्ञवल्क्योडिपि प्रीतात्मा मुनिभाषितम्। एवमस्त्विति होवाच नमस्कृत्य स्वयम्भुवे ॥३३४ इति याज्ञवल्भ्यीये धर्मशास्त्रे प्रायश्चित प्रकरणंनाम तृतीयोऽध्यायः। इति याज्ञवरुक्यस्मृतिः सभाष्ता । ॐतत्सत्

--:

॥ अथ ॥

* कात्यायनस्मृतिः *

॥ श्रीसामवेदाय नमः॥

-4:4:4-

प्रथमः खण्डः।

अथाचाराध्याय:

तत्रादी यज्ञोपवीतकर्मप्रकरणवर्णनम्।
अथातो गोभिलीक्तानामन्येषां चैव कर्मणाम्।
अस्पष्टानां विधि सम्यग्दर्शयिष्ये प्रदीपवत् ॥१
तिवृद्द्र्ध्ववृतं कार्यं तन्तुत्रयमधोवृतम्।
तिवृत्त्वोपवीतं स्यात्तस्यैको प्रनिथरिष्यते ॥२
पृष्ठवंशे च नाभ्यां च धृतं यद्विन्दते किटम्।
तद्वार्यमुपवीतं स्यान्नातोलम्बं नचोच्छितम् ॥३
सदोपवीतिना भाव्यं सदा बद्धशिखेन च।
विशिखो व्युपवातश्च यत् करोति न तत्कृतम् ॥४
त्रिःप्राश्यापो द्विरुन्मुण्य मुखमेतान्युपस्पृशेत्।
आस्यनामाक्षिकणांश्च नाभिवक्षःशिरोंऽशकान् ॥४

संइताभिस्त्यङ्क्षिलिभरास्यमेवमुपस्पृशेत्। अङ्गुष्ठेन प्रदेशिन्या घाणं चैवसुपस्पृशेत्। अङ्गुष्ठानामिकाभ्याञ्च चक्षुः श्रोत्रं पुनः पुनः ॥६ कनिष्ठा कुष्ठयोर्काभि हृद्यं तु तलेन वै। सर्वाभिस्तु शिरः पश्चाद्वाह चाग्रेण संस्पृशेत् ॥७ यत्रोपदिश्यते कर्म कर्तुरङ्गं न तूच्यते। दक्षिणस्तंत्र विज्ञेयः कर्मणां पारगः करः ॥८ यत्रदिङ्नियमो न स्याजपहोमादिकर्मसु। तिस्रस्तत्र दिशः प्रोक्ता ऐन्द्रीसौन्यापराजिताः ॥६ तिष्ठन्नासीनः प्रह्वो वा नियमो यत्र नेदशः। तदासीनेन कर्त्तव्यं न प्रह्वेण न तिष्ठता ॥१० गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया। देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः ॥११ हृष्टिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मदेवतया सह। गणेशेनाधिका होताबृद्धौ पूज्याश्चषोड्श ॥१२ कर्मादिषु तु सर्वेषु मातरः सगणाधिपाः। पूजनीयाः प्रयत्नेन पूजिताः पूजयन्ति ताः ॥१३ प्रतिमासु च शुभ्रासु लिखित्वा वा पटादिषु। अपिवाक्षतपुञ्जेषु नैवेद्यैश्च पृथग्विधैः ॥१४ कुड्यलमां वसोर्द्धारां सप्तधारां घृतेन तु। कारयेत् पञ्चधारां वा नातिनीचां न चोच्छिताम् ॥१४ आयुष्याणि च शान्त्यर्थं जप्त्वा तत्र समाहितः।
षड्भ्यः पितृभ्यस्तद्नु भत्तया श्राद्धमुपक्रमेत्।।१६
अनिष्ट्वा तु पितं च्छ्राद्धे न कुर्यात् कर्म वैदिकम्।
तत्रापि मातरः पूर्वं पूजनीयाः प्रयत्नतः।।१७
विशिष्ठोक्तो विधिः कृत्स्नो द्रष्टव्योऽत्र निरामिषः।
अतः परं प्रवक्ष्यामि विशेष इह यो भवेत्।।१८
इति प्रथमः खण्डः।

॥ द्वितोयः खण्डः ॥

अथ नित्यनैमित्तिक (श्राद्ध) कर्म वर्णनम्।

प्रातरामन्त्रितान् विप्रान् युग्मानुभयतस्तथा।

उपवेश्य कुशान् दद्यादञ्जनैव हि पाणिना।।१

हरिता यिज्ञया दर्भाः पीतकाः पाकयिज्ञयाः।

समूलाः पितृदैवत्याः कल्माषा वैश्वदेविकाः।।२

हरिता वै सपिञ्जलाः शुष्काः स्निग्धाः समाहिताः।

रित्नमात्राः प्रमाणेन पितृतीर्थेन संस्तृताः।।३

पिण्डार्थं ये स्तृता दर्भास्तर्पणार्थं तथैव च।

धृतैः कृते च विण्मृत्रे त्यागस्तेषां विधीयते।।४

दक्षिणं पातयेज्ञानु देवान् परिचरन् सद्दा।

पातयेदितरज्ञानु पितृन् परिचरन्नपि।।४

निपातो नहि सञ्यस्य जानुनो विद्यते कचित्। सदा परिचरेद्रस्या पितृनप्यत्र देववत् ॥६ पितृभ्य इति दत्तेष उपवेश्य कुशेषु तान्। गोत्रनामभिरामन्त्रय पितृनर्घं प्रदापयेत्।।७ नात्रापसव्यकरणं न पित्र्यं तीर्थ मिष्यते। पात्राणां पूरणादीनि दैवेनैव हि कारयेत्।।८ ज्येष्ठोत्तरकरान् युग्मान् कराव्राव्रपवित्रकान्। कृत्वार्घ्यं संप्रदातव्यं नैकैकस्यात्र दीयते ॥६ अनन्तर्गर्भिणं साघं कौशं द्विद्लमेव च। प्रादेशमात्रं विज्ञेयं प्रवित्रं यत्र कुत्रचित् ॥१४ एतदेव हि पिञ्जल्या लक्षणं समुदाहतम्। **आज्यस्योत्पवनार्थं यत्तद्**प्येतावदेव तु ॥११ एतत्प्रमाणसेवैके कौशीसेवार्द्रमंजरीम्। शुष्कां वा शीर्णकुसुमां पिञ्जलीं परिचक्षते ॥१२ पित्र्यमन्त्रानु द्रवण आत्मालम्भेऽधमेक्षणे। अधोवायुसमुत्सर्गे प्रहासेऽनृतभाषणे ॥१३ मार्जारमशकस्पर्श आकुष्टे क्रोधसम्भवे । निमित्तेष्वेषु सर्वत्र कम कुर्वन्नपः स्पृशेत् ॥१४

इति द्वितीयः खण्डः।

॥ तृतीयः खण्डः ॥

अथ त्रिविधक्रियावर्णनम्। अक्रिया त्रिविधा प्रोक्ता विद्वद्भिः कर्मकारिणाम्। अक्रिया च परोक्ता च तृतीया चायथाक्रिया ॥१ स्वशाखाश्रयमुत्सृज्य परशाखाश्रयञ्च यः। कर्तुमिच्छति दुर्मेधा मोघं तत्तस्य चेष्टितम् ॥२ यनामातं स्वशः खायां परोक्तमविरोधि च। विद्वद्भिस्तद्नुष्ठेयमग्निहोत्रादिकर्मवत् ॥३ प्रवृत्तमन्यथा कुर्याद्यदि मोहात् कथञ्चन। यतस्तद्न्यथाभूतं तत एव समापयेत्।।४ समाप्ते यदि जानीयानमयैतद्यथाकृतम्। तावदेव पुनः कुर्यात्रावृत्तिः सर्वकर्मणः ॥४ प्रधानस्याक्रिया यत्र साङ्गं तत् क्रियते पुनः । तदङ्गस्याक्रियायाञ्च नावृत्तिनेव तत्क्रिया।।६ मधुमध्वितियस्तत्र त्रिर्जपोऽशितुमिच्छताम्। गायत्र्यनन्तरं सोऽत्र मधुमन्त्रविवर्जितः॥७ नचाश्नत्सु जपेदत्र कदाचित् पितृसंहिताम्। अन्य एव जपः कार्यः सोमसामादिकः शुभः॥८ यस्तत्र प्रकरोऽत्रस्य तिलवद् यववत्तथा। उच्छिष्टसन्निधौ सोऽत्र तृष्तेषु विपरीतकः ॥६ सम्पन्नमिति तृप्ताः स्थ प्रश्नस्थाने विधीयते । सुसम्पन्नमिति प्रोक्ते शेषमन्नं निवेद्येत् ॥१०

प्रागप्रेष्वथ दर्भेषु आद्यमामन्त्र्य पूर्ववत् ।
अपः क्षिपेन्मूलदेशेऽवनेनिक्ष्वेति पात्रतः ॥११
द्वियीयश्च तृतीयश्च मध्यदेशाप्रदेशयोः ।
मातामहप्रभृतीस्त्रीनेतेवामेव वामतः ॥१२
सर्वस्मादन्नमुद्धृत्य व्यञ्जनेरुपसिच्य च ।
संयोज्य यवकर्षन्धृद्धिभिः प्राङ्मुखस्ततः ॥१३
अवनेजनवत् पिण्डान् दत्त्वा विल्वप्रमाणकान् ।
तत्पात्रक्षालनेनाथ पुनरप्यवनेजयेत् ॥१४

इति तृतीयः खण्डः ।

॥ चतुर्थः खण्डः ॥

अथ श्राद्धप्रकरणवर्णनम्।

उत्तरोत्तरदानेन पिण्डानामुत्तरोत्तरः।
भवेद्धश्चाधराणामधरश्राद्धकर्मणि।।१
तस्माच्छाद्धेषु सर्वेषु वृद्धिमित्स्वतरेषु च।
मूलमध्यायदेशेषु ईषत्मकांश्च निर्वेषेत्।।२
गन्धादीन्निः क्षिपेत्तूष्णीं तत आचामयेद् द्विजान्।
अन्यत्राप्येष एव स्याद्यवादिरहितो विधिः।।३
दक्षिणाप्रवने देशे दक्षिणाभिमुखस्य च।
दक्षिणायेषु दर्भेषु एषोऽन्यत्र विधिः स्मृतः।।४

अथाप्रभूमिमासिञ्चेत् सुसंप्रोक्षितमस्त्वित । शिवा आपः सन्त्विति च युग्मानेवोद्केन च ॥४ सौमनस्यमस्त्विति च पुष्पदानमनन्तरम्। अक्षतञ्चारिष्टं चास्त्विस्तान् प्रतिपाद्येत् ॥६ अक्षय्योदकदानं तु अर्घ्यदानवदिष्यते। षष्ठैव नित्यं तत् कुर्यात्र चतुर्थ्या कदाचन ॥७ अर्घ्येऽक्षय्योदके चैव पिण्डदानेऽवनेजने। तन्त्रस्य तु निवृत्तिः स्यात् स्वधावाचन एव च ॥८ प्रार्थनासु प्रतिप्रोक्ते सर्वास्वेव द्विजोत्तमैः। पवित्रान्तर्हितान् पिण्डान् सिञ्चेदुत्तानपात्रकृत्।।६ युग्मानेव स्वस्ति वाच्यमङ्गुष्ठात्रप्रहं सदा। कृत्वा धुर्यस्य विप्रस्य प्रणम्यानुत्रजेत्ततः ॥१० एषः श्राद्धविधिः कृत्स्न उक्तः संक्षेपतो मया। ये विन्द्नित न मुद्यन्ति श्राद्धकर्मसु ते कवित्।।११ इदं शास्त्रश्च गुहाश्च परिसंख्यानमेव च। वशिष्ठोक्तञ्च यो वेद स श्राद्धं वेद नेतरः ॥१२ इति चतुर्थः खण्डः।

॥ पश्चमः खण्डः ॥
अथ श्राद्धप्रकरणवर्णनम् ।
असकृत्वानि कर्माणि क्रियेरन् कर्मकारिभिः ।
प्रतिप्रयोगं नैताः स्युर्मातरः श्राद्धमेव च ॥१

आधाने होमयोश्चैव वैश्वदेवे तथेव च ।। विवाहादावेकमेवात्र कुर्यां च पौर्णमासे तथेव च ।। २ नवयहो च यज्ञज्ञावद्नत्येवं मनीषिणः । एकमेव भवेच्छ्राद्धमेतेषु न पृथक् पृथक् ।। ३ नाष्ट्रकासु भवेच्छ्राद्धं न श्राद्धे श्राद्धमिष्यते । न सोष्यन्तीजातकर्म प्रोषितागतकर्मसु ।। ४ विवाहादिः कर्मगणो य उक्तो गर्भाधानं शुश्रुम यस्य चान्ते ।

प्रदोषे श्राद्धमेकं स्याद्गोनिष्क्रामप्रवेशयोः।
न श्राद्धं युज्यते कर्त्तुं प्रथमे पृष्टिकमिणि।।६
हलाभियोगादिषु तु षट्सु कुर्यात् पृथक् पृथक्।
प्रतिप्रयोगमप्येवानादावेकन्तु कारयेत्।।७
वृहत्पत्रक्षुद्रपशुस्वस्त्यर्थं परिविन्यतोः।
सूर्यन्द्वोः कर्मणी ये तु तयोः श्राद्धं न विद्यते।।८
न दशाप्रन्थिके चेव विषवदृष्टकमिणि।
कुमिदृष्टचिकित्सायां नैव शेषेषु विद्यते।।६
गणशः क्रियमाणेषु मातृभ्यः पूजनं सकृत्।
सकृदेव भवेच्छ्राद्धमादौ न पृथगादिषु।।१०
यत्र तत्र भवेच्छ्राद्धमादौ न पृथगादिषु।।१०
यत्र तत्र भवेच्छ्राद्धं तत्र तत्र च मातरः।
प्रासङ्गिकमिदं प्रोक्तमतः प्रकृतमुच्यते।।११

इति पञ्चमः खण्डः।

॥ षष्ठः खण्डः ॥ अथानेककर्मवर्णनम्।

आधानकाला ये प्रोक्तास्तथा यश्चाग्नियोनयः। तद्।श्रयोऽग्निमाद्ध्याद्ग्रिमानयजो यदि ॥१ द्राराधिगमनाधाने यः कुर्याद्यजात्रिमः। परिवेत्ता स विज्ञेयः परिवित्तिस्तु पूर्वजः ॥२ परिवित्तिपरिवेत्तारौ नरकं गच्छतो ध्रुवम्। अपि चीर्णप्रायश्चित्तौ पादोनफलभागिनौ ॥३ देशान्तरस्थक्षीवैकवृषणानसहोदरान्। वेश्यातिसक्तपतितशूद्रतुल्यातिरोगिणः ॥४ जडमूकान्धवधिरकुब्जवामनकुण्ठकान्। अतिवृद्धानभायांश्र कृषिसक्तान्नपस्य च ॥५ धनवृद्धिप्रसक्तांश्च कामतः कारिणस्तथा। कुलटोन्मत्तचौरांश्चःपरिविन्दन्न दुष्यति ॥६ धनवाद्धुंषिकं राजसेवकं कमकस्तथा। प्रोषितञ्च प्रतीक्षेत वर्षत्रयमि त्वरन्।।७ प्रोषितं यद्यशृण्वानमद्दादृद्ध्वं समाचरेत्। आगते तु पुनस्तस्मिन् पादं तच्छुद्धये चरेत्।।८ लक्षणे प्राग्गतायास्तु प्रमाणं द्वादशाङ्कलम्। तन्मूलसक्ता योदीची तस्या एतन्नवोत्तरम्।।६ उद्गातायाः संलग्नाः शेषाः प्रादेशमात्रिकाः । सप्तसप्ताङ्कुलांस्त्यत्तवाकृशेनैव समुह्निखेत्।।१०

मानक्रियायामुक्तायामनुक्ते मानकर्क्तरि ।

मानक्रुचजमानः स्याद्विदुषामेव निश्चयः ॥११
पुण्यमेवादधीताप्ति स हि सर्वेः प्रशस्यते ।
अनद्र्धुंकत्वं यक्तस्य काम्येस्तन्नीयते शमम् ॥१२
यस्य दक्ता भवेत् कन्या वाचा सत्येन केनचित् ।
सोऽन्त्यां समिधमाधास्यन्नादधीतेव नान्यथा ॥१३
अन्द्रेव तु सा कन्या पव्चत्वं यदि गच्छति ।
न तथा व्रतलोपोऽस्य तेनैवान्यां समुद्रहेत् ॥१४
अथ चेन्न लभेतान्यां याचमानोऽपि कन्यकाम् ।
तमग्निमात्मसात् कृत्वा क्षिप्रं स्यादुक्तराश्रमी ॥१५

इति षष्टः खण्डः।

श्वशामीगर्भाद्यनेकप्र,रणवर्णनम्।
अश्वत्था यः शमीगर्भः प्रशस्तोवींसमुद्भवः।
तस्य या प्राङ्मुखी शाखा वादीची वाद्ध्वगापि वा।।१
अरणिस्तन्मयी प्राक्ता तन्मय्येवात्तरारणिः।
सारवद्दारवव्चत्रमाविली च प्रशस्यते।।२
संसक्तमूलो यः शम्याः स शमीगर्भ उच्यते।
अलाभे त्वशमीगर्भादुद्धरेद्विलम्बतः।।३
चतुविंशतिरङ्कष्ठदेध्यं षडपि पार्थिवम्।
चत्वार उच्ळ्ये मानमरण्याः परिकीर्तितम्।।४

अष्टाङ्कुलः प्रमन्थः स्याचत्रं स्याद्द्वादशाङ्कलम् । ओवीली द्वादशैव स्यादेतन्मन्थनयन्त्रकम् ॥५ अङ्गुष्ठाङ्गुलमानन्तु यत्र यत्र यत्रोपदिश्यते । तत्र तत्र वृहत्पर्वप्रनिथभिर्मिनुयात् सदा ॥६ गोवालेः शणसंमिश्रेखिवृत्तममलात्मकम्। व्यामप्रमाणं नेत्रं स्यात् प्रमध्यस्तेन पावकः ॥७ मूर्द्धाक्षिकर्णवक्तृाणि कन्धरा चापि पश्चमी। अङ्गष्टमात्राण्येतानि द्वचङ्गुष्ठं वक्ष उच्यते ॥८ अङ्गुष्टमात्रं हृद्यं ज्यङ्गुष्टमुद्रं स्मृतम्। एकाङ्गुष्ठा कटिर्जेया द्वी वस्ति द्वी च गुह्यकम्।।६ उक्त जङ्घे च पादौ च चतुरत्र्येकैर्यथाक्रमम्। अरण्यवयवाह्यते याज्ञिकैः परिकीर्तिताः ॥१० यत्तद्गुद्यमिति प्रोक्तं देवयोनिस्तु सोच्यते। अस्यां यो जायते वहिः स कल्याणकृदुच्यते।।११ अन्येषु ये तु मध्नन्ति ते रोगभयमाप्नुयुः। प्रथमे मन्थने त्वेष नियमो नोत्तरेषु च ॥१२ उत्तरारणिनिष्पन्नः प्रमन्थः सर्वदा भवेत्। योनिसङ्करदोषेण युज्यते ह्यन्यमन्थकृत्।।१३ आद्री सशुषिरा चैव घूर्णाङ्गी पाटिता तथा। न हिता यजमानानामरणिश्चोत्तरारणि: ॥१४

इति सप्तमः खण्डः।

॥ अष्टमः खण्डः॥

अथ सयज्ञस्रुवसमिधलक्षणवर्णनम्।

परिधायाहतं वासः प्रावृत्य च यथाविधि । विभृयात् प्राङ्मुखो यन्त्रमावृता वक्ष्यमाणया ॥१ चत्रवृध्ने प्रमन्थायं गाढं कृत्वा विचक्षणः। कृत्वोत्तरायामरणि तद्वृध्नमुपरिन्यसेत्।।२ चत्राधेः कीलकाग्रस्था मोविलीमुद्गप्रकाम्। विष्टमभाद्धारयेदान्त्रं निष्कम्पं प्रयतः शुचिः ॥३ त्रिरुद्वेष्ट्याथ नेत्रेण चत्रं पत्न्यो हतांशुकाः। पूर्व मध्नन्त्यरण्यान्त्याः प्राच्यग्नेः स्याद्यथा च्युतिः ॥४ नैकयापि विना कार्य्यमाधानं भार्य्या द्विजैः। अकृतं तद्विजानीयान् सर्व्यान्याचारभन्ति यत्।।५ वर्णज्यैष्ट्ये न वहीभिः सवर्णाभिश्च जन्मतः। कार्य्यमित्रच्युतेराभिः साध्वीभिर्मथनं पुनः ॥६ नात्र शूद्रीं प्रयुक्जीत न द्रोहद्वेषकारिणीम्। नचेवात्रतस्थां नान्यपुंसा च सह सङ्गताम्।।७ ततः शक्ततरा पश्चादासामन्यतरापिवा । उपेतानां वान्यतमा मन्थेद्गिन निकामतः ॥८ जातस्य लक्षणं कृत्वा तं प्रणीय समिध्य च। आधाय समिधं चैव ब्रह्माणं चोपवेशयेत् ॥६

ततः पूर्णाहुतिं हुत्वा सर्वसन्त्रसमन्विताम्। गां द्वाद् यज्ञवास्त्वन्ते ब्रह्मणे वाससी तथा ॥१० होमपात्रमनादेशे द्रवद्गव्ये खुवः स्मृतः। पाणिरेवेतरसिंमस्तु खुचैवात्र तु हूयते ॥११ खादिरो वाऽथ पालाशो द्विवितिस्तः स्तुवः रम्रुतः । स्रुग्बाहुमात्रा विहोया वृत्तस्तु प्रप्रहस्तयोः ॥१२ सुवाप्रे व्राणवत् खातं द्वचङ्कुष्ठपरिमण्डलस्थलम्। जुह्नाः शराववत् खातं सनिव्वहिं षडङ्गुलं कुर्यात् ॥१३ तेषां प्राक्शः कुशैः कार्य्यः संप्रमार्गाजुहुषता । प्रतापनश्च लिप्तानां प्रक्षाल्योप्णेन वारिणा ॥१४ प्राञ्चं प्राञ्चसुद्रगम्नेहर्गमं समीपतः। तत्तथासादयेद् द्रव्यं यद्यथा विनियुज्यते ॥१५ आज्यं हव्यमनादेशे जुहोति च विधीयते। मन्त्रस्य देवतायाध्य प्रजापतिरिति श्वितिः ॥१६ नाङ्गुराद्धिका बाह्या समित् स्थूरतया कचित्। न वियुक्ता त्वचा चैव न सकीटा न पाटिता ॥१७ प्रादेशान्त्राधिका नो न तथा न स्याद्विशाखिका। न सपर्णो न निर्व्वीर्या होमेषु च विजानता ॥१८ **बादेशहयमिध्यस्य प्रमाणं परिकीतिंतम्**। एवंविचाः रसुरेवेह लिमधः सर्ववर्म्भसु ॥१६ समिषोऽष्टादशेष्यस्य प्रवदन्ति मनीविणः। दर्रो च पौर्णनासे च कियास्वन्वासु विशतिः २० 24

सिमदादिषु होमेषु मन्त्रदैवतवर्जिता।
पुरस्ताचोपरिष्टाच हीन्धनार्थं सिमद्भवेत्।।२१
इष्मोऽप्येधार्थमाचार्येईविराहुतिषु स्मृतः।
यत्र चास्य निवृत्तिः स्यात्तत् स्पष्टीकरवाण्यहम्।।२२
अङ्गहोमसिमत्तन्त्रसोष्यन्त्याख्येषु कर्मसु।
येषां चैतदुपर्य्युक्तं तेषु तत्सहरोषु च।।२३
अक्षभङ्गादिविपदि जलहोमादिकर्मणि।
सोमाहुतिषु सर्व्वासु नैतेष्विष्म विधीयते।।२४
इति अष्टमः खण्डः।

॥ नवमः खण्डः ॥

अथ सन्ध्याकालाद्यदिश्यकर्मवर्णनम्।

सूर्येऽस्तरोत्रमप्राप्ते षट्त्रिंशद्भिः सदाङ्कुरैः।
प्रादुष्करणमप्तीनां प्रात्मांसाञ्च दर्शनात्।।१
हस्तादूद्ध्वं रिवर्यावत् गिरिं हित्वा न गच्छति।
ताबद्रोमविधिः पुण्यो नात्येत्युदितहोमिनाम्।।२
यावत् सम्यग् न भाव्यन्ते नभरपृक्षाणि सर्वतः।
न च लौहित्यमापैति तावत् सायञ्च हूयते।।३
रजोनोहारधूमाभ्रवृक्षाप्रान्तरिते रवो।
सन्ध्यामुद्दिश्य जुहुयाद् हुतमस्य न लुप्यते।।४

न कुर्यात् क्षिप्रहोसेषु द्विजः परिसमूहनम्। विरुपाक्षञ्च न जपेत् प्रवदञ्च विवर्जयेत् ॥४ पर्य्युक्षणश्च सर्वत्र कर्त्तव्यमदितेन्वित । अन्ते च वामदेवस्य गानं कुर्याद्वचिश्वधा ॥६ अहोमकेष्वपि भवेद् यथोक्तं चन्द्रदर्शनम्। वासदेव्यं गणेष्यन्ते कल्पान्ते वैश्वदेविके ॥७ यान्यधस्तरणान्तानि न तेषु स्तरणं भवेत्। एककार्य्यार्थसाध्यत्वात् परिधीनपि वर्जयेत् ॥८ वर्हिः पर्य्यक्षणं चैव वामदेव्यजपस्तथा। क्रत्वाहुतिषु सर्वासु त्रिकमेतन्न विद्यते।।१ हविष्येषु यवामुख्यास्तदनु त्रीहयः स्मृताः। माषकोद्रवगौरादिसर्वालाभेऽपि वर्जयेत्।।१०

पाण्याहृतिद्वीद्शपर्वपारिका कंसादिना चेत् स्रुवमात्रपावका। दैवेन तीर्थेन च हूयते हविः स्वङ्गारिणि स्वर्चिषि तच पावके ॥११

योऽनर्चिषि जुहोत्यग्नौ व्यङ्गारिणि च मानवः। मन्दाग्निरामयावी च दरिद्रश्च स जायते ॥१२ तस्मात् समिद्धे होतव्यं नासमिद्धे कदाचन । आरोग्यभिच्छतायुश्च श्रियमात्यन्तिकीम्पराम् ॥१३ होतव्ये च हुते चैव पाणिसूर्पस्यदारुभिः। न कुर्याद्रिधमनं कुर्याद्वा व्यजनादिना ॥१४ मुखनके धमन्त्यप्तिं मुखाद्ध्येषोऽध्यजायत । नामि मुखेनेति च यहाँकिके योजयन्ति तत्।।१४ इति नवमः खण्डः।

॥ दशमः खण्डः॥

अथ प्रातःकालिकस्नानादिक्रियावर्णनम्। यथाहनि तथा प्रातिनत्यं स्नायादनातुरः। दन्तान् प्रक्षाल्य नचादौ गृहे चेत्तदमन्त्रवत् ॥१ नारदाचुक्तवाक्षं यदाष्टाङ्गुलमपाटितम्। सत्वचं द्नतकाष्ठं स्यात्तर्घेण प्रधावयेस्।।२ उत्थाय नेत्रे प्रक्षाल्य ग्रुचिर्भृत्वा समाहितः। परिजय्य च मन्त्रेण सक्ष्येद्दन्तधावनम् ॥३ आयुर्वलं यशोवर्चः प्रजाःपशुन् वस्नुनि च । ब्रह्मप्रज्ञाञ्च नेधाञ्च त्वन्नो देहि वनस्पत ॥४ यव्यद्वयं श्रावणादि सर्वा नद्यो रजस्वलाः। वासु स्नानं न कुटबींत वर्जियत्वा समुद्रगाः ॥५ धनुःसहसाण्यष्टौ तु गतियांसां न विधते। न ता नदीः शब्दबहा गर्तान्ताः परिकीर्तिताः॥ उपादम्मीण चोत्सर्गे प्रेतसाने तथेव च। चःद्रसूर्य्यवहे चैव रजोदोषो न विद्यते।।७ वेदामञ्ज्दांसि सर्वाणि इद्यादाश्च दिवीकसः। जलार्थिनोऽथ पित्तरो मरीच्याचारतथर्यः॥८ उपाकसिण चोत्समें सानार्थं हस्रवाद्निः। यियासूननुगन्त्रन्ति सन्तुष्टाः स्वशरीरिणः ॥६ समागमातु यद्रैषां तत्र हत्याद्योयलाः। नूनं सब्वें ध्रयं यानित किमुतैकं नदीरजः॥१०

भृषीणां सिच्यमानानामन्तराखं समाधितः। संपिनेद् यः शरीरेण पवन्मुक्तजलच्छटाः॥११ विद्यादीन् ब्राह्मणः कामान् वरादीन् कन्यका ध्रुवम्। आमुष्मिकान्यपि सुलान्याप्नुयात् स न संशयः॥१२ अशुच्यशुचिना दत्तमाममन्तर्जलादिना। अनिगंतदशाहास्तु प्रेता रक्षांसि भुञ्जते॥१३ स्वर्धृन्यम्भः समानि स्युः सर्वाण्यम्भांसि भूतले। कृपस्थान्यपि सोमार्क्ष्यहणे नात्र संशयः॥१४

इति दशमः खण्डः।

इति कर्मप्रदीपपरिशिष्टे कात्यायनविरचिते प्रथमः प्रपाठकः।

॥ एकाद्शः खण्डः ॥

अथ सन्ध्योपासनविधिवर्णनम्।

अत इद्धं प्रवक्ष्यामि सन्ध्योपासनकं विधिम्। अनर्हः कर्मणां विप्रः सन्ध्याहीनो यतः समृतः ॥१ सन्ध्ये पाणौ कुशान् कृत्वा कुर्यादाचमनिक्रयाम्। हस्वाः प्रचरणीयाः स्युः कुशा दीर्घास्तु वर्हिषः ॥२ दर्भाः पवित्रमित्युक्तमतः सन्ध्यादिकर्भणि। सन्यः सोपम्रहः कार्यो दक्षिणः सपवित्रकः ॥३

रक्षयेद्वारिणात्मानं परिक्षिप्य समन्ततः। शिरसो मार्जनं कुर्यात् कुशैः सोदकविन्दुभिः ॥४ प्रणवो भूर्भुव स्वश्च सावित्री च तृतीयका । अब्दैवत्यं त्र्यूचब्चैव चतुर्थमिति मार्जनम् ॥४ भूराद्यास्तिम्न एवेता महाव्याहृतयोऽव्ययाः। महर्ज्जनस्तपः सत्यं गायत्री च शिरस्तथा ॥६ आपोज्योतीरसोमृतं ब्रह्मभूभूवः स्वरतिशिरः । प्रतीप्रतीकं प्रणवमुचारयेदन्ते च शिरसः ॥७ एता एतां सहानेन तथैभिईशभिः सह। त्रिर्भपेदायतप्राणः प्राणायामः स उच्यते ॥८ करेणोद्धृत सिळलं बाणमासज्य तत्र च। जपेदनायतासुर्वा त्रिः सक्नद्वाघमर्षणम् ॥६ उत्थायार्कं प्रतिप्रोहेत्त्रिकेणाञ्जलिनाम्भसः । उचित्रमृद्धयेनाथ चोपतिष्ठेदनन्तरम् ॥१० सन्ध्याद्वयेऽप्युपस्थानमेतदाहुर्मनीविणः। मध्ये त्वह्व उपर्यस्य विभ्राडादीच्छ्या जपेत् ॥११ तद्संसक्तपार्षणवी एकापादद्धेपाद्पि। कुर्यात् कृताञ्जलिर्वापि उद्ध्वंबाहुरथापि वा ॥१२ यत्र स्यात् कुच्छ्रभूयस्त्वं श्रेयसोऽपि मनीषिणः। भूयस्वं ब्रुवते तत्र कुच्छाच्छ्रेयो ह्यवाप्यते ॥१३ तिष्ठेदुदयनात् पूर्वां मध्यमामपि शक्तितः। आनीतोडुद्गमाचान्त्यां सन्ध्यां पूर्वात्रकं जपन् ॥१४ एतत् सन्ध्यात्रयं प्रोक्तं ब्राह्मण्यं यत्र तिष्ठति।

यस्य नास्त्याद्रस्तत्र न स ब्राह्मण उच्यते ॥१४

सन्ध्यालोपाच चिकतः स्नानशीलश्च यः सदा ।

तं दोवानोपसपेन्ति गरुत्मन्तिमवोरगाः ॥१६

वेदमादित आरभ्य शक्तितोऽहरहर्जपेत् ।

उपतिष्ठेत्ततो रुद्रसर्वाद्वा वेदिकाज्ञपात् ॥१७

इति एकादशः खण्डः ।

।। द्वाद्शः खण्डः ॥ अथ तर्पणविधिवर्णनम्।

अथाद्भिस्तर्पयेदेवान् सतिलाभिः पितृनपि । नमोऽन्ते तर्पयामीति आदावोमीति च ब्रुवन् ॥१

ब्रह्माणं विष्णुं हरं प्रजापित वेदान् देवां छ्छन्दां स्यृषीन् पुराणानाचार्यान् गन्धर्वानितरान्मासं संवत्सरं सावयवं देवीरप्सरसो
देवानुगान्नागान् सागरान् पर्वतान् सिरतो दिन्यान् मनुष्यानितरान् मनुष्यान् यक्षान् रक्षांसि सुपर्णान् पिशाचान् पृथिवीमोषधीः
पश्न् वनस्पतीन् भूत्रग्रामं चतुर्विधमित्युपवीत्यथप्राचीनावीती यमं
यमपुरुषान् कन्यवाड़नलं सोमं यममर्थ्यमणमनिष्वात्तान् सोमपीथान् विद्यदोऽथ स्वान् पितृन् सकृत् सकृत्मातामाहां श्चेति
प्रतिपुरुषमभ्यस्ये ज्येष्ठश्रात् श्वग्रुरिषत् व्यमातुलां श्च पितृवंशमात्वं शौ
ये चान्ये मत्त उद्दम्महन्ति तांस्तर्पयामीत्ययमवसानाञ्जलिरथ
शोकाः ।.२

खायां यथेच्छेच्छरदातपात्तः परः पिपासुः क्षुधितोऽलमन् ।

वाको जिनत्रीं जननी च बालं योषित् पुमांसं पुरुषश्च योषाम् ॥३

तथा सर्वाणि भूतानि स्थावराणि चराणि च ।

विप्रादुदक्रमिच्छिन्ति सर्वाभ्युद्यकृद्धि सः ॥४

तस्मात् सदैव कर्तव्यमक्कर्वन्महतैनसा ।

युज्यते ब्राह्मणः कुर्वन्विश्वमेतद्विभित्तं हि ॥६

अल्पत्वाद्योमकालस्य बहुत्वात् स्नानकर्मणः ।

प्रात्तनं तनुयात् स्नानं होमलोपो हि गर्हितः ॥६

इति द्वादशखण्डः ।

॥ त्रयोदशखण्डः ॥ अथ पश्वमहायज्ञविधिवर्णनम् ।

पश्चानामथ सत्राणां मह्तामुख्यते विधिः।
यैरिष्टा सततं विप्रः प्राप्तुयात् सद्य शाश्चतम्।।१
देवभूतिपतृत्रद्यमनुष्याणामनुक्रमात्।
महासत्राणि जानीयात् एवेह महामखाः।।२
अध्यापनं ब्रह्मयद्यः पितृयद्यक्षस्तु तर्पणम्।
होमो देवो विलभौतो नृयद्योऽतिथिपूजनम्।।२
श्राद्धं वा पितृयद्यः स्यात् पित्रयो बलिरथापि वा।
यश्च श्रुतिजयः प्रोक्तो ब्रह्मयद्यः स वोच्यते।।४
स चार्वाक् तर्पणात् कार्यः पश्चाद्वा प्रातराहुतेः।
वैश्वदेवावसाने वा नान्यत्रतौ निमित्तकात्।।६
अप्येकमाशयेद्विप्रं पितृयद्यार्थसिद्धये।
अदेवं नास्त चेदन्यो भोक्ता भोज्यमथापि वा।।६

अप्युद्धृत्य यथाशक्तया किश्विद्त्रं यथाविधि । पितृभ्योऽथ मनुष्येभ्यो दद्याद्ह्ररहर्द्धिजे ॥७ पित्रभ्य इद्मित्युक्ता स्वधाकारमुदीरयेत्। इन्तकारं मनुष्येभ्यस्तदर्द्धे निनयेद्पः ॥८ मुनिभिद्धिरसनमुक्तं विप्राणां मर्त्यवासिनां नित्यम्। अहनि च तथा तमस्विन्यां सार्द्रप्रथमयामान्तः ॥६ सायं प्रातवेंश्वदेतः कर्तव्यो बलिकर्म च। अनश्नतापि सत्ततमन्यथा किल्विषी भवेत् ॥१० अमुष्मे नम इत्येवं बलिदानं विधीयते। बलिदानप्रदानार्थं नमस्कारः कृतो यतः ॥११ स्वाहाकारवषट्कारनमस्कारा दिवौकसाम्। स्वधाकारः पितृगाश्व हन्तकारो नृणां कृतः ॥१२ स्वधाकारेण निनयेत् पित्र्यं बलिमतः सदा। तद्ध्येके नमस्कारं कुर्वते नेति गौतमः ॥१३ नावराद्धः यांवलयो भवन्ति महामार्जारश्रवणप्रमाणात्। एकत्र चेद्विकुष्टा भवन्तीत्रेतरसंसक्ताश्च ॥१४

इति त्रयोदशखण्डः।

।। चतुर्दशखण्डः ।।
अथ ब्रह्मयज्ञविधिवर्णनम् ।
अथ तद्विन्यासोवृद्धिपिण्डानिवोत्तरांश्चतुरोवलीन्निद्ध्यात्
पृथिव्यै वायवे विश्वेभ्यो देवेभ्यः प्रजापतय इति सव्यत

एतेषामेकेकमद्भ्य ओषधिवनस्पतिभ्य आकाशाय कामा-येत्येतषामपि मन्यव इन्द्राय वासुक्रये ब्रह्मण इत्येतेषामपि रक्षोजनेभ्य इति सर्वेषां दक्षिणतः पितृभ्य इति चतुर्दश नित्या आशस्य प्रभृतयः काम्याः सर्वेषासुभयतोऽद्धिः परिषेकः पिण्डवच पश्चिमा प्रतिपत्तिः ॥१

न स्यातां काम्यसामान्ये जुहोति विकर्मणी।
पूर्वं नित्यविशेषोक्तं जुहोति बिक्कमणोः।।२
कामान्ते च भवेयातां न तु मध्ये कदाचन।
नैकिस्मिन् कर्मणि तते कर्माण्यत्तायते यतः।।३
अग्न्यादिगीतमाद्युक्तो होमः शाकल एव च।
अनाहिताग्नेरप्येष युज्यते बिलिभः सह।।४
स्पृष्ट्रापो वीक्षमाणोऽसिं कृताञ्जलिपुटस्ततः।
वामदेव्यजपात् पूर्वं प्रार्थयेद्द्रविणोदकम्।।५
आरोग्यमायुरैश्वय्यं धीर्घृतिः शं बलं यशः।
ओजो वर्षः पश्नून् वीयं ब्रह्म ब्रह्मण्यमेव च।।६
सौभाग्यं कर्मसिद्धिच कुलज्येष्ठं य सुकर्तृताम्।
सर्वमेतत् सर्वसाक्षिन् द्रविणोदिररीहिणः।।७

न ब्रह्मयज्ञाद्धिकोऽस्ति यज्ञो न तत्प्रदानात् परमस्ति दानम्। सर्वे तदन्ताः क्रतवः सदानानान्तो दृष्टः कैश्चिद्स्य द्विकस्य ॥८

> भृचः पठन् मधुपयः कुल्याभिस्तर्पयेत् सुरान्। घृतामृतौघकुल्याभिर्यजूष्यपि पठन् सदा।।१

सामान्यपि पठन् सोमघृतकुल्याभिरन्वहम् ।

मेदः कुल्याभिरपिच आथर्वाङ्गिरसः पठन् ॥१०

मांसक्षीरौदनमधुकुल्याभिरत्पयेत् पठन् ।

वाकोवाक्यं पुराणानि इतिहासानि चान्वहम् ॥११

मृगादीनामन्यतममेतेषां शक्तितोऽन्वहम् ।

पठन् मञ्याज्यकुल्याभिः पितृनपि च तप्येत् ॥१२

ते तृप्तास्त्रपयन्त्येनं जीवन्तं प्रेतमेव च ।

कामचारी च भवति सर्वेषु सुरसद्मसु ॥१३

जुव्वंप्येनो न तं स्पृशेत् पंक्तिञ्चेव पुनाति सः ।

यं यं क्रनुश्च पठित फलभाक्तस्य तस्य च ।

वसुपूर्णा वसुमती त्रिद्गिनफलमाप्नुयात् ।

वसुयज्ञादपि ब्रह्म दानमेवातिरिच्यते ॥१४

इति चतुर्दशखण्डः।

।। पश्चद्शखण्डः ।।
अथ यज्ञविधिवर्णनम्।
ज्ञह्मणे दक्षिणा देया यत्र या परिकीर्तिता ।
कर्मान्तेऽनुच्यमानापि पूर्णपात्रादिका भवेत् ॥१
यावता बहुभोक्तुस्तु तृप्तिः पूर्णन विद्यते ।
नावराद्ध्यमतः कुर्यात् पूर्णपात्रमिति स्थितिः ॥२

विद्ध्याद्धीत्रमन्यश्चेद्दक्षिणाद्धी हरो भवेत्। स्वयञ्चेदुभयं कुर्यादन्यस्मै प्रातिपाद्येत् ॥३ कुलर्त्विजमधीयानं सन्निकृष्टं तथा गुरुम्। नातिकामेत् सदा दित्सन् य इच्छेदास्मनो हितम् ॥४ अहमस्मै द्रामीति एवमाभाष्य दीयते। नैतावपृत्रा ददतः पात्रेऽपि फलसस्ति हि ॥४ दूरस्थाभ्यामपि द्वाभ्यां प्रदाय मनसा वरम्। इतरेभ्यस्ततो देयादेष दानविधिः परः ॥६ सन्निकृत्रमधीयानं ब्राह्मणं यो व्यतिक्रसेत्। यद्दाति तसुह्रङ्ख्य ततस्तेयेन युज्यते ॥७ यस्य त्वेक गृहे मूर्खो दूरस्थ च गुणान्वितः। गुणान्विताय दातव्यं नास्ति मूर्खे व्यतिक्रमः।।८ ब्राह्मणाभिक्रमो नास्ति विप्रे वेदविवर्जिते। ज्वलन्तमग्रिमुत्सृज्य न हि भस्मनि हूयते।।६ आज्यस्थाली च कर्तव्या तैजसद्रव्यसम्भवा। महीमयी वा कर्तव्या सर्वास्वाज्याहुतीषु च ॥१० आज्यस्थाल्याः प्रमाणं तु यथाकामन्तु कारयेत्। सुरदामत्रणां भद्रामाज्यस्थालीं प्रचक्षते ॥११ तिर्यगृद्धं समिन्मात्रा हढा नातिवृह्नसुखी। मृत्मय्योदुम्बरी वाऽपि चहस्थाली प्रशस्यते ॥१२ स्वशाखोक्तः प्रमुस्विन्नो ह्यर्ग्धोऽकठिनः शुभः। नचातिशिथिलः पाच्यो न चरुआरसस्तथा ॥१३

इध्यकातीयसिष्कार्द्ध प्रमाणं मेक्षणं भवेत्। वृत्तं चाक्कुष्ठपृथ्वप्रमवदानिकयाक्षमम्।।१४ एषेव द्वीं यस्तत्र विशेषस्तमहं ब्रुवे। द्वीं द्वश्रुलपृथ्वमा तुरीयो नन्तमेक्षमम्।।१५ मुषलोलूबले वार्क्षे स्वायते सुदृढे तथा। इच्डाप्रमाणे भवतः शूर्पं वैजवमेव च ॥१६ दक्षिणं वामतो वाह्यमात्माभिमुखमेव च। करं करस्य कुर्वीत करणे न्यञ्चकर्मणः ॥१७ कृत्वाग्न्यभिमुखौ पाणी स्वस्थानस्थौ सुसंयतौ । प्रदक्षिणं तथासीनः कुर्यात् परिसमृहनम् ॥१८ बाहुमात्राः परिधय ऋ तवः सत्वचोऽत्रणाः। त्रयो भवन्ति शीर्णात्रा एकेषान्तु चतुर्दिशम्।।१६ प्रागप्रावभितः पश्चादुदप्रमथवापरम्। न्यसेत् परिधिमन्यञ्चेदुदगद्रः स पूर्वतः ॥२० यथोक्तवस्त्वसम्पत्तौ प्राह्मं तद्नुकारि यत्। यवानामिव गोधूमा त्रीहीणामिव शालयः ॥२१ इति पञ्चदशाखण्डः।

।। षोड्राखण्डः ।।
अथ श्राद्धतिथिविशेषेणविधिवर्णनम्।
पिण्डान्बाहार्यकं श्राद्धं क्षीणे राजनि शस्यते ।
बास्तरस्य हतीयांशे नातिखन्ध्यासमीपतः ॥१

यदा चतुई शीयामं तुरीयमनुपूर्येत्।
अमावास्या श्लीयमाणा तदेव श्राद्धमिष्यते।।२
यदुक्तं यद्हस्त्वेव दर्शनं नैति चन्द्रमाः।
अनयापेश्चया झेयं श्लीणे राजनि चेत्यिप ।।३
यचोक्तं दृश्यमानेऽपि तचतुईश्यपेश्चया।
अमावास्यां प्रतीक्षेत तदन्ते वापि निर्वपेत्।।४
अष्टमेंऽशे चतुईश्याः श्लीणो भवति चन्द्रमाः।
अमावास्याष्टमांशे च पुनः किल भवेदणुः।।६
आग्रहायण्यमावास्या तथा ज्यष्टस्य या भवेत्।
विशेषमाभ्यां त्रुवते चन्द्रचारिवदो जनाः।।६
अत्रेन्दुराचे प्रहरेऽविष्ठते चतुर्थभागो न कलाविश्वष्टः।
तदन्त एव श्लयमेति दृत्स्त्रमेवं ज्योतिश्चक्रविदोवदन्ति।।७
यिसमन्नव्दे द्वादशैकश्च यव्य-

यास्मन्नव्द द्वाद्शकश्च यव्य-स्तस्मिस्तृतीयया परिदृश्यो नोपजायते। एवं चारं चन्द्रमसो विदित्वा

क्षीणे तस्मिन्नपराह्वे च द्द्यात्।।८
सम्मिश्रा या चतुर्दश्या अ मावास्या भवेत् कचित्।
खिवतां तां विदुः केचिद् गताध्वामिति चापरे।।६
वर्द्ध मानाममावास्यां लभेचेदपरेऽइनि।
यामांस्नीनिधकान् वापि पितृयज्ञस्ततो भवेत्।।१०।।
पक्षादावेव कुर्व्वति सदा पक्षादिकं चरुम्।
पूर्वाह्व एव कुर्व्वन्ति विद्धे ऽत्यन्ये मनीिषणः।।११

स्विपतुः पितृकृत्येषु ह्यधिकारो न विद्यते । न जीवन्तमतिक्रम्य किञ्चिद्द्यादिति श्रुतिः ॥१२ पितामहे धिय ते च पितुः प्रेतस्य निर्वपेत्। पितुस्तस्य च वृत्तस्य जीवेचेत् प्रपितामहः ॥१३ पितुः पितुः पितुश्चैव तस्यापि पितुरेव च। कुर्यात् पिण्डत्रयं यस्य संस्थितः प्रपितामहः ॥१४ जीवन्तमति द्दाद्वा प्रेतायात्रोदके द्विजः। पितुः पितृभ्यो वा दद्यात् स्वपितेत्यपरा श्रुतिः ॥१५ पितामहः पितुः पश्चात् पञ्चत्वं यदि गच्छति। पौत्रेणैकाद्शाहादि कर्तव्यं श्राद्धषोड्शम् ॥१६ नैतत् पौत्रेण कर्त्तव्यं पुत्रवांश्चेत् पितामहः। पितुः सपिण्डनं कृत्वा कुर्यान्मासानुमासिकम् ॥१७ असंस्कृतौ न संस्कायौं पृठ्वौं पौत्रप्रपौत्रकैः। पितरं तत्र संरकुर्यादिति कात्यायनोऽत्रवीत् ॥१८ पापिष्टमति शुद्धे न शुद्धं पापीकृतापि वा। पितामहेन पितरं संस्कुट्यांदिति निश्चयः ॥१६ ब्राह्मणादिहते ताते पतिते सङ्गवर्जिते। व्युक्तमाच मृते देयं येभ्य एव ददात्यसौ ॥२० मातुः सिप्ण्डीकरणं पितामद्या सहोदितम्। यथोक्तेनैव कल्पेन पुत्रिकया न चेत् सुतः ॥२१ न योषिद्भयः पृथग् दद्याद्वसानदिनाहते । स्वभर्तृपिण्डमात्राभ्यस्त्रप्तिरासां यतः समृता ॥२२

मातुः प्रथमतः पिण्डं निर्व्वपेत् पुत्रिकासुतः । द्वितीयन्तु पितुस्तस्यास्तृतीयन्तु पितुः पितुः २३ इति षोडशखण्डः

सप्तद्शखण्डः ।।
 अथ श्राद्धवर्णनम् ।

पुरतो बात्मनः कर्षूः सा पूर्वा परिकीर्त्यते । मध्यमा दक्षिणेनास्यास्तइक्षिणत दुत्तमा ॥१ वाय्विविङ्मुरवान्तास्ताः कार्याः सार्द्वाङ्गुलान्तराः । तीक्ष्णान्ता यवमध्याश्च मध्यं नाव इवोत्किरेत्॥२ राङ्कश्च खादिरः कार्यो रजतेन विभूषितः। शङ्कश्चैनोपनेषश्च द्वादशाङ्कुल इष्यते ॥३ अग्न्याशामैः कुशै. काय्यं कर्जूणां स्तरणं घनैः। दक्षिणान्तं तद्रमेंस्तु पित्रयहो परिस्तरेत् ॥४ स्थगरं सुरिभ इीयं चन्द्रनादि विजेपनम्। सौवीराञ्जनभित्युक्तं पिञ्जलीनां यर्ञनम्।। स्वस्तरे सर्विमासाच यथावदुपयुज्यते। देवपूर्व ततः श्राद्धसत्वरः श्रुचिरारभेत् ॥६ आसनाचर्षपर्यन्तं वशिष्ठेन यथेरितम्। हुत्वा कम्माध पात्रेषु उक्तं दद्यात्तिलोद्कम् ॥७

तूर्वणी पृथगपो दत्त्वा मन्त्रेण तु तिलोदकम्। गन्धोदकभा दातव्यं सज्ञिकषक्रमेण तु ॥८ आसुरेण तु पात्रेण यस्तु द्यात्तिलोद्कम्। पितरस्तस्य ना.न.न्स दश वर्षाणि पञ्च च ॥६ कुलालचकनिषन्नमासुरं मृण्मयं स्मृतम्। तदेव हस्तघटितं स्थाल्यादि दैविकं भवेत्।।१० गन्धान् ब्राह्मणसात् कृत्वा पुष्पाण्यतुभवानि च। धूपञ्चैवानुपूर्वेण हाग्नौ कुर्यादनन्तरम्।।११ अप्नौ करणहोमश्च कर्त्तव्य उपवीतिना। प्राडमुखेनैव देवेभ्यो जुहोतीति श्रुतिश्रुतेः ॥१२ अपसब्येन वा कार्यो दक्षिणाभिमुखंन च। निरुप्य हविरन्यस्मा दन्यस्मे न हि हूयते ॥१३ स्वाहा कुर्यान्न चात्रान्ते न चैव जहुयाद्ववि:। स्वाहाकारेण हुत्वामौ पश्चान्मन्त्रं समापयेत् ॥१४ पित्र्ये यः पंक्तिमूद्धं न्यस्तस्य पाणावनग्निमान् । हुत्वा मन्त्रवद्भ्येषां तृष्णीं पात्रेषु निःक्षिपेत् ॥१४ नोङ्कर्याद्वोममन्त्राणां पृथगादिषु कुत्रचित्। अन्येषाश्वाविकृष्टानां कालेनाचमनाि,ना ॥१६ सव्येन पाणिनेःयेवं यदत्र समुदीरितम्। परित्रहणमात्रन्तत् सन्यस्यादिशति व्रतम् ॥१७ पिटजूलयाच भिसंगृहा दक्षिणे नेतरात् करात्। अन्वारभ्य च सब्येन कुर्यादुक्लेखनादिकम् ॥१८

यावदर्शमुपादाय हिवधोऽर्भकमर्भकम् ।
चरुणा सह सन्नीय पिण्डान् दातुमुपक्रमेत् ॥१६
पितुरुत्तरकर्ष्वरे मध्यमे मध्यमस्य तु ।
दक्षिणे तत्पितुश्चैव पिण्डान् पर्वणि निर्वपेत् ॥२०
वाममावर्त्तनां केचिदुद्गन्तं प्रचक्षते ।
सवा गौतमशाण्डिल्यो शाण्डिल्यायन एव च ॥२१
आवृत्य प्राणमायम्य पितृन् ध्यायन् यथार्थतः ।
जपंस्तेनैव चावृत्य ततः प्राणं प्रमोचयेत् ॥२२
शाकञ्च फाल्गुनाष्टम्यां स्वयं पत्न्यपि वा पचेत् ।
यस्तु शाकादिको होमः कार्योऽपूपाष्टकावृतः ॥२३
अन्वाष्टक्यं मध्यमायामिति गोभिलगोतमौ ।
वार्कषण्डिश्च सर्वामु कीत्सो मेनेऽष्टकामु च ॥२४
स्थालीपाकं पशुस्थाने कुर्याद्यद्यानुकल्पितम् ।
अपयेत्तं सवत्सायास्तरुण्यागोः पयस्तथा ॥२६

इति सप्तद्शः खण्डः।

॥ अष्टादशः खण्डः ॥

अथ विवाहाग्निहोमविधानवर्णनम्।

सायमादि प्रातरन्तमेकं कर्म प्रचक्षते। दर्शान्तं पौर्णमासाद्यमेकमेव मनीषिणः ॥१

कद्ध्वं पूर्णाहुतेईर्शः पौर्णमासोऽपि वामिमः। य आयाति स होतव्यः स एवादिरिति श्रुतिः ॥२ ऊद्ध्वं पूर्णाहुतेः कुर्यात् सायं होमादनन्तरम्। वैश्वदेवन्तु पाकान्ते बलिकमंसमन्वितम् ॥३ ब्राह्मणान् भोज्येत् पश्चाद्भिरूपान् स्वशक्तितः। यजमानस्ततोऽश्नीयादिति कात्यायनोऽन्नवीत् ॥४ वैवाहिकेऽग्री कुर्वीत सायंग्रातस्त्वतन्द्रितः। चतुर्थीकर्म कृत्वैतदेतच्छाट्यायनेर्मतम् ॥६ <u> उद्ध्वं पूर्णाहुतेः (सायंहोमात्यये) प्रातहु त्वा तां सायमाहुतिम्।</u> प्रातहों भस्तदेव स्यादेष एवोत्तरो विधि: ॥६ पौर्णमासात्यये इव्यं होता वा यदहर्भवेत्। तद्हर्जुहुयादेवसमावास्यात्ययेऽपि च ॥७ अहूयमानेऽनश्नंश्चेन्नयेत् कालं समाहितः। सम्पन्ने तु यथा तत्र हूयते तदिहोच्यते ॥८ आहुताः परिसंख्याय पात्रे कृत्वाहुतीः सकृत्। मन्त्रेण विधिवद् हुत्वाधिकमेवापरा अपि ॥६ यत्र व्याहृतिभिहोंमः प्रायश्चित्तात्मको भवेत्। चतस्रस्तत्र विज्ञेयाः स्त्रीपाणिप्रहणे यथा ॥१० अपि वाज्ञातमित्येषा प्राजापत्यापि चाहुतिः। होतव्या त्रिविकल्पो यं प्रायश्चित्तविधिः स्पृतः ॥११ यद्यिप्रिनिनान्येन सम्भवेदाहितः कचित्। अग्नये विविचय इति जुहुयाद्वा घृताहुतिम् ॥१२

अग्नयेऽप्युमते चैव जुहुयाद्वैचुतेन चेत्। अग्नये शुचये चैव जुहुयाचेद निग्नना ॥१३ गृहद्दाहाग्निनाग्निस्तु यदृव्यः क्षासवान् द्विजैः। दावाग्निना च संसर्गो हृद्यं यदि तप्यते ॥१४ हिर्भूतो यदि संसुज्येत् संसृष्ट्रमुपशामयेत्। असंसृष्टं जागरये गिरिशर्में वमुक्तवान् ॥१५ न स्वेऽग्नावन्यहोमः स्यान्मुक्त्वैकां समिदाहुतिम्। स्वगर्भ(स्वभगः)सिक्रयार्थाश्च यावचासौ प्रजायते ॥१६ अग्निस्तु नामधेयादौ होमे सर्वत्र लौकिकः। न हि पित्रा समानीतः पुत्रस्य भवति कचित्।।१७ यस्याग्नावन्यहोमः स्यात् स वैश्वानरदैवतम्। चर्रं निरुप जुर्यात् प्रायश्चित्तं तु तस्य तत्।।१८ परेणाग्नी हुते स्वार्थं परस्याग्नी हुते स्वयम्। पितृयज्ञात्यये चैव वैश्वदेवद्वयस्य च ॥१६ अनिष्टा नवयज्ञेन नवाश्वप्राशने तथा। भोजने पतितानस्य चर्त्रश्वानरो भवेत्।।२० स्विपतृभ्यः पिता द्वात् सुतसंस्कारकर्मसु । पिण्डानोहहनात्तेषां तः याभावे तु तत्क्रमात् ॥२१ भूतप्रवाचने पत्नी यद्यसन्निहिता भवेत्। रज़ोरोगाः ना तम्र व.धं कुर्वन्ति याहिकाः ॥२२ महानसे इन वा बुर्यात् सवर्णां तां प्रवाचयेत्। अणवाद्यपि वा दुर्यान् वात्यायनवची यथा ॥२३

याज्ञवास्तुनि सुष्ट्याञ्च स्तम्बे दर्भवटौ तथा। दर्भसंख्या न विहिता विष्टरास्तरणेषु च॥ इत्यष्टादशः खण्ड ।

> ।। एकोनविंशतिः खःडः ॥ अथ सकतव्यता स्वीधर्मवर्णनम्

निःक्षिप्याग्नि स्वदारेषु परिकल्प्यार्त्वजं तथा।
प्रवसेत् कार्यवान् विप्रो मृषेव न चिरं कचित्।।१
मनसा नैत्यकं कर्म प्रवसक्रप्यतिन्द्रतः।
उपविश्य शुचिः सर्व यथाकाळमनुद्रवेत्।।२
पत्न्या चाप्यवियोगिन्या शुश्रूच्योऽग्निर्विनीतया।
सौभाग्यवित्तावैधव्यकामया भर्तृभक्तया।।३
या वा स्याद्वीरसूरासामाज्ञासम्पादिनी प्रिया।
दक्षा प्रियंवदा शुद्धा तामत्र विनियोजयेत्।।४
दिनत्रयेण वा कर्म यथा ज्येष्ठं स्वशक्तितः।
विभज्य सह वा कुर्युयेथाज्ञान(मशाठ्यवत्)च्च शास्ववत्।।४
क्वीणां सौभाग्यतो ज्येष्ठं विद्ययेव द्विजन्मनाम्।
नहि ख्यात्या न तपसा भक्तां तुष्यित योषिताम्।।६
भर्तुरादेशवर्त्तिन्या यथोमा बहुभिर्त्रतेः।
अग्निश्च तोषितोऽमुत्र सा स्त्री सौभाग्यमाद्भुयात्।।७

विनयावनताऽपि स्त्री भर्तुया दुर्भगा भवेत्। अमुत्रोमाग्निभतृणामवज्ञातिकृता तथा ॥८ श्रोत्रियं सुभगां गाञ्च साग्निमग्निचितिं तथा। प्रातरुतथाय यः पश्येदापद्भ्यः स प्रमुच्यते ॥६ पापिष्ठं दुर्भगामन्त्यं नग्नमुःकृत्तनासिकम्। **प्रातरुत्थाय यः पश्येत् स कालरुपयु**ज्यते ॥१० पतिमुख्य मोहात् स्त्री कं कं न नरकं व्रजेत्। कुच्छ्रान्मनुष्यतां प्राप्य कि कि दुःखं न विन्दति ॥११ पतिशुश्रुषयैव स्त्री कान्न लोकान् समस्तुते। दिवः पुनरिहायाता सुखानामम्बुधिभवेत्।।१२ सदारोऽन्यान् पुनर्दारान् कथिन्तत् कारणान्तरात्। य इच्छेद्गिमान् कर्तुं च्होमोऽस्य विधीयते।।१३ स्वेऽग्नावेव भवेद्धोमो छौकिके न कदाचन। न बाहिताग्नेः स्वं कर्म छौकिकेऽग्नौ विधीयते ॥१४ षडाहुतिकसन्येन जुहुयाद् भ्रुवदर्शनात्। न ह्यात्मनोऽर्थं स्यात्तावद्यावन्न परिणीयते ।।१५ पुरस्तात् त्रिविकल्पं यत् प्रायश्चित्तमुदाहृतम्। तत्पडाहुतिकं शिष्टेर्यज्ञविद्धिः प्रकीर्तितम्।।१६

एकोनविंशतितमः खण्डः इति कात्यायन(वा-गोभिले)विरचिते कर्मप्रदीपे द्वितीयः प्रपाठकः । ॥ अथ विशः खण्डः॥

अथ द्वितीयादिस्त्रीकृतेसतिवेदिकाग्निवर्णनम्।

असमक्षन्तु दुम्पत्योहीतव्यं नर्त्विगादिना। द्वयोरप्यसमक्षं हि भवेद् हुतमनर्थकम् ॥१ विहायाप्ति सभार्यश्चेत् सीमामुहङ्ख्य गच्छति। होमकालात्यये तस्य पुनराधानमिष्यते ॥२ अरण्योः क्षयनाशामिदाहेष्वमि समाहितः। पालयेदुपशान्तेऽस्मिन् पुनराधानमिष्यते ॥३ ज्येष्ठा चेद्वहुभार्यस्य अतिचारेण गच्छति। पुनराधानमत्रेक इच्छन्ति न तु गौतमः ॥४ दाहियत्वामिभार्यां सदशीं पूर्वसंस्थिताम्। पात्रश्चाथाग्निमाद्ध्यात् कृतद्।रोऽविलम्बितः ॥४ एवंवृत्तां सवर्णां स्त्रीं द्विजातिः पूर्वसारिणीम्। दाहियत्वाग्निहोत्रेण यज्ञपात्रैश्च धर्मवित् ॥६ द्वितीयाञ्चेव यः पत्नीं दहेद्वैतानिकाग्निभिः। जीवत्यां प्रथमायान्तु ब्रह्मध्नेन समं हि तत्।।७ मृतायान्तु द्वितीयायां योऽग्निहोत्रं समुत्सृजेत्। ब्रह्मोज्मं तं विजानीयाद् यश्च कामात् समुत्त्रुजेत् ॥८ मृत्यामपि भर्यायां वैदिकारिन न हि त्यजेत्। उपाधिनापि तत् कर्म यावज्ञीवं समापयेत् ॥६

रामोऽपि कृत्वा सौवणीं सीतां पत्नी यशस्विनीम्। ईंजे यज्ञैर्बद्दविधैः सह भ्रात्भिरच्युतः ॥१० यो दहेदग्निहोत्रेण स्वेन भार्य्या कथञ्चन। सा की सम्पद्यते तेन भार्या वास्य पुमान् भवेत्।।११ भार्या मरणसापना देशान्तरगतापि वा । अधिकारी भवेत्पुत्रो महापातकिनि द्विजे ॥१२ मान्या चैन्द्रियते पूर्वं भार्या पतिविमानिता । बीणि जन्मानि सा पुंसवं पुरुषः स्नीत्वमहिति ॥१३ पूर्वेव योनिः पूर्वावृत् पुनराधानकर्मणि । विशेषोऽत्राग्न्युपस्थानमाज्याहुत्यष्टकं तथा ॥१४ कुत्वा व्याहृतिहोसान्तसुपतिष्ठेत पावकम्। अध्यायः केवलाग्नेयः कस्तेजामिरमानसः ॥१४ अग्निमीले अग्न आयाद्यग्न आयाहि बीत्ये। तिस्रोऽग्निङ्योतिशित्यग्नि दूतसग्ने मृडेति च ॥१६ इत्यष्टाबाहुतीहु त्वा यथाविध्यतुपृर्श्शः । पूर्णीहुस्यादिकं सर्वमन्यत् पूर्ववदाचरेत्।।१७ अरण्योरल्पमायङ्गं यावत्तिष्ठति पूर्वयोः। न तावत् पुनराधानमन्यारण्योविधीयते ॥१८ विनष्टं सुक् सूवं न्युट्जं प्रत्यक्तथसमुद्धिषि। त्रत्यगप्रश्व मुषलं प्रहरेजातवेदसि ॥१६ इति विशः खण्टः।

॥ अर्थेकॉर्वशः खण्डः॥ अथ मृतदाहसंस्कारवर्णनम्।

स्वयं होमासमर्थस्य समीपमुपसर्पणम्। तत्राप्यसक्तस्य सतः शयनाचोपवेशनम् ॥१ हुतायां सायमाहुत्यांदुर्बलक्षेद् गृही भवेत्। प्रातहीमस्तदेव त्याजीवेश्वच्छः पुन ने वा ॥२ दुर्बलं स्नापयित्वा तु शुद्धचैलाभिसंवृतम्। दक्षिणाशिरसं भूमौ वर्हिष्मत्यां निवेशयेत्।।३ घृतेनाभ्यक्तमाप्लाव्य सवस्त्रमुपवीतिनम्। चन्दनोक्षितसर्वाङ्गं सुमनोभिर्विभूषितम् ॥४ हिरण्यशकलान्यस्य क्षिप्त्वा छिद्रेषु सप्तसु । मुखद्वथापिधायैनं निर्हरेयुः सुतादयः ॥४ आमपात्रेऽन्नमादाय प्रेतमम्निपुरःसरम्। एकोऽनुगच्छेत्तस्यार्द्धं मर्द्धंपथ्युत्सृजेद्भुवि ॥६ **ऊर्द्ध मादहनं प्राप्त आसीनो दक्षिणामुखः** । सञ्यं जान्वाच्च्य शनकैः सतिलं पिण्डदानवत्।।७ अथ पुत्रादिनाप्छत्य कुर्याद्दारुचयं महत्। भूप्रदेशे शुचौ देशे पश्चाचित्यादिलक्षणे ॥८ तत्रोत्तानं निपात्यैनं दक्षिणाशिरसं मुखे। आज्यपूर्णां स्र्चं दद्याद् दक्षिणायां नसि स्रुवम् ॥६ पादयोरधरां प्राचीमरणीमुरस्रोतराम्। पार्श्वयोः शूर्पचमसे सव्यद्क्षिणयोः क्रमात्।।१०

मुष्ठेन सह न्युक्जमन्तरुक्विं रुळ्ख्छम्।
चत्रीवीछीकमत्रेवमनश्रुनयनोविभीः।।११
अपसव्येन कृत्वेतद्वाग्यतः पितृदिङ् मुखः।
अथाग्नि सव्यजान्वक्तो द्द्यादक्षिणतः शनैः।।१२
अस्माक्त्वमधिजातोऽसि त्वद्यं जायतां पुनः।
असौ स्वर्गाय छोकाय स्वाहेति यजुरीरयन्।।१३
एवं गृहपतिर्दग्धः सवं तरित दुष्कृतम्।
यश्चैनं दाह्येत् सोऽपि प्रजां प्राप्नोत्यनिन्दिताम्।।१४
यथा स्वायुधधृक् पान्थो ह्यरण्यान्यपि निर्भयः।
अतिक्रम्यात्मनोऽभीष्टं स्थानिमष्टांश्च विन्दति।।१६
एवमेषोऽग्निमान् यज्ञपात्रायुधविभूषितः।
छोकानन्यानितक्रम्य परं ब्रह्मेव विन्दति।।१६

इत्यैकविशः खण्डः

अथ द्वाविंशः खण्डः ।।
 अथ दाहसंस्कारवर्णनम् ।

अथानवे(पे)क्षयेत्पापः सर्व एव शवरपृशः । स्नात्वा सचैलमाचम्य द्युर्ग्योदकं स्थले ॥१ गोत्रनामानुवादान्ते तपयामीत्यनन्तरम् । दक्षिणाप्रान् कुशान् कृत्वा सतिलन्तु पृथक् पृथक् ॥२ एवं कृतोदकान् सम्यक् सर्वान् शाद्वलसंश्थितान् । आप्लुत्य पुनराचान्तान् वदेयुस्तेऽनुयायिनः ॥३ मा शोर्क कुरुतानित्ये सर्वस्मिन् प्राणधर्मणि । धर्म कुरुत यत्नेन यो वः सह गमिष्यति ॥४ मानुष्ये कद्छीस्तम्भे निःसारे सारमार्गणम्। यः करोति स संमुढो जलबुद्बुदसन्निमे ॥६ गन्त्री वसुमती नाशसुद्धिहैंवतानि च। फेनप्रख्यः कथं नाशं मर्त्यलोको न यास्यति ॥६ पश्चधा सम्भृतः कायो यदि पश्चत्वमागतः। कर्मभिः स्वशरीरोत्थैस्तत्र का परिदेवना ॥७ सर्वेऽक्षयान्ता निचयाः पतनान्ताः समुच्छ्याः। संयोगा विप्रयोगान्ता मरणान्तं हि जीवितम् ॥८ श्लेष्माश्रु वान्धवैर्मुक्तं प्रेतो भुङ्क्ते यतोऽवशः। अतो न रोदितव्यं हि क्रियाः कार्याः प्रयत्नतः ॥६ एवमुक्ता व्रजेयुस्ते गृहां ह्युपुरः सराः। स्नानाग्निस्पर्शनाज्याशैः शुध्येयुरितरे कृतैः ॥१० इति द्वाविशः खण्डः।

।। अथ त्रयोविशः खण्डः ।।
अथ विदेशस्यमृतपुरुषाणांदाहसंस्कारवर्णनम् ।
एवमेवाहिताग्नेषु पात्रन्यासादिकं भवेत् ।
कृष्णाजिनादिकश्चात्र विशेषः सूत्रचोदितः ।।१
विदेशमरणेऽस्थीनि द्याहत्याभ्यज्य सर्पिषा ।
दाह्येदूर्णयाच्छाद्य पात्रन्यासादि पूर्ववत् ।।२

अस्थ्नामहाभे पर्णानि सकहान्युक्तयावृता । भर्ड्जयेद्स्थिसंख्यानि ततः प्रभृति स्तकम् ॥३ महापातकसंयुक्तो दैवात् स्यादिग्नमान् यदि । पुत्रादिः पालयेदिंग्न युक्त आदोष संक्षयात् ॥४ प्रायश्चित्तं न (ततः) कुर्याद्यः कुर्वन् वा भ्रियते यदि। गृह्यं निर्वापयेच्छ्रौतमश्व(न्यश्च)स्येत् सपरिच्छद्म्।।५ साद्येदुभयं वाष्ट्र ह्यद्गोनिरभवद्यतः । पात्राणि द्याद्विपाय दहेद्द्वेव वा क्षिपेत् ॥६ अनयैवावृता नारी दग्धव्या या व्यवस्थिता। अग्निप्रदानमन्त्रोऽस्या न प्रयोज्य इति स्थितिः। अग्निनैव दहेद्वार्यां स्वतन्त्रां पतितां न चेत्। तदुत्तरेण पात्राणि दाहयेत् पृथगन्तिके ॥८ अपरेद्युस्तृतीये वा अरःनां सञ्चयनं भवेत्। यस्तत्र विधिरादिष्ट ऋषिभिः सोऽधुनोच्यते ॥६ स्नानान्तं पूर्ववत् ऋत्वा गव्येन पयसा ततः। सञ्चयास्थीनि सर्वाणि प्राचीनावीत्यभाषयन् ॥१० शमीपलाशशाखाभ्यामुद्घृत्योद्घृत्य भस्मतः। आज्येनाभ्यज्य गव्येन सेचयेद् गन्धवारिणा ॥११ ःमृत्पात्रसंधुटं कृत्वा सूत्रेण परिवेष्ट्य च। श्वश्रं खास्त्रा शुन्ती भूमी निखनेइक्षिणामुखः ॥१२ पूरियत्वावटं पङ्कपिण्डशेवालसंयुतम्। द्त्वोपरि समं शेषं क्रयांन् पूर्वाह्वकर्मणा ॥१३

एवमेकागृहीसाग्नेः प्रेतस्य विधिरिष्यते । स्त्रीणामिवाग्निदानं स्याद्थातोऽनुक्तमुच्यते ॥१४ इति त्रयोविंशः खण्डः ।

।। चतुर्विशः खण्डः ॥ सृतकेकर्मत्यागः षोडशश्राद्धविधानवर्णनश्व ।

सूतके कर्मणां त्यागः सन्ध्यादीनां विधीयते। होमः श्रौते तु कर्तव्यः ग्रुष्कान्ने नापि वा फलैः ॥१ अकृतं हावयेत् स्मार्ते तर्भावे कृताकृतम्। कृतं वा हावयेदन्नमन्वारमभविधानतः ॥२ कृतमोदनशक्तादि तण्डुलादि कृताकृतम्। बीह्यादि चाकृतं प्रोक्तमिति हव्यं त्रिधा बुधैः ॥३ सूतके च प्रवासे वा चाशक्ती श्राद्धभोजने। एवमादिनिमित्तेषु हावयेदिति योजयेत् ॥४ न त्यजेत् सूतके कर्म ब्रह्मचारी स्वकं कचित्। न दीक्षण्यात् परं यज्ञे न फुच्छ्रादि तपश्चरन् ॥५ पितर्य्यपि मृते नैषां दोषो भवति कर्हिचित्। आशीचं कर्मणोऽन्ते स्थाज्यहं वा ब्रह्मचारिणः ॥६ श्राद्धमग्निमतः कार्य्या दाहादेकादशेऽहनि । प्रसाब्दिकं तु कुर्वीत प्रमीताहिन सर्वदा ॥७ द्वादश प्रतिमास्यानि आद्यं षाण्मासिके तथा। सपिण्डीकरणञ्चेव एतद्वे श्राद्धषोड्शम् ॥८

एकाहेन तु पण्मासा यदा स्युरिप वा त्रिभिः। न्यूनाः संवत्सराश्चेव स्यातां षाण्मासिके तथा।।१ यानि पश्चद्शाद्यानि अपुत्रस्येतराणि तु । एकस्मिन्नह्नि देयानि सपुत्रस्यैव सर्वदा ॥१० न योषायाः पतिर्द्धादपुत्राया अपि कचित्। न पुत्रस्य पिता द्यान्नानुजस्य तथाप्रजः ॥११ एकाद्रोऽह्रि निर्वर्थ अर्वाग्द्रशांद् यथाविधि। प्रकुर्वीताग्निमान् पुत्रो मातापित्रोः सपिण्डताम् ॥१२ सपिण्डीकरणादृद्ध्वं म द्यात् प्रतिमासिकम्। एकोदिष्टेन विधिना द्यादित्याह गौतमः ॥१३ कर्षसमन्वितं मुक्ता तथाद्यं श्राद्धषोड्शम्। प्रसादिकञ्च रोषेषु पिण्डाः स्युः षडिति स्थितिः ॥१४ अर्घेऽक्षय्योदके चैव पिण्डदानेऽवनेजने। तन्त्रस्य तु निवृत्तिः स्यात् स्वधावाचन एव च ॥१४ ब्रह्मद्ण्डाद्युक्तानां येषां नास्त्यग्निसत्क्रिया। श्राद्वादिसत्क्रियाभाजो न भवन्तीह ते कचित् ॥१६ इति चतुर्विशः खण्डः।

।। पञ्चिविशः खण्डः ॥
नवयहोनिवना नवास्रभोजने प्रायश्चित्तवर्णनम् ।
मन्त्रास्रायेऽग्न इत्येतत् पञ्चकं लाघवार्थिभिः ।
पठ्यते तत्प्रयोगे स्यान्मन्त्राणामेव विशतिः ॥१

खण्डः] नवयहोन विना नवान्नभोजने प्रायश्चित्तवर्णनम्। १३७७

अग्नेः स्थाने वायुचन्द्रसूर्य्यावहुबदृह्य च। समस्य पञ्चमीसूत्रे चतुश्चतुरितिश्रुतेः ॥२ प्रथमे पञ्चके पापी लक्ष्मीरिति पदं भवेत्। अपि पञ्चसु मन्त्रेषु इति यज्ञविदो विदुः ॥३ द्वितीये तु पतिध्नी स्यादपुत्रेति तृतीयके। चतुर्थे त्वपसव्येति इदमाहुतिविशकम्।।४ धृतिहोमे न प्रयुञ्ज्याद्योनामसु तथाष्टसु । चतुर्ध्यामद्भय इत्येतद्गोनामसु हि हूयते ॥५ <mark>स्ताप्रपह्नवो बुध्नः शुङ्गेति परिकीर्त्यते</mark>। पतित्रता व्रतवती ब्रह्मबन्धु स्तथाऽश्रुतः ॥६ शिलाटु नीलमित्युक्तं प्रथ्नः स्तवक उच्यते। कपुष्णिकाभितः केशान् मूद्धिन पश्चात् कपुच्छलम्।।७ श्वाविच्छ्हाका शहली तथा वीरतरः शरः। तिलतण्डुलसम्पकः कृषरः सोऽभिधीयते ॥८ नामधेये मुनिवसुपिशाचाबहुवत् सदा। यक्षाश्च पितरो देवा यष्टव्यास्तिथिदेवताः ॥६ आग्नेयाद्येऽथ सार्पाद्ये विशाखाद्ये तथैव च । आषाढाद्ये धनिष्ठाद्ये अश्विन्याद्ये तथैव च ॥१० द्वन्द्वान्येतानि बहुवदक्षाणां जुहुयात् सदा। द्वन्द्वद्वयं विवच्छेद्यमवशिष्टान्यथैकत्रत्।।११ देवतास्वपि हूयन्ते बहुवत् (सर्प्यपि त्रयः)सार्वपित्तयः। देवाश्च वसवश्चेव द्विवदेवाश्विनौ सदा ॥१२

बह्मचारी समादिष्टी गुरुणा व्रतकर्मणि।
बाहमोमिति वा ब्रूयात्तत्त्रथेवानुपालयेत्।।१३
सिराखं वपनं कायमास्त्रानाद्ब्रह्मचारिणा।
आशरीरविमोक्षाय ब्रह्मचं न चेद्ववेत्।।१४
वपनं नास्य कर्तव्यमवांगौदानकव्रतात्।
व्रतिनो वत्सरं यावत्वण्मासानिति गौतमः।।
न गात्रोत्सादनं कुर्याद्नापदि कदाचन।
जलकीडामलङ्कारात् व्रती दण्ड इवाप्रवेत्।।१५
देवतानां विपर्यास जुहोतिषु कथं भवेत्।
सर्व प्रायश्चित्तं हुत्वा क्रमेण जुहुयात् पुनः।।१६
संस्कारा अतिपद्येरन् स्वकालाहेत् कथ्वन।
हुत्वैतदेव कर्तव्या ये तूपनयनाद्धः॥१०
अनिष्ट्वा नवयक्तेन नवातं योत्यकामतः।
वैश्वानरश्चरुतस्य प्रायश्चितं विधीयते॥१८

इति पञ्चिवंशातिखः डः

।। षड्विशः खण्डः ।।

नवयज्ञकालाभिधानवर्णनम् ।

चकः समशनीया यस्तथा गोयज्ञकमणि ।

वृषभीत्सर्जने चैव अश्वयज्ञे तथैव च ।।१

श्रावण्यां वा प्रदोषे यः कृष्यारम्भे तथैव च ।

कथमेतेषु निर्वापाः कथञ्चैव जुहोतयः ।।२

देवता सङ्ख्या ब्राह्या निर्वापांस्तु पृथक् पृथक् ।

तृष्णी द्विरेव गृह्वीयाद्योमश्चापि पृथक् पृथक् ॥३

खण्डः]-अन्वाहार्यलक्षणम् होमद्वयात्ययादौपुनराधानवर्णनम् १३७६

यावता होमनिवृ त्तिर्भवेद्या यत्र कीर्तिता। शेषं चैव भवेत् किञ्चित्तावन्तं निर्वपेचरुम् ॥४ चरौ समशनीये तु पितृयज्ञे चरौ तथा। होतव्यं मेक्षणेनान्य उपस्तीणाभिघारितम्।।४ कालः कात्यायनेनोक्तो विधिश्चैव समासतः। वृषीत्सर्गे यतो नाऽत्र गोभिलेन तु भाषितः ॥६ पारिभाषिक एव स्यात् कालों गोवाजियज्ञयोः। अन्यस्मादुपदेशात्तु स्वस्तरारोहणस्य च ॥७ अथवा मार्गपाल्येऽह्नि कालो गोयज्ञकर्मणः। नीराजनेऽहि वाश्वानामिति तन्त्रान्तरे विधिः॥८ शरद्वसन्तयोः केचिन्नवयइं प्रचक्षते। धान्यपाकवशाद्न्ये श्यामाकोवनिनः स्मृतः ॥६ आश्वयुज्यां तथा कृष्यां वास्तुकर्मणि याज्ञिकाः। यज्ञार्थतत्त्ववेत्तारो होममेवं प्रचक्षते ॥१० द्वे पञ्च द्वे क्रमेणेता ह्विराहुतयः स्मृताः। शेषा आज्येन होतच्या इति कात्यायनोऽब्रवीत् ॥११ पयोयदाज्यसंयुक्तं तत् पृषातकमुच्यते । द्ध्येके तदुपासाद्य कर्तव्यः पायसश्चरः ॥१२ त्रीहयः शालयो मुद्गा गोधूमाः सर्षपास्तिलाः। यवाश्चौषधयः सप्त विपदं ब्नन्ति धारिताः ॥१३ संस्काराः पुरुषस्येते समर्य्यन्ते गौतसादिभिः। अतोऽष्टकादयः कार्याः सर्वे कालक्रमोदिताः ॥१४

सकुर्प्यष्टकादीनि कुर्यात् कर्माणि यो द्विजः।
स पंक्तिपावनो भूत्वा लोकान् प्रैति घृतश्च्युतः॥१५
एकाहमपि कर्मस्थो योऽप्रिशुश्रूषकः शुचिः।
नयत्यत्र तदेवास्य शताहं दिवि जायते॥१६
यस्त्वाधायाग्निमाशास्य देवादीन्नेभिरिष्टवान्।
निराकर्तामरादीनां स विज्ञेयो निराकृतिः॥१७

इति षड्विंशः खण्डः।

।। अथ सप्तविंशः खण्डः ॥ अथ प्रायश्चित्तवर्णनम् ।

यच्छाद्धं कर्मणामादौ या चान्ते दक्षिणा भवेत्।
आमावास्यं द्वितीयं यद्न्वाहार्यं तदुच्यते ॥१
एकसाध्येष्ववहिःषु न स्यात् परिसम्इनम्।
नोदगासानञ्चैव क्षिप्रहोमाहि ते मताः॥२
अभावे ब्रीहियवयोईध्ना वा पयसापि वा।
तद्भावे यवाग्वा वा जुहुयादुदकेन वा॥३
रौद्रन्तु राक्षसं पित्र्यमासुरं चाभिचारिकम्।
उक्ता मन्त्रं रष्टशेदाप आलभ्यात्मानमेव च॥४
यजनीयेऽहि सोमश्चेद्वारुण्यां दिशि दृश्यते।
तत्र व्याहृतिभिद्धं त्वा दण्डं द्वात् द्विजातये॥६

लवणं मधु मांसञ्ब क्षारांशो येन हूयते। उपवासे न भुद्धीत नोरुरात्री न किञ्चन ॥६ स्वकाले सायमाहुत्या अप्राप्ती होत्हृज्ययोः। प्राक्प्रातराहुतेः कालः प्रायश्चित्ते हुते सति ॥ प्राक्सायमाहुतेः प्रातहीमकालानतिक्रमः। प्राक्पौर्णमासाद् दशंस्य प्राग्दर्शादितरस्य तु ॥८ वैश्वदेवे स्वतिक्वान्ते अहोरात्रमभोजनम्। प्रायश्चित्तमथो हुत्वा पुनः सन्तनुयःद् व्रतम्।।६ होमद्वयात्यये दर्रापौणेमासात्यये तथा। पुनरेवाग्निमाद्ध्यादिति भागवशासनम्।।१० अनृचो माणवो ज्ञेय एगः ऋष्ममृगः स्मृतः । रुरुगीरसृगः प्रोक्तस्तम्बलः शोण उच्यते ॥११ केशान्तिको ब्राह्मणस्य दण्डः कार्यः प्रमाणतः। ल्लाटसंमितो राज्ञः स्यानु नाशान्तिको विशः ॥१**२** ऋ जवस्ते तु सर्वे खु व्रगाः सौम्य रर्शनाः। अनुद्वेगकरा नृषां सत्वचोऽनग्निदूषिताः ॥१३ गौर्विशिष्टतमा विप्रवेदिष्वपि निगद्यते। न ततोऽन्यद्वरं यस्मात्तस्माद्गौर्वर उच्यते ॥१४ येषां व्रतानामन्तेषु दक्षिणा न विधीयते। वरस्तत्र भवेहानमपि वाच्छाद्येद् गुरुम् ॥१५ अस्थानोच्छासविच्छेदघे.पणाध्यापनादिकम्। प्रामाणिकं श्रुतौ यत् स्याद्यातयामस्त्रकारि तत् ॥१६

प्रत्यब्दं यदुपाकर्म सोत्सगं विधिवद् द्विजैः।

क्रियते छन्दसां तेन पुनराप्यायनं भवेत्।।१७
अयातयामैश्छन्दोभिर्यत् कर्म क्रियते द्विजैः।
क्रीडमानैरिप सदा तत्तेषां सिद्धिकारकम्।।१८
गायत्रीश्व सगायत्रां वार्हस्पत्यमिति त्रिकम्।
शिष्येभ्योऽनूच्य विधिवदुपाकुर्यात्ततः श्रुतिम्।।१६
छन्दसामेकविंशानां संहितायां यथाक्रमम्।
न च्छन्दस्काभिरेवाभिर्शद्याभिर्होम इष्यते।।२०
पर्वभिश्चेव गानेषु ब्राह्मणेषूत्तरादिभिः।
अङ्गेषु चर्चामन्त्रेषु इति षष्टिर्जुहोतयः।।२१
इति सप्तविंशतिः खण्डः।

।। अथाष्टाविशतिः खण्डः ॥
अथ प्रायिक्षत्तवर्णनमुपाकर्मणः फलनिरूपणवर्णनम् ।
अक्षतास्तु यवाः प्रोक्ता श्रष्टाधाना भवन्ति ते ।
श्रष्टास्तु त्रीहयो लाजा घटाः षण्डिक उच्यते ॥१
नाधीयीत रहस्यानि सोत्तराणि विचक्षणः ।
नचोपनिषद्श्रेव षण्मासान् दक्षिणायनात् ॥२
उपाश्वत्योदगयने ततोऽधीयीत धर्मवित् ।
उत्सर्गश्रेक एवेपां नैष्ट्यं प्रोष्ठपदेऽपि वा ॥३

खण्डः] सूतकादिनाश्रवणाकर्मलोपे कर्मविशेषाभिधानम् । १३८३ प्रायश्चित्तवर्णनम् ।

अजातव्यञ्जना लोम्नी न तया सह संविशेत्! अयुगूः काकवन्ध्याया जातां तां न विवाह्येत्।।४ संसक्तपद्विन्यासिखपदः प्रक्रमः स्पृतः। स्मार्त्ते कर्मणि सर्वत्र श्रौते त्वध्वर्युणोदितः ॥५ यस्यां दिशि विं दद्यात्तामेवाभिमुखो विलम्। श्रवणाकर्मणि भवेन्यश्व कर्म न सर्वदा ।!६ विछशेषस्य हवनमग्निप्रणयनन्तथा। प्रत्यहं न भवेयातामुल्मुकन्तु भवेत् सदा ।।७ वृषान्तकप्रेक्षणयोर्नवस्य हविषस्तथा । शिष्टस्य प्राशने मन्त्रस्तत्र सर्वेऽधिकारिणः ॥८ ब्राह्मणानामसान्निध्ये स्वयमेव पृषातकम्। अवेक्षेद्धविषः शेषं नवयज्ञेऽपि भक्षयेत् ॥६ सफला बदरीशाखा फलवत्यभिधीयते। धना विधिकताशङ्काः स्मृता जातशिलास्तु ताः ॥१० नष्टो विनष्टो मणिकः शिलानाशे तथैव च । तदैवाऽऽहृत्य संस्कार्यो न क्षिपेदायहायणीम् ॥११ अवणाकर्म लुप्तञ्चेत् कथश्चित् सृतकादिना । आग्रहायणिकं कुर्याद्वलिवज्मशेषतः ॥१२ उद्ध्वं स्वस्तरशायी स्यान्मासमद्धं मथापि वा। सप्तरात्रं त्रिरात्रं वा एकां वा सद्य एव वा ॥१३ नोद्ध्वं मन्त्रप्रयोगः स्याझाग्न्यगारं नियम्यते। नाहतास्तरणञ्चेव न पार्श्वञ्चापि दक्षिणम् ॥१४

दृढश्चेदाप्रहायण्यामाइत्ताविष कर्मणः ।
कुम्भो मन्त्रवदासिञ्चेत् प्रतिकुम्भमृचं पठेत् ।।१६
अल्पानां यो विघातः स्यात् स वाधोवहुभिः स्मृतः ।
प्राणसम्मित इत्यादि वाशिष्ठं वाधितं यथा ।।१६
विरोधो यत्र वाक्यानां प्रामाण्यं तत्र भूयसाम् ।
तुल्यप्रमाणकत्वे तु न्याय एवं प्रकीर्तितः ।।१७
त्रैयम्बकं करतलमपूपःमण्डकाः स्मृताः ।
पालाशा गोलकाश्चेव लोहचूर्णंभ्व चीवरम् ।।१८
स्पृशन्ननामिकाप्रेण कचिदालोकयन्नपि ।
अनुमन्त्रणीयं सर्वत्र सदैवमनुमन्त्रयेत् ।।१६

इत्यष्टविशतिः खण्डः।

श्येकोनत्रिशः खण्डः ॥अथ श्राद्धवर्णनम् ।

क्षालनं दर्भकूर्चेन सर्वत्र स्रोतसां पशोः।
तूरणोमिच्छाक्रमेण स्याद्वपार्थे पार्णदारुणो॥१
सप्त तावन्मूर्द्ध न्यानि तथा स्तनचतुष्ट्यम्।
नाभिः श्रोणिःपानञ्च गोस्रोतांसि चतुर्दश ॥२
क्षुरोमांसावदानार्थः कृत्स्ना स्त्रिष्ट कृदावृता।
वपामादाय जुहुयात्तत्र मन्त्रं समापयेत्॥३

हृजिह्ना क्रोड़मस्थीनि यवृद्वको गुदं स्तनाः। श्रोणिस्कन्धसदापार्श्वे पश्वङ्गानि प्रचक्षते ॥४ एकाद्शानामङ्गानामवद्।नानि सङ्ख्यया। पार्श्वस्य वृक्कसक्थ्नोश्च द्वित्वादाहुश्चतुदेश ॥५ चरितार्था श्रुतिः कार्या यस्माद्प्यनुकल्पतः । अतोह्यार्चेन होमः स्याच्छागपक्षे चरावपि ॥६ अवदानानि यावन्ति क्रियेरन् प्रस्तरेपशोः। तावतः पायसान् पिण्डान् पश्वभावेऽपि कारयेत्।।७ औद्नज्यञ्जनार्थन्तु पश्वभावेऽपि पायसम्। सद्रवं अपयेत्तद्वद्वन्वष्टक्येऽपि कर्मणि ॥८ प्राधान्यं पिण्डदानस्य केचिदाहुर्मनीषिणः। गयादौ पिण्डमात्रस्य दीयमानत्वद्शेनात् ॥६ भोजनस्य प्रधानत्वं वदन्त्यन्ये महर्षयः। ब्राह्मणस्य परीक्षायां महा(यज्ञ)यत्नप्रदर्शनात् ॥१० आमश्राद्धविधानस्य विना पिण्डैः क्रियाविधिः। तदालभ्याप्यनध्यायविधानश्रवणाद्पि ॥११ विद्वन्मतमुपादाय ममाप्येतद्धृदि स्थितम्। प्राधान्यमुभयोर्यस्मात्तस्मादेष समुचयः ॥१२ प्राचीनावीतिना कार्य पित्र्येषु प्रोक्षणं पशोः। दक्षिणोद्वासनान्तञ्च चरोर्निर्वपणादिकम् ॥१३ सन्नपश्चावदानानां प्रधानार्थो न हीतरः। प्रधानं हवनब्चैव शेषं प्रकृतिबद्भवेत् ॥१४

द्वीपमुन्नतमाख्यातं शादा चैवेष्टका स्मृता।
कीलिनं सजलं प्रोक्तं दूरखातोदको मकः ॥१५
द्वारगवाक्षः सन्दर्भैः कईमभित्यन्तकोण वा।
वेधेश्वानष्टं वास्तुघोरं विद्वन्मनाक्रान्तमार्प्रेश्च (१)॥१६
वशक्तमाविति बीहीञ्छेषश्चेति यवांस्तथा।
असावित्यत्र नामोक्ता जुहुयात् क्षिप्रहोमवत्॥१७
साक्षतं सुमनोयुक्तसुदकं द्धिसंयुतम्।
अध्यं द्धिमधुभ्याश्च मधुपको विधीयते॥१८
कांस्येनैवार्हणीयस्य निनयेद्ध्यमञ्जलो।
कांस्यापिधानं कांस्यस्थं मधुपकर्कं समर्थयेत्॥१६

इति कात्यायनविरचिते (गोभिलप्रोक्ते)कर्मप्रदीपे तृतीयः प्रपाठकः । इत्यैकोनत्रिंशः खण्डः ।

> समाप्ता चेयं कात्यायनस्मृतिरितिलेख्यंनास्त्यत्र तस्माद्यंत्रन्थः समाप्तोनवेत्यत्रसंदेहः। ॐ तत्सत्।

॥ अथ ॥

-॥ आपस्तम्बस्मृतिः॥-

...000...

श्रीगणेशाय नमः।

一:緣::緣:一

॥ अथ प्रथमोऽध्यायः ॥

अथ गोरोधनादिविषये-गोहत्यायां च प्रायश्चित्तवर्णनम्।

आपस्तम्बं प्रवक्ष्यामि प्रायश्चित्तविनिर्णयम् ।
दृषितानां हितार्थाय वर्णानामनुपूर्वशः ॥१
परेषां परिवादेषु निवृत्तमृषिसत्तमम् ।
विविक्तदेश आसीनमात्मविद्यापरायणम् ॥२
अनन्यमनसं शान्तं सत्वस्थं योगवित्तमम् ।
आपस्तम्बमृषि सर्वे समेत्य मुनयोऽन्नुवन् ॥३
भगवन् ! मानवाः सर्वेऽसन्मार्गेऽपिश्चिता यदा ।
चरेयुर्धमेकार्याणां तेषां न्नूहि विनिष्कृतिम् ॥४
यतोऽवस्यं गृहस्थेन गवादिपरिपालनम् ।
कृषिकर्मादि चापत्सु (वपने) द्विजामन्त्रणमेव च ॥१

देयश्वानाथकेऽवश्यं विप्रादीनाश्व भेषजम्। बालानां स्तन्यपानादिकार्यश्व परिपालनम् ॥६ एवं कृते कथि चत् स्यात् प्रमादो यद्यकामतः। गवादीनां ततोऽस्माकं भगवन् ! ब्रूहि निष्कृतिम्।।७ एवमुक्तः क्षणं ध्यात्वा प्रणिपाताद्धोमुखः । दृष्ट्वा ऋषीनुवाचेदमापस्तम्वः सुनिश्चितम्।।८ बालानां स्तन्यपानादिकार्ये दोषो न विद्यते। विपत्तावपि विप्राणामामन्त्रणचिकित्सने ॥६ गवादीनां प्रवक्ष्यामि प्रायश्चित्तं रुजा(तृषा)दिषु । केचिदाहुर्न दोषोऽत्र देहधारणभेषजे ॥१० औषधं त्रवणब्चैव स्तेहपुष्ट्यन्नभोजनम् । प्राणिनां प्राणरूत्यर्थः प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥११ अतिरिक्तं न दातव्यं काले स्वरूपन्तु दापयेत्। अतिरिक्ते विपन्नानां कुच्छ्रमेव विधीयते ॥१२ **इयहं** निरशनात् पादः पादश्चायाचितं ज्यहम्। पादः सायं त्रयहं पादः प्रतभी ज्यं तथा त्रयहम्।।१३ प्रातः सायं दिनाद्धं भा पादोनं सायवर्ज्जितम् ॥१४ प्रातः पादं चरेच्छुद्रः सायं वैश्यस्य दापयेत्। अयाचितन्तु राजन्ये त्रिरात्रं ब्राह्मणस्य च ॥१५ पाद्ममेकं चरेद्रोधे ही पादौ बन्धने चरेत्। योजने पादहीनश्व चरेत् सर्वं निपातने ॥१६

घण्टाभरणरोषेण गौस्तु यत्र विपद्यते। चरेदद्धं व्रतं तत्र भूषणार्थं कृतं हि तत्।।१७ दमने वा निरोधे वा संघाते चैव योजने। स्तम्भशृङ्खलपाशैश्च मृते पादोनमाचरेत् ॥१८ पाषाणैर्छगुडैर्वापि शस्त्रेणान्येन वा बलात्। निपातयन्ति ये गास्तु तेषां सर्वं विघीयते ॥१६ प्राजापत्यं चरेद्विभः पादोनं क्षत्रियश्चरेत्। कुच्छाद्ध न्तु चरेद्वैश्यः पादं शूद्रस्य दापयेत्।।२० द्रौ मासौ दापयेद् वत्सं द्रौ मासौ द्रौ रतनौ दुहेत्। द्वौ मासावेकवेलायां शेषकाले यथारुचि ॥२१ दशरात्रार्द्ध मासेन गौस्तु यत्र विपद्यते। सशिखं वपनं कृत्वा प्राजापत्यं समाचरेत् ॥२२ हलमष्ट्रगवं धर्मं षड्गवं जीवितार्थिनाम्। चतुर्गवं नृशंसानां द्विगवञ्च जिघांसिनाम्।।२३ अतिवाहातिदोहाभ्यां नासिकाभेदने तथा। नदीपर्वतसंरोधे मृते पादोनमाचरेत् ॥२४ न नारिकेलबालाभ्यां न मुञ्जेन न चर्माणा। एभिर्गास्तु न बध्नीयाद् वद्ध्त्रा परवशोभवेत्।।२४ कुरौः कारौश्च बन्नीयाद् वृषभं दक्षिणामुखम्। पाद्छप्राग्निदोषेषु प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥२६ व्यापन्नानां बहूनान्तु रोधने वन्धनेऽपि च। भिषिद्याथ्योपचारे च द्विगुणं गोन्नतश्वरेत्।।२७

शृक्षभक्षेऽस्थिभक्के च लाङ्गूलस्य च कर्तने।
सप्तरात्रं पिबेद् दुग्धं यावत्स्वस्था पुनभवेत्।।२८
गोमूत्रेण तु संमिश्रं यावकं भक्षयेद् द्विजः।
एतद्विमिश्रितं चैव मुक्तञ्चोशनसा स्वयम्।।२६
देवद्रोण्यां विहारेषु कूपेष्वायतनेषु च।
एषु गोषु विपन्नासु प्रायश्चित्तं न विद्यते।।३०
एका पादात्तु बहुभिदेवाद्वापातिता क्वचित्।
पादं पादन्तु हत्यायाश्चरेयुस्ते पृथक् पृथक्।।३१
यन्त्रणे गोश्चिकित्सार्थे मृदगर्भविमोचने।
यत्ने कृते विपत्तिश्चेत् प्रायश्चित्तं न विद्यते।।३२
सरोमं प्रथमे पादे द्वितीये श्मश्च(धारणम्)कर्त्तनम्।
तृतीये तु शिखा धार्या सशिखन्तु निपातने।।३३
सर्वान् केशान् समुद्धृत्य छेद्येदङ्कुलिद्वयम्।
एवमेव तु नारीणां शिरसो मुण्डनं स्मृतम्।।३४

इत्यापस्तम्बीये धम्मेशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ।

श्व श्रुद्धचशुद्धिविवेकवर्णनम्।
अथ शुद्धचशुद्धिविवेकवर्णनम्।
कारुहस्तगतं पुण्यं यच प्रामा(पात्रा)द्विनिःस्मृतम्।
स्वीवालवृद्धाचरितं प्रत्यक्षादृष्टमेव च।।१

ऽध्यायः] उद्कशुद्धिनिरूपणं,दूषितवापीकूपादीनांशुद्धिवर्णनम् । १६६१

प्रपास्वरण्येषु जलेऽथ नीरे द्रोण्यां जलं यच विनिःसृतं भवेत्। श्वपाकचाण्डालपरिप्रहेषु पीत्वा जलं पञ्चगव्येन शुद्धिः॥२

न दुष्येत् सन्तता धारा वातोद्धृताश्च रेणवः। सियो वृद्धाश्च बालाश्च न दुष्यन्ति कदाचन ॥२ आत्मशय्या च वस्त्रच जायापत्यं कमंण्डलुः। आत्मनः ग्रुचिरेतानि परेषामशुचीनि तु ॥४ अन्येस्तु खानिताः कूपारतड़ागानि तथैव च। एषु स्नात्वा च पीत्वा पञ्चगव्येन शुध्यति ॥५ उच्छिष्टमशुचित्वभ्व यच विष्ठानुलेपनम्। सर्वं शुध्यति तोयेन तत्तोयं केन शुध्यति ॥४ सूर्यरिमनिपातेन मारुतस्पर्शनेन च। गवां मूत्रपुरीषेण तत्तोयं तेन शुध्यति ॥७ अस्थिचम्मादियुक्तन्तु खराश्वोष्ट्रोपदूषितम्। उद्धरेदुदकं सन्त्रं शोधनं परिमार्जनम् ॥८ कूपो मूत्रपुरीषेण ष्ठीवनेनापि दृषितः। श्वशृगालखरोष्ट्रेश्च क्रव्यादेश्च जुगुप्सितः ॥६ उद्धृत्यैव च तत्तोयं सप्तपिण्डान् समुद्धरेत्। पञ्चगव्यं सृदा पूतं कूपे तच्छोधनं समृतम्।।१० वापीकूपतड़ागानां दूषितानाश्च शोधनम्। कुम्भानां शतमुद्धृत्य पञ्चगव्यं ततः क्षिपेन् ॥११ यश्च कूपात् पिवेत्तोयं ब्राह्मणः शवदृषितात् । कथं तत्र विशुद्धिः स्यादिति मे संशयो भवेत् ॥१२ अिक्छन्नेनाप्यभिन्नेन शवेन परिदृषिते। पीत्वा कूपे हाहोरात्रं पश्चगव्येन शुध्यति।।१३ क्टिने भिन्ने शवे चैव तत्रस्थं यदि तत् पिवेत्। शुद्धिश्चान्द्रायणं तस्य तहकुन्छ्मथापि वा।।१४ इसापस्तम्बीये धर्मशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः।

।। अथ तृतीयोऽध्यायः ॥ गृहेऽविज्ञातस्यान्त्यजातेनिवेशने-बालादिविषये च प्रायश्चित्तम्।

अन्त्यजातिमविद्यातो निवसेद्यश्च वेश्मनि ।
सम्यग् ज्ञात्वा तु कालेन द्विजाः कुर्वन्त्यनुप्रहम् ॥१
चान्द्रायणं पराको वा द्विजातीनां विशोधनम् ।
प्राजापत्यन्तु शूद्रस्य शेषं तद्नुसारतः ॥२
येर्भुक्तं तत्र पक्षात्रं कृच्छ्रं तेषां प्रदापयेत् ॥
तेषामपि च येर्भुक्तं कृच्छ्रपादं प्रदापयेत् ॥३
कूपैकपानैर्दु छानां स्परोने शवदृषणम् ॥
तेषामकोपवासेन पञ्चगव्येन शोधनम् ॥४
बालो बृद्धस्तथा रोगी गर्भिणी वाऽपि (वायु) पीडिता ।
तेषां नक्तं प्रदातव्यं बालानां प्रहरद्वयम् ॥६
अशीतिर्यस्य वर्षाणि बालोवात्यूनषोडशः ।
प्रायश्चित्ताद्ध मर्हन्ति स्त्रियो व्याधित एव च ॥६

Sध्याय] चण्डालकूपजलपानादौ-संस्पर्शे च प्रायश्चित्तं । १३६३

न्यूनकादशवर्षस्य पश्चवर्षाधिकस्य च ।
चरेद् गुरुः सुहृद्रापि प्रायिश्वतं विशोधनम् ॥७
अथवा क्रियमाणेषु येषामात्तिः प्रदृश्यते ।
शेषसम्पादनाच्छुद्धिर्विपत्तिने भवेद्यथा ॥८
श्रुधा व्याधितकायानां प्राणो येषां विपद्यते ।
ये न रक्षन्ति भक्तेन तेषां तिकल्विषं भवेत् ॥६
पूर्णेऽपि कालनियमे न शुद्धिर्वाद्यणैर्विना ।
अपूर्णेष्वपि कालेषु शोधयन्ति द्विजोत्तमाः ॥१०
समाप्तमिति नो वाच्यं त्रिषु वर्णेषु कर्दिचित् ।
विप्रसम्पादनं कार्यमुत्पन्ने प्राणसंशये ॥११
सम्पादयन्ति यद्विप्राः स्नानतीर्थं फल्च तत् ।
सम्यक् कर्त्तुरपापं स्याद्वृती च फल्माप्नुयात् ॥१२
इत्यापस्तम्बीये धर्मशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ।

॥ अथ चतुर्थोऽध्यायः॥

अथ चाण्डालकूपजलपाना दौ-पाना दिषूद्वया दिसंस्पर्शे च प्रायश्चित्तं चाण्डालकूपभाण्डेषु योऽज्ञानात् पिवते जलम् । प्रायश्चित्तं कथं तस्य वर्णे वर्णे विधीयते ॥१ चरेत् सान्तपनं विप्रः प्राजापत्यन्तु भूमिपः । तद्द्रं न्तु चरेद्वेश्यः पादं शूद्रस्य दापयेत् ॥३

भुत्तवोच्छिष्टस्वनाचान्तश्चाण्डालैः श्वपचेन वा। प्रमादात् स्पर्शनं गच्छेत्तत्र कुर्याद्विशोधनम् ॥४ गायत्र्यष्टसहस्रन्तु द्रुपदां वा शतं जपेत्। जपं त्रिरात्रमनश्नन् पञ्चगव्येन शुध्यति ॥५ चाण्डालेन यदा स्पृष्टो विण्मूत्रे च कृते द्विजः। प्रायश्चित्तं त्रिरात्रं स्याद्भुत्तवोच्छिष्टः षडाचरेत् ॥६ पानमेथुनसम्पर्के तथा मूत्रपुरीपयोः। सम्पर्कं यदि गच्छेत् उदक्या चान्त्यजैस्तथा ॥७ एतरेव यदा स्पृष्टः प्रायश्चित्तं कथं भवेत्। भोजने च त्रिरात्रं स्यात् पाने तु त्र्यहमेव च ॥८ मैथुने पादकुच्छ्रं स्यात्तथा मूत्रपुरीषयोः। दिनमेकं तथा मूत्रे पुरीषे तु दिनत्रयम ॥६ एकाहं तत्र निर्दिष्टं दन्तधावनभक्षणे ॥१० वृक्षारूढे तु चाण्डाले द्विजस्तत्रेव तिष्ठति । फलानि सक्षयेत्तस्य कथं शुद्धि विनिर्दिशेत्।।११ व्राह्मणान् समनुज्ञाप्य सवासाः स्नानमाचरेत्। एकरात्रोषितो भूत्वा पञ्चगव्येन शुध्यति ॥१२ येन केनचिदुच्छिष्टो अमेध्यं स्पृशति द्विजः। अहोरात्रोषितो भूत्वा पञ्चगव्येन शुध्यति ॥१३ इत्यापस्तम्बीये धर्मशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः।

ऽध्यायः] वैश्यान्त्यजश्वकाकोच्छिष्टभोजनेप्रायश्चित्तवर्णनम्। १३६५

॥ अथ पञ्चमोऽध्यायः ॥

अथ वैश्यान्त्यज्ञश्वकाकोच्छिष्टभोजनेष्रायश्चित्तवर्णनम्।

चाण्डालेन यदा सृष्टो द्विजवर्णः कदाचन। अनभ्युक्य पिवेत्तीयं प्रायश्चित्तं कथं भनेत् ॥१ ब्राह्मणस्तु त्रिरात्रेण पश्चगःयेन शुध्यति । क्ष्तियस्तु द्विरात्रेण पश्चगब्येन शुध्यति ॥२ चतुर्थस्य तु वर्णस्य प्रायधित्तं न वै भवेत्। व्रतं नास्ति तपो नास्ति होमो नैव च विद्यते ॥३ पञ्चगव्यं न दातव्यं तस्य मन्त्रविवर्जनात्। ख्यापयित्वा द्विजानान्तु शृद्रो दानेन शुध्यति ॥४ ब्राह्मणस्य यदोचिद्रष्टमश्नात्यज्ञानतो द्विजः। अहोरात्रन्तु गायज्या जपं कृत्वा बिशुध्यति ॥५ उच्छिष्टं वैश्यजातीनां भुङ्क्ते ज्ञानाद् द्विजो यदि । शङ्खपुष्पीपयः पीत्वा त्रिरात्रेणेव शुध्यति ॥६ ब्राह्मण्या सह योऽश्तीयादुचित्रष्टं वा कदाचन। न तत्र दोपं मन्यन्ते नित्यमेव मनीपिणः ॥७ उच्चिष्टमितरस्त्रीणामश्नीयात् पिवसेऽपिवा । प्राजापत्येन शुद्धिः स्याद्रगवानङ्गिरा त्रबीत्।।८ अन्त्यानां भुक्तरोषन्तु भक्षयित्वा द्विजातयः। चान्द्रायणं तद्द्धिं हस्यक्षत्त्रविशां विधिः ॥६

विण्मूत्रभक्षणे विप्रस्तिः कृच्छूं समाचरेत्।
श्वकाकोच्छिप्टभोगे च प्राजापत्यविधिः स्मृतः ॥१०
डिच्छिष्टः स्र्रशते विप्रो यदि कश्चिद्कामतः।
श्चनः कुक्कुटश्द्रांश्च मद्यभाण्डं तथैव च ॥११
पिक्षणाधिष्टितं यच यदमेध्यं कदाचन।
अहोरात्रोषितो भूत्वा पञ्चगव्येन शुध्यति ॥१२
वैश्येन च यदा स्रष्ट डिच्छिप्टेन कदाचन।
स्नानं जपञ्च त्रैकाल्यं दिनस्यान्ते विशुध्यति ॥१३
विप्रोविप्रेण संस्पृष्ट उच्छिप्टेन कदाचन।
स्नात्वाचम्य विशुद्धः स्यादापरतम्बोऽन्नवीन्मुनिः ॥१४
इत्यापस्तम्बीये धर्मशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः।

॥ वष्टोऽध्यायः ॥

अथ नीलीवस्वधारणे नीलीअक्षणे च प्रायश्चित्तम्।
अत उद्ध्वं प्रवक्ष्यामि नीलीवस्वस्य यो विधिः।
स्त्रीणां क्रोडाथसम्भोगे रायनीये न दुष्यति।।१
पालने विक्रये चैव तद्यृत्तेरूपजीवने।
पतितस्तु भवेद्विप्र स्त्रिभिः कृच्क्रे विशुध्यति।।२
स्त्रानं दानं तपोहोमः स्वाध्यायः पितृतपणम्।
पच्चश्रक्षा वृथा तस्य नीलीवस्तस्य धारणात्।।३

Sध्यायः] नीलीवस्त्रधारणे नीलीभक्षणे च प्रायश्चित्तम् । १३६७

नीलीरक्तं यदा वस्तं ब्राह्मणोऽङ्गेषु धारयेत्। अहोरात्रोषितो भूत्वा पब्चगव्येन शुध्यति ॥४ रोमकूपैयंदा गच्छेद्रसो नील्यास्तु कर्हिचित्। पतितस्तु भवेद्विप्रस्त्रिभिः कृच्क्रु विशुःयति ॥५ नीलीदारु यदा भिन्दाद् ब्राह्मणस्य शरीरकम्। शोणितं दृश्यते तत्र द्विजश्चान्द्रायणं चरेत् ॥६ नीलीमध्ये यदा गच्छेत् प्रमादाद् ब्राह्मणः कचित्। अहोरात्रोषितो भूत्वा पश्चगव्येन शुव्यति ॥७ नीलीरक्तेन बस्नेण यदत्रमुपनीयते। अभोज्यं तद्द्विजातीनां भुका चन्द्रायणं चरेत्।।८ भक्षयेद् यस्य नीलीन्तु प्रमादाद् ब्राह्मणः कचित्। चान्द्रायणेन शुद्धिः स्याद्रापस्तम्बोऽत्रवीन्मुनिः ॥६ यावत्यां वापिता नीळी तावती चाशुचिमही। प्रमाणं द्वादशाव्दानि अत ऊद्ध्यं ग्रुचिर्भवेत्।।१०

इत्यापस्तम्बीये धम्मशास्त्रे पष्टोऽध्यायः।

।। अथ सप्तमोऽध्यायः ॥
अन्त्यजादिस्पर्शेरजस्वलायाः, विवाहादिषु कन्याया
रजोदर्शने प्रायश्चित्तम् ।
स्नानं रजस्वलायास्तु चतुर्थेऽहिन शस्यते !
वृत्ते रजिस गम्या स्त्री नानिवृत्ते कथ्भ्वन ॥१

रोगेण यद्रजः स्त्रीगामत्यर्थं हि प्रवर्तते । अशुद्धा स्तु न तेनेह तासां वैकारिकं हि तत्।।२ साध्वाचारा न सा तावद्रजो यावत् प्रवर्तते। वृत्ते रजिस साध्वी स्याद् गृहकर्मणि चैन्द्रिये ॥३ प्रथमेऽहिन चाण्डाली द्वितीये इह्मधातिनी। तृतीये रजकी प्रोक्ता चतुर्थेह्नि झुःयति ॥४ अन्त्यजाति भ्रपाकेन संस्र्ष्टा वे रजस्त्रला । अहानि तान्यतिकम्य प्रायश्चित्तं प्रकल्पयेत् ॥५ त्रिरात्रमुपवासः स्यात् पञ्चगव्यं विशोधनम्। निशां प्राप्य तु तां योनि प्रजाकार व कारयेत्।।६ रजस्वतां त्यजेत् स्पृष्टां द्युना च श्वपचेन च ! त्रिरात्रीपोपितो भूत्वा पञ्चगठयेन हुःयति ॥७ प्रथमेऽहनि पड्रात्रं द्वितीये तु ज्यहन्तथा । तृतीये चोपवासस्तु चतुर्थे वहिदर्शनात्।।८ विवाहे वितते यज्ञे संस्कारे च वृते तथा। रजस्वला भवेत् कन्या संस्कारस्तु कथं भवेत् ॥६ स्नापियत्या तदा कत्यामत्यैर्वह्नौरलङ्कृताम्। पुनः प्रत्याहुति हुत्वाशेषं कम्म समाचरेत् ॥१० रजस्वला तु संस्पृष्टा प्रवकुककुटवायसैः। सां त्रिरात्रोपवासेन पञ्चगव्येन शुःयति ॥११ उच्जिप्टेन तु संस्पृष्टा कदाचित् स्त्रो रजस्वला। कृच्छ्रेण शुद्धते विप्रस्तथा दानेन शुध्यति ॥१२

<u>ऽध्यायः] अत्स्यजादिस्पर्शेरजस्व०विवाहेकन्याया रजोद०प्रा० १३६६</u>

एकशाखासमारूढ़ा चाण्डाला वा रजस्वला। ब्राह्मणेन समं तत्र सवासाः स्नानमाचरेत्।।१३ रजस्त्रलायाः संस्पर्श कथिचजायते द्युना । रजोदिनात्तु यच्छेषरतरुपोष्य विशुध्यति ॥१४ अशक्ता चोपवासे तु स्नानं पश्चात् समाचरेत्। तत्राप्यशक्ता चैकेन पञ्चगर्यं पिवेत्ततः॥१४ उच्छिष्टस्तु यदा विप्रः सृशेन्मद्यं रजस्वलाम्। मद्यं स्पृष्ट्या चरेनकुच्छ्रं तदर्द्धन्तु रजस्वलाम् ॥१६ उद्क्यां सूतिकां विप्र उच्छिष्टः स्पृशते यदि । कुच्छु।द्धं न्तु चरेद्विपः पायश्चित्तं विशोधनम् ॥१७ चाण्डालै: श्वपचैर्वापि आत्रेयी सृशते यदि । शेषाहात् फालकृष्टेन पञ्चगःये त शुध्यति ॥१८ उदम्या ब्राह्मणी शूद्रामुद्रक्यां स्पृशते यदि । अहोरात्रोषिता भूत्वा पश्चगव्येन शुव्यति ॥१६ एवञ्च क्षत्रियां वैश्यां ब्राह्मणी चेद्रजस्वलाम्। सचेलप्रवनं कृत्वा दिनस्यान्ते घृतं पिबेन् ॥२० सवर्णेषु तु नारीणां सद्यः स्नानं विधीयते। एवमेव विशुद्धिः स्याद्गपस्तम्बोऽत्रवीन्मुनिः ।।२१

इत्यापस्तम्बीये धर्मशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः।

॥ अथ अदृमोऽध्यायः॥

सुरादिदूषितकांस्यशुद्धिविधानवर्णनम्।

भरमना शुध्यते कांस्यं सुरया यन्न लिप्यते। सुराविण्मूत्रसंस्पृष्टं शुध्यते तापलेखनैः ॥११ गवात्रातानि कांस्यानि शुद्धोच्छिष्टानि यानि तु। दशिभः क्षारैः शुज्यन्ति श्वकाकोपहतानि च।।२ शौचं सुवर्णनारीणां वायुसूर्य्येन्दुरश्मिभः ॥३ रेतरपृष्टं शवस्यृष्टमाविकन्तु पृदुष्यति । अद्भिर्मृदा च तन्मात्रं प्रक्षाल्य च विशुध्यति ॥ शुद्धमन्नमविप्रस्य पश्चरात्रेण जीर्ध्यति । अनं व्यञ्जनसंयुक्तमद्भं मासेन जीव्यंति ॥६ पयस्तु द्धि मासेन षण्मासेन घृतं तथा। सम्वत्सरेण तैलन्तु कोष्ठे जीर्य्यति वा नवा भुञ्जते ये तु शूद्रान्नं मासमेकं निरन्तरम्। इह जन्मनि शूद्रत्वं जायन्ते ते मृताः शुनि ॥७ शूद्रान्नं शूद्रसम्पर्कः शूद्रेणैव सहासनम्। शूद्रात्ज्ञानागमः कश्चिज्जवलन्तमपि पातयेत्॥८ आहित्याप्रिस्तु योविप्रः शूद्रान्नान्न निवर्तते । तथा तस्य पूणश्यन्ति आत्मा ब्रह्म त्रयोऽग्नयः ॥६ शूद्रान्नेन तु भुक्तेन मैथुनं योऽधिगच्छति। यस्यान्नं तस्य ते पुत्रा ह्यन्याच्छुक्रस्य सम्भवः ॥१० शूद्रान्नेनोदर्थेन यः कश्चिन्ध्रियते द्विजः। सं भदेच्छूकरो ब्राम्यो मृतः श्वा वाथ जायते ॥११ ब्राह्मणस्य सदा भुङ्क्ते क्षत्रियस्य तु पर्वणि । वैश्यस्य यज्ञदीक्षायां शूदस्य न कदाचन ॥१२ अमृतं ब्राह्मणस्यान्नं क्षत्रियस्य पयः समृतम्। वैश्यस्याप्यन्नमेवान्नं शूद्रस्य रुधिरं समृतम् ॥१३ वैश्वदेवेन होमेन देवताभ्यईनैर्जपैः। अमृतं तेन विप्रान्नमृग्यजुःसामसंस्कृतम्।।१४ व्यवहारानुरूपेण धर्मेण च्डलवर्जितम्। क्षत्रियस्य पयस्तेन भूतानां यञ्च पालनम् ॥१५ स्वकर्माणा च वृषभैरनुसृत्याद्यशक्तितः। खलयज्ञातिथिःवेन वैश्यान्नन्तेन संस्कृतम्।।१६ अज्ञानतिमिरान्धस्य मद्यपानरतस्य च । रुधिरं तेन शूद्रान्नं विधिमन्त्रविवर्जितम्।।१७ आममांसं मधु घृतं धानाः क्षीरं तथैव च। गुडं तक्रं समं प्राह्मं निवृत्तेनापि शूद्रतः ॥१८ शाकं मांसं मृणालानि तुम्बुरुः शक्तवस्तिलाः। रसाः फलानि पिण्याकं प्रतिप्राह्या हि सर्वतः ॥१६ आपत्काले तु विप्रेण भुक्तं शूद्रगृहे यदि। मनस्तापेन शुध्येत द्रपदां वा शतं जपेत् । २७ द्रव्यपाणिश्च शूद्रेण स्पृष्ट्रोच्छिप्टेन कर्हिचित्। तद्द्विजेन न भोक्तव्यमापस्तम्बोऽनवीन्मुनिः ॥२१ इत्यापस्तम्बीये धर्म्भशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः।

॥ अथ नवमोऽध्यायः ॥अपेयपानेऽभक्ष्यभक्षणे च प्रायिक्षत्तवर्णनम् ।

भुञ्जानस्य तु विप्रस्य कदाचित् स्रवते गुदम्। उच्जिष्टस्याशुचेरतस्य प्रायश्चित्तं कथं भनेत्।।१ पूर्व शौचन्तु निर्वर्य ततः पश्चादुपरपृशेत्। अहोरात्रोषितोभृत्वा पञ्चगव्येन शुध्यति।।२ अशित्वा सर्वमेवान्नमकृत्वा शौचमात्मनः। मोहाद्भुत्तवा त्रिरात्रन्तु यवान् पीत्वा विशुध्यति ॥३ प्रसृतं यवशस्येन परुमेशन्तु सर्विषा। पलानि पश्च गोमूत्रं नातिरिक्तवदाशयेत्।।४ अरेह्यानामपेयानामभक्ष्याणाञ्च भृक्षणे। रेतोमूद्रपुरीषाणां प्रायश्चित्तं कथं भवेत्।।६ पद्मोदुम्बर्दि ल्वाश्च कुशाश्वत्थपलाशकाः। एतेषासुद्रकं पीत्वा षड्रात्रेण विशुध्यति ॥६ ये प्रत्यवसिता विप्राः प्रत्रज्याग्निजलादिषु । अनाशकनिवृत्ताश्च गृहस्थत्वं चिकीर्पतः ॥७ चरेयुस्तीणि कुच्छ्राणि त्रीणि चान्द्रायणानि वा। जातकर्मादिभिः सर्वैः पुनः संस्कारभागिनः। तेषां सान्तपनं कुच्छ्ं चान्द्रायणमथापिवा ॥८ यहेष्टितं कालवलाकचिल्लैरमेध्यलित्र भवेन्छरीरम्। श्रोत्रे मुखे च प्रविशेच सम्यक् स्नानेन हेपोपहतस्य शुद्धिः ॥६ उद्ध्वं नाभेः करौ मुत्तवा यद् मुपहन्यते। उद्ध्वं स्नानमधः शौचं मार्जनेनेव शुध्यति ॥१० उपानहावमे यं वा यस्य संख्राते मुखम्। मृत्तिकाशोधनं स्नानं पञ्चगव्यं विशोधनम्।।११ दशाहाच्छुध्यते विप्रो जन्महानौ स्ययोनिषु। षड्भिस्त्रिभिरथैकेन क्षत्रविट्शूद्रयोनिषु ॥१२ उपनीतं यदा त्वन्नं भोक्ता च समुपस्थितः। अपीतवत् समुःसृष्टं न द्द्यान्नेव होमयेत्।।१३ अन्ने भोजनसम्पन्ने मक्षिकाकेशदूषिते । अनन्तरं रष्ट्रोदापस्तवान्नं भरमना स्पृशेत्।।१४ शुष्कमांसमयं चात्रं शूद्रात्रं वाप्यकामतः। भुत्तवा कृच्छ्रं चरेद्विप्रो ज्ञानात् कुच्छ्रत्रयं चरेत् ॥१४ अभुक्ते मुञ्चते यश्च भुञ्जन् यश्चापि मुच्यते। भोक्ता च भोजकश्चैव पड्क्या गच्छति दुष्कृतम्।।१६ यच भुङ्क्ते तु भुक्तं वा दुष्टं वाऽपि विशेषतः। अहोरात्रोषितो भूत्वा पञ्चगव्येन शुध्यति ॥१७ उदके चोदकस्थरतु स्थलस्थ स्थले शुचिः। पादां स्थाप्योभयत्रैव आचम्योभयतः शुचिः ॥१८ उत्तीर्याचम्य उद्काद्वतीर्यं उपस्पृशेत्। एवन्तु श्रेयसा युक्तो वरुणेनाभिपूज्यते ॥१६ अग्न्यगारे गवां गोष्ठे ब्राह्मणानाश्व सन्निधौ। खाध्याये भोजने चैव पादुकानां विसर्जनम् ॥२०

जम्मप्रभृतिसंस्कारे रमशानान्ते च भोजनम्। असपिण्डेर्न कर्तव्यं चूडाकार्ये विशेषतः ॥२१ याजकान्नं नवश्राद्धं सम्रहे चैव भोजनम्। स्रोणां प्रथमगर्भे च भुत्तवा चान्द्रायणं चरेत्।।२२ ब्रह्मौदने (ऽवसाने) च श्राद्धे च सोमन्तोन्नयने तथा। अन्नश्राद्धे मृतश्राद्धे भुत्तवा चान्द्रायणं चरेत्।।२३ अप्रजा या तु नारी स्यान्नाश्नीयादेव तद्गृहे। अथ मुझीत मोहाद् यः पूयसं नरकं व्रजेत्।।२४ अल्गेनापि हि शुल्केन पिता कन्यां ददाति यः। रौरवे बहुवर्षाणि पुरीषं मूत्रमश्तुते ॥२५ ब्रोधनानि च ये मोहादुपजीवन्ति बान्धवाः। स्वर्णं यानानि वस्त्राणि ते पापा यान्त्यधोगतिम्।।२६ राजानं तेजआद्त्ते शूद्रान्नं ब्रह्मवर्चसम्। असंख्रतन्तु योभुङ्के स भुङ्के पृथिवीमलम्।।२७ मृतके सूतके चैव गृहीते शशिभास्करे। हिन्तिच्छायान्तु यो भुङ्क्ते पापः स पुरुषो भवेत्।।२८ पुनर्भूः पुनरेता च रेतोधा कामचारिणो। आसां प्रथमगर्भेषु भुत्तवा चान्द्रायणं चरेत् ॥२६ मातृदनश्च पितृदनश्च ब्रह्मदनो गुरुतलपगः। विशेषाद्भक्तमेतेषां भुतवा चान्द्रायणं चरेत् ॥३० रजकव्याधशैलूषवेणुचमीपजीविनाम्। भुत्तवैषां ब्राह्मणश्चान्नं शुद्धिं चान्द्रायणेन तु ॥३१

Sध्यायः] शुल्केनकन्यादानेदोषाभिधानंसशुद्धिवर्णनम् । १४०५

उच्छ्ष्टोच्छिष्टसंस्पृष्टः कदाचिदुपजायते । सवर्णेन तदोत्थाय उपरपृश्य ग्रुचिभेवेत्। उच्छिष्टोच्छिष्टसंस्पृष्टः ज्ञुना शूद्रेण वा द्विजः। उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुद्वचित ॥३२ बाह्यणस्य सदाकालं शूद्रे प्रेषणकारिणः। भूमावन्नं प्रदातव्यं यथैव स्वा तथैव सः ॥३३ अनूद्केष्वरप्येषु चौरव्याद्याकुले पथि। हत्वा मूत्रं पुरीषञ्चा द्रव्यहस्तः कथं शुचिः ॥३४ भूमावन प्रतिष्ठाप्य कृत्वा शौचं यथार्थतः। उत्सङ्गे गृह्य पकान्नमुपस्पृश्य ततः शुचिः ॥३४ मूत्रोचारं द्विजः कृत्वा अकृत्वा शौचमात्मनः। मोहाद्भुत्तवा त्रिरात्रन्तु गव्यं पीत्वा विशुध्यति ॥३७ उद्क्यां यदि गच्छेत्तु ब्राह्मणो मदमोहितः। चान्द्रायणेन शुध्येतब्राह्मणानांच भोजनैः ॥३७ भुक्तोच्छिष्टस्त्वनाचान्तश्चाण्डालैः श्वपचेन वा । प्रमादाद् यदि संस्षृष्टो ब्राह्मणो ज्ञानदुर्बलः ॥३८ स्नात्वा त्रिषवणं नित्यं हह्यचारी धराशयः। स त्रिरात्रोषितो भूत्वा पञ्चग येन शुध्यति ॥३६ चाण्डालेन तु संसृष्टो यश्चापः पिबति द्विजः। अहोरात्रोषितो भूत्वा त्रिषग्णेन शुःयति ॥४० सायं प्रातस्त्वहोरात्रं पादं कुच्छ्रस्य तं विदुः। सायं प्रातस्तथैवैकं दिनद्वयमयाचितम् ॥४१ दिनद्वयञ्च नाश्नीयात् कुच्जूाद्वं तद्विधीयते। प्रायश्चित्तं लघु ह्येतत्पापेषु तु यथाऽहतः ॥४२

कृष्णाजिनतिल्याही हरत्यश्वानाञ्च विक्रयी। प्रेतनिर्यातकश्चेव न भूयः पुरुषोभवेत्।।४३ इत्यापरतम्बीये धर्मशास्त्रे नवमोऽध्यायः।

॥ अथ दशमोऽध्यायः ॥ अथ मोक्षाधिकारिणामभिधानवर्णनम्।

आचान्तोऽप्यशुचिस्तावद् यावन्नोद्ध्रियते जलम्।
उद्धृतेऽप्यशुचिस्तावद् यावद्भूमिर्न लिप्यते ॥१
भूमाविष च लिप्तायां तावत् स्याद्शुचिः पुमान् ।
आसनादुत्थितस्तमाद् यावन्नाऽऽक्रमते महीम् ॥२
न यमं यमित्याहुरात्मा वे यम उच्यते ।
आत्मा संयमितो येन तं यमः किं करिष्यति ॥३
न तथाऽसिस्तथा तीक्ष्णः सपों वा दुर्रिषष्ठितः ।
यथा क्रोधो हि जन्तूनां शरीरस्थो विनाशकः ॥४
क्षमा गुणो हि जन्तूनामिहाम्त्रसुखत्रदः ।
अरिवानित्यसंकुद्धो यथाऽऽत्मादुरिषिष्टितः ।
एकः क्षमावतां दोषो दितीयो नोपपद्यते ।
यदेनं क्षमया युक्तमशक्तं मन्यते जनः ॥५
न शक्तिशास्त्राभिरतस्य सोक्षो नचैव रम्यावसथित्रयस्य ।

न शक्तिशास्त्राभिरतस्य मोक्षो नचेव रम्यावसथप्रियस्य। न भोजनाच्छादनतत्परस्य एकान्तशीलस्य दृढव्रतस्य।।६ ऽध्यायः]विवाहोत्सवादिष्वन्तरामृतसूनकेसद्यःशुद्धिविधानवर्ण० १४०७

मोक्षो भवेत् प्रीतिनिवर्त्तवस्य अध्यात्मयोगैकरतस्य सम्यक्। मोक्षो भवेत्रित्यमहिंसकस्य स्वाध्याययोगागतमानसस्य ॥७

क्रोधयुक्तो यद् यजते यज्जु शेति यद्र्वति । सर्वं हरति दत्तस्य आमकुम्भइवोदकम् ॥८ अपमानात्तपोवृद्धिः सम्मानात्तपसः क्ष्यः। अर्चितः पूजतो विप्रो दुग्धा गौरिव सीदति ॥६ आप्यायते यथा घेनुस्त्णेरमृतसम्भवैः। एवं जपश्च होमेश्च पुनराप्यायते द्विजः ॥१० मातृवत् परदारांश्च पर्द्रव्याणि लोष्ट्रवत् । आत्मवत् सबभूतानि यः पश्यति स पश्यति ॥११ रजकव्याधशैलूषवेणुचमीपजीविनाम । यो भुङ्क्ते भूक्तमेतेषां प्राजापत्वं विशोधनम् ॥१२ अगम्यागमनं कृत्त्रा अभक्ष्यस्य च भक्षणम्। शुद्धि चान्द्रायणं ऋत्वा अथवीक्तं तथेव च ॥१३ अग्निहोत्रं त्यजेद् यस्तु स नरोवीरहा भवेत्। तस्य शुद्धिर्विधातव्या नान्या चान्द्रायणाहते ॥१४ विवाहोत्सवयज्ञेषु अन्तरा मृतसूतके । सद्यः शुद्धि विजानीयात् पूर्वं सङ्गलिपतं चरेत् ॥१५ देवद्रोण्यां विवाहेषु यज्ञेषु प्रतरेषु च। कल्पितं सिद्धमन्नाद्यं नाशौचं मृतसूतके ॥१६ इत्यापस्तन्त्रीये धर्मशास्त्रे दशमोऽध्यायः। समाप्ताचेयमापरतम्बस्मृतिः ॐ तत्सत्।

॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः॥

॥ अय ॥

॥ लघुराङ्खस्मृतिः॥

—#**#:**#:##—

श्रीगणेशाय नमः।

॥ प्रथमोऽध्यायः॥

अथे शपूर्तकर्मणोः फलाभिधानवर्णनम्।

इष्टापूर्ती तु कर्तन्यी ब्राह्मणेन विशेषतः।
इष्टेन स्मते स्वर्ग मोक्षं पूर्तेन विन्दति॥१
एकाहमपि कौन्तेय भूमिष्टमुदकं कुरु।
कुलानि तारयेत्सप्त यत्र गौर्वित्तषा भवेन्॥२
भूमिदानेन यो लोका गोदानेन च कीर्तिताः।
तांहकोकान्प्राप्नुयुर्मत्याः पादपानां प्ररोहणे॥३
वापीकूपतहागानि देवतायतनानि च।
पतितान्युद्धरेद्यस्तु स पूर्वफलमश्नुते॥४

ऽध्यायः] गङ्गयामस्थिप्रक्षेपेस्वर्गप्राप्तिः, वृषोत्सर्गादिश्राद्धवर्णनम् १४०६

अग्निहोत्रं तपः सत्यं वेदानां चैव धारणम्। आतिथ्यं वैश्वदेवं च इष्टमित्यभिधीयते ॥५ इष्टापूतो (तें) द्विजातीनां सामान्यो (न्ये) धर्मसाधने । अधिकारी भवेक्षुद्रः पूर्त धर्मे न वैदिके ॥६ यावदस्थीनि गङ्गायां तिष्ठन्ति पुरुषस्य च। तावद्वषंसहस्राणिश्वर्गलोके महीयते ॥७ देवतानां पितृणां च जले द्याजलाञ्जलिम्। असंस्कृतमृतानां च ध्येले द्याज्ञलाञ्जलिम्।।८ एकाद्शाहे प्रेतस्य यस्य चोत्सृज (ज्य) ते वृषः। मुच्यते प्रेतलोकाच स्वर्गलोकं स गच्छति ॥६ पष्टन्या बहवः पुत्रा यसेकोऽपि गयां व्रजेत्। यजेत चाश्वमेधेन नीलं वा वृषमुत्सृजेत्।।१० लोहितो यस्तु वर्णन मुखे पुच्छे तु पाण्डुरः। श्वेतः खुरविषाणाभ्यां स वै नीलदृषः स्मृतः ॥११ नवश्राद्धं त्रिपक्षे च षण्मासे मासिकेऽब्दिके। पतन्ति पुरुषास्तस्य यो अङ्क्तेऽनापदि द्विजः ॥१२ यस्यैतानि न कुर्वीत एको इष्टानि षोडश। प्रेततो न (त्वान्न) विमुच्येत कृतैः श्राद्धशतैरपि ॥१३ एको दिष्टं परित्य इय पार्वणं कु हते द्विजः। अमूलं तद्विजानीयात्स मातृपितृघातकः ॥१४ सपिण्डीकरणादूध्र्वं प्रतिसंवत्सरं सुतः। अतिमासं यथा तस्य अतिसंवत्सरं तथा ॥१४

सपिण्डीकरणादृध्वं यत्र यत्रोपदीयते । तत्र तत्र त्रयं कुर्याद्वर्जयित्वा मृतेऽह्नि ॥१६ अमावास्यां क्षयो यस्य प्रेतपञ्चे तथा यदि । सपिण्डीकरणादृध्वं तस्योक्तः पार्वणो विधिः ॥१७ त्रिद्र डप्रहणादेव प्रेतत्दं नैय जायते। प्राप्ते चैका दशदिने पार्वणं तु विधीयते ॥१८ मातुः सपिष्डीकरणं कथं कार्यं भवेत्सुतैः। पितामहीसह (ह्यादिभि)स्तस्याः सिष्डोकरणं समृतम्।।१६ कर्तव्यं प्रत्युप(तु प्रमी) तायाः सिविष्डीकरणं ख्रियाः। मृताऽ(भर्जाऽ)पि हि न वर्तायं चरमन्त्राहृतित्रतैः ॥२० मातुः प्रथमतः पिण्डं निर्विपेत्रुत्रिकासुनः। द्वितीयं तु पितुरतस्यारहतीयं तु पितुः पितुः ॥२१ अथ चेन्मन्त्रविद्युक्तः शारीरः पङ्क्तिदृष्णैः। अदोषं तं यमः प्राह पङ्क्तिपावन एव सः ॥२२ यानि यस्य पवित्राणि कुक्षौ तिष्टन्ति भारत। तानि तस्यैव पूज्यानि न शरीराणि देहिनाम् ॥२३ अग्नीकरणशेरं तु पितृपात्रे प्रदादयेत्। प्रतिपद्य पितणां च न द्द्याद्वेश्वदेविके ॥२४ मृण्मयेषु च पात्रेषु श्रदं भोजयते द्विजः। अन्नदाताऽपहर्ता च भोक्ता च नएकं व्रजेत ॥२५ हरतद्तास्तु ये स्तेहा खवणव्यञ्जनाद्यः। दातारं नोपतिष्ठन्ति भोक्ता भुङ्क्ते च किविवषम् ॥२६

खियाः सपिण्डीकरणमनेकश्राद्धविवेकं ब्रह्मघातकलक्षणःव । १४११

आयसेन तु पात्रेण यदन्नमुपदीयते। भोक्ता विष्ठासमं भुङ्क्ते दाता च नरकं व्रजेत् ॥२७ श्राद्धं कृत्वेतरश्राद्धे यस्तु भुङ्क्तेऽतिविद्दलः। पतन्ति पितरस्तस्य तं मासं रेतपायिनः ॥२८ पुनभीजनमध्यानं भाराध्ययनमेथुनम्। दानं प्रतिप्रहो होमः श्राद्धं भुत्तवाऽष्ट वर्जयेत्।।२६ व्याममात्रं समुन्रुज्य पिण्डांस्तत्र प्रदापयेत्। यत्र संस्पर्शनं बाऽपि प्राप्तुवन्ति न विन्दवः॥३० अपुत्रा ये मृताः केचित्रुक्षपा वा खियोऽपि वा। तेभ्यश्चापि प्रकर्तव्यमेकोद्दिष्टं न पार्वणम् ॥३१ मातुः श्राद्धं तु पूर्वस्मात्पितृणां तदनन्तरम्। ततो मातामहानां च वृद्धी श्राद्धत्रयं रमृतम् ॥३२ दशकृत्वः पिवेचापः साविज्याः श्राद्धभुद्धिजः। ततः सन्ध्यामुपासीत शुध्यते तद्नन्तरम् ॥३३ चान्द्रायणं नवश्राद्धं पराको मासिकेन तु। पक्षत्रयेऽपि कुच्छ्रः स्यादेकाहं पुनराविद्के। अत उर्ध्व न दोपः स्याच्छङ्खस्य वचनं त(य)था ॥३४ सर्वेविप्रहतानां च शृङ्गिदंृष्टिसरीसृपैः। आत्मनस्यागिनां चैव श्राद्धमेपां न कार्येत्।।३६ इद्कं पिण्डदानं च विषेभयो यच दीयते। नोपतिष्ठति तत्सर्वमन्तरिक्षे प्रलीयते ॥३६ 35

नारायणविलः कार्यो लोकप्रहभयान्नरैः। तथा याय भवेच्छे यो नान्यथा वाऽववीनमनुः ॥३७ गोभृहिरण्यहरणे क्षेत्रापणगृहस्य च। यसुद्दिश्य त्यजेत्प्राणांस्तमाहुर्वह्यघातकम् ॥३८ उद्यताः सह धावन्त एककार्येष्ववस्थिताः। यद्येकोऽपि हुनेत्तत्र सर्वे ते ब्रह्मघातकाः ॥३६ बहूनामेककार्येपु यदोको मर्मघातकः। सर्वे ते गुद्धिमि(मृ)च्छन्ति स एको इहाचातकः ॥४० महापातकरांस्परी स्नानमेव विधीयते। संख्रस्तु यदा भुङ्क्ते बृद्क्षं सांतपनं चरेत्।।४१ चाप्डालभाण्डसंस्पृष्टं वापोकूपगतं जलम् । गोमृत्रयावकाहारिखरात्रेण विशुध्यति । ४२ चाप्डःलघटमध्यस्थं यस्तोयं विवति द्विजः। तत्क्षणात्क्षय(क्षिप)ते यस्तु प्राजापत्यं समाचरेत्।।४३ यदि न क्षिपते तोयं शरीरे यस्य जीर्यति। प्राजापत्यं न दातव्यं कृच्छ्र्(चङ्क्) सांतपनं रमृतम् ॥४४ चरेत्सांतपनं विप्रः प्राजापत्यं तु क्षत्त्रियः। तद्र्यं तु चरेद्वेश्यः पादं शूद्रस्य दःपयेत् ॥४५ यस्य चाः डाहि(ही) संयोगो भदेरकश्चि(त्कचि)द्कामतः। तस्य सांतपनं कुच्छूं समृतं शुद्धचर्थमात्मनः ॥४६ चाण्डालोदकसंस्पृष्टः स्नात्वा विप्रो विशुध्यति । तेनैवोच्छिप्टसंस्पृष्टः प्राजापत्यं समाचरेत् ॥४७

आजानु स्नानमात्रं स्यादानाभेश्च विशोधनम्। अत ऊर्वं त्रिराज्ञं स्याच्छरीरस्पर्शने मलम् ॥४८ रजस्वला तु संस्पृता स्वानचाण्डालवायसैः। तावत्तिष्ठेन्निराहारः(रा) स्नात्वा कालेन शुध्यति ॥४६ अश्यिभङ्गं गवां फ़ुत्वा चाण्डालस्य च च्छेदनम्। पातनं चैव शृङ्गस्य मासार्धं व्याप(याव)कं चरेत् ॥५० यवसस्राववोटच्यो यावद्वोहेत तद्गृहे (?)। तद्वणां च सुगां दत्वा ततः पापात्त्रमुच्यते ॥५१ हले वा शकटे चैव दुर्बलं यो नियोजयेत्। प्रत्यवाये समुःपन्ने ततः प्राप्नोति गोवधम् ॥५२ अतिवाह्यातिदोहाभ्यां नासिकाभेदने तथा। नदीपर्वतसंरोधे पादोनं व्रतमाचरेत् ॥ १३ एकं च बहुभिः केश्चिद्देवाद्व्याप।दितं कचित्। कुच्जूपादं तु हत्यायाश्चरेयुस्ते पृथकपृथक्।।५४ एकपादं चरेद्रोघे हो पादौ बन्धने चरेत्। योक्त्रे च पाद्दीनं स्याचरेत्सवं निपातने ॥४४ रोमाणि प्रथमे पादे द्वितीये च (चा) श्मघातनम्। वृतीयं(ये)तु शि.खा धार्या सशिखं तु निपातने ॥५६ केशानां रक्षगार्थाय द्विगुणं व्रतमाचरेत्। हिगुणत्रते समादिष्टे हिगुणे(णा)दक्षिणा भवेत् ॥५७ राजा वा राजपुत्रो वा बाह्यणो वा बहुश्रुतः । अकृत्वा वपनं तेषां प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥५८

अन्येषां नखकणीतां बाहोर्निर्मोचने तथा। सायं संगोपनार्थाय न दुष्येद्रोधवन्धयोः ॥५६ यन्त्रिते गोचिकित्साया मूढगर्भाविमोचने। यत्ने कृते विपद्येत प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥६० औषधं स्नेहमाहारं दत्तं गोत्राह्मणाय च। यदि कश्चि(काचि)द्विपत्तिः स्यात्प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥६१ स्नेहाद्वा यदि वा छोभाद्मयादज्ञानतोऽपि वा। कुर्वन्यनुप्रहं ये तु सत्पापं तेषु गच्छति ॥६२ बालस्त्रन्तर्दशाहे तु प्रेतत्वं यदि गच्छति। सद्य एव विद्युद्धिः स्यान्नाशौचं नैव सूनकम् ॥६३ आदन्तजन्मनः सद्य आचूडान्नेशिकी स्मृता। त्रिरामं तु त्रतादेशा दशरात्रमतः परम् ॥६४ अहरत्व दत्तकन्याया वालेषु च विशोधनम्। कुर्वन्नैवाशनौ यात मातुलश्रोत्रिये यथा ॥६५ ज्येष्ठो भ्राता यदा तिष्ठेदाधानं नैव कारयेत्। अनुज्ञातस्तु कुर्वीत शह्बस्य वचनं यथा ॥६६ आममांसं घृतं श्लीद्रं स्तेहाश्च फलसंभवाः। म्हेच्छभाण्डस्थिता होते निष्क्रान्ताः शुचयः स्मृताः ॥६७ दिवा कपित्थच्छायासु रात्रौ दिधशमीषु च। धात्रीफलेषु सप्तम्यामलक्षमीर्वसते सदा ॥६८ स(शू)र्पवातनखायान्तकेशवन्ध[प]टोदकम्। मार्जनीरेणुसंस्पर्शो हन्ति पुण्यं दिवाकृतम् ॥६६

मृताशीचमध्वाससो जपहोमादिक्रियाणां निन्दा । १४१५

अर्धवासास्तु यः कुर्याज्ञपहोमक्रिया द्विजः।
तत्सर्वं राक्षसं विद्याद्वहिर्जानु च यत्कृतम्।।५०
यत्र यत्र च संकीर्णं पश्यत्यात्मन्यसंशयम्।
तत्र तत्र तिरुद्धेमो गायज्ञ्यावर्तनं तथा।।७१

इति लघुशङ्खसमृतिः। ॐ तत्सत्।

॥ अथ॥

-॥ शङ्खस्मृतिः ॥-

।। श्रीगणेशाय नमः ॥

....

॥ प्रथमोऽध्यायः ॥ अथ त्राह्मगादीनां कर्मवर्णनम्।

स्वम्भुवे नमस्कृत्य सृष्टिसंहारकारिणे। चातुवर्ण्यहितार्थाय शङ्कः शास्त्रमथाकरोत्॥१ यजनं याजनं दानं तथैवाध्यापनिक्रयाम्। प्रतिप्रहृष्णाध्ययनं विप्रः कर्माणि कारयेत्॥२ दानमध्ययनञ्जेव यजनश्व यथाविधि । क्षत्त्रियस्य तु वैश्यस्य कर्मेदं पिकीर्तितम् ॥३ क्षत्त्रियस्य विशेषण प्रजानां परिपालनम् । कृपिगो(गौ)रक्ष(क्ष्य)बाणिष्यं वैश्यस्य (विशश्च) परिकीर्तितम् ॥४

शूद्रस्य द्विजशुभूषा सर्वशिष्टपानि चाप्यथ । क्षमा सत्यं दमः शौचं सर्देपामविशेषतः ॥५ ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यस्त्रयो वर्णा द्विजातयः । तेषां जन्म द्वितीयः तु विज्ञेयं मौक्षिवन्धनम् ॥६ आचार्यस्तु पिता प्रोक्तः सावित्री जननी तथा । ब्रह्मक्षत्त्रविशाब्चेव मौक्षिदन्धनजन्मनि ॥७ वृत्त्या शूद्रसमास्तावद्विज्ञेयास्ते विचक्षणैः । यावद्वेदेन जायन्ते द्विजा ज्ञेयास्ततः परम् ॥८

इति शाङ्कीये धर्मशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः।

अथ द्वितीयोऽध्यायः ॥
 ब्राह्मणःदीनां संस्कारवर्णनम् ।

गर्भस्य स्फुटताज्ञाने निपेकः परिकीर्तितः । तत(पुरा)स्तु स्पन्दमात् कार्यं पुंसवनं विचक्षणैः ॥१

षच्छेऽष्ट्रमे वा सीमन्तो जाते वे जातकर्म च। अशौचे तु व्यतिकान्ते नामकर्म विधीयते। नामधेय अ कर्तव्यं वर्णानाश्च समाक्षरम्। माङ्गल्यं त्राह्मणंस्योक्तं क्षत्त्रियस्य बलान्वितम् ॥२ वेश्यस्य धनसंयुक्तं शूद्रस्य तु जुगुप्सितन्। शर्मान्तं ब्राह्मणस्योक्तं वर्मान्तं क्षत्रियस्य तु ॥३ धनान्तं चैव वैश्यस्य दासः न्तं वात्र्यजन्मनः। चतुर्थे मासि कर्तव्यमादित्यस्य प्रदर्शनम् ॥४ षष्ठेऽस्रशासनं मासि चूहा कार्या यथाकुलम्। गर्भाष्टमेऽब्दे वर्तव्यं ब्राह्मणस्योपनायनम् ॥६ गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः। षोहशाब्दस्तु विप्रस्य द्वाविशः क्षत्त्रियस्य तु ॥६ विंशतिः सचतुष्का च वेश्यस्य परिकोर्तिता। नाभिभाषेत सावित्रोमत रुधी निवर्तयेत्।।७ विज्ञातव्यास्त्रयोऽप्येते यथाकालमहंस्कृताः। सावित्रीपतिता बात्याः सर्वधर्मवहिष्कृताः ॥८ मौजीबन्धो द्विजानान्तु क्रमान्मौजी प्रकीर्तिता। मार्गवैयाववास्तानि कर्माणि ब्रह्मचारिणाम् ॥६ पर्णपिष्पत्धविल्वानां क्रमाइण्डाः प्रकीर्तिताः।

कर्णकेशललाटैस्तु (केशदेशललाटस्य) तुल्याः प्रोक्ताः व्रमेण तु ॥१० अवकाः सत्वचः सर्वे नाग्निदःधास्तथैव च । यज्ञो(बस्नो,पवीतं कर्पासस्वीमोर्णानां यथाक्रमम् ॥११ आदिमध्यावसानेषु भवच्छव्दोपस्रक्षितम् । भैक्षस्य वरणं प्रोक्तं वर्णानामनुपूर्वशः ॥१२ इति शाङ्कीये धर्मशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ।

॥ अथ हतीयोऽध्यायः ॥

ब्रह्मचर्याचारवर्णनम् ।

स गुरुर्यः क्रिया कृत्वा वेर्मस्मे प्रयच्छति ।
स्पनीय गुरुः शिष्यं शिक्षयेच्छौचमादितः ।
आचारमप्रिकार्यं च संध्योपासनमेव च ।
स्तकाध्यापको यस्तु उपाध्यायः स उच्यते ॥१
साता पिता गुरुश्चैव पूजनीयाः सदा नृणाम् ।
क्रियास्तथाऽफलाः सर्वा यस्यैतेऽनाहतास्त्रयः ।
प्रयतः कल्यमुत्थाय स्नातो हुतहुताशनः ।
स्वीत प्रयतोभूत्वा (भत्तया) गुरूणामभिवादनम् ॥२
अनुज्ञातश्च गुरुणा ततोऽध्ययनमाचरेत ।
स्तवा ब्रह्मांजलि पश्यन गुरोर्ददनमानतः ॥३
ब्रह्मावसाने प्रारम्भे प्रणवञ्च प्रकीर्तयेत् ।
अनध्यायेष्वध्ययनं वर्जयेच प्रयत्नतः ॥४
चतुर्दशी पञ्चदशीमप्टमी राहुसूतकम् ।
स्तकापातं महीकम्पमाशीचं प्रामिवप्रवम् ॥५

इन्द्रप्रया(णं)गं सुरतं घनसंघातनिस्वनम्। वाद्यकोलाहलं युद्धमनध्यायान् विवर्जयेत् ॥६ नाधीयीताभियुक्तोऽपि (यानगोनचनौगतः) प्रयत्नात्र च वेगतः। देवायतनदरुमीकश्मशानशवसन्निधौ। भैक्षचर्यान्तथा कुर्याद् ब्राह्मणेषु यथाविधि !। ७ गुरुणा चाभ्यनुज्ञातः प्राश्नीयात् प्राङ्गृखः शुचिः। हितं त्रियं गुरोः 'फुर्यादहङ्कारविवर्जितः ॥८ उपास्य पश्चिमां सन्ध्यां पूत्रचित्वा हुताशनम्। अभिवाद्य गुर्त पश्चाद् गुरोवचनकुद्भवेत् ॥६ गुरोः पूर्वं समुत्तिष्टेच् अयीत चरमं तथा। मधुमांसाञ्जनं श्राद्धं गीतं नृत्यञ्च वर्जयेत् ॥१० हिंसापवादवादांश्च (परापवादं च) स्त्रीलीलां च विशेषतः। मेखलामजिनं दण्डं धारयेच प्रय**त्नतः** । अध शायी भवे न यं नहाचारी समाहितः ॥११ एवं कृत्य(त्रत)न्तु कुर्गीत वेदस्त्रीकरणं बुधः। गुरुवे च धनं दत्त्वा (स्नायीततद्नुज्ञया)स्नायाच तद्नन्तरम्।।१२

इति शाङ्कीये धर्मशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः।

॥ अथ चतुर्थोऽध्यायः ॥ विवाहसंस्कारवणीनम्।

विन्देत विधिवद्भार्यामसमानार्पगोत्रजाम्। मातृतः पञ्चमीञ्चापि पितृतस्त्वथ सप्तमीम् ॥१ ब्राह्मो देवस्तथेवाऽऽर्षः प्राजापत्यस्तथाऽऽसुरः। गान्धर्वी राक्षसञ्चव पैशाचश्चाहरनेऽधमः ॥२ एते धर्मार्तु चत्वारः पूर्वं वित्रे प्रकीर्तिताः। गान्धर्वो राक्षसश्चेव क्षत्त्रियस्य प्रशस्यते ॥३ अ(सं)प्रार्थितः प्रयत्नेन ब्राह्मस्तु परिकीर्तितः। यहोषु ऋ त्विजे दैव आदायार्षस्तु गोद्वयम् ॥४ प्रार्थितः संप्रदानेन प्राजापत्यः प्रकीर्तितः। आसुरेद्रविणादानाद् गान्धर्वः समयान्मिथः ॥६ राक्ष्मो युद्धहरणात् पैशाचः कन्यकाच्छलात्। तिस्रस्तु भार्या विप्रत्य द्वे भार्ये क्षत्रियस्य तु ॥ई एकेव भार्या वैश्यस्य तथा शूद्रस्य कीर्तिता। ब्राह्मणी क्षत्त्रिया वैश्या ब्राह्मणस्य प्रकीर्तिताः ॥७ क्षत्त्रिया चैव वैश्या च क्षत्त्रियहय विधीयते। वैश्येव भार्या वैश्यस्य शूत्रा शूत्रस्य कीर्तिता ॥८ आपद्यपि न कर्तन्या शूद्रा भार्य्या द्विजन्मना । तस्यां तस्य प्रसृतस्य निष्कृतिन विधीयते ॥६ तपस्वी य(ज्ञ)शशीलश्च सर्वे धमभृतां वरः।

भू वं शूद्रत्यमाप्नोति शूद्रश्राह्ये त्रयोदशे ॥१०
नीयते तु सपिण्डत्वं येषां (शूद्रः) श्राह्यं कुलोद्(भवः)गतम् ।
सर्वे शूद्रत्त्रमायान्ति यदि स्वर्गजितारतु ते ॥११
सपिण्डोकरणं क. यं कुलजस्य तथा भ्रुवम् ।
श्राद्धं द्वाद्रशकं कृत्वा श्राह्ये प्राप्ते त्रयोदशे ॥१२
सपिण्डीकरणे चार्हे न च शूद्र(कथंचन)स्तथार्हति ।
तस्मात् सर्गप्रयत्नेन शूद्रां भार्थ्यां विवर्जयेत् ॥१३
पाणिप्राद्धाः सवर्णापु गृह्णोयात् क्षत्रिया शरम् ।
वैश्या प्रतोदमाद्द्याद्वेदने त्वम्रजन्मनः ॥१४
सा भार्थ्या या (गृईं रक्षा)वहेदिंन सा भार्थ्या या पतित्रता ।
सा भार्थ्या या पतिप्राणा सा भार्थ्या या प्रजावती ॥१४
लालनीया सद्दा भार्थ्या ताड्नीया तथैव च ।

इती शाङ्कीये धर्मशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः।

लालिता ताड़िता चैव ह्यो श्रीभवित नान्यथा ॥१५

॥ पञ्चमोऽध्यायः॥

पंचमहायज्ञाः गृहाश्रमिणांप्रशंसा—अतिथिवर्णनम् । पञ्चसूना गृहस्थस्य चुङ्की पेषण्युपस्करः । कण्डनी चोद्कुम्भञ्च तस्य पापस्य शान्तये ॥१ पश्चयज्ञविधानश्च गृही नित्यं न हापयेत्।
पश्चयज्ञविधानेन तत्पापं तस्य नस्यति ॥२
देवयज्ञो भूतयज्ञः पितृयज्ञस्तथैव च ।

हस्यक्षो नृयज्ञश्च पश्च यज्ञाः प्रकीर्तिताः ॥३
होमो देवोविष्ठभीतः पित्रयः पिण्डिक्तयासमृतः ।
स्वाध्यायो त्रह्मयज्ञश्च नृयज्ञोऽतिथिपूजनम् ॥४
वानप्रस्थो त्रह्मवारी यतिश्चेव तथा द्विजः ।
गृह्स्थस्य प्रसादेन ज्वन्त्येते यथाविधि ॥६
गृह्स्थ एव यजते गृह्स्थस्तप्यते तपः ।
दाता चैव गृह्स्थः स्यात्तस्माच्छ्रे छो गृह्मश्रमी ॥६
यथा भर्ता प्रभुः स्वीणां वर्णानां त्राह्मणो यथा ।
अतिथिस्तद्वदेवास्य गृह्स्थस्य प्रभुः स्मृतः ॥७

न व्रतेनीपवासैश्च (न च यज्ञैः पृथिविधैः) धर्मण विविधेन च । नारी(राजा)स्वर्गमवाप्नोति प्राप्नोति पति(परिपालनात)पूजनात् ॥८

न स्नानेन न होमेर नैवाग्नि(परिचर्यया) तर्पणात्।

ब्रह्मचारी दिवं याति स याति गुरुपूजनात्।।

नाग्नि(अति) शुश्रूपया क्षान्या स्नानेन विविधेन च।

वानप्रस्थो दिवं याति याति भोजनवर्जनात्।।१०

न भैक्षे (दण्डे) ने च मौनेन शून्यागाराश्रयेण च।

योगी (यतिः) सिद्धिमवाप्नोति (योगेनाऽऽप्नोत्य नृत्तमाम्)

यथा मैथुनवर्जनात्।।११

ऽध्यायः] पंचमहायज्ञाःगृहाश्रमिणां प्रशंसा-अतिथिवर्णनम् १४२३

न यहौर्दश्चिणाभिश्च विह्युश्रूषया न च। गृही स्वर्गमवाप्नोति तथा चातिथिपूजनात् १२ तस्मात् सर्वप्रयत्नेन गृहस्थोऽतिथिमागतम्। आहारशयनाद्येन विधिवत् परि(प्रति)पूजयेत्।।१३ सायं प्रातञ्च जुहुयादग्निहोत्रं यथाविधि। दर्शश्च पौर्गमासश्च जुहुयाच यथाविधि ॥१४ यहीर्या (यजेत)पशुबन्धेश्च चातुर्मास्येस्तथेव च। त्रैवार्षिकाधिकान्नेन पिवेत् सोममतिन्द्रतः ॥१४ इष्टिं वैश्वानरीं कुर्यात्या चाल्पधनो द्विजः। न भिक्षेत धनं शूरात् सव्व दद्या(द्रिक्षितम्)दभीप्सितम् ॥१६ वृत्तिन्तु न त्यजेद्विद्वानृत्विजं पूर्वमेव तु। कर्मणा जन्मना शुद्धं (विधया च वृणीततम्)विद्यात् पात्रं वलीततम्।।१७ एतेरेव गुणैर्युक्तं धर्माजितधनं तथा। याजयेतु (याजयीत) सदा विश्रो श्राह्यस्तस्मान् प्रतिब्रहः॥१८ इति शाङ्कीये धर्मशास्त्रे पश्चमोऽध्यायः।

॥ पष्टोऽध्यायः॥

अथवानप्रस्थवर्मनिरूपणंसन्यासधमेप्रकरणश्च।
गृहस्थस्तु यदा पश्येद्वलीपलितमात्मनः।
अपत्यस्यैवं चापत्यं तदाऽरण्यं समाश्रयेत्॥१

पुत्रेषु दाराज्ञिक्षिण्य तया वाऽनुगतो बनम्।
अग्नीनुपचरेत्रित्यं वन्यमाहारमाहरेत्।।२
यदाहारो भवेत्तेन पूज्येत् पितृदेवताः।
तेनैव पूज्येत्रित्यमितिथि समुपागतम्।।३
प्रामाद् हृत्य चाश्नीयादृष्टी श्रासान् समाहितः।
श्वाध्यायश्च सदा कुर्य्याज्ञदाश्च विशृयात्तथा।।४
तपसा शोषयेत्रित्यं स्वयञ्चेव कलेवरम्।
आर्द्रवासास्तु हेमन्ते श्रीष्मे पञ्चतपास्तथा।।१
प्रावृष्याकाशशायी स्यान्नक्ताशी च सदा भवेत्।
चतुर्थकालिको वास्यात् श्यात्यप्रकालिक एव वा।।६
कृत्ल्लू वाऽपि नयेत् कालं हह्यचर्यश्च पालयेत्।
एवं नीत्वा वने कालं हिजो हह्याश्रमी भवेत्।।
इति शाङ्कीये धर्मशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः।

॥ सप्तमोऽध्यायः॥

अथप्राणायामलक्षणंधारणध्यानयोगनिक्षपणवर्णनम्।
कृत्वेष्टिं विधिवत् पश्चात् सर्ववेदसदक्षिणाम्।
आत्मन्यग्नीन् समारोप्य द्विजो ब्रह्माश्रमी भवेत्॥१
विधूमे न्यरतमुसले व्यङ्गारे भुक्तवज्ञने।
अतीते पादसम्पाने नित्यं भिक्षां यतिश्चरेत्॥२

Sस्यायः] प्राणायामलक्षणं धारण-ध्यानयोगनिरूपणवर्णनम् १४२६

सरागारां अरेद्भैश्यं(क्षं) भिक्षितं नानुभिक्षयेत्। न व्यथेत तथाऽलाभे यथा लच्धेन वर्तयेत्। नाऽऽस्वाद्येत्तर्थेयात्रं नाश्नोयात् कस्यचिद्गृहे ॥३ मृग्मयालाबुपात्राणि यतीनान्तु विनिर्दिशेत्। ते गं सम्माजनाच्छ्दिरद्विश्चैव प्रवीर्तिता।।४ कौपीनान्छाद्नं वासो विभृयादसख(व्यथ)श्चरन्। शूच्यागारनिकेतः स्याद्यत्र सायं गृहो मुनिः॥५ दृिपूर्तं न्यसेत् पादं बह्दपूरं जलं पिवेत्। सत्यपूतां वदेद्वाचं मनः गृतं समाचरेत् ॥६ चन्द्नैहिं प्यतेः इं वा भस्मचूणैर्विगर्हितैः। कल्याणमञ्चव ल्याणं तयोरेव न संश्रयेत्।।७ सर्वभूतिहतो मैत्रः समलोष्ट्राश्मकाञ्चनः। ष्यानयोगरतो नित्यं भिक्षुर्यायात् (प्राप्नोति)परां गतिम् ॥८ जन्मना यातु निर्विणो मन्यते (मरणेन) च तथव च । आधिभिट्यांधिभिश्चैव तं देवा ब्राह्मणं विदुः ॥६ अशुचित्वं शरीरस्य प्रियस्य च विपर्य्ययः। गर्भवासे च वसतिस्तस्मान्मुच्येत नान्यथा ॥१० जगदेतन्निराक्रन्दं नतु सारमनर्थकम्। भोक्तव्यमिति नि(रिष्टो)विणो मुच्यते नात्र संशयः ॥११ प्राणायामेर्दहेद्दोवान् धारणाभिश्च किल्विपम्। प्रत्याहारैरसत्सङ्गान् ध्यानेनानैश्वरान् गुणान् ॥१२ सन्पाहति सप्रणवां गायत्री शिरसा सह। त्रिःपठेदायतप्राणः प्राणायामः स उच्यते ॥१३

मनसः संयमस्तज्द्दीर्धारणेति निगदते।
संहारश्रेन्द्रियाणाश्च प्रत्याहारः प्रकीर्तितः ॥१४
हृदयस्थस्य योगेन देवदेवस्य दर्शनम्।
ध्यानं प्रोक्तं प्रवक्षामि सर्वसमाद्योगतः ग्रुभम् ॥१५
हृदिस्था देवताः सर्वा हृदि प्राणाः प्रतिष्ठिताः।
हृदि ज्योतीषि (सूर्यश्च)भूयश्च हृदि सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥१६
स्वदेहमरणि हृद्वा प्रणवश्चोत्तरारणिन्।
ध्याननिर्मथनाभ्यान्तु विष्णुं प्रयेद्धृदिस्थितम् ॥१०
हृयर्कश्चन्द्रमाः सूर्यः सोमो मध्ये हुताशनः।
तेजोमध्ये स्थितं तत्त्वं तत्त्वमध्ये स्थितोऽच्युतः॥१८
अणोरणीयान् महतो महीया नात्मास्य जन्तोन्निहितो गुहायाम्।
तेजोमयं प्रयति वीतशोको धातुः प्रसादान्महिमानमात्मनः ॥१६

वासुदेवस्तमोऽन्धानां प्रत्यक्षो नेव जायते। अज्ञानपटसंत्रीतौरिन्द्रियंर्विषयेष्सुभिः॥२० एव वे पुरुषोविष्णुःर्यक्ताव्यक्तः सनातनः। एव धाता विधाता च पुराणोनिष्कलः शिवः॥२१

वेदाहमेतं पुरुगं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।

मन्त्रेविदित्वा न विभेति मृत्योर्नान्यः पन्थाविद्यतेऽयनाय।।२२

पृथिव्यापत्तथा तेजोवायुराकःशमेव च । पद्मेमोमि विजानीयान्महाभूतानि पण्डितः ॥२३ चक्षुः श्रोत्रे स्पर्शनश्च रसना घाणमेव च । बुद्धीन्द्रियाणि ज्ञानीयात् पद्मेमानि शरीरके ॥२४

Sभ्यायः] धारणादीनां लक्षणम् ध्यानयोगनिरूपणश्व । १४२७

शब्दो रूपं तथा स्पर्शो रसो गन्धस्तथैव च। इन्द्रियस्थान् विजानीयात् पञ्चंव विषयान् बुधः ॥२५ हस्तौ पादावुपस्थञ्च जिह्वा पायुस्तथैव च। कर्मेन्द्रियाणि पञ्चेव नित्यं (मस्मिन्) सति शरीरके ॥२६ मनो वुद्धिस्तर्येवाऽऽत्मा व्यक्ताव्यक्तं तथैव च। इन्द्रियेभ्यः पराणीह चत्वारि प्रवराणि च।। चतुर्विशत्यथैतानि तत्त्वानि कथितानि च। तथाऽऽत्मानं तद्व्यतीतं पुरुषं पश्चविशकम्। तन्तु ज्ञात्वा विमुच्यन्ते ये जनाः साधुवृत्तयः ॥२८ इदन्तु परमं शुद्ध(गुह्य)मेतद्क्षरमुत्तमम्। अशब्दरसमस्पर्शमरूपं गन्धवर्जितम् ॥२६ निर्दु: खममुखं शुद्धं तद्विष्णोः परमं पदम्। अजं निरञ्जनं शान्तमव्यक्तं भ्रवमक्षरम्। अनादिनिधनं ब्रह्म तद्विष्णोः परमं पदम्। विज्ञानसारथिर्यस्तु मनःप्रग्रहवन्धनः ॥३० सोऽध्वनः पारमाप्नोति तद्विष्णोः परमं पदम्। बालाप्रशतशो भागः कल्पितस्तु सहस्रधा ॥३१ तस्यापि शतशो भागाज्ञीतः सूक्ष्म उदाहृतः ॥३२ इन्द्रियेभ्यः परा हार्था अर्थेभ्यश्च परं मनः। मनसस्तु परा बुद्धिर्बुद्धे रात्मा तथा परः॥ महतः परमञ्यक्तमञ्यक्तात् पुरुषः परः। पुरुषात्रं परं कि चित् सा काष्टा सा परा गतिः ॥३३ 03

एषु सर्वेषु भूतेषु तिष्ठत्यविरलः सदा । हश्यते त्वग्य्या बुध्या सृक्ष्मया सृक्ष्मदर्शिभिः ॥३४ इति शाङ्कीये धर्मशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः।

॥ अष्टमोऽध्यायः ॥ अथनित्यनैमित्तिक।दिस्नानानां सक्षणवर्णनम्। नित्यं नेमित्तिकं कामं क्रियाङ्गं मलकष्णम्। क्रियास्नानं तथा षष्ठं षोढा स्नानं प्रकीर्तितम् ॥१ अस्नातः पुनरानहां जप्यामिहवनादिषु। प्रात स्नानं तद्थं च नियस्नानं प्रकीर्तितम् ॥२ चण्डालशवयूपाद्यं रष्ट्रा स्नानं रजस्वलाम्। स्नानान हस्तु यः स्नाति स्नानं नैमित्तिकं च तत्।।३ पुष्यस्नानादिकं स्नानं देवज्ञविधिचोदितम्। तिद्ध काम्यं समुद्दिष्टं नाकामस्तरप्रयोजयेत् ॥४ जप्तुकामः पवित्राणि अचिष्यन्देवताः पितृन्। स्नानं समाचरेचस्तु क्रियाङ्गं तत्प्रकीर्तितम्।।५ मलापकर्षणार्थं तु स्नानमभ्यङ्गपूर्वकम्। ग्रलापकर्षणार्थाय प्रवृत्तिरतस्य नान्यथा ॥६ सरित्सु देवखातेषु तीर्थेषु च नरीषु च। क्रियास्नानं समुद्दिष्टं स्नानं तत्र महाक्रिया।।७ तन्न काम्यं तु कर्तन्यं यथाविद्विधिचोदितम्। नित्यं नैशित्तिकं चैव क्रियाङ्गं मलक्षणम् ॥८

तीर्थाभावे तु क्तंव्यमुष्णोद्कपरोद्कैः। स्नानं तु वह्नितप्तेन तथैव परवारिणा ॥६ शरीरशुद्धिर्विज्ञेया न तु स्नानफलं लभेत्। अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति तीर्थस्नानात्फलं लभेत्।।१० सरः सु देवखातेषु तीर्थेषु च न हीषु च। स्नानमेव क्रिया तस्मात्स्नानात्पुण्यफलं स्मृतम् ॥११ तीर्थं प्राप्यानुषङ्गेण स्नानं तीर्थं समाचरेत्। स्नानजं फलमाप्नोति तीर्थयात्राफलं न तु ॥१२ सर्वतीर्थानि पुग्यानि पापद्नानि सदा नृणाम्। परस्परानपेक्षाणि कथितानि मनीषिभिः ॥१३ सर्वे प्रस्रवणाः पुण्याः सरांसि च शिलोचयाः। नदाः पुण्यास्तथा सर्वा जाह्नवी तु विशेषतः ॥१४ यस्य पादौ च हस्तौ च मनश्चैव सुसंयतम्। विद्या तपश्च कीर्तिश्च स नीर्थफलमश्नुते।।१५ नृणां पापकृतां तीर्थे पापस्य शमनं भवेत्। यथोक्तफलदं तीर्थं भवेच्छुद्धात्मनां नृणाम्।।१६ इति शाङ्कीये धर्मशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः।

अथ नवमोऽध्यायः ॥
 अथ क्रियास्तानविधिवर्णनन् ।
 क्रियास्तानं प्रवक्ष्यामि यथाविद्विधिपूर्वकम् ।
 मृद्धिरङ्ख्यि कर्तव्यं शौचमादौ यथाविधि ॥१

जले निमग्न उन्मज्य उपस्पृश्य यथाविधि। जलस्याऽऽवाहनं कुर्यात्तत्प्रवक्ष्याम्यतः परम्। तीर्थ(जल)स्यावाहनं कुर्यात् तत्प्रवक्ष्याम्यशेषतः ॥२ प्रपद्ये वरुणं देवमम्भसा पतिमूर्ज्जितम्। याचितं देहि मे तीथं सर्वपापापनुत्तये ॥३ तीर्थमावाहयिष्यामि सर्वाघविनिष्द्नम्। सानिध्यमस्मिन् स्तोये च क्रियतां (भजत्वं) मद्नुप्रहात् ॥ <mark>रुद्वान् प्रपद्ये वरदान्</mark> सर्व्वानप्सु पद्स्तथा । सर्वानप्तु सद्श्वंव प्रवद्य प्रयतः स्थितः ॥४ देवमंशुमदं (देवमप्सुषदं)विद्व प्रपद्ये उचितपूदनम्। आपः पुण्याः पवित्राश्च प्रपद्मे रार्णं तथा ॥६ रुद्राश्चाप्रिश्च सर्पश्च वरुणस्त्वाप एव च । शमयन्त्वाशु मे पापं माश्च रखनत् सर्वशः॥७ इत्येव मुक्ता कर्तव्य स्ततः संमाननं जले। आपो हिष्ठेति तिसृभिर्यथावद्नुपूर्वशः। हिर्ण्यवर्णेति (वदेदिगनश्व)तिसृभिज्जगतीति चतसृभिः। शं नो देवीति तथा शं न आप स्तथैव च ॥८ इद्मापः प्रवहते (द्यूतञ्च) तथा मन्त्र मुदीरयेत्। एवं सम्मार्जनं ऋत्वा च्छन्द्आर्पञ्च देवताः ॥६ एवं भन्त्रान्ससुचार्य च्छन्दांसि ऋषिदेवताः। अधमर्षणसूक्तभ्व प्रपष्ठेत् प्रयतः सदा। ब्रन्रेडनुष्ट्रप् च तस्यैव ऋषिश्चैवाघमर्षणः ॥१०

देवता भाववृत्तश्च पापक्षये प्रकीर्तितः ॥११ ततोऽम्भसि निमग्नः स्यान्ति पठेदघमर्षणम् । प्रपद्यान्मूर्द्धनि तथा महाव्याहृतिभिर्जलम् ॥ यथाश्वमेधः क्रतुराट् सर्वपापापनोदनः । तथाऽघमर्षणं सूक्तं सवपापप्रणाशनम् ॥१३

अनेन विधिना स्नात्वा स्नातवान् धौतवाससा । परिवर्जि(ति)तवासास्तु (तीर्थतीरमुपस्पृशेत)तीर्थनामानि संजपेन् अष्ट

> उदकस्याप्रदानात्तु स्नानशाटीं न पीड़येत्। अनेन विधिना स्नातस्तीर्थस्य फलमश्तुते॥१४

> > इति शाङ्के धर्मशास्त्रे नवमोऽन्यायः।

।। अथ दशमोऽध्यायः ॥
अथाचमनविधिवर्णनम् ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि शुभामाचमनक्रियाम् । कायं किनष्ठिकामूळे तीर्थमुक्तं मनीषिभिः ॥१ अङ्गुष्ठमूळे च तथा प्राजापत्यं विचक्षणैः । अङ्गुल्यप्रे स्मृतं दि[दै]व्यं पित्र्यं तर्जनिम्ळकम् [के] ॥२ प्राजापत्येन तीर्थेन त्रिः प्राश्नीयाज्ञळं द्विजः । द्विः प्रमृज्य मुखं पश्चात्वान्यद्भिः समुपस्पृशेत् ॥३

हृद्गाभिः पूयते विप्रः कण्ठगाभिस्तु भूमिपः । तालुगाभिस्तथा वंश्यः शूद्रः खुराभिरन्ततः ॥४ अन्तजार्नुः शुचौ देशे प्राङ्मुखः सुसमाहितः। उद्ध्मुखो वा प्रयतो दिशश्चानवलोकयम् ॥५ अद्भिः सगुद्धृताभिस्तु हीनाभिः फेनबुद्बुदैः। वहिना चाप्यतनाभिरक्षाराभिरुपस्पृशेत् ॥६ तर्जन्यङ्कष्टयोगेन सृशेन्नासापुटद्वयम्। अङ्गुष्टमन्यायोगेन स्ट्रशेन्नत्रह्यं ततः ॥७ अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां तु श्रवणौ समुपस्पृशेत्। किनिष्ठाङ्कुष्ठयोगेन स्पृशेत्स्कन्धद्वयं ततः ॥८ सर्वासामेव योगेन नामि च हृद्यं तथा। संखरोच तथा मूर्धिन एष आचमने विधिः।।६ त्रिः प्राश्नीयाद्यदम्भस्तु प्रीतास्तेनास्य देवताः। ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च भवन्तीत्यनुशुश्रुम ॥१० गङ्गा च यमुना चैव प्रीयेते परिमार्जनात्। नासत्यदस्त्री प्रीयेते खटे नासापुटहये।।११ सृष्टे छोचनयुग्ने तु प्रीयेते शशिभास्करौ। कर्णयुग्मे तथा स्ट्रष्टे प्रीयेते अनिलानली ॥१२ स्कन्धयाः स्पर्शनादश्य प्रीयन्ते सवदेवताः । मूर्फाः संस्पशंनादस्य प्रीतस्तु पुरुत्रो भवेत्।।१३ विना यज्ञोपवीतेन तथा मुक्तशिखो द्विजः। अप्रक्षालितपादस्तु आचान्तोऽप्यशुचिभेवेत् ॥१४

बहिर्जानुरूपस्पृश्य एकहस्तापितेर्जलेः। सोपानत्क(समलाभि)स्तथा तिष्ठजैव शुद्धिमवाप्नुयात्।।१५ आवम्य च पुराप्रोक्तं तीर्थसंमार्जनं तु यत्। उपसृरोत्ततः पश्चान्मत्रेणानेन धर्मतः ॥१६ अन्तश्चरति भूतेषु गुहायां विश्वतोमुखः। त्वं यज्ञस्वं वषट्कार आपो ज्योती रसोऽमृतम् ॥१७ आचम्य च ततः पश्चादादित्याभिमुखो जलम्। उदु त्यं जातवेदसमिति मन्त्रेण निक्षिपेत्।।१८ एष एव विधिः प्रोक्तः संध्ययोश्च द्विजातिषु। पूर्वा संध्यां जपंस्तिष्ठेदासीनः पश्चिमां स्तथा ॥१६ ततो जपेत्पवित्राणि पवित्रं वाऽथ शक्तितः। भृषयो दीर्घसंध्यत्वाद्दीर्घमायुरवाप्नुयुः ॥२० सर्ववेदपवित्राणि वक्ष्याम्यहमतः परम्। येषां जदेश्च होमैश्च पूयन्ते मानवाः सदा ॥२१ इति शाङ्के धर्मशास्त्रे दशमोऽध्यायः।

।। अथ एकादशोऽध्यायः ।।
अथाघमर्षणविधिवर्णनम्।
अघमर्गणं देवकृतं शुद्धवत्यस्तरत्समाः ।
कृष्माण्ड्यः पावमान्यश्च साविज्यश्च तथैव च ॥१

ज्य [ति] भिष्टं द्रुपदा चैव स्तोमानि व्याहितस्तथा।
भारण्डानि च सामानि गायत्री चौशनं [त्र्योशनसं] तथा।।२
पुरुषत्रतं च भाषं च तथा सोमत्रतानि च।
अब्टिङ्गं बाह्स्पत्यं च वाषसूत्रममृतं तथा।।३
शातरुदीयमथर्वशिरिष्ठासुपणं महात्रतम्।
गोसूक्तमश्वसूक्तं च इन्द्रसूक्तं च सामनी।।४
त्रीण्याज्यदोहानि रथंतरं च अग्नित्रतं वामदेवत्रतं च।
एतानि गीतानि पुनन्तिजन्तूञ्जातिस्मरत्वं लभते यदीच्छेत्।।६

इति शाङ्को धर्मशास्त्रे एकादशोऽध्यायः।

॥ द्वादशोऽध्यायः ॥

अथ गायत्रीजपविधिवर्णनम्।

इति वेदपवित्राण्यभिहितानि, एभ्यः सावित्री विशिष्यते ॥१ नास्त्रयमर्षणात्परमन्तर्जले ॥२ न सावित्र्या समं जप्यं न व्याहृतिसमं हुतम् ॥३ कुशमय्यामासीनः कुशोत्तरीयवान्कुशपवित्रपाणिः प्राङ् मुखः सूर्याभिमुखो वाऽक्षमालामुपादाय देवताध्यायी जपं कुर्यात् ॥४ सुवर्णमणिमुक्तास्फटिकपद्माक्षरद्राक्षपुत्रजीवकानामन्यतमेना-ऽऽदाय मालां कुर्यात् ॥५ कुश्मिन्य कृत्वा वामहस्तोपयमैर्वा गणयेत् ॥६ ऽध्यायः] गायत्रीजपफलं, गायत्रीहोमादभीष्टसिद्धिवर्णनञ्च १४३५

æ?

आदौ देवता भृषिच्छन्दः समरेत्।।७

ततः सप्रणवां सन्याहृतिकामादावन्ते च शिरसा गायत्रीमावर्तयेत् अथास्याः सविता देवता, ऋषिर्विश्वामित्रो गायत्री छन्दः ॥

ॐकारः प्रणवाख्यः ॥१०

ॐ भूः। ॐ भुवः। ॐ स्वः। ॐ महः। ॐ जनः। ॐ तपः।

ॐ सत्यमिति व्याहृतयः ॥११

ओमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोमिति शिरः ॥१२

भवन्ति चात्र श्लोकाः ॥१३

सन्याहितिकां सप्रणवां गायत्रीं शिरसा सह।
ये जपन्ति सदा तेषां न भयं विद्यते कचित् ॥१४
शतं जप्ता तु सा देवी दिनपापप्रणाशिनी ।
सहस्रं जप्ता तु तथा पातकेभ्यः समुद्धरेत् ॥१५
दशसहस्रं जप्ता तु सर्वकल्मषनाशिनी ।
सुवर्णस्तेयकृद्धिप्रो ब्रह्महा गुरुतल्पगः ॥१६
सुरापश्च विशुध्येत लक्षजाप्यान्न संशयः ।
प्राणायामत्रयं कृत्वा स्नानकाले समाहितः ॥१७
अहोरात्रकृतात्पापात्तत्क्षणादेव मुच्यते ।
सन्याहृतिकाः सप्रणवाः प्राणायामास्तु षोढश ॥१८
अपि भ्रूणहनं मासात्पुनन्त्यहरहः कृताः ।
हुता देवी विशेषण सर्वकामप्रदायिनी ॥१६
सर्वपापक्षयकरी वरदा भक्तवत्सला।
शान्तिकामस्तु जुहुयात्सावित्रीमक्षतैः शुचिः ॥२०

हन्तुकामोऽपमृत्युं च घृतेन जुहुयात्तथा। श्रीकामस्तु तथा पद्मौर्विल्वैः काञ्चनकामुकः ॥२१ त्रह्मवर्चसकामस्तु पयसा तृहुयात्तथा। घृतखुतैस्तिहैर्विहं जुहुयात्सुसमाहितः।।२२ गायत्र्ययुतहोमाच सर्वपापैः प्रमुच्यते । पापात्मा लक्षहोमेन पातकेभ्यः प्रमुच्यते ॥२३ अभीष्टं छोकमाप्नोति प्राप्तुयात्काममीप्सितम्। गायत्री वेदजननी गायत्री पापनाशिनी ॥२४ गायत्र्या परमं नास्ति दिवि चेह च पावनम्। हस्तत्राणप्रदा देवी पततां नरकाणवे ॥२४ तस्मात्तामभ्यसेन्नित्यं त्राह्यणो नियतः शुचिः। गायंत्रीजाप्यनिरतं हव्यक्द्येषु भोजयेत्।।२६ तस्मित्र तिष्ठते पापमव्बिन्दुरिव पुष्करे ॥२७ जपे[प्ये]नैव तु संसिध्येद् ब्राह्मणो नात्र संशयः। कुर्यादन्यन वा कुर्यान्मेत्रो ब्रह्मण उच्यते ॥२८ उपांशु स्याच्छतगुणः साहस्रो मानसः स्मृतः। नोधेर्जपं बुधः कुर्यात्साविज्यास्तु विशेषतः ॥२६ सावित्रीजाप्यनिरतः स्वर्गमाप्नोति मानवः। गायत्रीजप्यनिरतो मोक्षोपायं च विन्दति ॥३० तस्मारसर्वप्रयत्नेन स्नातः प्रयतमानसः। गायत्री तु जपेद्भत्तया सर्वपापप्रणाशिनीम् ॥३१ इति शाङ्के धर्भशास्त्रे द्वादशोऽध्यायः।

।। त्रयोदशोऽध्यायः ॥ अथ तर्पणविधिवर्णनम्।

स्नातः कृतजप्यस्तद्नु प्राङ्मुखो दिव्येन तीर्थेन देवानुद्केन तर्पयेत्।।१ अथ तर्पणविधिः ॥२ ॐ भगवन्तं शेषं तपयामि ॥३ कालाग्निहरूं तु ततो रुक्मभौमं तरैव च। श्वेतभौमं ततः प्रोक्तं पातालानां च सप्तकम् ॥४ जम्बृद्वीपं ततः प्रोक्तं शाकद्वीपं ततः परम्। गोमेदपुष्करे तद्वच्छाकाख्यं च ततः परम् ॥४ शार्वरं ततः स्वधामानं ततौ हिरण्यरोमाणं ततः कल्पस्थायिनो लोकांस्तर्पयेत् ॥६ खवणोदकं ततः क्षीरोदं ततो घृतोदं तत इक्षुदं ततः स्वादूदं तत इति सप्तससुद्रकं प्रत्यृचं पुरुवसुकेनोदका-ञ्जलीन्दद्यात् , पुःपाणि च तथा भत्तया ॥७ अथ कृतापसन्योदक्षिणामुखोऽन्तर्जानुः पित्र्येण पितृणां यथाश्राद्धं प्रकाममुहकं द्यात् ॥८ सौवर्णेन पात्रेण राजतेनौदुम्बरेण खड्गपात्रेणान्य पात्रेण वोदकं पितृतीर्थं स्पृशन्दद्यात् ॥६ पित्रे पितामहाय प्रपितामहाय माने पितामहौ प्रिवतामहा मातामहाय [?] प्रमातः महाय मात्रो [?] मातामह्यै प्रमातामह्यै सप्तमात्युरुषात्पितृपक्षे यावतां नाम

जानीयात्पितृपक्षाणां तर्पणं कृत्वा गुरूणां मातृपक्षाणां तर्पणं कुर्यात् ॥१० मातृपक्षाणां तर्पणं कृत्वा संविन्धवान्धवानां कुर्यात् , तेषां कृत्वा सुदृद्गं कुर्यात् ॥११ भवन्ति चात्र श्लोकाः ॥१२ विना रौप्यसुवर्णेन विना ताम्रतिलेन च। विना दुर्भेश्च मन्त्रीश्च पितृणां नोपतिष्ठते ॥१३ सौवर्णराजताभ्यां च खड्गेनौदु बरेण च। द्त्तमक्षय्यतां याति पितृणां तु तिलाद्कम्।।१४ हेम्ना तु सह यहत्तं क्षीरेण मधुना सह। तद्प्यक्षय्यतां याति पितृणां तु तिलोदकम्।।१५ कुर्यादहरहः श्राद्धमन्नाद्येनोद्केन वा। पयोम्लफलैर्वाऽपि पितृणां प्रीतिमाहवन् ॥१६ स्नातः संतर्पणं कृत्वा पितृणां तु तिलाम्भसा। पितृयज्ञमवाप्नोति प्रीणाति च पितृंस्तथा ॥१७ इति शाङ्के धर्मशास्त्रे त्रयोदशोऽध्यायः।

श्वाद्ध चतुर्दशोऽध्यायः ॥ अथ आद्ध ब्राह्मणपरीक्षावर्णनम् । ब्राह्मणान्न परीक्षेत दैवे कर्मणि धर्मवित् । पित्र्ये कर्मणि संप्राप्ते युक्तमाहुः परीक्षणम् ॥१

उम्बायः] श्राद्धे वर्ज्यब्राह्मणाः, पङ्क्तिपावनब्राह्मणनिरूपणम् १४३६

ब्राह्मणा ये विकर्मस्था वैडालब्रतिकास्तथा। **ऊनाङ्गा अतिरिक्ताङ्गा ब्राह्मणाः पङ्क्ति**दूषकाः ॥२ गुरूणां प्रतिकूलाश्च वेदाग्न्युत्सादिनश्च ये। गुरूणां त्यागिनश्चेव ब्राह्मणाः पङ्क्तिदूषकाः ॥३ अनध्यायेष्वधीयानाः शौचाचारविवर्जिताः। शूद्रान्नरससंपुष्टा ब्राह्मगा पङ्क्तिदूषकाः ॥४ षडङ्गवित्त्रिसुपर्णो बह् वृचो ज्येष्ठसामगः। त्रिणाचिकेतः पश्चाद्रिर्त्राह्मणाः पङ्क्तिपावनाः ॥४ ब्रह्मदेयानुसंतानो ब्रह्मदेयाप्रदायकः। ब्रह्मदेयापतिर्यश्च ब्राह्मणाः पङ्क्ति पावनाः ॥६ भृग्यजु पारगो यश्च साम्नां यश्चापि पारगः। अथर्वाङ्किरसोऽध्येता ब्राह्मणः पङ्क्तिपावनः ॥० नित्यं योगरतो विद्वान्समलेष्टाश्मकाञ्चनः। ध्यानशीलो यतिर्विद्वान्त्राह्मणः पङ्क्तिपावनः ॥८ द्वौदैवे प्राङ्मुखी त्रीन्वा पित्रये चोदङ् मुखांस्तथा। मोजयेद्विविधान्विप्रानेकैकसुभयत्र वा ॥१ भोजयेद्थवाऽप्येकं ब्राह्मणं पङ्क्तिपावनम् । देवे कृत्वा तु नेवेद्यं पश्चाद्वहों तु तिस्थिपेत् ॥१० उच्छिटसंनिधौ कार्य पिण्डनिर्वपणं बुधैः। अभावे च तथाकार्यमिकार्यं यथाविधि ॥११ श्राद्धं कृत्वा प्रयत्नेन त्वराक्रोधविविर्जितः। उष्णमन्नं द्विजातिभ्यः श्रद्धया विनिवेद्येत् ॥१२

अन्यत्र पुष्पसूलेभ्यः पीठकेभ्यश्च पण्डितः। भोजयेद्विविधान्विप्रान्गन्धमाल्यसमुज्ज्वलान् ॥१३ यरिंकचित्पच्यते गेहे भक्ष्यं वा भोज्यमेव वा। अनिवेद्य न भोक्तव्यं पिण्डमूले कदाचन ॥१४ उप्रगन्धान्यगन्धानि चैत्रदृक्षभवानि च। पुष्पाणि वर्जनीयानि रक्तवर्णानि यानि च ॥१४ तोयोद्भवानि देयानि रक्तान्यपि विशेषतः। ऊर्णासूत्रं प्रदातव्यं कार्पासमथवा नवम् ॥१६ दशां विवर्जयेत्प्राज्ञो यद्यप्यहतवस्त्रजाम्। घृतेन दीपो दातव्यस्तिलतेलेन वा पुनः ॥१७ धूपार्थं गुग्गुलुं दद्याद् घृतयुक्तं मधूत्कटम्। चन्द्रमं च तथा दद्यात्पिष्ट्रा च कुङ्कुमं शुभम्।।१८ भूतृणं सुरसं शिष्रुं पालकं सिन्धुकं तथा। कूष्माण्डालाबुवार्ताककोविदरांश्च वर्जयेत् ॥१६ पिप्पर्ही मरिचं चैव तथा वै पिण्डमूलकम्। कृतं च लवणं सर्वं बंशायं तु विवर्जयेत्।।२० राजमाषान्मसूरांश्च कोद्रवान्कोरदृषकान्। लोहितान् इक्षनियांसान् श्राद्धकर्मणि वर्जयेत्।।२१ आम्रमामलकीमिक्षं मृद्वीकाद्यिदाडिमान्। विदार्यश्चेव रम्भाद्या द्द्याच्छ्राद्धे प्रयत्नतः ॥२२ <mark>धानालाजे मधुयुते सक्तून्शर्करया सह।</mark> द्वाच्छ्राद्धे प्रयत्नेन शृङ्गाटकविसेतकान् ॥२३

भोजयित्वा द्विजान्भक्तया स्वाचान्तान्द्क्तद्क्षिणान्। अभिवाद्य पुनर्विप्राननुत्रज्य विसर्जयेत् ॥२४ निसन्त्रितस्तु यः श्राद्धे मैथुनं सेवते द्विजः। श्राद्धं दत्त्वा च भुत्तवा च युक्तः स्यान्महतैनसा ॥२५ कालशाकं सशलकांश्च मांसं वाधीणसस्य च । खड्गमांसं तथाऽनन्तं यमः प्रोवाच धर्मवित् ॥२६ यहदाति गयाक्षेत्रो प्रभासे पुष्करे तथा। प्रयागे नैमिषारण्ये सर्वमानन्त्यमश्नुते ॥२७ गङ्गायमुनयोस्तीरे पयोष्ण्यामरकण्टके। नर्मदायां गयातीरे सर्वमानन्त्यमुच्यते ॥२८ वाराणस्यां कुरुक्षेत्रो भृगुतुङ्गे महालये। सप्तरेण्युषि कूपे च तद्प्यक्षय्यमुच्यते ॥२६ म्लेच्छदेशे तथा रात्री संध्यायां च विशेषतः। न श्राद्धमाचरेत्प्राज्ञो म्हेच्छदेशे न च ब्रजेत्।।३० हस्तिच्छायासु यद्दं यद्दं राहुदर्शने। विषुवत्ययने चैव सर्वमानन्त्यमुन्यते ॥३१ प्रोष्टपद्यामतीतायां मघायुक्तां त्रयोदशीम्। प्राप्य श्राद्धं तु कर्तव्यं मधुना पायसेन वा ॥३२ प्रजां पुष्टिं यशः स्वर्गमारोग्यं च धनं तथा। नृणां श्राद्धैः सदा प्रीताः प्रयच्छिन्ति पितामहाः ॥३३ इति शाङ्खे धर्मशास्त्रे चतुर्दशोऽध्यायः।

॥ पञ्चदशोऽध्यायः ॥

अथ जननमरणाशौचवर्णनम्।

जनने सरणे चैव सपिण्डानां द्विजोत्तमः । ज्यहाच्छुद्धिमवाप्नोति योऽग्निवेद्समन्वितः ॥१ सपिण्डता तु पुरुषे सप्तमे विनिवर्तते। नामधारकविप्रस्तु दशाहेन विशुध्यति ॥२ क्षत्रियो द्वादशाहेन वैश्यः पक्षेण शुध्यति । मासेन तु तथा शूद्रः शुद्धिमाप्नोति नान्तरा ॥३ रात्रिभिर्मासतुल्याभिगेर्भस्रावे विशुध्यति । अजातदन्तबाले तु सद्यः शौचं विधीयते ॥४ <mark>अहोरात्रात्तथा</mark> शुद्धिर्वांठे त्वक्रुतच्डके । तथैवानुपनीते तु ज्यहाच्छुध्यन्ति बान्धवाः ॥५ अन्दानां तु कन्यायां तथैव शूद्रजन्मनाम्। अनूढभायंः शूद्रस्तु घोडशाद्वत्सरात्परम् ॥६ मृत्यं समधिगच्छेबेन्मासात्तस्यापि बान्धवाः। शुद्धि समभिगच्छेयुर्नात्र कार्या विचारणा ॥० पितृवेश्मनि या कन्ः रजः पश्यत्यसंस्कृता । तस्यां मृतायां नारं वं कदाचिद्पि शाम्यति ॥८ हीनवर्णा तु या नःरी प्रमादास्प्रसवं व्रजेत्। प्रसवे मरणे तज्जमाशीचं नोपशाम्यति ॥६

समानं खल्वशौचं तु प्रथमेन समापयेत्। असमानं द्वितीयेन धर्मराजवचो यथा।।१० देशान्तरगतः श्रुत्वा कुल्यानां मरणोद्भवौ । यच्छेषं दशरात्रस्य तावदेवाशुचिभवेत्।।११ अतीते दशरात्रे तु त्रिरात्रमशुचिभवेत्। तथा संवत्सरेऽतीते स्नान एव विशुध्यति ॥१२ अनौरसेषु पुत्रेषु भार्यास्वन्यगतासु च। परपूर्वामु च स्त्रीषु त्रयहाच्छुद्धिरिहेष्यते ॥१३ मातामहे व्यतीते तु आचार्ये च तथा मृते। गृहे दत्तासु कन्यासु मृतासु च त्र्यहस्तथा ॥१४ निवासराजनि प्रेते जाते दौहित्रके गृहे। आचार्यपत्नीपुत्रेषु प्रेतेषु दिवसेन च ॥१५ मातुले पक्षिणीं रात्रि शिष्यत्विग्वान्धवेषु च। सब्रह्मचारिण्येकाहमनूचाने तथा मृते ॥१६ एकरात्रं त्रिराजं च षड्राजं मासमेव च। शूद्रे सपिण्डे वर्णानामाशीचं क्रमशः स्मृतम् ॥१७ त्रिरात्रमथ षड्रात्रं पक्षं मासं तथैव च । वैश्ये सपिण्डे वर्णानामाशौचं क्रमशः स्मृतम् ॥१८ सपिण्डे क्षत्त्रिये शुद्धिः षड्रात्रं ब्राह्मणस्य तु । वर्णानां परिशिष्टानां द्वादशाहं विनिर्दिशेत्।।१६ सपिण्डे ब्राह्मणे वर्णाः सर्व एवाविशेषतः। दशरात्रेण शुध्येयुरित्याह भगवान्यमः ॥२०

भृग्वग्न्यनशनाम्भोभिर्मृ तानामात्मघातिनाम् । पतितानां च नाशौचं शस्त्रविद्युद्धताश्च ये ॥२१ यतित्रतित्रद्धाचारिनृपकारुकदीक्षिताः । नाशौचभाजः कथिता राजाज्ञाकारिणश्च ये ॥२२ यस्तु भुङ्क्ते पराशौचे वर्णी सोऽप्यग्रुचिर्भवेत् । अशौचग्रुद्धौ ग्रुद्धिश्च तस्याप्युक्ता मनीषिभिः ॥२३ पराशौचे नरो भुक्त्रा कृमियोनौ प्रजायते । भुक्त्वाऽन्नं श्चियते यस्य तस्य योनौ प्रजायते ॥२४ दानं प्रतिप्रहो होमः स्वाध्यायः पितृकर्म च । प्रेतपिण्डक्रियावर्जमाशौचे विनिवर्तते ॥२५ इति शाङ्को धर्मशास्त्रो पश्चदशोऽध्यायः ।

।। अथ वोडशोऽध्यायः ।।
अथद्रव्यशुद्धिः मृष्मयादिपात्रशुद्धिवर्णनम् ।
मृष्मयं भाजनं सर्वं पुनः पाकेन शुध्यति ।
मद्येर्मूजैः पुरीषेश्च ष्टीवनैः पृयशोणितैः ॥१
संस्पृष्टं नेव शुध्येत पुनः पाकेन मृष्मयम् ।
एतैरेव तथा स्पृष्टं ताम्रसीवर्णराजतम् ॥२
शुध्यत्यावर्तितं पश्चादन्यथा केवलाम्भसा ।
आम्लोदकेन ताम्रस्य सीसस्य त्रपुणस्तथा ॥३

क्षारेण शुद्धिः कांस(स्य)स्य लोहस्य च विनिर्दिशेत्। मुक्तामणिप्रवालानां शुद्धिः प्रक्षालनेन तु ॥४ अञ्जानां चैव भाण्डानां सर्वस्याश्ममयस्य च। शाकवर्जं मूलफलविदलानां तथैव च ॥४ मार्जनाद्यज्ञपात्राणां पाणिना यज्ञकर्मणि। उष्णाम्भसा तथा शुद्धिं सस्नेहानां विनिर्दिशेत् ॥६ शयनासनयानानां स्प्यशूर्पशकटस्य च। शुद्धिः संप्रोक्षणायज्ञे कटिम (टाग्नी)न्धनयोस्तथा ॥७ मार्जनाद्वेश्मनां शुद्धिः क्षितेः शोधस्तु तत्क्षणात् । संमार्जितेन तोयेन वाससां शुद्धिरिष्यते ॥ बहूनां प्रोक्षणाच्छुद्धिर्धान्यादीनां विनिर्दिशेत्। प्रोक्षणात्संहतानां च दारवाणां च तत्क्षणात् ॥६ सिद्धार्थकानां कल्केन शृङ्गदन्तमयस्य च। गोत्रालैः फलपात्राणामस्थ्नां शृङ्गवतां तथा ॥१० निर्यासानां गुडानां च लवणानां तथैव च। कुसुम्भकुङ्कुमानां च ऊर्णाकार्पासयोस्तथा ॥११ प्रोक्षणात्कथिता शुद्धिरित्याह भगवान्यमः। भूमिष्ठमुद्कं शुद्धं शुचि तोयं शिलागतम्।।१२ वर्णगन्धरसेदु हैवेजितं यदि तद्भवेत्। शुद्धं नदीगतं तोयं सर्वदेव तथाऽऽकरः ॥१३ शुद्धं प्रसारितं पण्यं शुद्धे चाजाश्वयोर्मुखे। मुखवर्ज तु गौः गुद्धा मार्जारश्चाऽऽक्रमे शुचिः ॥१४

शय्या भार्या शिशुर्वस्त्रमुपवीतं कमण्डलुः। आत्मनः कथितं शुद्धं न शुद्धं हि परस्य च ॥१५ नारीणां चैव वत्सानां शकुनीनां शुनां मुखम्। रात्रौ प्रस्रवणे वृक्षे मृगयायां सदा शुचि ॥१६ शुद्धा भर्तुश्रतुर्थेऽहि स्नानेन स्नी रजस्वला। दैवे कर्मणि पित्रये च पश्चमेऽहिन शुध्यति ॥१७ रथ्याकर्दमतोयेन ष्ठीवनाद्येन वाऽप्यथ । नाभेरूष्वं नरः स्पृष्टः सद्यः स्नानेन शुध्यति ॥१८ **कृ**त्वा मूत्रं पुरीषं वा स्नात्वा भोक्तुमनास्तथा। भुत्तवा क्षुत्वा तथा सुप्त्वा पीत्वा चाम्भोऽवगाह्य च ॥१६ रथ्यां वाऽऽक्रम्य वाऽऽचामेद्वासो विपरिधाय च। कृत्वा मूत्रपुरीषं च लेपगन्धापहं द्विजः ॥२० उद्घृतेनाम्भसा शौचं मृदा चैव समाचरेत्। मेहने मृत्तिकाः सप्त लिङ्गे द्वे परिकीर्तिते ॥२१ एकस्मिन्विशतिर्हस्ते द्वयोर्ज्ञेयाश्चतुर्दश । तिस्रस्तु मृत्तिका देयाः कृत्वा नखविशोधनम्।।२२ तिस्रस्तु पादयोर्ज्ञेयाः शौचक्रामस्य सर्वदा । शौचमेतद्गृहस्थानां द्विगुणं ब्रह्मचारिणाम् ॥२३ त्रिगुणं च वनस्थानां यतीनां तु चतुर्गुणम्। मृत्तिका च विनिर्दिष्टा त्रिपर्वाऽऽपूर्यते यथा ॥२४ इति शाङ्के धर्मशास्त्रे षोडशोऽध्यायः।

॥ अथ सप्तद्शोऽध्यायः ॥अथ क्षत्रियादिवधे-गवाद्यपहारे-वृतवर्णनम् ।

नित्यं त्रिषवणस्नायी कृत्वा प्रणंकुटीं वने । अधःशायी जटाधारी पर्णमूलफलाशनः ॥१ व्रामं विशेच भिक्षार्थं स्वकर्म परिकीर्तयन्। एककालं समश्नीयाद्वर्षे तु द्वादशे गते।।२ हेमस्तेयी सुरापश्च त्रह्महा गुरुतल्पगः। व्रतेनेतेन ग्रुध्यन्ते महापातकिनस्त्विमे ॥३ यागस्यं क्षत्त्रियं हत्वा वेश्यं हत्वा च याजकम्। एतदेव व्रतं कुर्याद्वात्रेयीविनिषूदकः ॥४ कूटसाक्ष्यं तथैवोत्तवा निक्षेपमपहत्य च । एतदेव व्रतं कुर्यात्यक्त्वा च शरणागतम् ॥५ आहिताग्नेः स्त्रियं हत्वा मित्रं हत्वा तथैव च। हत्वा गर्भमविज्ञातमेतदेव व्रतं चरेत्।।६ वनस्थं च द्विजं हत्वा पार्थिवं च कृतागसम्। एतदेव व्रतं कुर्याद् द्विगुणं च विशुद्धये।।७ क्षत्त्रियस्य च पादोनं वधेऽर्धं वैश्यघातने । अर्धमेव सदा कुर्यात्स्नीवधे पुरुषस्तथा ॥८ पादं तु शूद्रहत्यायामुद्रव्यागमने तथा। गोवधे च तथा कुर्यात्परदारगतस्तथा ॥६

पशून्हत्वा तथा प्राम्यान्सासं कृत्वा विचक्षणः। आरण्यानां बधे तद्वत्तदर्धं तु विधीयते ।।१० हत्वा द्विजं तथा सर्पजलेशयविलेशयान्। सप्तरात्रं तथा कुर्याद् व्रतं ब्रह्महणस्तथा ॥११ अनस्थनां शकटं हत्वा सास्थनां दशशतं तथा। ब्रह्महत्याव्रतं कुर्यात्पूर्णं संवत्सरं नरः ॥१२ यस्य यस्य च वर्णस्य वृत्तिच्छेदं समाचरेत्। तस्य तस्य वधे प्रोक्तं प्रायश्चित्तं समाचरेत्।।१३ अपहृत्ये तु वर्णानां भुवं प्राप्य प्रमादतः। प्रायश्चित्तं वधे प्रोक्तं बाह्यगानुमतं चरेत् ॥१४ गोजाश्वस्यापहर्णे मणीनां रजतस्य च। जलापहरणे चैव कुर्यात्संवत्सरव्रतम् ॥१४ तिलानां धान्यवस्त्राणां मद्यानामामिषस्य च । संवत्सराधे कुर्वीत व्रतमेतत्समाहितः।।१६ रुणेक्षुकाष्ट्रतकाणां रसानापिहारकः। मासमेकं व्रतं कुर्याद् गन्धानां सर्पिषां तथा ॥१७ **छवणानां गुडानां च मू**लानां कुसुमस्य च । मासार्धे तु व्रतं कुर्यादेतदेव समाहितः ॥१८ स्त्रीहानां वैदलानां च सूत्राणां चर्मणां तथा। एकरात्रवतं दुर्यादेतदेव समाहितः ॥१६ भुक्तवा पलाण्डुं लगुनं मद्यं च कवकानि च। नारं मलं तथा मांसं विड्वराहं खरं तथा ॥२०

Sध्यायः] विवत्सादीनांक्षीरपाने-शूद्रादीनामन्नभोजने-वृतवि० १४४६

गौधरकुञ्जरोष्ट्रं च सवपञ्चनखं तथा। कव्यादं कुवकुटं ग्राम्यं कुर्यात्संवत्सरं वतम् ॥२१ भक्ष्याः पञ्चनखास्त्वेते गोधाकच्छपशह्नकाः। खड्गश्च शशकश्चेव तान्हत्वा च चरेद्व्रतम्।।२२ हंसं मद्गुं बकं काकं काकोलं खञ्जरीटकम्। मत्स्यादांश्च तथा मत्स्यान्वलाकं शुकसारिके ॥२३ चक्रवाकं प्रवं कोकं मण्डूकं भुजगं तथा। मासमेकं व्रतं कूर्यादेतचैव न भक्षयेत्।।२४ राजीवान्सिहतुण्डाश्च सशल्कांश्च तथैव च । पाठीनरोहितौ भक्ष्यौ मत्स्येषु परिकीर्तितौ ॥२४ जलेचरांश्च जलजान्मुखाम्नविषिकरान्। रक्तपादाञ्जालपादान्सप्ताहं व्रतमाचरेत्।।२६ तित्तिरं च मयूरं च लावकं च कपिञ्जलम्। वार्घीणसं वतकं च भक्ष्यानाह यमस्तथा ॥२७ भुक्त्या चोभयतोदन्तं तथैकशफदंष्ट्रिणः। तथा भुक्त्वा तु मांसं वै मासार्धं व्रतमाचरेत्।।२८ स्वयं मृतं वृथा मांसं माहिषं त्वाजमेव च। गोश्र क्षीरं विवत्सायाः संधिन्याश्र तथा पयः ॥२६ संधिन्यमेध्यं भक्षित्वा पक्षं तु व्रतमाचरेत्। क्षीराणि यान्यभक्ष्याणि तद्विकाराशने बुधः ॥३० सप्तरात्रं व्रतं कुर्याद्यदेतत्परिकीर्तितम्। लोहितान्वृक्षनिर्यासान्त्रश्चनप्रभवांस्तथा ॥३१

केवलानि च शुक्तानि तथा पर्युषितं च यत्। गुड्युक्तं तथा भुक्त्वा त्रिरागं च त्रती भवेत्।।३२ द्धि भैक्ष्यं च शुक्तें (क्ते)षु यश्चान्यद्धिसंभवम्। गुडशुक्तं तु भक्ष्यं स्यात्ससर्पिष्कमिति स्थितिः ॥३३ यवगोधूमजाः सर्वे विकाराः पयसश्च ये । राजवाडवकुल्यं च भक्ष्यं पर्युषितं भवेत्।।३४ सजीवपक्रमांसं च सर्वं यत्नेन वर्जयेत्। संबत्सरं व्रतं कुर्यात्प्राश्येताञ्ज्ञानतस्तु तान् ॥३५ शूद्रान्नं ब्राह्मणो अक्त्वा तथा रङ्गावतारिणः। चिकित्सकस्य क्षुद्रस्य तथा स्नीमृगजीविनः ॥३६ ष(प)ण्डस्य कुलंटायाश्च तथा वन्धनचारिणः। बद्धस्य चैव चोरस्य अवीरायाः स्त्रियस्तथा ॥३७ चर्मकारस्य वेणस्य क्षीवस्य पतितस्य च । हक्मकारस्य घूर्तस्य तथा वार्धुषिकस्य च ॥३८ कद्र्यस्य नृशांसस्य वेश्यायाः कितवस्य च । गणामं भूमिपालान्नमन्नं चैव श्वजीविनाम् ॥३६ मौक्षिकान्नं सूतिकान्नं भुक्त्वा मासं त्रतं चरेत्। शूद्रस्य सततं भुक्त्वा षण्मासान्त्रतमाचरेत्।।४० वैश्यस्य तु तया भुक्त्वा त्रीनमासान्त्रतमाचरेत्। क्षत्त्रियस्य तथा भुक्त्वा द्वीमासी व्रतमाचरेत्।।४१ ब्राह्मणस्य तथा भुक्त्वा मासमेकं व्रतं चरेत्। अपः सुराभाजनस्थाः पीत्वा पक्षं व्रतं चरेत्।।४२

ऽध्यायः] मद्यभाण्डागतशूद्रोच्छिष्टकाकोच्छिष्टादीनांवृतवर्णनम् १४५१

मद्यभाण्डगताः पीत्वा सप्तरात्रं व्रतं चरेत्। शूद्रोच्छिष्टाशने मासं पक्षमेकं तथा विशः ॥४३ क्षत्त्रियस्य तु सप्ताहं त्रह्मणस्य तथा दिनम्। अप्रश्राद्धाशने विद्वान्मासमेकं त्रती भवेत् ॥४४ परिवित्तिः परिवेत्ता च यया च परिविन्द्ति । व्रतं संवत्सरं कुर्युदीतृयाजकपश्चमाः ॥४५ काकोच्छिष्टं गवाऽऽघातं भुक्त्वा पक्षं व्रती भवेत्। दूषितं केशकीटैश्च मृषिकालाङ्गलेन च ॥४६ मिक्कामशकेनापि त्रिरात्रं तु व्रती भवेत्। वृथा क्रुसरसंयावपायसापूपशष्कुलीः॥ ४७ भुक्तवा त्रिरात्रं कुर्वीत वृतमेतत्समाहितः। नील्या चैव क्षतो विप्रः शुना दष्टस्तथैव च ४८ त्रिरात्रं तु वृतं कुयात्पुंश्वलीदशनक्षतः। पाद्प्रतापनं कृत्वा विह्नं कृत्वा तथाऽप्यधः ॥४६ कुशैः प्रमृज्य पादौ च दिनमेकं वृती भवेत्। नीलीवस्तं परी (रि) धाय भुक्त्वा स्नानाईणस्तथा ॥५० त्रिरात्रं च वतं कुर्याच्छित्वा गुल्मलतास्तथा। अध्यास्य शयनं यानमासनं पादुके तथा ॥५१ पलाशस्य द्विजश्रेष्ठिसात्रं तु वृती भवेत्। वाग्दुष्टं भावदुष्टं च भाजने भावदूषिते। भुक्तवाऽनं ब्राह्मणः पश्चात्त्रिरागं तु वृती भवेत्।।५२

क्षत्त्रियस्तु रणे दत्त्वा पृष्ठं प्राणपरायणः। संवत्सरवृतं कुर्याच्छित्वा वृक्षं फलप्रदम् ॥५३ दिवा च मैथुनं गत्वा स्नात्वा नग्नस्तथाऽम्भसि। नम्रां परिश्चयं दृष्ट्या दिनमेकं वृती भवेत्।। ५४ क्षिप्तवाऽमावशुचि द्रव्यं तदेवाम्भसि मानवः। मासमेकं वृतं कुर्यादुपक्रुध्य तथा गुरुम्।। ५५ पीतावशेषं पानीयं पीत्वा च ब्राह्मणः कचित्। त्रिरात्रं तु वृतं कुर्याद्वामहस्तेन वा पुनः ॥५६ एकपङ्क्त्युपविष्टेषु विषमं यः पयच्छति । स च तावदसौ पक्षं कुर्यात्तु ब्राह्मणो वृतम्।।५७ धारयित्वा तुलाचार्यं विषमं कारयेद्वणिक्। सुरालवणमद्यानां दिनमेकं वृती भवेत्।।५८ मांसस्य विक्रयं कृत्वा कुर्याचैव महावृतम्। विक्रीय पणिना मद्यं तिलस्य च तथाऽऽचरेत्।।५६ हुंकारं ब्राह्मणस्योक्त्वा त्वंकारं च गरीयसः। दिनमेकं वृतं कुर्यात्प्रयतः सुसमाहितः ॥६० प्रेतस्य प्रेतकार्याणि अकृत्वा धनहारकः। वर्णानां यद्वृतं प्रोक्तं तद्वृतं प्रयतश्चरेत्।।६१ कृत्वा पापं न गृहेत गुह्यमानं विवर्धते। कृत्वा पापं बुधः कुर्यात्पर्षदोऽनुमतं वृतम् ॥६२ तस्करश्वापदाकीर्णे बहुव्यालमृगे वने। न व्रतं ब्राह्मणः कुर्य्यात्प्राणवाधाभयात्सदा ॥६३

नादिव्रतं।

सर्वत्र जीवनं रक्षेज्ञीवन्पापमपोहति । वृतेः कृच्छ्रेश्च दानेश्च इत्याह भगवान्यमः ॥६४ शरीरं धमसर्वस्वं रक्षणीयं प्रयक्षतः । शरीरात्स्रवते धर्मः पर्वतात्सिळ्ळं यथा ॥६५ आळोच्य धर्मशास्त्राणि समेत्य ब्राह्मणैः सह । प्रायश्चित्तं द्विजो दद्यात्स्वेच्छया न कथंचन ॥६६ इति शाङ्क्षे धर्मशास्त्रे सप्तदशोऽध्यायः ॥

।। अथाष्टादशोऽध्यायः ॥ अघमर्षण, पराक, कुच्छ, अतिकुळ्ळ, सान्तापनःदिवृतम् ।

त्रयहं त्रिषवणस्नायी स्नाने स्नानेऽघमर्षणम्।
निमग्निक्षः पठेद्रम् न भुञ्जीत दिनत्रयम्।।१
वीरासनं च तिष्ठेत गां दद्याच पयस्विनीम्।
अघमषणमित्येतद्वृतं सर्वाघनाशनम्।।२
त्रयहं सायं त्र्यहं प्रातस्त्रयहमद्यादयाचितम्।
त्रयहं परं च नाश्नीयात्प्राजापत्यं चरन्वृतम्।।३
त्रयहमुष्णं पिवेत्तोयं त्र्यहमुष्णं घृतं पिवेत्।
त्रयहमुष्णं पयः पीत्वा वायुभक्षस्त्रययहं भवेत्।।४
तप्तकृच्छ्रं विजानीयाच्छीतैः शीतमुदाहृतम्।
हादशाहोपवासेन पराकः परिकीर्तितः।।६
विधिनोदकसिद्धानि मासमश्नीत यत्नतः।
स कृत्वा सोदकान्मासं कृच्छ्रं वार्षणसुच्यते।।६

बिल्वेरामलकैर्वाऽपि पद्माक्षेरथवा शुभैः। मासेन लोकेऽतिक्रच्छ्रः कथ्यते बुद्धिसत्तमैः॥७ गोमूत्रं गोमयं क्षीरं द्धि सर्पिः कुशोद्कप्। एकरात्रोपवासश्च कुच्छ्रं सांतपनं स्मृतम्।।८ एतेस्तु ज्यहमभ्यस्तं महासातपनं स्मृतम्। पिण्याकं [क] वामतकाम्बुसक्तूनां [१] प्रतिवासरम्।।६ उपवासान्तराभ्यासात्तुलापुरुष उच्यते । गोपुरीषाशनो भूत्वा मासं नित्यं समाहितः ॥१० वृतं तु यावकं कुर्यात्सर्वपापापनुत्तये। यासं चन्द्रकलावृद्धचा प्राश्नीयाद्वर्धयन्सदा ॥१११ ह्रासयेच कलाहानी वृतं चान्द्रायणं चरेत्। मुण्डिख्यवणस्नायी अधः शायी जितेन्द्रियः ॥१२ स्त्रीशूद्रपतितानां च वर्जयेत्परिभाषणम्। पवित्राणि जपेच्छत्तया जुहुयाचैव शक्तितः १३ अयं विधिः स विद्योयः सर्वद्युच्छे षु सर्वदा। पापात्मानस्तु पापेभ्यः कुच्छ्रैः संतारिता नराः ॥१४ गतपापादिकं यान्ति नात्र कार्या विचारणा। शङ्खपोक्तमिदं शास्त्रं योऽधीते बुद्धिमान्नरः॥ सर्वपापविनिर्मुक्तः स्वर्गलोके महीयते ॥१६ इति शाङ्के धर्मशास्त्रेऽष्टादशोऽध्यायः॥ समप्राचेयं शङ्खसमृतिः। ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु।

ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः।

॥ अथ ॥

* लिखितस्मृतिः *

अथेष्टापूर्तकर्म, वृषोत्सर्गफल, गयापिण्डदान, षोड्श श्राद्धानि वर्णनम्।

इष्टापूर्ते तु कर्तव्ये ब्राह्मणेन प्रयक्षतः ।
इष्टेन लभते स्वर्ग पूर्ते मोक्षमवाप्नुयात् ।।१
एकाहमपि कर्तव्यं भूमिष्ठमुद्दकं शुभम् ।
कुलानि तारयेत्सप्त यत्र गौर्वितृषी (षा) भवेत् ।।२
भूमिदानेन ये लोका गोदानेन च कीर्तिताः ।
तांक्षोकान्प्राप्नुयान्मर्त्यः पादपानां प्ररोपणे ।।३
वापीकूपूतडागानि देवतायतनानि च ।
पतितान्युरेद्यस्तु स पूर्तफलमश्नुते ।।४
अग्निहोत्रं तपः सत्यं वेदानां चेव पालनम् ।
आतिथ्यं वैश्वदेवं च इष्टमित्यभिधीयते ।।५
इष्टापूर्से द्विजातीनां सामान्यो धर्म उच्यते ।
अधिकारी भवेच्छूदः पूर्ते धर्मे न वैदिके ।।६

यावदिश्य मनुष्यस्य गङ्गातोयेषु तिष्ठति । तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गछोके महीयते ॥७ देवतानां पितृणां च जले द्याज्जलाञ्चलीन्। असंस्कृतमृतानां च स्थले द्याज्ञलाञ्जलिम्।।८ एकादशाहे प्रेतस्य यस्य चोत्सृज्यते वृषः। मुच्यते प्रेतलोकान्तु पितृलोकं स गच्छति ॥६ एष्ट्रव्या वहवः पुत्रा यद्येकोऽपि गयां व्रजेत्। यजेत बाऽश्वमेधेन नीलं वा वृषमुत्सृजेत्।।१० वाराणस्यां प्रविष्टस्तु कदाचित्रिष्क्रमेद्यदि। हसन्ति तस्य भूतानि अन्योन्यं करताडनैः ॥११ गयाशिरे तु यरिंकचिन्नामा पिण्डं तु निर्वपेत्। नरकस्था दिवं यान्ति स्वगस्था मोणमाप्नुयुः ॥१२ आत्मनो वा परस्यापि गयाकूपे यतस्ततः। यन्नाम्ना पातयेत्पिण्डं तं नयेद् ब्रह्म शाश्वतम् ॥१३ छोहितो यस्तु वर्णेन शङ्खवर्णखुरः स्मृतः। लाङ्गूलशिरसोश्चेव स वै नीलवृषः रमृतः ॥१४ नवश्राद्धं त्रिपक्षं च द्वादशैव तु मासिकम्। षण्मासौ(से) चाऽऽब्दिकं चैव श्राद्धान्येतानि षोडश ॥१५ यस्यैतानि न कुर्वीत एकोदिष्टानि घोडश। पिशाचत्वं स्थिरं तस्य दत्तेः श्राद्धशतैरपि ॥१६ सपिण्डीकरणादूर्ध्वं प्रतिसंवत्सरं द्विजः। मातापित्रोः पृथक्कुर्यादेकोहिष्टं मृतेऽहनि ॥१७

वर्षे वर्षे तु कर्तव्यं मात्रापित्रोस्तु संततम्। अदैवं भोजयेच्छाद्धं पिण्डमेकं तु निर्वपेत्।।१८ संक्रान्तावपरागे च सर्वोत्सवमहालये। निर्वाप्यास्तु त्रयः पिण्डा एकतस्तु क्षयेऽहनि ॥१६ एकोहिष्टं परित्यज्य पार्वणं कुरुते द्विजः। अकृतं तद्विजानीयात्स मातृ [ता]पितृघातकः ॥२० अमावास्या[यां तु] क्षयो यस्य प्रेतपक्षेऽथ वा यदि। सपिण्डीकरणादूध्वं तस्योक्तः पार्वणो विधिः ॥२१ त्रिद्ण्डमहणादेव प्रेतत्वं नैव जायते। अहन्येकादशे प्राप्ते पार्वणं तु विधीयते ॥२२ यस्य संवत्सरादर्वाक्सपिण्डीकरणं स्मृतम्। प्रत्यहं तत्सोदकुम्भं दद्यात्संवत्सरं द्विजः। पत्या चैकेन कर्तव्यं सपिण्डीकरणं ख्रियाः ॥२३ पितामह्याऽपि तत्तिस्मिन्सत्येवं तु क्षयेऽहिन । तस्यां सत्यां प्रकर्तव्यं तस्याः श्वश्वेति निश्चितम् ॥२४ विवाहे चैव निर्वृत्ते चुतुर्थेऽहनि रात्रिषु। एकत्वं सा गता भर्तुः पिण्डे गोत्रे च सूतके ॥२५ स्वगोत्राद्वश्यते नारी उद्वाहारसप्तमे पदे। भर्तुगोत्रेण कर्तव्यं [व्या] दानं पिण्डोदकक्रियाः ॥२६ द्विमातुः विण्डदानं तु विण्डे विण्डे द्विनामतः। षण्णां देयास्त्रयः पिण्डा एवं दृश्ता न मुह्यति॥२७

अथ चेन्मन्त्रविद्युक्तः शारीरैः पङ्क्तिदृषणैः। अदृष्यं तं यमः प्राह पङ्क्तिपावन एव सः ॥२८ अग्नौकरणशेषं तु विश्वेदेवादि हूयते। अग्न्यभावे तु विप्रस्य पाणावेवोपपाद्येत् ॥२६ यो द्यग्निः स द्विजो विप्रैर्मन्त्रदर्शिभिरुच्यते ॥३० अजस्य दक्षिणे कर्णे पाणौ विप्रस्य दक्षिणे। रजते च सुवर्णे च नित्यं वसति पावकः ॥३१ यत्र यत्र प्रदातव्यं श्राद्धं कुर्वीत पार्वणम्। तत्र मातामहानां च कर्तव्यमुभयं सदा ॥३२ अपुत्रा ये मृताः केचित्पुरुषा वा ह्यियोऽपि वा। एभ्य एव प्रदातव्यमेकोहिष्टं न पार्वणम्।।३३ यस्मिन्राशिगते सूर्ये विपत्तिः स्याद्विजन्मनः। तस्मिन्नहिन कर्तव्यं दानं पिण्डोदकिकया ॥३४ वर्षवृद्ध्याभिषेकादि कर्तव्यमधिके न तु। अधिमासे तु पूर्वं स्याच्छ्राद्धं संवत्सरादिप ॥३५ स एव हेयोदिष्टस्य येन केन तु कर्मणा। अभिघातान्तरं कार्यं तत्रैवाहः कृतं भवेत्।।३६ शालाग्नौ पच्यते ह्यन्नं लौकिके वाथ संशयः। यस्मिन्नेव पचेद्नं तस्मिन्होमो विधीयते ॥३७ वैदिके छौकिके वाऽपि नित्यं हुत्वा ह्यतन्द्रितः। वदिके स्वर्गमाप्नोति छौकिके हिनत किल्विषम्।।३८

दर्भकृष्णाजिनादीनांनिर्माल्यताभावं, श्राद्धे मृन्मयपात्रे १,४५६ अन्नदानेनिषेधः।

अम्नीव्याहतिभिः पूर्वं हुत्वा मन्त्रीस्तु शाक्छैः। संविभागं तु भूतेभ्यस्ततोऽश्नीयादनिनमान् ॥३६ उच्छेषणं तु नोत्तिष्ठदावद्विप्रविसर्जनम्। ततो गृहबिछ कुर्यादिति धर्मो व्यवस्थितः ॥४० द्रभाः कृष्णाजिनं मन्त्रा त्राह्मणाश्च विशेषतः। नैते निर्माल्यतां यान्ति नियोक्तव्याः पुनः पुनः ॥४१ पानमाचमनं कुर्यात्कुशपाणिः सदा द्विजः। भुत्तवाऽप्यु(नो)च्छिष्टतां याति एष एव विधिः स्मृतः ॥४२ पान आचमने चैव तर्पणे दैविके सदा। कुशहस्तो न दुष्येत यथा पाणिस्तथा कुशः ॥४३ वामपाणी कुशं कृत्वा दक्षिणेन उपस्पृशेत्। आच [चा] मन्ति च ये मूढा रुधिरेणाऽऽचमन्ति ते ॥४४ नीवीमध्येषु ये दर्भा ब्रह्मसूत्रेषु ये कृताः। पवित्रांस्तान्विजानीयाद्यथा कायस्तथा कुशाः ॥४४ पिण्डे कृतास्तु ये दर्भा यै: कृतं पितृतर्पणम्। मूत्रीच्छिष्टपुरीषं च तेषां त्यागो विधीयते ॥४६ दैवपूर्वं तु यच्छाद्धमदैवं चापि यद्भवेत् । बह्मचारी भवेत्तत्र कुर्याच्छ्राद्धं तु पैतृकम्।।४७ मातुः श्राद्धं तु पूर्वं स्यात्पितृणां तदनन्तरम्। ततो मातामहानां च वृद्धौ श्राद्धत्रयं रमृतम् ॥४८ कतुर्दक्षो वसुः सत्यः कालकामौ धुरिलोचनौ । पुरूरवार्द्रवाख्नैव विश्वेदेवाः प्रकीर्तिताः ॥४६

आगष्द्रन्तु महाभागा विश्वेदेवा महाबलाः। ये यत्र विहिताः श्राद्धे सावधाना भवन्तु ते ॥६० इष्टिश्राद्ध कर्तुर्दक्षो वसुः सभ्यश्च वैदिके। कालः कामोऽग्निकार्येषु काम्येषु धुरिलोचनौ ॥५१ पुहरवार्द्रवश्चेव पार्वणेषु नियोजयेत् ॥५२ यस्यास्तु न भवेद् भ्राता न विज्ञायेत वा पिता। नोपयच्छेत तां प्राज्ञः पुत्रिकाधर्मशङ्ख्या ॥५३ अभ्रातृकां प्रदास्यामि तुभ्यं कन्यामलंकृताम्। अस्यां यो जायते पुत्रः स मे पुत्रो भविष्यति ॥५४ मातुः प्रथमतः पिण्डं निर्वपेत्पुत्रिकासुतः। द्वितोयं तु पितुस्तस्यास्त्रतीयं तु पितुः पितुः ॥ १४ मृष्मयेषु च पात्रे षु श्राद्धे यो भोजयेत्पतृन्। अन्नदाता पुरोधाश्च भोक्ता च नरकं वृजेत्।।६६ अलाभे मृण्मयं दद्यादनुज्ञातस्तु तैर्द्विजैः। घृतेन प्रोक्षणं कुर्यान्मृदः पात्रं पवित्रकम् ॥५७ श्राद्धं कृत्वा परश्राद्धे यस्तु भृञ्जीत विह्नलः। पतन्ति पितरस्तस्य छुप्तपिण्डोदकक्रियाः ॥५८ श्राद्धं दत्त्वा च भुत्त्वा च अध्वानं योऽधिगच्छति। भवन्ति पितरस्तस्य तन्यासं पांसुभोजनाः ॥५६ पुनर्भोजनमध्यानं भाराध्ययनमैथुनम्। दानं प्रतिप्रहं होमं श्राद्धभुक्त्वष्ट वजयेत्।।६०

श्राद्धे -परश्राद्धभोक्तृ, श्राद्धकर्तृ, श्राद्धभोक्तृ, नवश्राद्धे । भुञ्जानस्य वर्णनम् ।

अध्वगामी भन्नेदश्वः पुनर्भोक्ता च वायसः। कर्मकुजायते दासः स्त्रीसङ्गेन च सूकरः ॥६१ द्शकृत्वः पिवेदा (चा) पः सावित्र्या चाभिन्त्रिताः। ततः संध्यामुपासीत शुध्येत तद्नन्तरम् ॥६२ आर्द्रवासास्तु यत्कुर्याद्वहिजानु च यत्कृतम्। तत्सर्वं निष्फलं कुर्याज्ञपहोमप्रतिहम् ॥६३ चान्द्रायणं नवश्राद्धे पराको मासिके तथा। पक्षत्रये तु कुच्छूं स्यात्वण्मासे कुच्छूमेव च ॥६४ ऊनाब्दिके त्रिरात्रं स्यादेकाहः पुनराब्दिके। शावे सासस्तु भुत्तवा वा पादकुच्छ्रो विधीयते ॥६४ सर्पविप्रहतानां च शृङ्गिदंष्ट्रिसरीसृपैः। आत्मनस्त्यागिनां चैव श्राद्धमेषां न कारयेत् ॥६६ गोभिर्हतं तथोद्वद्धं ब्राह्मणेन तु घातितम्। तं स्पर्शयन्ति ये विप्रा गोजाश्वाश्च भवन्ति ते ॥६७ अग्निद्वाता तथा चान्ये पाशच्छेदकराश्च ये। तप्तकुच्छ्रेण शुध्यन्ति मनुराह प्रजापतिः ॥६८ ज्यह्मुष्णं पिबेदा [चा] पस्त्र्यह्मुष्णं पयः पिबेत्। ज्यहमुख्णं घृतं पीत्वा वायुभक्षो दिनत्रयम् ॥६६ गोभूहिरण्यहरणे स्त्रीणां क्षेत्रगृहस्य च। यमुद्दिश्य त्यजेत्प्राणांस्तमाहुर्बहाधातकम् ॥७० उद्यताः सह धावन्ते सर्वे ये शस्त्रपाणयः। यदंकोऽपि ह्नेत्तत्र सर्वे ते बह्यवातकाः ॥ १

वहूनां शस्त्रघातानां यद्येको मर्भघातकः। सर्वे ते शुद्धिमि [मृ]च्छन्ति स एको ब्रह्मघातकः ॥७२ पतितात्रं यदा भुङ्क्ते भुङ्क्ते चाण्डालवेश्मनि । स मासाद्धं चरेद्वारि मासं कामकृतेन तु ॥७३ यो येन पतितेनेव संसर्ग याति मानवः। स तस्यैव वृतं कुर्यात्तत्तत्स(त्संस)र्गविशुद्धये ॥७४ ब्रह्महा (ह) पातिकस्पर्शे स्नानं येन विधीयते। तेनैवोच्टिसंस्ट्रष्टः प्राजापत्यं समाचरेत् ॥७५ ब्रह्महा च सुरापायी तथैव गुरुतल्पगः। महान्ति पातकान्याहुस्तत्संसर्गी च पश्वमः ॥७६ स्नेहाद्वा यदि वा लोभाद्भयाद्ज्ञानतोऽपि वा। कुर्वन्त्यनुप्रहं ये तु तत्पापं तेषु गच्छति ॥ ७७ उच्छिष्टोच्छिष्टसंस्पृष्टो ब्राह्मणस्तु कदाचन। तत्क्षणात्कुरते स्नानमाचमेन शुचिर्भवेत्।।७८ कुब्जवामनष(ष)ण्डेषु गद्गदेषु जडेषु च । जात्यन्धे वधिरे मूके न दोषः परिवेदने ॥७६ क्वीबे देशान्तरस्थे पतिते प्रव्रजितेऽपि वा। योगशास्त्राभियुक्ते च न दोषः परिवेदने ॥८० षूरणे कूपवापीनां वृक्षच्छेदनपातने । विकीणीते अपि हारवं गोवधं तस्य निर्दिशेत् ॥८१ पादेऽङ्गरोसवपमं द्विपादे रसश्रु केवलम्। वृतीये तु शिखावर्जं शिखाक्चेद्यवुर्थके ॥८२

कुळ्जवामनादिषुपरिवेदनं,गोवधसमं,चण्डालघटोदकपानव० १४६३

चण्डालोदकसंस्पर्शे स्नानं येन विधीयते । तेत्वोच्छिष्टसंसृष्टः प्राजापत्यं समाचरेत्।।८३ चण्डालघटभाण्डस्थं यत्तीयं पिबते द्विजः। तत्क्षणात्क्षिपते यस्तु प्राजापत्यं सभाचरेत्।।८४ यदि न क्षिपते तोयं शरीरे तस्य जीयंति। प्राजापत्यं न दातव्यं कुच्छ्ं सांतपनं चरेत् ॥८५ चरेत्सांतपनं विप्रः प्राजापत्यं तु क्षत्त्रियः। तद्धं तु चरेद्वेश्यः पादं शूद्रे तु दापयेत् ॥८६ रजस्वला यदा स्पृष्टा श्वानसूकरवायसैः। उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुध्यति ॥८७ आजानुतः स्नानमात्रमानाभेस्तु विशेषतः। अत अर्ध्वं त्रिरात्रं स्यान्मदिरास्पर्शने मतम् ॥८८ बालश्चेव दशाहे तु पश्चत्वं यदि गच्छति। सद्य एव विशुध्येत नाशौचं नोदकक्रिया ॥८६ शावसृतक उत्पन्ने सृतकं तु यदा भवेत्। शावेन शुध्यते सृतिर्न सृतिः शावशोधिनी ॥६० षष्ठेन शुध्येतैकाहं पश्चमे त्व(ज्य) हमेव तु। चतुर्थे सप्तरात्रं स्यात्त्रिपुरुषं दशमेऽहनि ॥६१ मरणारब्धमाशौचं संयोगो यस्य नाम्निभिः। आदाहात्तस्य विज्ञेयं यस्य वैतानिको विधिः ॥६२ आममासं घृतं क्षौद्रं स्नेहाश्च फलसंभवाः। अन्सभाण्डस्थिता होते निष्क्रान्ताः शुचयः सपृताः ॥६३ मार्जनीरजमेष (षा)ण्डं स्नानवस्त्रघटोदकम्।
नवाम्भसि तथा चैव हन्ति पुण्यं दिवाकृतम्।।६४
दिवा कपित्थच्छायायां रात्रौ दिधशमीषु च।
धात्रीफलेषु सर्वत्र अलक्ष्मीवंसते सदा।।६५
यत्र यत्र च संकीर्णमात्मानं मन्यते द्विजः।
तत्र तत्र तिलेहोंमो गायत्रयष्टशतं जपेत्।।६६
इति लिखितिषिप्रोक्तं धर्मशास्त्रं समाप्तम्।
समाप्तेयं लिखितस्मृतिः।

ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः।

॥ अथ ॥

—॥ शङ्खलिखितस्मृतिः॥—

श्रीगणेशाय नसः।

一:緣::緣:--

अथ वश्वदेवमकृत्वैव भुद्धानस्य काकयोनिवर्णनम्। वासुदेवं नमस्कृत्य शङ्कस्य लिखितस्य च। धर्मशास्त्रं प्रवस्त्यामि दिष्न चैव धृतं यथा।।१

वैश्वदेवेन ये हीना आतिथ्येन विवर्जिताः। सर्वे ते वृषला ज्ञेयाः प्राप्तवेदा अपि द्विजाः ॥२ अकृते वैश्वदेवे तु ये अञ्जन्ति द्विजातयः। वृथा ते तेन पाकेन काकयोनि व्रजन्ति वै।।३ अनं व्याहृतिभिद्धत्वा तथा मन्त्रीस्तु शाक्छैः। अनं विभज्य भूतेभ्यस्ततोऽरनीयादनप्रिमान् ॥४ यो द्याद्विष्ठिक्छेशः सांनाय्यं वा निवर्तते । दृष्टो वाऽदृष्टपूर्वो वा स यज्ञः सार्वकामिकः ॥५ इष्टो वा यदि वा मूर्जी द्वेष्यः पण्डित एव वा। प्राप्तस्तु वैश्ववेवान्ते सोऽतिथिः स्वर्गसंक्रमः ॥६ दातारः किं विचारेण गुणवान्निगुंणी भवेत्। समं वर्षति पर्जन्यः सस्याद्पि तृणाद्पि ॥ अ यान्त्रासान्क्षुधितो भुङ्क्ते ते प्रासाः क्रतुभिः समाः । त्रासे तु ह्यमेधस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥८ अद्गिश्चाऽऽसनवाक्यैश्च फलैः पुष्पैर्मनोरमैः। रुणैरञ्जलिभिश्चैव देवांस्तुप्येत्पुनः पितृन् ॥६ पितृनभ्यर्चयेद्यस्तु तस्य नास्ति सुतंयमः। इदं तु परमं गुह्यं व्याख्यातमनुपूत्रशः ॥१० स्वलपप्रनथप्रभूतार्थ शङ्खेन छिखितेन च । यथा हि मृण्मयं पात्रं दुष्टं दोषशतैरपि ॥११ पुनर्दाहेन शु येत धर्मशास्त्रस्तथा द्विजाः। धर्मशास्त्रप्रदीपोऽयं धार्यः पथानुदेशिकः ॥१२

निष्यन्दं सर्वशास्त्राणां व्याधीनामिव भेषजम् ॥१३ परपाकनिवृत्तस्य परपाकरतस्य च। अपचस्य तु भुक्त्वाऽत्रं द्विजश्चान्द्रायणं चरेत्।।१४ परान्नेन तु भुक्तेन मैथुनं योऽधिगच्छति। यस्यात्रं तस्य ते पुत्रा अन्नाच्छुकं प्रवर्तते ॥१५ अज्ञात्तेजो मनः प्राणाश्चक्षुः श्रोत्रं यशो बलम्। घृति श्रुति तथा शुक्रं परान्नं वर्जयेद् बुधः ॥१६ परान्नं परवस्तं च परयानं परस्त्रियः। परवेश्मनि वासश्च शकस्यापि श्रियं हरेत् ॥१७ आहिताप्रिस्तु यो विश्रो मत्स्यमांसानि भोजयेत्। कालकपी कृष्णसपीं जायते ब्रह्मराक्षसः ॥१८ आहिताप्रिस्तु यो विशः शूद्रान्नानि च भुञ्जते। पश्च तस्य प्रणश्यन्ति आत्मा ब्रह्म त्रयोऽग्रयः ॥१६ एतद्रथे विशेषेण ब्राह्मणान्पालयेन्सृपः ॥२० प्रत्यूषे च प्रदोषे च यद्धीये(यी)त ब्राह्मणः। तेन राष्ट्रं च राज्यं च वर्धते ब्रह्मतेजसा ॥२१ अत्रं वृक्षस्य राजान्रो मूलं वृक्षस्य ब्राह्मणाः । तस्मान्मूलं न हिंसीयान्मूलाद्यं प्ररोहति ॥२२ फलं वृक्षस्य राजानः पुष्पं वृक्षस्य त्राह्मणाः। तस्मात्पुष्पं न हिंसीयात्पुष्पात्संजायते फलम् ॥२३ गावो भूमिः कलत्रं च ब्रह्मस्वहरणं तथा। यस्तु न त्रायते राजा तमाहुर्बद्याघातकम् ॥२४

अतिथिपूजनं,परान्नभोजनं,राजप्रशंसा,न्नाह्यणप्रशंसनवर्णनम् १४६७

दुर्वलानामनाथानां बालवृद्धतपस्विनाम्। अन्यायैः परिभूतानां सर्विषां पार्थिवो गतिः ॥२५ राजा पिता च माता राजा च परमो गुरुः। राजा च सर्वभूतानां परित्राता गुरुर्मतः ॥२६ दावाग्निद्वदग्धानां राजा पूर्णिसवान्ससौ ॥२७ पक्षिणां बलमाक शं मत्स्यानामुद्कं बलम्। दुबलस्य बलं राजा बालस्य रुदितं बलम् ॥२८ बर्छं मूर्फ़स्य मौनत्वं तस्करस्यानृतं बलम्। एते राजबलाः सर्वे यज्ञेन परिरक्षिताः ॥२६ द्ह्यप्रिस्तेजसा च सूर्यो द्हति रश्मिना। राजा दहित दण्डेन विप्रो दहित मन्युना ॥३० मन्युप्रहरणा विप्राश्चक्रप्रहरणो हरिः। चक्रात्तीक्ष्णतरो मन्युस्तस्माद्विप्रान्न कोपयेत् ॥३१ अग्निदर्भं प्ररोहेत सूर्यदर्भं तथैव च। दण्ड्यस्तु संप्ररोहेत ब्रह्मशापहतो इतः ॥३२

इति शङ्खिलिवितस्मृतिधर्मशास्त्रं समाप्तम् ।

ॐतत्सत्।

ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः।

अथ

॥ वसिष्ठस्मृतिः॥

--::::---

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ प्रथमोऽध्यायः।

अथ धर्मजिज्ञासा, धर्माचरणस्यफलं, धमलक्षणं, अर्यावर्तं, पंचमहापातकवर्णनम्।

अथातः पुरुषनिःश्रेयसार्थं धर्मजिज्ञासा ॥१

ज्ञात्वा चानुतिष्ठन्धार्मिकः प्रशस्यतमो भवति लोके,

प्रेय च स्वर्गं लोकं समस्तुते ॥२

श्रुतिस्मृतिविहितो धर्मः ॥३

तद्लाभे शिष्टाचारः प्रमाणम्।।४

शिष्टः पुनरकामात्मा ॥५

अगुह्यमाणकारणो धर्मः ॥६

आर्यावर्षः प्रागादर्शात्प्रत्यकालकवनादुद्दपारियात्राह-

आर्यावर्तस्थां, एनस्विनिरूपणं, पंचमहापातकवर्णनम् । १४६६

क्षिणेन हिमवत उत्तरेण च विन्ध्यस्य ॥७ तस्मिन्देशे ये धर्मा ये चाऽऽचारास्ते स ६५ प्रत्येतव्याः ॥८ न त्वन्ये प्रतिलोसकलपधर्माणः ॥६ एतदार्यावर्तमित्याचक्षते ॥१० गङ्गायमुनयोरन्तरे उप्येके ॥११ यावद्वा कृष्णमृगो विचरति तावद् ब्रह्मवर्चसमित्यन्ये ॥१२ अथापि भाइविनो निदाने गाथामुदाहरन्ति ॥१३ पश्चात्सिन्धुर्विहरिणी सूर्यस्योदय ं पुरः। यावत्कृष्णोऽभिधावति तावद्वे ब्रह्मवर्चसम् ॥१४ त्रैविद्यवृद्धा यं ब्रूयुर्धमं धर्मविदो जनाः। पवने पावने चैव स धर्मी नात्र संशय इति ॥१४ देशधर्मजातिधमेंकुलर्धाच्य्रस्यभावादव्रवीन्मनुः ॥१६ सूर्याभ्युदितः सूर्याभिनिर्मृक्तः कुनखी श्यावदन्तः परिवित्तिः परिवेत्ता ज्येदिधिषूपतिवीरहा ब्रह्मोङ्भ इत्येनस्विनः ॥१७ पश्च महापातकान्याचक्षते ॥१८ गुरुतल्पसुरापानं भ्रूणहत्या त्राह्मणसुवर्णापहरणं-पतितसंयोगश्च ॥१६ ब्राह्मण वा यौनेन वा ॥२० अथाप्युदाहरन्ति ॥२१ संवत्सरेण पतित पतितेन सहाऽऽचरन्। याजनाध्यापनाद्यौनान्न तु यानासना राना] दिति।।२२ योऽमीनपविष्येद्गुरुं च यः प्रतिजघ्नुयात्रास्तिको-नास्तिकवृत्तिः सोमं च विक्रीणीयादित्युपपातकानि ॥२३

तिस्रो ब्राह्मणस्य भायां वर्णानुपूर्व्येण, द्वे राजन्यस्य, एकैका वैश्यशूद्रयोः ॥२४ शूद्रामध्येके, मन्त्रवर्जं तद्वत् ॥२५ तथा न कुर्यात् ॥२६ अतो हि ध्रुवः कुछापकर्षः प्रेत्य चास्वर्गः ॥२७ षड्विवाहाः ॥२८ ब्राह्मो दैव आर्षो गान्धर्वः क्षात्त्रो मानुषश्चेति ॥२६ इच्छत उदकपूर्व यां दद्यात्स ब्राह्यः ॥३० यज्ञतन्त्रे वितत ऋत्विजे कर्म कुर्वते कन्यां द्दाःद्छं-कृत्य यं दैवमित्याचक्षते ॥३१ गोमिश्रुनेन चाऽऽर्षः ॥३२ सकामां कामयमानः सदृशीं यो निष्ठ(रू)ह्यात्स गान्धवः ३३ यां बलेन सहसा प्रमध्य हरन्ति स क्षात्रः ॥३४ पणित्वा धनक्रीतां स मानुषः ॥३५ तस्माद् दुहित्तमतेऽधिरथं शतं देयमितीह क्रयो विज्ञायते ३६ या पत्युः क्रीता सत्यथान्यैश्चरतीति ह चातुर्मास्येषु ॥३७ अथाप्युदाहरन्ति—३८

विद्या प्रनष्टा पुनरभ्युपैति जातिप्रणाशे त्विह सर्वनाशः।
कुलापदेशेन हयोऽपि पूज्यस्तस्मात्कुलीनां स्त्रियमुद्धहन्ति इति ॥३६
त्रयो वर्णा ब्राह्मणस्य वशे वर्तरन् ॥४०
तेषां ब्राह्मणो धर्मान्प्रब्रूयात् ॥४१
तं राजा चानुशिष्यात् ॥४२
राजा तु धर्मणानुशासयत्पष्ठं पष्ठं धनस्य हरेत् ॥४३
अन्यत्र ब्राह्मणात् ॥४४

ऽध्यायः] अपपातकं, ब्राह्मविवाहं, ब्राह्मणादिवर्णमाचारश्चनिरूपणम् १४७१

इष्टापूर्तस्य तु षष्ठमंशं भजतीति ह ब्राह्मणो वेदमादं करोति, ब्राह्मण आपद् उद्धरति तस्माद्बाह्मणोऽनाद्यः ॥४५ सोमोऽस्य राजा भवतीति ह प्रेत्य चाऽऽभ्युद्यिकमिति ह विज्ञायते ॥४६

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे प्रथमो ध्यायः।

अथ द्वितीयोऽध्यायः।

अथ ब्राह्मणादीनां प्रधानकर्मणि-पातित्यहेतवः कृषिधर्मनिरूपणम्।

चत्वारो वर्णा ब्राह्मणक्षित्त्रयवैश्यशूद्धाः ॥१
त्रयो वर्णा द्विजातयो ब्राह्मणक्षित्त्रयवैश्याः ॥२
तेषां मातुरप्रेऽधिजननं द्वितीयं मौझीवन्धने ॥३
तत्रास्य माता सावित्री पिता त्वाचार्य उच्यते ॥४
वेदप्रदानात्पितेत्याचार्यमाचक्षते ॥६
अथाप्युदाहरन्ति ॥६
द्वयमु वै ह पुरुषस्य रेतो ब्राह्मणस्योध्वं नाभेरवीचीनमन्यद्यद्यद्ध्वं नाभेस्तेनास्यानौरसी प्रजा जायते ॥०
यदुपनयति जनन्यां जनयति यत्साधू करोति ॥८
अथ यद्वांचीनं नामेस्तेनेहास्यौरसी प्रजा जायते ॥६
तस्माच्छोत्रियमनूचानमप्रजोऽसीति न वदन्तीति ॥१०
हारीतोऽप्युदाहरति ॥११

न द्यस्य विद्यते कर्म किचिदामी खिवन्धनात्। वृत्त्या शूद्रसमो ज्ञेयो यावद्वेदे न जायत इति ॥१२ अन्यत्रोदककर्मस्वधापितृसंयुक्तभ्यः ॥१३ विद्या ह वै ब्राह्मगमाजगाम गोपाय मां शेवधिस्तेऽहमस्मि। असूयकायानृजवेऽयताय न मां ब्रूया वीर्यवती तथा स्याम्।। यसेव विद्याः शुचिमप्रमत्तं मेधाविनं ब्रह्मचयःपपन्नम्। यस्तेन दुद्यत्कतमच नाह तस्मे मां ब्र्या निधिपाय ब्रह्मन् १५ य आतृणत्यवितथेन कर्मणा बहुदुःखं कुर्वन्नमृतं संप्रयच्छन्। तं मन्येत पितरं मातरं च तस्मै न दुद्येत्कतमच नाह।।१६ अध्यापिता ये गुरुं नाऽऽद्रियन्ते विप्रा वाचा मनसा-कर्मणा वा। यथैव ते न गुरोभीजनीयास्तथैव तान्न भुनक्ति श्रुतं तत् १७ दहत्यप्रियथा कक्षं ब्रह्मपृष्ठमनादतम्। न ब्रह्म तस्मै प्रब्रूयाच्छक्यं मानमकुर्वत इति ॥१८ षट्कर्माणि त्राह्मणस्य ॥१६ स्वाध्यायाध्ययनमध्यापनं यजनं याजनं दानं प्रतिप्रहश्चेति ।। त्रीणि राजन्यस्य ॥२१

अध्ययनं यजनं दानं च शस्त्रेण च प्रजापास्त्रनंस्वधर्मस्तेन जीवेत् ॥२२ एतान्येव त्रीणि वैश्यस्य, कृषिवाणिज्यं पाशुपास्यं कुसीदं च एतेषां परिचर्या शूद्रस्य ॥२४

अनियता वृत्तिः ॥२५

अनियतकेशवेशाः सर्वेषां मुक्तशिखावर्जम् ॥२६

अजीवन्तः स्वधर्मेणानन्तरां पापीयसीं वृत्तिमातिष्ठेरन्।।२७ न तु कदाचिज्ज्यायसीम्।।२८

वैश्यजीविकामास्थाय पण्येन जीवतोऽश्मलवण मणिशाण-कौशेयक्षौमाजिनानि च तान्तवं रक्तं सर्व च कृतानं पुष्प-फलमूलानि च गम्धरसा उदकं चौषधीनां रसः सोमश्च शक्षं च क्षीरं विषं मासं च सविकारमयस्त्रपु जतु सीसं च ॥२६ अथाप्युदाहरन्ति ॥३०

सद्यः पतित मांसेन लाक्षया लवणेन च।

ज्यहेण शूद्रो भवति **ब्राह्मणः** क्षीरविक्रयात् इति ॥३१

ग्राम्यपशूनामेकशफाः केशिनश्च सर्वे चाऽऽरण्याः पशवो-

वयांसि दंष्ट्रिणश्च ॥३२

धान्यानां तिलानाहुः ॥३३ अथाप्युदाहरन्ति ॥३४ भोजनाभ्यञ्जनाद्दानाचदन्यत्कुरुते तिलेः ।

कुमिभूतः स विष्ठायां पितृभिः सह मज्जित इति ॥३५ कामं वा स्वयं कृष्योत्पाण तिलान्विक्रीणीरन् ॥३६ तत्मात्साण्डाभ्यां सनस्योताभ्यां प्राक्त्रातराशात्कर्षी स्यात् ३७

निदाघेऽपः प्रबच्छेत्।।३८

नानिपीडयहाँङ्गलं प्रवीरवस्तुशेवं सोमपित्सक तदुद्वपति-गामवि चाजानश्चानश्चतरखरोष्ट्रांश्च प्रफर्व्यं च पीवरीं प्रस्थावद्रथवाहनमिति ॥३६ लाङ्गलं प्रवीरवद्वीरवत्सुमनुष्यवदनडुद्वत्सुशेवं-कल्याणनासिकं कल्याणी द्यस्य ।

नासिका नासिकयोद्वपति दूरेऽपविध्यति, सोमपित्सर सोमो ह्यस्य प्राप्नोति, सत्सरु तदुद्वति, गां चावि चाजानश्वानश्व-तरखरोष्ट्रांश्च प्रफर्व्यं च पीवरीं दर्शनीयां कल्याणीं च प्रथमयुवतीम् ॥४० कथं हि लाङ्गलमुद्रपेदन्यत्र धान्यविक्रयात् ॥४१ रसा रसैर्महतो हीनतो वा निमातव्या न त्वेव छवणं रसै:।।४२ तिलतण्डुलपकान्नं विद्यान्मनुष्याश्च विहिताः परिवर्तकेन ॥४३ ब्राह्मणराजन्यौ वार्धुषान्नंनाद्याताम् ॥४४ अथाप्युदाहरित ॥४५ समर्घं धान्यमुद्धृत्य महार्घं यः प्रयच्छति । स वै वार्धुषिको नाम ब्रह्मवादिषु गर्हितः॥ ब्रह्महत्यां च वृद्धि च तुलया समतोलयत्। अतिष्ठद्भूणहा कोट्यां वार्धुषिः समकम्पत इति ॥४६ कामं वा परिलुप्तकृत्याय पापीयसे द्धाताम् ॥४७ द्विगुणं हिरण्यं त्रिगुणं धान्यम् ॥४८ धान्येनैय रसा व्याख्याताः ॥४६ पुष्पमूलफलानि च ॥५० तुलाधृतमष्टगुणम् ॥५१ अथाप्युदाहरन्ति ॥५२ राजानुमतभावेन द्रव्यवृद्धि विनाशयेत् ॥५३ पुना राजाऽभिषेकेण द्रव्यवृद्धि च वर्जयेत्। द्विकं त्रिकं चतुष्कं च पश्वमं च शतं समृतम् ॥५४ मासस्य वृद्धि गृह्वीयाद्वर्णानामनुपूर्वशः।

Sध्यायः] अश्रोत्रियादीनां शूद्रसधर्मत्वमाततायिवधवर्णनऋ १४७६

विसष्ठवचनप्रोक्तां वृद्धिं वार्धुषिके शृणु । पञ्च माषास्तु विंशत्या एवं धर्मो न हीयते ॥५५ इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ।

अथ तृतीयोऽध्यायः । अथाश्रोत्रियादीनांशूद्रसधर्मत्वमाततायिवधवर्णनम् ।

अश्रोत्रिया अननुवास्या अनग्नयो वा शूद्रसधर्माणो भवन्ति ॥१ मानवं चात्र श्लोकसुदाहरन्ति ॥२ योऽनधील द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम्। स जीवन्नेव शूद्रत्वमाद्य गच्छति सान्वयः ॥३ नानृग्त्राह्मणो भवति न वणिङ्न कुशीलवः। न शूद्रप्रेपणं कुर्वन्न स्तेनी न चिकित्सकः ॥४ अत्रता ह्यनधीयाना यत्र भेक्षचरा द्विजाः। तं यामं दण्डयेद्राजा चोरभक्तप्रदो हि सः ॥४ चत्वारोऽपि त्रयो वाऽपि यद् त्रू युर्वेदपारगाः। स धर्मे इति विज्ञेयो नेतरेषां सहस्रशः ॥६ अव्रतानाममन्त्राणां जातिमात्रोपजीविनाम् । सहस्रशः समेतानां परिषत्त्वं न विद्यते ॥७ यहद्नित तमोमूढा मूर्खा धर्ममतिन्द्रयम्। तत्पापं शतधा भूत्वा तहक्तृनधिगच्छति ॥८

श्रोत्रियायेव देयानि हव्यकव्यानि निस्पशः। अश्रोत्रियाय दृत्तं हि पितृन्नेति न देवताः ॥६ यस्य चैंव गृहे मूर्खो दूरे चैव बहुश्रुतः। वहुश्रुताय दातव्यं नास्ति मूर्खे व्यतिक्रमः ॥१० ब्राह्मणातिक्रमो नास्ति विप्रे वेद्विवर्जिते। ज्वलन्तमग्निमुत्सृज्य न हि भस्मनि हूयते।।११ यत्र काष्ठमयो हस्ती यश्च चर्ममयो मृगः। यश्च विप्रोऽनधीयानस्रयस्ते नामधारकाः ॥१२ विद्वद्भोज्यान्यविद्वांसो येषु राष्ट्रेषु भुञ्जते। तान्यनावृष्टिमृच्छन्ति महद्वा जायते भयम्, इति ॥१३ अप्रज्ञायमानं वित्तं योऽधिगच्छेद्राजा-तद्धरेद्धिगन्त्रे षष्टमंशं प्रदाय।।१४ ब्राह्मणश्चेद्धिगच्छेत्षट्कर्मसु वर्तमानो न राजा हरेत्।।१४ आततायिनं हत्वा नात्र प्राणच्छेतुः किंचित्किल्विषमाहुः ॥१६ षड्विधा ह्याततायिनः ॥१७ अथाप्युदाहरन्ति ॥१८ अग्निदो गरद्श्चव शस्त्रपाणिधनापहः। क्षेत्रदारहरश्चेव पडेते ह्याततायिनः ॥१६ आततायिनमायान्तमपि वेदान्तपारगम्। जिघांसन्तं जिघांसीयात्र तेन ब्रह्महा भवेत्।।२० स्वाध्यायिनं कुले जातं यो हन्यादाततायिनम्। न तेन भ्रूणहा स स्यान्मन्युस्तंमृत्युमृच्छति ॥२१

८४यायः] आचार्यलक्षणम्, श्वहतमृगादीनां शुचित्ववर्णनम् १४७७

त्रिणाचिकेतः पञ्चानिस्त्रिसुपर्णवांश्चतुर्मेधा वाजसनेयी षडङ्ग-विद्वहारेयानुसंतानश्छन्दोगो ज्येष्टसामगो मन्त्रवाह्मणविद्यः स्वधर्मानधीते यस्य दशपुरुपं मातृपितृवंशः श्रोत्रियी विज्ञायते विद्वांसः स्नातकाश्चेते पङ्क्तिपावना भवन्ति ॥२२ चातुर्विद्यं विकल्पी च अङ्गविद्धर्मपाठकः। आश्रमस्थास्त्रयो मुख्याः परिषत्स्यादशावरा ॥२३ उपनीय तु यः कृतस्नं वेदमध्यापयेत्स आचार्यः ॥२४ यस्त्वेकदेशं स उपाध्यायो यश्च वेदाङ्गानि ॥२५ आत्मत्राणे वर्णसंकरे वा ब्राह्मणवैश्यो शस्त्रमाददीयाताम्।।२६ क्षत्त्रियस्य तु तन्नित्यमेव रक्षणाधिकारात्।।२७ प्राग्वोद्ग्वाऽऽसीनः प्रक्षाहय पादौ पाणी-चाऽऽमणिबन्धनात्।।२८ अङ्ग्रष्टमृत्रस्योत्तरतो रेखा बाह्यं तीर्थं तेन विराचामेदशब्दवत्द्वि:-(दोषावद्भिः) परिमृज्यान् ॥२६ खान्यद्भिः संसृशेत्।।३० मूर्धन्यपो निनयेत् ॥३१ सब्ये च प्रणो, ब्रजंस्तिप्रच्शयानः प्रणतो वा नऽऽचामेन् ॥३२ हृद्यङ्गमाभिरद्भिर्वुद्वुदाभिरफेनाभित्रीह्मणः

कण्ठगाभिः क्षत्त्रियः शुचिः ॥३३

वैश्योऽद्भिः प्राशिताभिस्तु स्वीश्रृहं स्पृष्टाभिरेव च ॥३४

पुत्रदाराद्योऽपि गोस्तर्पणाः स्युः ॥३५

न वर्णगन्धरसदुष्टाभियश्चि स्युरशुभागमाः ॥३६

न मुख्या विप्रुष उच्छिष्टं कुर्वन्त्यनङ्गरिलष्टाः ॥३७ सुप्त्वा अक्रत्वा पीत्वा श्चत्वा रुदित्वा स्नात्वा चाऽऽचान्तः पुनराचासेत् ॥३८ वासश्च परिधायौष्टौ च संस्वश्य यत्रालोमकौ न श्मश्रुगतो लेपः ॥३६ दन्तवद्दन्तसक्तेषु यचा(प्य)न्तर्मुखे भवेत्। आचान्तस्यावशिष्टं स्यान्निगिरन्नेव तच्छुचिः॥४० परानथाऽऽचामयतः पादौ या विष्रुषो गताः। भूम्यास्तास्तु समाः प्रोक्तास्ताभिनीच्छिष्टभाग्भवेत् ॥४१ प्रचरनभ्यवहार्येषूच्छिष्टं यदि संस्पृशेत्। भूमौ निक्षिष्य तद्द्रव्यमाचान्तः प्रचरेत्पुनः ॥४२ यद्यन्मीमांस्यं स्यात्तत्तद्द्धिः संस्पृशेत् ॥४३ श्वहताश्च मृगा वन्याः पातितं च खगः फलम्। बालैरनुपरिकान्तं स्त्रीभिराचरितं च यत् ॥४४ प्रसारितं च यत्पण्यं ये दोषाः स्त्रीमुखेषु च। मशकैर्मक्षिकाभिश्च निलीयोनो (यैवो)पहन्यते ॥४५ श्चितिस्थाञ्चैव या आपो गवां तृप्तिकराश्च याः। परिसंख्याय तान्सर्वाञ्छुचीनाह प्रजापतिः। इति ॥४६ लेपगन्धापकर्षणे शौचममेध्यलिप्तस्याद्भिर्मु दा च ॥४७ तैजसमृष्ययदारवतान्तवानां भस्मपरिमार्जन-प्रदाहतक्षणनिर्णेजनानि ॥४८ तैजसवदुपलमणीनां मणिवच्छङ्खशुक्तीनां दारुवद्ख्नां रज्जविद्लचर्मणां चेलवच्छीचम् ॥४६

गोवालैः फलमयानां गौरसर्षपकत्केन क्षौमजानाम् ॥५० भूम्यास्तु संयार्जनप्रोक्षणोपलेपनोल्लेखनैर्यथास्थानं दोषविशोषात्प्रायत्यसुपति ॥५१ अथाप्युदाहरन्ति ॥५२ खननाइहनाद्वषांद्गोभिराक्रमणाद्पि। चतुर्भिःशुध्यते भूमिः पञ्चमाचोपलेपनात् । इति ॥५३ रजसा शुध्यते नारी नदी वेगेन शुध्यति। भस्मना शुध्यते कांस्यं ताम्रमम्लेन शुध्यति ॥५४ मद्यैर्मूत्रैः पुरीषेवा श्लेष्मपूयाश्रुशोणितैः । संस्पृष्टं नैव शुध्येत पुनः पाकेन मृण्मयम् ॥५५ अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति । विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति ॥५६ अद्भिरेव काञ्चनं पूयते, तथा राजतम् ॥५७ अङ्गुलिकनिष्ठिकामूले दैवं तीर्थम् ॥ ४८ अङ्गुल्यग्रे मानुषम् ॥५६ पाणिमध्य आग्नेयम् ॥६० प्रदेशिन्यङ्गुष्ठयोरन्तरा पित्र्यम् ॥६१ रोच(न्त)त इति सायं प्रातरग्रीन्य(न)भिपूजयेत् ॥६२ स्वदितमिति पित्र्येषु ॥६३ संपन्नमित्याभ्युद्यिकेषु ॥६४ इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः।

अथ चतुर्थोऽध्यायः।

अथ मधुपकीदिषु पशुहिंसनवर्णनम्।

प्रकृतिविशिष्टं चातुर्वर्ण्यं संस्कारविशेषाच ॥१ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्वाहू राजन्यः कृतः। करू तदस्य यहैरयः पद्भ्यां शूद्रो अजायतः इति निगमो भवति ॥२ गाथत्रया छन्दसा ब्राह्मणमसृजित्त्रष्ट्रभा राजन्यं, जगत्या वैश्यं, न केनचिच्छन्दसा शूद्रमित्यसंस्कार्यो विज्ञायते ॥३ सर्वेषां सत्यमकोधो दानमहिंसा प्रजननं च ॥४ पितृदेवतातिथिपूजायां पशुं हिंस्यात् ॥५ मधुपर्केच यज्ञे च पितृद्वैवतकर्मणि। अत्रैव च पशुं हिंस्यान्नान्यथेत्यव्रवीन्मनुः ॥६ नाकृत्वा प्राणिनां हिंसां मांसमुत्पद्यते कचित्। न च प्राणिवधः स्वर्ग्यस्तस्माद्यागे वधोऽवधः ॥७ अथापि ब्राह्मणाय वा राजन्याय वाडभ्यागताय वा महोक्षं वा महाजं वा पचेदेवमस्याऽऽतिथ्यं कुर्वन्तीति ॥८ उद्कक्रियामशौचं च द्विवर्षात्त्रभृति मृत उभयं कुर्यात् ॥६ दुन्तजननादित्येके ॥१० शरीरमग्निना संयोज्यानवेक्यमाणा अपोऽभ्यवयन्ति ॥११ सब्येतराभ्यां पाणिभ्यामुद्किक्तयां कुर्वन्ति ॥१२

अयुग्मा दक्षिणामुखाः ॥१३

पितॄणां वा एषा दिक्, या दक्षिणा ॥१४
गृहान्त्रजित्वा प्रस्तारे ज्यहमनश्नन्त आसीरन् ॥१५
अशक्तो क्रीतोत्पन्नेन वर्तेरन्दशाहं शावमाशौचं सपिण्डेषु
विधीयते ॥१६
मरणात्प्रभृति दिवसगणना सपिण्डता त सप्तपुरुषं विज्ञायं

मरणात्त्रभृति दिवसगणना सपिण्डता तु सप्तपुरुषं विज्ञायते ॥ अप्रतानां स्त्रीणां त्रिपुरुषं त्रिदिनं विज्ञायते ॥१८ प्रतानामितरे कुर्वीरंस्तांश्च(?) तेषां जननेऽप्येवमेव निपुणां शुद्धिमिच्छतां मातापित्रोबींजनिमित्तत्वात् ॥१६ अथाप्युदाहरन्ति ॥२०

नाशौचं सूतके पुंसः संसर्गं चेन्न गच्छति । रजस्तत्राशुचि ज्ञेयं तच पुंसि न विद्यते, इति ॥२१

तचेदन्तः पुनरापतेच्छेषेण शुध्येरन् ॥२२ रात्रिशेषे द्वाभ्यां, प्रभाते तिसृभिर्बाह्मणो दशरात्रेण पश्चदश-रात्रेण भूमिपो विंशतिरात्रेण वैश्यः शूद्रो मासेन शुध्यति ॥२३ अत्राप्युदाहरन्ति ॥२४

आशीचे यस्तु शूद्रस्य सूतके वाऽपि भुक्तवान् । स गच्छेन्नरकं घोरं तिर्यग्योनिषु जायते, इति ॥२५ अनिर्दशाहे पकान्नं नियोगाद्यस्तु भुक्तवान् । कृमिर्भूत्वा स देहान्ते तद्विद्या मुपजीवति ॥२६ द्वादश मासान्द्वादशार्धमासान्वाऽनश्नन्संहितामधीयानः पूतो भवतीति विज्ञायते ॥२७ उनिहर्वर्षे प्रेते गर्भपतने वा सिपण्डानां त्रिरात्रमाशीचं सद्यः शीचिमिति गौतमः ॥२८ देशान्तरस्थे प्रेत उर्ध्वं दशाहाच्छ्रुत्वैकरात्रमाशौचम् ॥२० आहिताप्रिश्चेत्प्रवसन्धियेत पुनः संस्कारं कृत्वा-शवबच्छीचिमिति गौतमः ॥३० यूपचि(य)तिश्मशानरजस्वलासूतिकाशुचीनुपरपृश्य सिशरा अभ्युपेयादप इति ॥३१

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः।

अथ पञ्चमोऽध्यायः। अथात्रेयीधर्मवर्णनम्।

अस्वतन्त्रा स्त्री पुरुषप्रधाना ॥१ अनिप्रकाऽनुदक्या वा अनृतमिति विज्ञायते ॥२ अथाप्युदाहरन्ति ॥३

पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने ।
पुत्रश्च स्थाविरे भावे न स्त्री स्वातन्त्र्यमहिति ॥४
तस्था भर्तुरभिचार उक्तः प्रायश्चित्तरहस्येषु ॥५
मासि मासि रजो धासां दुष्कृतान्यपकर्षति ॥६

त्रिरात्रं रजस्वलाऽशुचिर्भवति, सा नाव्ज्यान्नाभ्यव्ज्यान्नाप्सु स्नायात्, अधः शयीत, दिवा न स्वप्यात्, नाम्नि स्पृशेत्, न रङ्जुं सृजेत्, न दन्तान्धावयेत्, न मांसमश्नीयात्, न प्रहानिरीक्षेत, न हसेन्न किंचिदाचरेत्, अखर्वेण पात्रेण पिबेत्, अञ्जलिना वा पिबेत्, लोहितायसेन वा ॥७ विज्ञायते हीन्द्रिक्तिगीर्षाणं त्वाष्ट्रं हत्वा पाप्मगृहीतो महत्तमाधर्मसंबद्घोऽहमित्येवमात्मानममन्यत, तं सर्वाणि भूतान्यभ्याक्रोशन् , भ्रूणहन्भ्रूणहन्भ्रूणहन्निति, स स्त्रिय उपाधावत्, अस्यै मे ब्रह्महत्यायै तृतीयं भागं प्रतिगृह्णीतेति गत्वैवमुवाच, ता अन्नुवन् , किं नीऽभूदिति, सोनवीद्वरं वृणीध्वमिति, ता अब्रुवन्नृतौ प्रजां विन्दामह इति, कामं मा विजानीमो संभवाम इति, यथेच्छया आप्रसवकालात्पुरुषेण-सहमैथुनभावेन सम्भवाम इति चैषोस्माकं वरस्तथेन्द्रेणो-क्तास्ताः प्रतिजगृहुस्तृतीयं भ्रूणहत्यायाः ॥८ सैषा भ्रूणहत्या मासि मास्याविभवति ॥६ तस्माद्रजस्वलान्नं नाश्नीयात्।।१० अतश्च भ्रूणहत्याया एवेषा रूपं प्रतिमुच्याऽऽस्ते कब्चुकमिव ॥ तदाहुर्बह्मवादिनः ॥१२ अञ्जनाभ्यञ्जनमेवास्या न प्रतिप्राह्यम्। तद्धि खिया अन्नमिति॥१३ तस्मात्तस्यास्तत्र न च मन्यन्ते ॥१४ आचारायाश्च योषित इति सेयमुपयाति ॥१५

उद्क्यास्वासते येषां ये च केचिद्नग्रयः। कुछं चाश्रोत्रियं येषां सर्वे ते शूद्रधर्मिण इति ॥१६ गृहस्थाः श्रोत्रियाः पापाः सर्वे ते शूद्रधर्मिणः। इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे पश्चमोऽध्यायः।

॥ षष्ठोऽध्यायः॥

अथाचारप्रशंसा, हीनाचारस्य निन्दावर्णनम्। आचारः परमो धर्मः सर्वेषामिति निश्चयः। हीनाचारपरीतात्मा प्रेत्य चेह विनश्यति॥१ नैनं तपांसि न ब्रह्म नामिहोत्रं न दक्षिणाः। हीनाचारमितो भ्रष्टं तारयन्ति कथंचन॥२

आचारहीनं न पुनित वेदा यद्यप्यधीताः सह षड्भिरङ्गः। छन्दांस्येनं मृत्युकाले त्यजन्ति नीडं शक्तुन्ता इव जातपक्षाः॥३ आचारहीनस्य तु ब्राह्मणस्य वेदाः षडङ्गास्त्वित्वलाः सयज्ञाः। कां प्रीतिमुत्पाद्यितुं समर्था अन्धस्य दारा इव दर्शनीयाः॥४ नैनं छन्दांसि वृजिनात्तारयन्ति मायाविनं मायया वर्तमानम्। द्वेप्य(अ)क्षरे सम्यगधीयमाने पुनाति तद् ब्रह्म यथावदिष्टम्॥४

दुराचारो हि पुरुषो लोके भवति निन्दितः। दुःखभागी च सततं व्याधितोऽल्पायुरेव च ॥६ आचारात्फलते धर्मभाचारात्फलते धनम्। आचाराच्छ्रियमाप्नोति आचारो हन्त्यलक्षणम्॥७

sध्यायः] नद्यादिषुमूत्रपुरीषोत्सर्गः, शौचमृत्तिकाप्रमाणव० १४८५

सर्वेलक्षणहीनोऽपि यः सदाचारवान्नरः। श्रद्धानोऽनसूयश्च शतं वर्षाणि जीवति ॥८ आहारनिर्हारविहारयोगाः सुसंवृता धर्भविदा तु कार्याः। वाग्बुद्धिकार्याणि तपस्तथैव धनायुषी गुप्ततमे तु कार्ये ॥६ उमे मूत्रपुरीषे तु दिवा कुर्यादुदङ् मुखः। रात्री कुर्यादक्षिणास्य एवं ह्यायुर्न हीयते ॥१० प्रत्यप्रिं प्रति सूर्यं च प्रति गां प्रति च द्विजम्। प्रति सोमोद्कं संध्यां प्रज्ञा नश्यति मेहतः ॥११ न नद्यां मेहनं कार्यं न भस्मनि न गोमये। न वा कृष्टे न मार्गे च नोप्ते क्षेत्रे न शाद्वे ॥१२ छायायामन्धकारे वा रात्रावहनि वा द्विजः। यथासुखमुखः कुर्यात्प्राणवाधाभयेषु च ॥१३ उद्धृताभिरद्भिः कार्यं कुर्यात्स्नानमनुद्धृताभिरपि ॥१४ आहरेन्मृत्तिकां विप्रः कूलात्ससिकतां तथा। अन्तर्जले देवगृहे वल्मीके मूषकस्थले। कृतशौचावशिष्टा च न त्राह्याः पञ्च मृत्तिकाः ॥१४ एका लिङ्को करे तिस्र उभाभ्यां हे तु मृत्तिके। पञ्चापाने दशैकस्मिन्तुभयोः सप्त मृत्तिकाः ॥१६ एतच्छीचं गृहस्थस्य द्विगुणं ब्रह्मचारिणः। वानप्रस्थस्य त्रिगुणं यतीनां च चतुर्गुणम् ॥१७ अष्टौ प्रासा मुनेर्भक्तं वानप्रखस्य षोडश । द्वात्रिशत्तु गृहस्थस्य अमितं ब्रह्मचारिणः ॥१८

अनड्वान्त्रह्मचारी च आहिताग्निश्च ते त्रयः। भुञ्जाना एव सिध्यन्ति नेषां सिद्धिरनश्नताम् ॥१९ योगस्तपो दुमो दानं सत्यं शौचं द्या श्रुतम्। विद्या विज्ञानमास्तिक्यमेतद्बाह्यणस्रक्षणम्।।२० ये शान्तदान्ताः श्रुतिपूर्णकर्णा जितेन्द्रियाः प्राणिवधान्निवृत्ताः। प्रतिप्रहे संकुचिताप्रहस्तास्ते ब्राह्मणास्तारयितुं समर्थाः ॥२१ नास्तिकः पिशुनश्चैव क्रतव्नो दीर्घरोषकः। चत्वारः कर्मचाण्डाला जन्मतश्चापि पश्चमः ॥२२ दीर्घवैरमसूया च असत्यं ब्रह्मदृषणम्। पैशुन्यं निर्दयत्वं च जानीयाच्छ्द्रस्रक्षणम् ॥२३ किंचिद्वेदमयं पात्रं किंचित्पात्रं तपोमयम्। पात्राणामपि तत्पात्रं शूद्धान्नं यस्य नोद्रे ॥२४ शूद्रान्नरसपुष्टाङ्गो हाधीयानोऽपि नित्यशः। जुह्नन्वाऽपि जपन्वाऽपि गतिमूर्ध्वा न विन्द्ति॥२५ शूद्रान्नेनोदरस्थेन यः कश्चिन्म्रियते द्विजः। स भवेत्सूकरो ब्राम्यस्तस्य वा जायते कुछे ॥२६ शूद्रान्नेन तु भुक्तेन मैथुनं योऽधिगच्छति। यस्यान्नं तस्य ते पुत्रा न च स्वर्गार्हको भवेत्।।२७ स्वाध्यायोत्थं योनिमन्तं प्रशान्तं वैतानस्थं पापभीरुं बहुइस्। स्त्रीषु क्षान्तं धार्मिकं गोशरण्यं व्रतैः क्षान्तं तादृशं पात्रमाहुः॥ आम(ताम्र)पात्रो यथा नयस्तं क्षीरं दिध घृतं मधु। विनश्येत्पात्रदौर्वल्यात्तच पात्रं रसाश्च ते ॥२६

ऽध्यायः]सत्पात्रलक्षण,मञ्जलिनाजलंनपिवे,दाचारनिरूपणञ्च १४८७

एवं गां च हिरण्यं च वस्त्रमश्वं महीं तिलान्। अविद्वान्त्रतिगृह्णानो भस्मी भवति दारुवत् ॥३० नाङ्गनखवाद्नं कुर्यात्रखैश्च भोजनादौ ॥३१ न चापोऽञ्जलिना पिवेत् ॥३२ न पादेन पाणिना वा जलमभिहन्यात्र जलेन जलम् ॥३३ नेष्टकाभिः फलानि पातयेत् ॥३४ न फलेन फलं न कलको न कुहको भवेत् ॥३४ न म्लेच्छभाषां शिक्षेत् ॥३६ अथाप्युदाहरन्ति ॥३७ न पाणिपाद्चपलो न नेत्रचपलो भवेत्। न चाङ्गचपलो विप्र इति शिष्टस्य गोचरः॥३८ पारम्पर्यागतो येषां वेदः सपरिवृंहणः। ते शिष्टा त्राह्मणा ज्ञेयाः श्रुतिप्रत्यक्षहेतवः ॥३६ यन्न सन्तं न चासन्तं नाश्रुतं न बहुश्रुतम्। न सुवृत्तं न दुवृंत्तं वेद कश्चित्स ब्राह्मण इति, ॥४० इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः।

॥ सप्तमोऽध्यायः॥

अथ ब्रह्मचारिधमेवर्णनम्।

चत्वार आश्रमा ब्रह्मचारी(रि) गृहस्थवानप्रश्चपरिव्राजकाः ॥१

तेषां वेद्मधीत्य वेदौ वा वेदान्वाऽविशीर्णब्रह्मचर्योयमिच्छेत्तमावसेत् ॥२
ब्रह्मचार्याचार्यं परिचरेत् ॥३ आ शरीरविमोक्षात् ॥४
आचार्यं प्रमीतेऽप्तिं परिचरेत् ॥६
विज्ञायते हि तवाप्तिराचार्यं इति ॥६
संयतवाक्चतुर्थपष्ठाष्टमकालभोजी भैक्षमाचरेत् ॥७
गुर्वधीनो जटी(टि)लः शिखाजटो वा गुरुं गच्छन्तमनुगच्छेत्॥
आसीनं च तिष्ठञ्छयानं चाऽऽसीन उपासीत ॥६
आहूताध्यायी सर्वं लब्धं निवेद्य तदनुज्ञ्या भुञ्जीत ॥१०
खट्वाशयनदन्तप्रक्षालनाञ्जनाभ्यञ्जनोपानच्छत्रवर्जी
तिष्ठेदहनि रात्रावासीत ॥११
ति.कृत्वोऽभ्युपेयादपोऽभ्युपेयादप इति ॥१२
इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः।

अथाष्ट्रमोऽध्यायः । गृह्स्थधर्मवर्णनम्।

गृहस्थो विनीतक्रोधहर्षो गुरुणाऽनुज्ञातः स्नात्वाऽसमानार्षा-मरपृष्टमें धुनां यवीयसीं सदशीं भार्यां विन्देत ॥१ (न) पञ्चमीं मातृवन्धुभ्यः सप्तमीं पितृवन्धुभ्यः ॥२ वैवाद्यमग्निमिन्धीत ॥३ सायमागतमितिथि नावरुन्ध्यात् ॥४

नास्यानश्ननगृहे वसेत्।।५ यस्य नाश्नाति वासार्थी ब्राह्मणो गृहमागतः। सुकृतं तस्य यत्किचित्सर्वमादाय गच्छति ॥६ एकरात्रं तु निवसन्नतिथिर्त्राह्मणः स्मृतः । अनित्यं हि स्थितो यस्भात्तस्माद्तिथिरुच्यते ॥७ नैकयामीणमतिथि विप्रं सांगतिकं तथा। काले प्राप्ते अकाले वा नास्यानश्नन्गृहे वसेत् ॥८ श्रद्धाशीलोऽस्वृह्यालुरलमग्न्याधेयाय नानाहिताग्निः स्यात् ॥६ अलं च सोमपानाय नासोमयाजी स्यात् ॥१० युक्तः स्वाध्याये प्रजनने यज्ञे च ॥११ गृहेष्वभ्यागतं प्रत्युत्थानासनशयनवाक्सूनृतानसूया-भिर्मानयेत् ॥१२ यथाशक्ति चान्नेन सर्वभृतानि ॥१३ गृहस्थ एव यजते गृहस्थस्तःयते तपः । चतुर्णामाश्रमाणां तु गृहस्थस्तु विशिप्यते ॥१४ यथा नदीनदाः सर्वे समुद्रे यान्ति संस्थितिम्।।१५ यथा मातरमाश्रित्य सर्वे जीवन्ति जन्तवः। एवं गृहस्थमाश्रित्य सर्वे जीवन्ति भिक्षवः ॥१६ नित्योद्की नित्ययज्ञोपवीती नित्यस्वाध्यायी पतितान्नवर्जी। ऋतौ च गुच्छिन्विधवच जुह्नन ब्राह्मणश्च्यवते ब्रह्मलोकात्।।१७ इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः।

॥ अथ नवमोऽध्यायः॥ वानप्रस्थधर्मवर्णनम्।

वानप्रस्थो जटिलश्चीराजिनवासा ग्रामं च न प्रविशेत्।।१ न फालकृष्टमधितिष्ठेत्।।२

अकुष्टं मूलफलं संचिन्वीत, उर्ध्वरेताः क्षमाशयः ॥३
मूलफलभैक्षेणाऽऽश्रमागतमतिथिमभ्चर्ययेत् ॥४
दद्यादेव न प्रतिगृह्णीयात् ॥५

त्रिषवणसुदकसुपस्पृशेत् ॥६

श्रावणकेनाग्निमाधायाऽऽहिताग्निः स्याद्वृक्षमूरिकः ॥७

इध्वं षड्भ्यो मासेभ्योऽनग्निरनिकेतः ॥८

द्द्याद्देवितृमनुष्येभ्यः स गच्छेत्स्वर्गमानन्त्यमानन्त्यम्।।६ इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे नवमोध्यायः।

> अथ दशमोऽध्यायः। अथ यतिधर्मवर्णनम्।

परिव्राजकः सर्वभूताभयदक्षिणां दत्त्वा प्रतिष्ठेत ॥१ अथाप्युदाहरन्ति ॥२

अभयं सर्वभूतेभ्यो दत्त्वा चरति यो मुनिः। तस्यापि सर्वभूतेभ्यो न भयं जातु विद्यते।।३ अभयं सर्वभूतेभ्यो दत्त्वा यस्तु निवर्तते। इत्ति जातानजातांश्च द्रव्याणि प्रतिगृह्य च।।४ संन्यसेत्सर्वकर्माणि वेदमेकं न संन्यसेत्। वेदसंन्यसनाच्छूद्रस्तस्माद्देदं न संन्यसेत्॥१ एकाक्षरं परं ब्रह्म प्राणायामः परं तपः। उपवासात्परं भेक्षं दया दानाद्विशिष्यते॥६

मुण्डोऽममोऽपरिम्रहः सप्तागाराण्यसंकल्पितानि चरेद्धेक्यं (क्षं) विधूमे सन्न मुसले ॥७

एकशाटीपरिवृतोऽजिनेन वा गोप्रस्नूनैस्तृणैर्वेष्टितशरीरः स्थण्डिलशाय्यनित्यां वसति वसेत्, प्रामान्ते देवगृहे शून्या-गारे वृक्षमूले वा मनसा ज्ञानमधीयानः ॥८ अरण्यनित्यो न प्राम्यपशूनां संदर्शने विहरेत् ॥६ अथाप्युदाहरन्ति ॥१०

अरण्यनित्यस्य जितेन्द्रियस्य सर्वेन्द्रियप्रीतिनिवर्तकस्य । अध्मात्मचिन्तागतमानसस्य ध्रुवा ह्यनावृत्तिरुपेक्षकस्य इति ॥११ अव्यक्तिङ्को व्यक्ताचारः, अनुन्मत्त उन्मत्तवेषः ॥१२ अथाप्युदाहरन्ति ॥१३

न शब्दशास्त्राभिरतस्य मोक्षो न चापि लोकप्रहणे रतस्य । न भोजनाच्छादनतत्परस्य न चापि रम्यावसथप्रियस्य ॥१४ म चोत्पातनिमित्ताभ्यां न नक्षत्राङ्गविद्यया । अनुशासनवादाभ्यां मिक्षां लिप्सेत कर्हिचित् ॥१६ अलाभे न विषादी स्याल्लाभश्चेनं न हर्षयेत् । प्राणयात्रिकमात्रः स्यान्मात्रासङ्गाद्विनिर्गतः ॥१६ न कुट्यां नोदके सङ्गे न चेले न त्रिपुष्करे।
नागारे नाऽऽसने नान्ने (नान्ते) यस्य वै मोक्षवित्तमः। इति ॥१७
ब्राह्मणकुले वा यस्रभेत तद्भुञ्जीतः,
सायं प्रातम्धुमांसपरिवर्जम् ॥१८
यतीन्साधून्वा गृहस्थान्सायं प्रातश्च तृष्येत् ॥१६
प्रामे वा वसेत् ॥२०
अजिह्मोऽशरणोऽसंकुसुको न चेन्द्रियसंयोगं कुर्वीत केनचित् ॥
उपेक्षकः सर्वभूतानां हिंसानुप्रहपरिहारेण ॥२२
पैशुन्यमत्सराभिमानाहंकाराश्रद्धानार्जवात्मस्तवपरगर्हाद्म्भलोभमोहकोधासूयाविवर्जनं सर्वाश्रमिणां धर्म इष्टः ॥२३
यह्मोपवीत्युद्ककमण्डलुहस्तः शुचिर्वाह्मणो वृषलान्नपानवर्जी न
हीयते ब्रह्मलोकाद्ब्रह्मलोकादिति ॥२४

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे दशमोऽध्यायः।

अथेकादशोऽध्यायः। अथ वैश्वदेवातिथिश्राद्वादीनां वर्णनम्।

षड्हा भवन्ति, ऋत्विग्विवाह्यराजा(ज)पितृव्यस्नातक-मातुलाश्च ॥१ वैश्वदेवस्य सिद्धस्य सायं प्रातर्गृह्याग्नौ जुहुयात् ॥२ गृहदेवताभ्यो बर्लि हरेत् ॥३ श्रोत्रियायाऽऽगताय भागं दस्ता ब्रह्मचारिणे वाऽनन्तरं पितृभ्यो दद्यात् ॥४ ततोऽतिथि भोजयेत् , श्रेयांसं श्रेयांसमानुपूर्व्यण, स्वगृह्याणां कुमारबाळवृद्धतरूणप्रभूतींस्ततोऽपरान्गृह्यान् ॥५ श्राचण्डाळपतितवायसेभ्यो भूमौ निर्वपेत् ॥६ श्रूद्रायोच्छिष्टमनुच्छिष्टं वा द्यात् ॥७ शेषं दंपती भुञ्जीयाताम् ॥८ सर्वोपयोगेन पुनः पाकः ॥६

यदि निरुप्ते वैश्वदेवेऽतिथिरागच्छेद्विशेषेणास्मा अन्नं कारयेत् ॥१० विज्ञायते हि ॥११

वैश्वानरः प्रविशत्यतिथिर्बाह्मणो गृहं तस्माद्प आनयन्त्यन्नं वर्षाभ्यस्तां हि शान्ति जना विदुरिति ॥१२

तं भोजयित्वोपासीताऽऽसीमान्तमनुत्रजेत् , अ(आऽ)नुज्ञानाद्वा ॥१३

अपरक्ष ऊर्थं चतुर्थ्याः पितृभ्यो दद्यात्पूर्वेद्युर्वाह्यणान्संनिपात्य यतीन्गृहस्थानसाधून्या परिणतवयसोऽविकमस्थाञ्छ्रोत्रियान-शिष्यानन्तेवासी(सि)नः शिष्यानिप गुणवतो भोजयेत् ॥१४ विलग्नग्रुक्कक्षीबान्धश्यावदन्तकुष्ठिकुनिख्वजम् ॥१४

अथाप्युदाहरन्ति ॥१६

अथ चेत्मन्त्रविद्युक्तः शारीरेः पङ्क्तिदूषणैः। अदूष्यं तं यमः प्राहः पङ्क्तिपावन एव सः॥१७

श्राद्धे नोद्वासनीयानि उच्छिष्टान्या दिनक्षयात् । श्चोतन्ते हि सुधाधारास्ताः पिबन्स्यकृतोदकाः ॥१८ उच्छिष्टं न प्रमृज्यात्तु यावन्नास्तमितो रविः। क्षीरधारास्ततो यान्ति अक्षय्याः पङ्क्तिभागिनः ॥१६ प्राक्संस्कारप्रमीतानां स्ववंश्यनामिति श्रुतिः। भागधेयं मनुः प्राह् उच्छिष्टोच्छेषणे उसे ॥२० उच्छेषणं भूमिगतं विकिरं छेपनोदकम्। अन्नं प्रेतेषु विसृजेदप्रजानामनायुषाम् ॥२१ उचयोः शाखयोर्मुक्तं पितृभ्योऽन्नं निवेदितम्। तदनन्तरं प्रतीक्षन्ते ह्यसुरा दुष्टचेतसः ॥२२ तस्मादशून्यहस्तेन कुर्यादन्नमुपागतम्। भो(भा)जनं वा समालभ्य तिष्ठतोच्छेषणे उभे ॥२३ द्वे देवे पितृकृत्ये त्रीनेकैकमुभयत्र वा। भोजयेत्सुसमृद्धोऽपि न प्रसज्जेत विस्तरे ॥२४ सिक्वयां देशकाली च शीचं बाह्मणसंपदम्। पञ्चैतान्विस्तरो हन्ति तस्मात्तं परिवर्जयेत् ॥२५ अपि वा भोजयेदेकं ब्राह्मणं वेद पारगम्। श्रतशीलोपसंपन्नं सर्वालक्षणवर्जितम् ॥२६ यद्येकं भोजयेच्छाद्धे दैवं तत्र कथं भवेत्। अन्नं पात्रे समुद्धृत्य सर्वस्य प्रकृतस्य तु ॥२७ देवतायतने कृत्वा ततः श्राद्धं प्रवर्तयेत्। ष्ट्रास्थेदग्री तदन्नं तु दद्याद्वा ब्रह्मचारिणे ॥२८

ऽभ्यायः] श्राद्धभोजनसमयेभोक्त्र्यन्नगुणत्याज्यवर्णनम् १४६५ (अग्रे-कुतपकालः, उपनयनकालः, दण्डादिघारणविधिश्च)

> यावदुष्टां भवत्यन्नं यावदश्ननित वाग्यताः। तावद्धि पितरोऽरनन्ति यावन्नोक्ता हविर्गुणाः ॥२६ हविर्पूणा न वक्तव्याः पितरो यावद्तर्पिताः पितृभिस्तर्पितैः पश्चाद्वक्तव्यं शोभनं हविः ॥३० नियुक्तस्तु यदा श्राद्धे देवे वा मांसमुत्सृजेत्। यावन्ति पशुरोमाणि तावश्ररकमृच्छति ॥३१ त्रीणि श्राद्धे पवित्राणि दौहित्रः कुतपस्तिलाः। त्रीणि चात्र प्रशंसन्ति शौचमक्रोधमत्वराम् ॥३२ दिवसस्याष्ट्रमे भागे मन्दी भवति भास्करः। स कालः कुतपो ज्ञेयः पितृणां दत्तमक्ष्यम् ॥३३ श्राद्धं दत्वा च सुत्तवा च मैथुनं योऽधिगच्छति। भवन्ति पितरस्तस्य तन्मासं रेतसो भुजः ॥३४ यस्ततो जायते गर्भो दत्त्वा अत्तवा च पैतृकम्। न स विद्यां समाप्नोति क्षीणायुश्चैव जायते ॥३४ पितापितामहश्चेव तथैव प्रपितामहः। उपासते सुतं जातं शकुन्ता इव पिप्पलम् ॥३६ मधुमांसैश्च शाकैश्च पयसा पायसेन वा। एष नो दास्यति श्राद्धं वर्षामु च मघासु च ॥३७ संतानवर्धनं पुत्रमुद्यतं पितृकर्मणि । देवबाह्यणसंपन्नमभिनन्दन्ति पूर्वजाः ॥३८ तन्वन्ति पितरस्तस्य सुक्रष्टैरिय कर्षकाः। यद्गयास्थो ददात्यन्नं पितरस्तेन पुत्रिणः ॥३६

श्रावण्याग्रहायण्योश्चान्वष्टक्यां च पितृभ्यो द्द्यात् ,
द्रव्यदेशह्राह्माद्मणसंनिधाने वा न कालनियमः ॥४०
अवश्यं च ब्राह्मणोऽग्नीनादधीत, द्र्रपूर्णमासाप्रयणेष्टिचातुर्मास्यपशुसोमेश्च यजेत नैयमिकं ह्येतहणसंस्तुतं च ॥४१
विज्ञायते हि त्रिभिर्म्मृणेर्म्मृणवान्द्राह्मणो जायत इति ॥४२
यज्ञेन देवेभ्यः, प्रजया पितृभ्यो, ब्रह्मचर्यण ऋषिभ्य इत्येष
वाऽनृणो यज्वा यः पुत्री ब्रह्मचर्यवानिति ॥४३
गर्भाष्ट्रमेषु ब्राह्मणमुपनयीत, गर्भादेकादशेषु राजन्यं,
गर्भाद्द्वादशेषु वेश्यम् ॥४४
पालाशो बेल्वो वा दण्डो ब्राह्मणस्य, नैयमोधः क्षत्त्रियस्य वा
औदुम्बरो वा वेश्यस्य ॥४५

[केरासंमितो ब्राह्मणस्य, ललाटसंमितः श्वत्त्रियस्य, घ्राणसंमितो वैश्यस्य ॥४६

मोक्षी ब्राह्मणस्य, धनुर्ज्या क्षत्त्रियस्य, शणतान्तवी वैश्यस्य]४७ कृष्णाजिनमुत्तरीयं ब्राह्मणस्य, रौरवं क्षत्त्रियस्य, गव्यं व (ब) स्तजिनं वा वैश्यस्य ॥४८

शुक्रमहतं वासो ब्राह्मणस्य, माञ्जिष्ठं क्षत्त्रियस्य, हारिद्रं कौशेयं वेश्यस्य, सर्वेषां वा तान्तवमरक्तम् ॥४६ भवत्पूर्वां ब्राह्मणो भिक्षां याचेत, भवन्मध्यां राजन्यो, भवदन्त्यां वेश्यः॥४०

आ षोडशाद्बाह्मणस्य नातीतः कालः ॥५१ आ द्वाविशात्स्रस्त्रियस्य ॥५२ आ चतुर्विशाहैश्यस्य ॥५३
अत उर्घ्वं पतितसावित्रीका भवन्ति ॥५४
नैतानुपनयेन्नाध्यापयेन्न याजयेन्नैभिर्विवाहयेयुः ॥५५
पतितसावित्रीक उदालकव्रतं चरेत् ॥५६
हो मासौ यावकेन वर्तयेत्, मासं पयसा, अर्धमासमामिक्षयाऽष्टरात्रं घृतेन, षड्रात्रमयाचितेन, त्रिरात्रमण्मक्षोऽहोरात्रमुपवसेत् ॥५७
अश्वमेधावभृथं गच्छेत् ॥५८
व्रात्रस्तोमेन वा यजेद्वा यजेदिति ॥५६

।। अथ द्वादशीऽध्यायः ॥ अथ स्नातकव्रतं, वस्नादिधारण विधि वर्णनम्।

इति वासिष्ठे धर्भशास्त्रे एकादशोऽध्यायः।

अथातः स्नातकवृतानि ॥१ स न कंचिद्याचेतान्यत्र राजान्तेवासिभ्यः ॥२ श्रुधा परीतस्तु किंचिदेव याचेत, कृतमकृतं वा क्षेत्रं गामजाविकमन्ततो हिरण्यं धान्यमत्रं वा, न तु स्नातकः श्रुधाऽवसीदेदित्युपदेशः ॥३ न मिलनवाससा सह संवसेत, न रजस्वलया, नायोग्यया, न कुलं कुलं स्यात् ॥४ वत्सन्ती विततां नातिकामेत् ॥६ नोद्यन्तमादित्यं पश्येत् ॥६ नास्तमयन्तम् ॥७ नाप्सु मूत्रपुरीषे कुर्यात् ॥८ न निष्ठीवेत् ॥६

परिवेष्टितशिरा भूमिमय ज्ञियेस्तुणैरन्तर्धाय मूत्रपुरी बे कुर्यात् ॥१०

उदङ्मुखश्चाहनि, नक्तं दक्षिणामुखः । संध्यामासीतोत्तरामुदाहरन्ति ॥११

क्रातकानां तु नित्यं स्यादन्तर्वासस्तथोत्तरम्।

यद्गोपनीते द्वे यष्टिः सोद्रकश्च कमण्डलुः ॥१२

अप्यु पाणौ च काष्ठे च कथितं पावके शुचिः।

तस्मादुदकपाणिभ्यां परिमृज्यात्कमण्डलुम्।।१३

पर्यप्रिकरणं त्वेतन्यनुराह प्रजापतिः।

कुत्वा चावश्यकर्माण आचामेच्छौचवित्तमः। इति ॥१४

प्राङ्गुखऽन्नानि भुझीत ॥१४

तूष्णीं साङ्गुष्ठं कृत्स्नप्रासं प्रसेत ॥१६

न च मुखशब्दं कुर्यात्।।१७

ऋतुकालगामी स्यात्पर्ववर्जं स्वदारेषु ॥१८

अतिर्यगुपेयात् ॥१६ (तीर्यमुपेयात्)।

अथाप्युदाहरन्ति ॥२०

यस्तु पाणिगृहीताया आस्ये कुर्वीत मैथुनम्। भवन्ति पितरस्तस्य तन्मासं रेतसो भुजः॥२१ या स्यादनित्यचारेण रतिः साधर्मसंश्रिता ॥२२ अपि च काठके विज्ञायते ॥२३ अपि नः श्वो विजनिष्यमाणाः पतिभिः सह शयीरिन्निति बीणामिन्द्रदत्तो वर इति ॥२४ न वृक्षमारोहेत्।।२६ न कूपमवरोहेत्।।२६ नाप्नि मुखेनोपधमेत्॥२७ नामि नाहाणं चान्तरेण व्यपेयात् ॥२८ नाग्न्योर्न ब्राह्मणयोर [न] नुज्ञाप्य वा, भार्यया सह-नाश्नीयाद्वीर्यवद्पत्यं भवतीति वाजसनेयके विज्ञायते ॥२६ नेन्द्रधनुर्नाम्ना निर्दिशेत् ॥३० मणिधनुरिति त्र्यात्।।३१ पालाशमासनं पादुके दन्तधावनमिति वर्जयेत्।।३२ नोत्सङ्गे भक्षयेत्र संध्या [यां] भुङ्जीत ॥३३ वैणवं दण्डं धारयेद्रुक्मकुण्डले च ॥३४ न बहिर्मालां धारयेदन्यत्र रुक्ममय्याः ॥३४ सभाः समवायांश्च वर्जयेत् ३६ अथाप्युदाहरन्ति ॥३७ अप्रामण्यं च वेदनामार्षाणां चैव कुत्सनम्। अव्यवस्था च सर्वत्र एतन्नाशनमात्मनः । इति ॥३८ नावृतो यज्ञं गच्छेत्।।३६ यदि वृजेत्प्रदक्षिणं पुनरावृजेत्।।४०

अधिवृक्षसूर्यमध्वानं न प्रतिपद्येत ॥४१ नावं च सांशयिकीं नाधिरोहेत [त्]॥४२ बाहुभ्यां न नदीं तरेत्॥४३ उत्थायापररात्रमधीत्य न पुनः प्रति संविशेत्॥४४ प्राजापत्ये मुहूर्ते ब्राह्मणः कांश्चिन्नियमाननुतिष्ठेदनु-तिष्ठेदिति॥४५

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे द्वादशीऽध्यायः॥

।। अथ त्रयोदशोऽध्यायः।।
अथोपाकमंविधिः, वेदाध्ययनस्यानध्यायनिरूपणम्।
अथातः स्वाध्यायोपाकमं श्रावण्यां पौर्णमास्यां प्रोष्ठपद्यां
वाऽग्निमुपसमाधाय कृताधानो जुहोति देवेभ्य
श्रृषिभ्यश्र्वन्दोभ्यश्चेति।।१
श्राह्मणान्स्वस्तिवाच्य द्धि प्राश्य ततोऽध्यायानुपाकुर्वीरम्।।२
अर्घपश्चममासानर्धषष्ठान्वाऽत ऊर्ध्वं ग्रुक्लपक्षेष्वधीयीत,
कामं तु वेदाङ्गानि।।३ तस्यानध्यायाः।।४
संध्यास्तमिते संध्यास्वन्तःशवदिवाकीर्त्येषु नगरेषु कामं
गोमयपर्युषिते परिलिखिते वा श्मशानान्ते
शयानस्य श्राद्धिकस्य।।६

मानवं चात्र श्लोकमुदाहरन्ति ।।६ फलान्यपस्तिलान्भक्षा इति ॥७ धावतः पृतिगन्धप्रभृतावीरिणे, वृक्षमारूढस्य नावि सेनायां च भुत्तवा चाऽऽर्द्रपाणेवांणशब्दे चतुर्दश्या-ममावास्यायामष्टम्यामष्टकासु प्रसारितपादोपस्थ-कृतस्थोपाश्रितस्य च गुरुसमीपे में शुनव्यपेतायां वाससा मैथुनव्यपेतेनानिर्णिक्तेन प्रामान्ते छर्दितस्य मृत्रितस्योचारितस्य भृग्यजुषां च सामशब्दे वाऽजीर्णे निर्घाते भूमिचलने चन्द्रसूर्योपरागे दिङ्नादपर्वत-नादकम्पप्रपातेषूपलक्षिरपांशुवर्षेष्वाकालिकम् ॥८ उल्काविद्युत्समासे त्रिरात्रम् ॥६ उल्काविद्युत्सज्योतिषम् ॥१० अपर्तावाकालिकमाचार्ये प्रते त्रिरात्रमाचार्यपुत्रशिष्य भार्यास्वहोरात्रम् ॥११ ऋत्विग्योनिसंबन्धेषु च गुरोः पादोपसंब्रहणं कार्यम् ॥१२ <mark>मृत्क्क</mark>्शवशुरपितृब्यमातुलाननवरवयसः प्रत्युत्थायाभिवदेत्।।१३ ये चैव पाद्याह्यास्तेषां भार्या गुरोश्च मातापितरौ यो विद्यादभिवन्दितुमहमयं भो इति ब्रूयाद्यश्च न विद्यात्रत्यभिवादमामन्त्रिते स्वरोऽन्त्यः प्लवते संध्य-क्षरमप्रगृह्यमायावभावं चाऽऽपद्यते यथा भो भाविति ॥१४ पतितः पिता परित्याज्यो माता तु पुत्रे न पतिति ॥१५

अत्राप्युदाहरन्ति ॥१६ उपाध्यायादशाऽऽचायं आचार्याणां शतं पिता । पितुर्दशशतं माता गौरवेणातिरिच्यते भार्याः पुत्राश्च शिष्याश्च संतुष्टाः पापकर्मभिः। परिभाष्य परित्याज्याः पतितो योऽन्यथा त्यजेत् ॥१८ मृत्विगाचार्यावयाज्कानध्यापकौ हेयावन्यत्र हानात्पति ॥१६ पतितोत्पन्नः पतितो भवतीत्याहुरन्यत्र स्त्रियाः ॥२० सा हि परगामिनी तामरिक्थामुपेयात्।।२१ गुरोर्गुरौ संनिहिते गुरुवद्वृत्तिरिष्यते। गुरुवद्गुरु उत्रस्य वर्तितन्यमिति श्रुतिः ॥२२ शखं विषं सुरा चाप्रतिप्राधाणि ब्राह्मणस्य ॥२३ विद्यावित्तवयःसंबन्धकर्म च मान्यम् ॥२४ पूर्वः पूर्वो गरीयान्स्यविरवालातुरभारिकस्रीचकीवतां पन्थाः समागमे परसमै देयः ॥२४ राजकस्नातकयोः समागमे राज्ञा स्नातकाय देयः ॥२६ सर्वेरेव च वध्वा ऊह्यमानायै ॥२७ तृणभूम्यग्न्युद्कवाक्सूनृतनासूयाः सतां गृहे नोच्छियन्ते कदाचन कदाचनेति ॥२८

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे त्रयोदशोऽध्यायः।

॥ चतुर्दशोऽध्यायः ॥

अथ चिकित्सकादीनामन्नभोजनेनिषेधवर्णनम्।

अथातो भोज्याभोज्यं च वर्णयिष्यामः ॥१ चिकित्सकमृगयुपुंश्चलीदण्डिकस्तेनाभिशस्तवण्ठपतिता-नामन्नमभोज्यम् ॥२

कद्यदीक्षितबद्धातुरसोमविक्रयितक्षकरजकशौण्डिकसूचक-वार्धुषिकचर्मावक्ठत्तानां, शूद्रस्य चास्त्रभृतश्चोपपत्ते(ते)यश्चो-पपत्ति(ति) मन्यते, यश्च गृहान्दहेत्, यश्च वधार्हे नोपहन्यात्को भक्ष्यत इति ॥३ बाचाऽभिघुष्टं गणान्नं गणिकान्नं चेति ॥४ अथाप्युदाहरन्ति ॥५

नाश्निति श्रवतो देवा नाश्नित वृष्ठीपतेः ।
भार्याजितस्य नाश्नित यस्य चोपपतिर्गृहे, इति ॥६
एघोदकयवसकुशलाजाभ्युचतयानावसथशफरीप्रियहुक्तस्मन्धमधुमांसानीत्येतेषां प्रतिगृह्णीयात् ॥७
अथाप्युदाहरन्ति ॥२

गुर्वर्थं दारमुज्जिहीषन्नचिष्यन्देवतातिथीन् ।
सर्वतः प्रतिगृह्णीयात्र तु तृष्येत्स्वयं ततः, इति ॥६
न मृगयोरिषुचारिण परिवर्जमन्नम् ॥१०
विज्ञायते द्यगस्त्यो वर्षसाहिष्यके सत्रे मृगयां चकार,
तस्याऽऽसंस्तु रसमयाः पुरोडाशा मृगपक्षिणां प्रशस्तानाम् ॥११

अपि ह्यत्र प्राजापत्याञ्च्छ्लोकानुदाहरन्ति ॥१२ उद्यतामाहृतां भिक्षां पुरस्तादप्रचोदिताम् । भोज्यां प्रजापतिर्मेने अपि दुष्कृतकारिणः ॥१३ श्रद्धानस्य भोक्तव्यं चोरस्यापि विशेषतः । न त्वेव बहुयाज्यस्य यश्चोपनयते बहून् ॥१४ न तस्य पितरोऽश्नन्ति दश वर्षाणि पश्च च । न च हव्यं वहत्यग्निर्यस्तामभ्यवमन्यते ॥१६ चिकित्सकस्य मृगयोः शल्यहस्तस्य पापिनः । ष(प)ण्डस्य कुलटायाश्च उद्यताऽपि न गृह्यते, इति ॥१६

उच्छिष्टमगुरोरभोज्यं, स्वमुच्छिष्टोपहतं च ॥१७ यद्शनं केशकीटोपहतं च ॥१८ कामं तु केशकीटानुद्धृत्याद्भिः प्रोक्ष्य भस्मनाऽवकीर्य वाचा प्रशस्तमुपभुञ्जीत ॥१६ अपि द्यत्र प्राजापत्याञ्च्छ्लोकानुदाहरन्ति ॥२०

त्रीण देवाः पवित्राणि ब्राह्म्तामकल्पयन्।
अदृष्टमद्भिर्निर्णिक्तं यच वाचा प्रशस्यते।।२१
देवद्रोण्यां विवाहेषु यज्ञेषु प्रकृतेषु च।
काकः श्वभिश्च संस्पृष्टमन्नं तन्न विसर्जयेत्।।२२
तस्मादन्नमपोद्घृत्य शेषं संस्कारमहिति।
द्रवाणां प्रावनेनैव घनानां प्रोक्षणेन तु।
मार्जारमुखसंस्पृष्टं शुच्च एव हि तद्भवेत्।।२३

Sध्यायः काकादिसंस्पृष्टान्नस्य पर्युषिताद्यन्नस्यचशुद्धिः। १५०५

अन्नं पर्युषितं भावदुष्टं सक्रल्लेखं पुनः सिद्धमाममांसं पक्वं च कामं तु द्ध्ना घृतेन वाऽभिघारितमुपयुङ्जीत ॥२४ अपि हात्र प्राजापत्याब्क्षोकानुदाहरन्ति ॥२५ हस्तद्त्तास्तु ये स्नेहा लवणव्यञ्जनानि च। दातारं नोपतिष्ठन्ति भोक्ता भुङ्गीत किल्बिषम्।।२६ प्रदद्यात्र तु हस्तेन नाऽज्यासेन कदाचन, इति ॥२७ ख्रुनप्लाण्डुकेमुकगृञ्जनश्लेष्मातकवृक्षनिर्यासलोहित-व्रश्चनश्वकाकावलीढशूद्रोच्छिष्टभोजनेषु क्रुच्छ्रातिक्रुच्छ्र इतरेऽप्यन्यत्र मधुमांसफलविकर्षेष्वग्राम्यपशव(शु)विषयः २८ संधिनीक्षीरमवत्साक्षीरं गोमहिष्यजानामनिर्दशाहानामन्त-र्नाब्युद्कमपूपधानाकरम्भसक्तुवटकतेलपायसशाकानि शुक्तानि वर्जयेत्, अन्यांश्च क्षीरयविषष्टविकारान् ॥२६ श्वाविच्छहकशशकच्छपगोधाः पञ्चनखानां भक्ष्याः ॥३० अनुष्ट्रा पशूनामन्यनोदन्ताश्च मत्स्यानां वा चेटगवयशिशु-मारनककुलीरा विकृतरूपाः ॥३१ सर्पशीर्षाश्च ॥३२ गौरगवयशरभाश्चानुदिष्टाः ॥३३ तथा घेन्वनडुहौ मेध्यौ वाजसनेयके विज्ञायेते ॥३४ खडूगे तु विवद्न्त्य(न्तेऽ)प्राम्यसूकरे च ॥३४ शकुनानां च विषुविष्किरजालपादाः ॥३६ कलविङ्कप्रवहंसचक्रवाकभासवायसपारावतकुक्कुटसारङ्ग-पाण्डुकपोतकौञ्चक्रकरकङ्कगृधश्येनबकबलाकमद्गुटिट्टिभ-मान्धालनक्तंचरदार्वाघाटचटकरैलातहारीतखञ्जरीटमाम्य-

कुक्कुटशुकसारिकाकोकिलक्रव्यादा प्रामचारिणश्रप्राम-चारिणश्रेति ॥३७

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे चतुर्दशोऽध्यायः।

अथ पञ्चद्शोऽध्यायः । दत्तकप्रकरणवर्णनम् ।

शोणितशुक्रसंभवः पुरुषो मातापितृनिमित्तकः ॥१
तस्य प्रदानविक्रयत्यागेषु मातापितरौ प्रभवतः ॥२
न त्वेकं पुत्रं दद्यात्प्रतिगृह्णीयाद्या ॥३
स हि संतानाय पूर्वेषाम् ॥४
न स्त्री पुत्रं दद्यात्प्रतिगृह्णीयाद्वाऽन्यत्रानुज्ञानाद् भर्तुः ॥६
पुत्रं प्रतिप्रहण्यिन्वन्धूनाहूय राजनि चाऽऽवेद्य निवेशनस्य मध्ये व्याहृतिभिर्द्वत्वा दूरेवान्धवं बन्धुसंनिक्छ्यमेष प्रतिगृह्णीयात् ॥६
संदेहे चोत्पन्ने दूरे बान्धवं शूद्रमिव स्थापयेत् ॥७
विज्ञायते ह्येकेन हूंस्वायत इति ॥८
तिसम्ब्रेत्प्रतिगृहीत औरसः पुत्र उत्पद्येत, चतुर्थभागभागी स्याद्वत्तकः ॥६

Sध्यायः] चरितव्रतानां पतितानां प्रत्युद्धार विधिवर्णनम् । १५०७

यदि नाऽऽभ्युद्यिकेषु युक्तः स्याद्वेद्विप्नविनः सन्येन पादेन प्रवृत्तामान्दर्भा ल्लोहितान्वोपस्तीर्य पूर्णपात्र-मस्मै निनयेत्।।१० निनेतारं चास्य प्रकीर्णकेशान् ज्ञातयोऽन्वालभेरन्न-पसव्यं कृत्वा गृहेषु स्वैरमापद्येरन्नत ऊर्ध्वं तेन धमयेयुस्तद्धर्माणस्तं धर्मयन्तः ॥११ पतितानां तु चरितव्रतानां प्रत्युद्धारः ॥१२ अथाप्युदाहरन्ति ॥१३ अमेऽभ्युद्धरतां गच्छेत्क्रीडन्निव हसन्निव। पश्चात्पातयतां गच्छेच्छोचन्निव रुद्निव, इति ॥१४ आचार्यमातृपितृहन्तारस्तस्यसादाद्भयाद्वा, एषा (तेषां) प्रत्यापत्तिः ॥१५ पूर्णाब्दात्प्रवृत्ताद्वा काञ्चनं पात्रं माहेयं वा पूर-यित्वाऽऽपोहिष्ठेति मन्त्रेणाद्भिरभिषिश्वति ॥१६ सर्व एवाभिषिक्तस्य प्रत्युद्धारः (प्रत्युद्धीर) पुत्रजन्मना व्याख्यातो व्याख्यात इति ॥१७

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्र पञ्चद्शोऽध्यायः।

श्य षोडशोऽध्यायः ॥
 व्यवहारविधिवर्णनम् ।
 तत्रादौ राजमिन्त्रणो धर्माः ।

अथ व्यवहाराः ॥१ राजमन्त्री सदःकार्याणि कुर्यात्।।२ द्वयोविवद्मानयो र्न पक्षान्तरं गच्छेत्।।३ यथासनमपराघो ह्यन्ते नापराधः (?) ॥४ समः सर्वेषु भूतेषु यथासनमपराधो (?) ह्याद्यवर्णयो-र्विद्यान्ततः (विधानतः) ॥ १ संपन्नं च रक्षयेद्राजा बालधनान्यप्राप्तव्यवहाराणां प्राप्तकाले तु तद्वत् ॥६ लिखितं साक्षिणो अक्तिः प्रमाणं त्रिविधं स्मृतम्। धनस्वीकरणं पूर्वं धनी धनमवाप्नुयात्, इति ॥७ मार्गक्षेत्रयोर्विसर्गे तथा परिवर्तनेन तरुण(भृण)गृहे-ष्वर्थान्तरेषु त्रिपाद्मात्रम्।।८ गृहक्षेत्रविरोधे सामन्तप्रत्ययः ॥६ सामन्तविरोधे लेख्यप्रत्ययः ॥१० प्रत्यभिलेख्यविरोधे ग्रामनगरवृद्धश्रेणीप्रत्ययः ॥११ अथाप्युदाहरन्ति ॥१२ पैतृकं (य एकं) क्रीतमाधेयमन्वाधेयं प्रतिग्रह्म्। यज्ञादुपगमो वेणिस्तथा घूमशिखाऽष्टमी, इति ॥१३ तत्र भुक्तानुभुक्तदशवर्षम् ॥१४

अन्यथाऽप्युदाहरन्ति ॥१४

आधिः सीमा बालधनो निक्षेपोपनिधिः खियः।

राजस्वं श्रोत्रियद्रव्यं न संभोगेन हीयते ॥१६

प्रह्मीणद्रव्याणि राजगामीनि भवन्ति ॥१७

ततोऽन्यथा राजा मन्त्रिभिः सह नागरैश्च कार्याणि कुर्यात् ॥१८

वेधसो वा राजा श्रेयान्गृध्रपरिवारं स्यात् ॥१६

गृध्रपरिवारं वा राजा श्रेयान्।।२०

गृध्र परिवारं स्यात्र गृध्रो गृध्रपरिवारं स्यात्परिवाराद्धि

दोषाः प्रादुर्भवन्ति स्तेयहारविनाशनं तस्मापूर्वमेव

परिवारं पृच्छेत्।।२१

अथ साक्षिणः ॥२२

श्रोत्रियो कृपवाञ्जीलवान्पुण्यवान्सत्यवान्साक्षिणः

सर्वेषु सर्व एव वा ॥२३

खोणां तु साक्षिणः स्त्रिय कुर्याद्दिजानां सदशा द्विजाः।

शूद्राणां सन्तः शूद्राश्च, अन्त्यानामन्त्ययोनयः ॥२४

अथाप्युदाहरन्ति ॥२५

प्रतिभाव्यं वृथादानमाक्षिकं सौरिकं च यत्।

दण्डशुल्कावशिष्टं च न पुत्रो दातुमईति, इति ॥२६

त्रृहि साक्षिन्यथातत्त्वं लम्बन्ते पितरस्तव।

तत्र वाक्यमुदीक्षाणा उत्पतन्ति पतन्ति च ॥२७

नम्रो मुण्डः कपाली च भिक्षार्थी क्षुत्पिपासितः।

अन्धः शत्रुकुले गच्छेदाः साक्ष्यमनृतं वदेत्।।२८

पश्च कन्यानृते हिन्त द्श हिन्त गवानृते।
शतमश्वानृते हिन्त सहस्रं पुरुषानृते।।२६
व्यवहारे मृते दारे प्रायिश्वत्तं कुलिख्यः।
तेषां पूर्वपरिच्छेदाच्छिदान्तेऽत्रापवादिभिः।।३०
उद्घाहकाले रितसंप्रयोगे प्राणात्यये सर्वधनापहारे।
विप्रस्य चार्थे द्यनृतं वदेयुः पश्चानृतान्याहुरपातकानि।।३१
स्वजनस्यार्थे यदि वाऽर्थहेतोः पक्षाश्रयेणैव वदन्ति कार्यम्।
ते शब्दवंशस्य कुलस्य पूर्वान्स्वर्गस्थितांस्तानिप पातयन्ति,
अपि पातयन्ति।।३२

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे षोडशोऽध्यायः।

॥ अथ सप्तदशोऽध्यायः ॥पुत्रिणां प्रशंसावर्णनम् ।

श्रृणमिस्मन्संनयित अमृतत्वं च गच्छति।
पिता पुत्रस्य जातस्य पश्येचेज्ञीवतो मुखम् ॥१
अनन्ताः पुत्रिणां लोका नापुत्रस्य लोकोऽस्तीति श्रूयते ॥२
प्रजाः सन्त्वपुत्रिण इत्यभिशापः ॥३
प्रजाभिरग्ने अमृतत्वमश्यामित्यपि निगमो भवति ॥४
पुत्रेण लोकाञ्चयित पौत्रेणाऽऽनन्त्यमश्नुते।
अथ पुत्रस्य पौत्रेण ब्रध्नस्याऽऽप्नोति विष्टपम्, इति॥५

क्षेत्रिणः पुत्रो जनयितुः पुत्र इति विवदन्ते ॥६ तत्रोभयथाऽप्युदाहरन्ति ॥७ यद्यत्यो गोषु वृषभो वत्सानां जनयेच्छतम्। गोमिनामेव ते वत्सा मोघं स्यन्दितमार्षभम्, इति ॥८ अप्रमत्ता रक्षत तन्तुमेतं मा वः क्षेत्रो पर(रे)वीजानिअवाप्सुः। न जनयितुः पुत्रो भवति स्वं (सं) पराये मोघं वेत्ता कुरुते तन्तुमेतमिति ॥६ बहूनामेकजातानामेकश्रेत्पुत्रवान्नरः। सर्वे ते तेन पुत्रेण पुत्रवन्त इति श्रुतिः ॥१० बह्वीनामेकपत्नीनामेका पुत्रवती यदि। सर्वास्तास्तेन पुत्रेण पुत्रवत्य इति श्रुतिः ॥११ द्वादश इत्येव पुत्राः पुराणदृष्टाः ॥१२ स्वयमुत्पादितः स्वक्षेत्रो संस्कृतायां प्रथमः ॥१३ तद्लाभे नियुक्तायां क्षेत्रजो द्वितीयः ॥१४ तृतीयः पुत्रिका विज्ञायते ॥१४ अभ्रातृका पुंसः पितृनभ्येति प्रतीचीनं गच्छति पुत्रत्वम् ॥१६ तत्र श्लोकः ॥१७ अभ्रातृकां प्रदास्यामि तुभ्यं कन्यामलंकृताम्। अस्यां यो जायते पुत्रः स मे पुत्रो भवेदिति ॥१८ पौनर्भवश्चतुर्थः ॥१६ या कौमारं भर्तारमुत्सृज्यान्येः सह चरित्वा तस्यैव कुदुम्बमाश्रयति सा पुनर्भूर्भवति ॥२०

या च क्लीबं पतितमुन्मत्तं वा भर्तारमुल्हुण्यान्यं पति विन्दते मृते वा सा पुनर्भूर्भवति ॥२१

कानीनः पञ्चमः ॥२२

या पितृगृहेऽसंस्कृता कामादुत्पाद्येत्,

मातामहस्य पुत्रो भवतीत्याहुः ॥२३

अथाप्युदाहरन्ति ॥२४

अप्रता दुहिता यस्य पुत्रं विन्देत तुल्यतः।

पुत्री मातामहस्तेन द्यात्पिण्डं हरेद्धनम्, इति ॥२४

गृहे च गूढ़ोत्पन्नः षष्ठः ॥२६

इत्येते दायादा बान्धवास्त्रातारो महतो भयादित्याहुः॥२७

अथादायादबन्धूनां सहोढ एव प्रथमो, या गर्भिणी

संस्क्रियते तस्यां जातः सहोढः पुत्रो भवति ॥२८

द्त्तको द्वितीयो, यं मातापितरौ द्याताम् ॥२६

क्रीतस्तृतीयस्तच्छुनःशेपेन व्याख्यातम् ॥३०

हरिश्चन्द्रो ह वै राजा सोऽजीगर्तस्य सोयवसेः पुत्रं चिक्राय॥३१ स्वयमुपागतश्चतुर्थः, तच्छुनःशेपेन व्याख्यातम्॥ शुनःशेपो वै थूपेन नियुक्तो देवतास्तुष्टाव, तस्येह

देवताः पाशं विमुमुचुः तमृत्विज ऊचुमँमैवायं पुत्रोऽ-

स्त्वित, तान्ह न संपेदे, ते संपादयामासुरेष एव यं कामयेत

तस्य पुत्रोऽस्त्वित, तस्य ह विश्वामित्रो होताऽऽसीत्तस्य

पुत्रत्वमियाय ॥३३

अपविद्धः पश्वमो यं मातापितृभ्यामपास्तं प्रतिगृह्णीयात् ३४

(विवाहात्प्राक् कन्यायाः रजोद्शीने पितुर्दीषः)

शूद्रापुत्र एव षष्टो भवतीत्याहुः ॥३५

इत्येतेऽदायादा बान्धवाः ॥३६

अथाप्युदाहरन्ति ॥३७

यस्य पूर्वेषां (वर्णानां) षण्णां न कश्चिहायादः स्यादेते तस्य दायं हरेरत्रिति ॥३८

अथ श्रातृणां दायविभागः ॥३६

द्वंथशं ज्येष्ठो हरेत्, गवाश्वस्य चानुदशमम्।।४०

अजावयो गृहं च कनिष्ठस्य ॥४१

कार्ष्णायसं गृहोपकरणानि च मध्यमस्य ॥४२

मातुः पारिणेयं स्त्रियो विभजेरन्।।४३

यदि त्राह्मणस्य त्राह्मणीक्षत्त्रियावैश्यासु पुत्राः स्युस्त्र्यंशं

त्राह्मण्याः पुत्रो हरेद्वं यशं राजन्यायाः पुत्रः सममितरे

विभजेरन्।।४४

येन चैषां स्वयमुत्पादितं स्याद्द्वं यशमेव हरेत्।।४५

अनंशास्त्वाश्रमान्तरगताः ॥४६

ह्रीबोन्मत्तपतिताश्च ॥४७

भरणं हीबोन्मत्तानाम्।।४८

प्रेतपत्नी षण्मासान्त्रतचारिण्यक्षारलवणं भुञ्जानाऽधः

शयीतोध्वं षड्भ्यो मासेभ्यः स्नात्वा श्राद्धं च पत्ये दस्वा

विद्याकर्मगुरुयोनिसंबन्धान्संनिपास पिता भ्राता वा

नियोगं कारयेत्तपसे ॥४६

न सोन्मत्तामवशां व्याधितां वा नियुक्ज्यात्।।५०

ज्यायसीमपि षोडश वर्षाणि, न चेदामयावी स्यात् ॥ ११ प्राजापत्ये मुहूर्ते पाणिप्राह्वदुपचरेत् ॥ १२ अन्यत्र संप्रहास्यवाक्ष्पारुष्यदृण्डपोरुष्याच ॥ १३ प्रासाच्छाद्वसानानुष्ठेपनेषु प्राग्गामिनी स्यात् ॥ १४ अनियुक्तायामुत्पन्न उत्पाद्यितुः पुत्रो भवतीत्याहुः ॥ १४ स्याचेन्नियोगिनो रिक्थम् ॥ १६ छोभान्नास्ति नियोगः ॥ १५७ प्रायश्चित्तं वाऽप्यपदिश्य नियुक्ज्यादित्येके ॥ १८ कुमायृ तुमती त्रीणि वर्षाण्युपासीतोर्ध्वं त्रिभ्यो वर्षेभ्यः पति विन्देत्त्त्यम् ॥ १६

अथाप्युदाहरन्ति ॥६०

पितुः प्रमादात्तु यदाह कन्या वयः प्रमाणं समतीत्य दीयते।
सा हन्ति दातारमुदीक्षमाणा कालातिरिक्ता गुरुदक्षिणेव।।६१
प्रयच्छेन्निग्नकां कन्यामृतुकालभयात्पिता।
मृतुमत्यां हि तिष्ठन्त्यां दोषः पितरमुच्छति।।६२
यावस कन्यामृतवः स्पृशन्ति तुल्यैः सकामामभियाच्यमानाम्।
भ्रूणानि तावन्ति हतानि ताभ्यां मातापितृभ्यामिति धर्मवादः
अद्भिवांचा च दत्तायां म्रियेताऽऽदौ वरो यदि।
न च मन्त्रोपनीता स्यात्कुमारी पितुरेव सा।।६४
वलाश्चेत्रहृता कन्या मन्त्रेर्यदि न संस्कृता।
अन्यस्मै विधिवद्या यथा कन्या तथैव सा।।६५

प्राणियहे मृते बाला केवलं मन्त्रसंस्कृता। सा चेद्श्वतयोनिः स्यात्पुनः संस्कारमईति, ॥६६ प्रोषितपत्नी पञ्च वर्षाण्युपासीतोध्वं पञ्चभ्यो वर्षेभ्यो भर्तृसकाशं गच्छेत्।।६७ यदि धर्मार्थाभ्यां प्रवासं प्रत्यनुकामा न स्याद्यथा प्रेत एवं वर्तितव्यं स्यात् ॥६८ एवं ब्राह्मणी पश्च प्रजाताऽप्रजाता चत्वारि, राजन्या प्रजाता पञ्चाप्रजाता त्रीणि, वैश्या प्रजाता चत्वार्य-प्रजाता द्वे, शूद्रा प्रजाता त्रीण्यप्रजातैकम्।।६९ अत अर्घं समानोद्कपिण्डजन्मर्षिगोत्राणां पूर्वः पूर्वो गरीयात्।।७० न तु खलु कुलीने विद्यमाने परगामिनी स्यात्।।७१ यस्य पूर्वेषां षण्णां न कश्चिद्दायादः स्यात्सिपण्डाः पुत्र-स्थानीया वा तस्य धनं विभजेरन्।।७२

यस्य पूर्वषां षण्णां न कश्चिद्दायादः स्यात्सपिण्डाः स्थानीया वा तस्य धनं विभजेरन् ॥७२ तेषामलाभ आचार्यान्तेवासिनौ हरेयाताम् ॥७३ तयोरलाभे राजा हरेत् ॥७४ न तु ब्राह्मस्य राजा हरेत् ॥७५ ब्रह्मस्वं तु विषं घोरम् ॥७६

न विषं विषमित्यार्हु ब्रह्मस्त्रं विषमुच्यते । विषमेकाकिनं हन्ति ब्रह्मस्त्रं पुत्रपौत्रकम्, इति ॥ ७७ त्रैविद्यसाधुभ्यः संप्रयच्छेत्संप्रयच्छेदिति ॥ ७८ इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे सप्तद्शोऽध्यायः । ॥ अथाष्टादशोऽध्यायः ॥ चाण्डालादिजात्यन्तरनिरूपणम् ।

शूद्रेण ब्राह्मण्यामुत्पन्नश्चण्डालो भवतीत्याह् राजन्यायां वैणो वैश्यायामन्त्यावसायी ॥१

वैश्येन ब्राह्मण्यामुत्पन्नो रामको भवतीत्याहुः,

राजन्यायां पुल्कसः ॥२

राजन्येन ब्राह्मण्यामुत्पन्नः सूतो भवतीत्याहुः ॥३

अथाप्युदाहरन्ति ॥४

ब्रिज्ञोत्पन्नास्तु ये केचित्प्रातिलोम्यगुणाश्रिताः।
गुणाचारपरिश्रंशात्कर्मभिस्तान्विजानीयुः, इति ॥१
एकान्तरद्व्यन्तरत्र्यन्तरानुजाता ब्राह्मणक्षत्त्रियवैश्यैरम्बष्टोग्रनिषादा भवन्ति ॥६

शूद्रायां पारशवः पारयन्नेव जीवन्नैव शवो भवतीत्याहुः ॥७ शव इति मृताख्या ॥८

एके वै तच्छ्मशानं ये शूद्रास्तस्माच्छूद्रसमीपे नाध्येतव्यम्।।१ अथापि यमगीताच्छ्लोकानुदाहरन्ति।।१०

श्मशानमेतत्प्रत्यक्षं ये शूद्राः पापचारिणः। तस्माच्छूद्रसमीपे तु नाध्येतव्यं कदाचन ॥११ न शूद्राय मतिं द्यान्नोच्छिष्टं न हविष्कृतम्। न चास्योपदिशेद्धमं न चास्य व्रतमादिशेत्॥१२ यश्चास्योपदिशेद्धमं यश्चास्य व्रतमादिशेत्। सोऽसंवृतं तमो घोरं सह तेन प्रपद्यते, इति॥१३ त्रणद्वारे कृमिर्यस्य संभवेत कदाचन।
प्राजापत्येन शुध्येत हिरण्यं गौर्वासो दक्षिणा, इति ॥१४
नाग्नि चित्वा रामामुपेयात् ॥१५
कृष्णवर्णा या रामा रमणायैव न धर्माय न धर्मायेति ॥१६
इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रेऽष्टादशोऽध्यायः।

॥ अथैकोनविंशोऽध्यायः॥

अथ राजधर्माभिधानवर्णनम्।

स्वधमों राज्ञः पालनं भूतानां तस्यानुष्ठानात्सिद्धिः ॥१
भयकारुण्यहानं जरामयं(यं) वे तत्सत्रमाहुर्विद्वांस्तस्माद्गार्हस्थ्यानैयमिकेषु पुरोहितं द्ध्यात् ॥२
विज्ञायते ॥३
त्रह्मपुरोहितं राष्ट्रमृष्नोतीति ॥४
उभयस्य पालनादसामर्थ्याच देशधर्मजातिकुलधर्मान्सर्वानेवैताननुप्रविश्य राजा चतुरो वर्णान्स्वधर्मे स्थापयेत् ॥५
तेष्वपचरत्मु दण्डं धारयेत् ॥६
दण्डस्तु देशकालधर्मवयोविद्यास्थानविशेषेहिंसाक्रोशयोः
कल्प्य आगमाद्द्ष्टान्ताच ॥७
पुष्पफलोपगान्पाद्पान्न हिंस्यात्कर्षणकरणार्थं चोगहन्यात् ॥८
गार्हस्थ्याङ्गानां च मानोन्माने रिक्षते स्थाताम् ॥६

अधिष्ठानान्ननीहारः स्वार्थानां,

मानमूल्यमात्रं नैहारिकं स्यात्।।१०

महामहयोः स्थानात्पथः स्यात्(१) ॥११

संयाने दशवाहवाहिनी द्विगुणकारिणी स्यात्।।१२

प्रत्येकं प्रयास्यः पुनान्(?) ॥१३

पुंसां शतावराध्यं चांऽऽह्वयेद्व्यर्थाः ख्रियः स्युः ॥१४

कराष्ट्रीलामाषः शरमध्यापः पादः काष पणाः-

स्युर्निरुद्कस्तरोमोष्योऽकरः श्रोत्रियोराजपुमाननाथप्रव्रजित-

बालवृद्धतरुणप्रजाताः प्राग्गामिकाः कुमार्यो मृतपत्न्यश्च ॥१४

वाहुभ्यामुत्तरञ्छतगुणं दद्यात् ॥१६

नदीकक्षवनदाहशैलोपभोगा निष्कराःस्युस्तदुपजीविनो

<mark>वा दद्युः</mark> ॥१७

प्रतिमासमुद्राहकरं त्वागमयेद्राजिन च प्रेते द्द्यात्प्रासिक्कम्।।

एतेन मातृवृत्तिव्याख्याता ॥१६

राजमहिष्याः पितृव्यमातुलान्राजा विभृयात्तद्वन्धूधान्यांश्च ॥

राजपत्न्यो यासाच्छाद्नं स्रभेरन् ॥२१

अनिच्छन्त्यो वा प्रव्रजेरन् ॥२२

क्वीबोन्मत्तानराजा विभृयात्, तद्गामित्वाद्रिक्थस्य ॥२३

शुल्के चापि मानवं श्लोकमुदाहरन्ति।।२४

न भिन्नकार्षापणमस्ति शुल्के न शिल्पवृत्तौ न शिशौ न दूते।

न मैक्षलब्धे न हतावशेषे न श्रोत्रिये प्रव्रजिते न यज्ञे, इति ॥२४

स्तेनोऽनुप्रवेशात्र दुष्यते शस्त्रधारी सहोढो व्रणसंपन्नो

व्यपदिष्टस्त्वकेषां दण्ड्योत्सर्गे राजैकरात्रमुपवसेत्त्रिरात्रं प्ररोहितः ॥२६

कुच्छ्मदण्ड्यदण्डने पुरोहितस्त्रिरात्रं राजा ॥२७ अथात्युदाहरन्ति ॥२८

अन्नादे भ्रणहा मार्ष्टि पत्यौ भार्याऽपचारिणी। गुरौ शिष्यश्च याज्यश्च स्तेनो राजनि किल्विषम् ॥२६ राजभिधृतदण्डास्तु कृत्वा पापानि मानवाः। निर्मेलाः स्वर्गमायान्ति सन्तः सुकृतिनो यथा ॥३० एनो राजानमृच्छति उत्सृजन्तं सकिल्बिषम्। तं चेद्धातयते राजा हन्ति धर्मेण दुष्कृतम्, इति ॥३१ राज्ञामत्ययिके कार्ये सद्यः शौचं विधीयते । तथाऽनात्ययिके नित्यं काल एवात्र कारणम् , इति ॥३२

यमगीतं चात्र श्लोकमुदाहरनित ॥३३ नात्र दोषोऽस्ति राज्ञां वे व्रती(ति) नां न च (मंत्रिणां) सत्रिणाम्। ऐन्द्रस्थानमुपासीना ब्रह्मभूता हि ते सदा, इति ॥३४ इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे एकोनविंशोऽध्यायः।

।। अथ विशोऽध्यायः॥ अथ प्रायश्चित्तप्रकरणवर्णनम्।

अनभिसंधिकृते प्रायश्चित्तमपराघे ॥१ अभिसंधिकृतेऽप्येके ॥२ गुरुरात्मवतां शास्ता शास्ता राजा दुरात्मनाम्। इह प्रच्छन्नपापानां शास्ता वैवस्वतो यमः, इति ॥३ तत्र च सूर्याभ्युदितः सन्नहस्तिष्ठेत्।।४ सावित्रीं च जपेत्।।४ एवं सूर्याभिनिर्मुक्तो रात्रावासीत ॥६ कुनखी श्यावदन्तस्तु कृच्छ्ं द्वादशरात्रं चरेत्।।७ परिवित्तिः कुच्छ्ं द्वादशरात्रं चरित्वा निविशेत, तां चैवोपयच्छेत्।।८ अथ परिविविदानः कुच्छातिकुच्छौ चरित्वा तस्मै दुस्वा पुनर्निर्वि(वि)शेत, तामेवोपयच्छेत् ॥६ अग्रेदिधिपूपतिः कुच्छ्रं द्वादशरात्रं चरित्वा निविशेत-तां चैवोपयच्छेत्।।१० दिधिषूपतिः कुच्छ्रातिकुच्छ्रौ चरित्वा तस्मै दत्त्वा पुनर्निविशेत् (त)।।११ वीरहणं परस्ताद्वक्ष्यामः ॥१२ ब्रह्मघ्नः कच्छ्रं द्वादशरात्रं चरित्वा पुनरुपयुञ्जीत वेदमाचार्यात्।।१३

गुरुतल्पगः सवृषणं शिश्नमुत्कृत्याञ्जलावाधाय दक्षिणामुखो गच्छेत्।।१४ यत्रैव प्रतिहन्यात्तत्र तिष्ठेदाप्रलयम् ॥१६ निष्कालको वा घृताभ्यक्तस्तप्तां सूर्मी परिष्वजेन्मरणात्पूतो भवतीति विज्ञायते ॥१६ आचार्यपुत्रशिष्यभार्यासु चैवम् ॥१७ योनिषु च गुर्वी सखीं गुरुसखीमपपात्रां पतितां च गत्वा कुच्छाब्दपादं चरेत्।।१८ एतदेवचाण्डालपतितान्नभोजनेषु, ततः पुनरुपनयनं, वपनादीनां तु निवृत्तिः ॥१६ मानवं चात्र श्लोकमुदाहरन्ति ॥२० वपनं मेखला दण्डो भैक्षचर्या व्रतानि च। एतानि तु निवतन्ते पुनः संस्कारकर्मणि, इति ॥२१ मत्या मद्यपाने त्वसुरायाः सुरायाश्चाज्ञाने कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ घृतं प्रा<mark>श्य पुनः सं</mark>स्कारश्च ॥२२ मूत्रशकुच्छुकाभ्यवहारेषु चैवम् ॥२३ मद्यभाण्डे स्थिता आ(अ)पो यदि कश्चिद्द्विजः पिबेत्। पद्मोदुम्बरबिल्वपलाशानामुदकं पीत्वा त्रिरात्रेणैव शुध्यति ॥ अभ्यासे तु सुराया अग्निवणीं तां द्विजः पिवैन्मरणात्पूतो भवतीति ॥२४ भ्रुणहनं वक्ष्यामो ब्राह्मणं हत्वा भ्रूणहा भवत्यविज्ञातं गर्भमिवज्ञाता हि गर्भाः पुमांसो भवन्ति ॥ ॥२६

तस्मात्पुंस्कृत्याऽऽजुह्नतीति, भ्रूणहाऽग्निमुपसमाधाय जुहुयादेताः ॥२७

लोमानि मृत्युर्जुहोमि लोमभिर्मृत्युं वासय, इति प्रथमाम् ॥२६ त्वचं मृत्योर्जुहोमि त्वचा मृत्युं वासय, इति द्वितीयाम् ॥२६ लोहितं मृत्योर्जुहोमि लोहितेन मृत्युं वासय, इति तृतीयाम् ॥ मांसं मृत्योर्जुहोमि मांसेन मृत्युं वासय, इति चतुर्थीम् ॥३१ स्नावानि मृत्योर्जुहोमि स्नावभिर्मृत्युं वासय, इति पञ्चमीम् ३२ मेदो मृत्योर्जुहोमि मेदसा मृत्युं वासय, इति पष्टीम् ॥३३ अस्थीनि मृत्योर्जुहोमि अस्थिभिर्मृत्युं वासय, इति सप्तमीम् ॥ मज्जानं मृत्योर्जुहोमि मज्जा(ज्ज)भिर्मृत्युं वासय, इति सप्तमीम् ॥ राजार्थे बाह्यणार्थे वा सङ्ग्रामेऽभिमुखमात्मानं वातयेत्त्रिरजितो वाऽपराद्धः पूतो भवतीति ॥३६ विद्वायते हि ॥३७

निरुक्तं ह्येनः कनीयो भवतीति ॥३८ अथाऽऽप्युदाहरन्ति ॥३६

पतितं पतितेत्युत्तवा चौरं चौरीत वा पुनः।

वचनात्तृत्यदोषः स्यान्मिथ्या द्विर्षेषतां व्रजेत्, इति ॥४० एवं राजन्यं हत्वाऽष्ट्रो वर्षाणि चरेत्, षड्वैश्यं, त्रीणि शूद्रं, ब्राह्मणीं चाऽऽत्रेयीं हत्वा सवनगती च राजन्यवैश्यो ॥४१ आत्रेयीं वक्ष्यामो रजस्वलामृतुस्नातामात्रेयीमाहुः ॥४२ अत्र ह्येष्यद्पत्यं भवतीति ॥४३ अनात्रेयीं राजन्यहिंसायां राजन्यां वैश्यहिंसायां वैश्यां शूद्रहिंसायां शूद्रां हत्वा संवत्सरम् ॥४४ ब्राह्मणसुवर्णहरणं प्रकीर्य केशान्राजानमभिधावेत्स्तेनोऽस्मि भोः शास्तु मां भवानिति। तस्मै राजौदुम्बरं शस्त्रं द्यासेनाऽऽत्मानं प्रमापयेन्मरणात्यूतो भवतीतिविज्ञायते ॥४४ निष्कालको वा घृताको गोमयाग्निना पादप्रभृत्यात्मान-मभिदाहयेन्मरणात्यूतो भवतीति विज्ञायते ॥४६ अथाप्युदाहरन्ति ॥४७

पुराकालात्प्रमीतानां पापा(आनाकविधि)द्विविधकर्मणाम्। पुनरापन्नदेहानामङ्गं भवति तच्छ्णु ॥४८ स्तेनः कुनखी भवति श्वित्री भवति ब्रह्महा। सुरापः श्यावदन्तस्तु दुश्चर्मा गुरुतल्पग, इति ॥४६ 🔹

पतितसंप्रयोगं च ब्राह्मेण वा यौनेन वा यास्ते भ्यः सकाशान्मात्रा उपलब्धास्तासां परित्यागस्तैश्च न संवसेदुदीचीं दिशं गत्वाऽनश्नसंहिताध्ययनमधीयानः पूतो भवतीति विज्ञायते ॥५०

अथाऽप्युदाहरनित ॥५१

शरीरपरितापेन तपसाऽध्ययनेन च। मुच्यते पापकृत्पापाद्दानाचापि प्रमुच्यते, इति विज्ञायते विज्ञायत इति ॥५२

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे विशोऽध्यायः।

॥ अथैकविंशोऽध्यायः॥

ब्राह्मणीगमने शूद्रवैश्यक्षत्रियाणां प्रायश्चित्तवर्णनम् ।

शूद्रश्चेद्ब्राह्मणीमभिगच्छेद्वीरणैर्वेष्टियत्वा शूद्रमग्नौ प्रास्येत् ॥१ ब्राह्मण्याः शिरसि वपनं कारियत्वा सर्पिषा समभ्यज्य नग्नां कृष्णं खरमारोप्य महापथमनुसंब्राजयेत्पृता भवतीति विज्ञायते ॥२

वैश्यश्चेद्त्राह्मणीमधिगच्छेहोहितद्भैर्वेष्टियत्वा वैश्यमम्नौ प्रास्येत् ॥३

त्राह्मण्याः शिरसि वपनं कारियत्वा सिप्वाऽभ्यज्य नग्नां गौरं स्वरमारोप्य महापथमनुसंत्राजयेत्पूता भवतीति विज्ञायते ॥४ राजन्यश्चेद्व्राह्मणीमभिगच्छेच्छरपत्रैर्वेष्टियत्वा राजन्यमग्नी प्रारयेत्, ब्राह्मण्याः शिरसि वपनं कारियत्वा सिप्वा समभ्यज्य नग्नां श्वेतं खरमारोप्य महापथमनुसंत्राजयेत्पूता भवतीति विज्ञायते ॥५

एवं वैश्यो राजन्यायां शूद्रश्च राजन्यावैश्ययोः ॥६

मनसा भर्तुरतिचारे त्रिरात्रं यावकं क्षीरौदनं वा भुझानाऽधः
शयीतोध्वं त्रिरात्राद्प्सु निमग्नायाः सावित्र्यष्टशतेन
शिरोभिर्जुहुयात्पूता भवतीति विज्ञायते ॥७

वाक्संवन्ध एतदेव मासं चरित्वोध्वं मासाद्प्सु निमग्नायाः
सावित्र्याश्चतुर्मिरष्टशतैः शिरोभिर्जुहुयात्पूता भवतीति
विज्ञायते ॥८

व्यवाये तु संवत्सरं घृतपटं धारयेत्।।६ गोमयगर्ते कुशप्रस्तरे वा शयीतोध्वं संवत्सराद्प्सु निमग्नायाः साविज्यष्टशतेन शिरोभिर्जुहुयात्पृता भवतीति विज्ञायते ॥१० व्यवाये तीर्थगमने धर्मभ्यस्तु निवर्तते। चतस्रस्तु परित्याज्याः शिष्यगा गुरुगा च या ॥११ पतिष्नी च विशेषेणं जुङ्गितोपगता च या ॥१२ या ब्राह्मणी सुरापी न तां देवाः पतिलोकं नयन्ति। इहैव सा चरति क्षीणपुण्याऽप्यु छुग्भवति शुक्तिका वा ॥१३ त्राह्मणक्षत्त्रियविशां ख्रियः शूद्रेण संगताः । अप्रजाता विशुध्यन्ति प्रायश्चित्तेन नेतराः। प्रतिलोमं चरेयुस्ताः कुच्छूं चान्द्रायणोत्तरम् ॥१४ पतिव्रतानां गृहमेधि नीनां सत्यव्रतानां च शुचिव्रतानाम्। तासां तु लोकाः पतिभिः समाना गोमायुलोका व्यभिचारिणीनाम् पतत्यर्धं शरीरस्य यस्य भार्या सुरां पिबेत्। पतितार्धशरीरस्य निष्कृति ने विधीयते ॥१६ त्राह्मणश्चेदप्रेक्षापूर्वं त्राह्मणदारानिभगच्छेदनिवृत्तधर्मकर्मणः कुच्छ्रो निवृत्तधर्मकर्मणोऽतिकुच्छ्रः ॥१७ एवं राजन्यवैश्ययोः ॥१८ गां चेद्धन्यात्तस्याश्चमेणाऽऽद्गेण परिवेष्टितः षण्मासान्कुच्छ्(च्छं)

तप्तकुच्छु वा तिष्ठेत् ॥१६ तयोर्विधिः ॥२०

इयहं दिवा भुङ्क्ते नक्तमश्नाति वै ज्यहम् । इयहमयाचितव्रतस्त्रयहं न भुङ्क्त इति कृष्कः ।।२१ इयहमुख्णं पिबेदा(चा) परज्यहमुख्णं पयः पिवेत् । इयहमुख्णं घृतं पीत्वा वायुभक्षः परं ज्यहम् ।।२२

इति तप्तकृष्ट्यः ॥२३ ऋषभवेहतौ च दद्यात् ॥२४

अथाप्युदाहरन्ति ॥२५

त्रय एव पुरा रोगा ईष्यो अनशनं जरा। पृषद्धस्तनयं हत्वा अष्टानवतिमाहरेत्॥२६

इति श्वमार्जारनकुलसर्पदर्दु रमूषकान्हत्वा क्रुच्छं द्वादशरात्रं चरेतिकचिद्दचात् ॥२७

अनिश्चमतां तु सत्त्वानां गोमात्रं राशि हत्वा कृष्ठं द्वादश रात्रं चरेत्किचिद्यात्।।२८

अस्थिमतां त्वेकैकम्।।२६

योजनीनपविध्येत्कुच्छ्रं द्वादशरात्रं चरित्वा पुनराधानं कारयेत्॥३०

गुरोश्चालीकनिर्वन्धः सचैलं स्नातो गुरुं प्रसाद्येत्प्रसादात् पृतो भवतीति विज्ञायते ॥३१

नास्तिकः कृच्छ्रं द्वादशरात्रं चरित्वाविरमेन्नास्तिक्यात् ॥३२ नास्तिकवृत्तिस्वतिकृच्छ्रम् ॥३३

एतेन सोमविकयी ज्याख्यातः ॥३४

वानप्रस्थो दीक्षाभेदे कुच्छ्रं द्वादशरात्रं चरित्वा महाकक्षे(क्षं) वर्धयेत्।।३४

भिक्षुकेर्वा (को वा)नप्रस्थवहोसवृद्धिवर्जं स्वशास्त्रसंस्कारश्च स्वशास्त्रसंस्कारश्चेति ॥३६

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे एकविंशोऽध्यायः।

॥ द्वाविशोऽध्यायः ॥

अथायाज्ययाजनादि प्रायश्चित्तवर्णनम्।

अथ खल्वयं पुरुषो मिथ्या व्याकरोत्ययाज्यं वा याजयित अप्रतिप्राह्यं वा प्रतिगृह्णाति अनन्नं वाऽश्नाति अनाचरणीय-मेवाऽऽचरित तत्र प्रायिश्चतं कुर्यात्र कुर्यादिति मीमांसन्ते, न कुर्यादित्याहुनं हि कर्म क्षीयत इति, कुर्यादित्येव तस्मा-च्छ्रुतिनिदर्शनात्तरित सर्वं पाष्मानं तरित ब्रह्महत्यां योऽश्व-मेथेन यजत, इति ॥१

वाचाऽभिशस्तो गोसवेनाग्निष्टुता यजेत ॥२ तस्य निष्क्रयणानि जपस्तपो होम उपवासो दानमुपनिषदो वेदादयो वेदान्ताः सर्दच्छन्दः संहिता मघून्यघमर्षणमथर्वशिरो रुद्राः पुरुषसूक्तं राजनि(न)रौहिणे सामनी कूष्माण्डानि पावमान्यः सावित्री चेति पावनानि ॥३ वेश्वानरीं व्रातपतीं पिवत्रेष्टिं तथैव च ।
सक्तद्दती प्रयुद्धानः पुनाति दशपूरुषम् , इति ॥
प्रवासन्यायेन पयोत्रतता फलभक्षता प्रस्तयावको
हिरण्यप्राशनं सोमपानमिति मेध्यानि ॥
सर्वे शिलोचयाः सर्वाः स्वनन्त्यः पुण्या हृदास्तीर्थान्यृषिनिवासगोष्टपरिष्कन्धा इति देशाः ॥
संवत्सरो मासश्चतुविशत्यहो द्वादशाहः षडहरूयहोऽहोरात्र इति
कालाः ॥८
एतान्येवानादेशे विकल्पेन क्रियेरन् , एनःसु गुरुपु गुरूणि
लघुषु लघूनि ॥
ह

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे द्वाविशोऽध्यायः।

॥ अथ त्रयोविशोऽध्यायः ॥ अथ ब्रह्मचारिणः स्त्रीगमने प्रायश्चित्तवर्णनम् ।

ब्रह्मचारी चेतिस्वयमुपेयादरण्ये चतुष्पये छौकिके उनौ रक्षो-दैवतं गर्दमं पशुमालभेत, नैऋंतं वा चरुं निवंपेत्, तस्य जुहुयात्कामाय स्वाहा, कामकामाय स्वाहा, निक्कृत्ये स्वाहा, रक्षोदेवताभ्यः स्वाहेति ॥१ ऽध्यायः] रेतसः प्रयत्नोत्सर्गादिविषये प्रायश्चित्तवर्णनम् । १४२६

एतदेव रेतसः प्रयत्नोत्सर्गे दिवा स्वप्ने व्रतान्तरेषु वा समा-वर्तनात्तिर्यग्योनिव्यवाये ॥२

शुक्रमृषभं दद्यात्।।३

गां गत्वा शूद्रावधेन दोषो व्याख्यातः ॥४

ब्रह्मचारिणः शवकर्मणो ब्रतान्निवृत्तिरन्यत्र मातापित्रोः ॥४

स चेद्व्याधीयोत कामं गुरोरुच्छिष्टं भेपजार्थं सर्वं प्राश्नीयात्।।

गुरुप्रयुक्तश्चेन्म्रियेत त्रीन्कुच्छ्रांश्चरेद्गुरुः ॥७

ब्रह्मचारी चन्मांसमश्नीयादुच्छिष्टभोजनीयं कुच्छ्रं द्वाद्शरात्रं चरित्वा व्रतशेषं समापयेत् ॥८

श्राद्धसूतकभोजनेषु चैवम्।।६

अकामतोपनतं मधु वाजसनेयके न दुष्यतीति विज्ञायते ॥१०

य आत्मत्याग्यभिशस्तो भवति सपिण्डानां प्रेतकर्मच्छेदः ॥११

काष्ट्रजललोष्टजलपाषाणशस्त्रविषरङ्जुभिर्य आत्मानमव सा-

द्यति, स आत्महा भवति ॥१२

अथाप्युदाहरन्ति ॥१३

य आत्मत्यागिनः कुर्यात्स्नेहात्प्रेतिक्रयां द्विजः।

स तप्तकुच्छ्रसहितं चरेचान्द्रायणत्रतम् , इति ॥१४

चान्द्रायणं परस्ताद्वक्ष्यामः ॥१५

आत्महननाध्यवसाये त्रिरात्रम् ॥१६

जीवन्नात्मत्यागी कुच्छं द्वादशरात्रं चरेत्, त्रिरात्रं ह्युपवसे-

न्नित्यं क्षिग्धेन वाससा प्राणानात्मनि चाऽऽयम्य त्रिः

पठेद्घमर्षणमिति।।१७

अपि वैतेन कल्पेन गायत्री परिवर्तयेत्।
अपि वाऽप्रिमुपसमाधाय कूष्माण्डेर्जुहुग्नाद् घृतम्।।१८
यचान्यन्महापातकेभ्यः सर्वमेतेन पूयत इत्यथाप्याचामेत्।।१६
अप्निश्च मा मन्युश्चेति प्रातमंनसा पापं ध्यात्वोंपूर्वाः सत्यान्ता
व्याहतीर्जपेद्धमर्षणं वा पठेत्।।२०
मानुषास्य स्निग्धं सृष्ट्या त्रिरात्रमाशौचमस्निग्धे त्वहोरात्रम्।।२१
शवानुगमने चैवम्।।२२
अधीयानानामन्तरागमने त्वहोरात्रमभोजनम् , त्रिरात्रमभोजनम् , त्रिरात्रमभिषेको विवासश्चान्योन्येन ।।२३
श्वमार्जारनकुलशीव्रगाणामहोरात्रम् ।।२४
श्वकुक्कुटप्राम्यसूकरकङ्कगृध्रभासपारावतमानुषकाकोलूकमांसादने सप्तरात्रमुपासो निष्पुरीषभावो घृतप्राशः पुनः
संस्कारश्च ।।२४

ब्राह्मणस्तु शुना दृष्टो नदीं गत्वा समुद्रगाम् । प्राणायामशतं कृत्वा घृतं प्राश्य ततः शुचिः, इति ॥२६ कालोऽग्निर्मनसः शुद्धिरुद्काकविलोकनम् । अविज्ञानं च भूतानां षड्विधा शुद्धिरिष्यते, इति ॥२७

श्वाचाण्डालपतितोपस्पर्शने सचैलं स्नातः सद्यः पूतो भवतीति विज्ञायते ॥२८

पतितचाण्डालशववहने त्रिरात्रं वाग्यता अनश्नन्त आसीरन्, सहस्र परमं वा तद्भ्यसन्तः, पूता भवन्तीति विज्ञायते ॥२६ ऽच्यायः]भ्रुणहत्यायां प्रायश्चित्तान्तरकथनं,कुच्छ्रविधिवर्णन्धः १५३१

एतेनेव गर्हिताध्यापकयाजका व्याख्याताः दक्षिणात्यागाच पूता भवन्तीति विज्ञायते ॥३० एतेनेवाभिशस्तो व्याख्यातः ॥३१

अथापरं अूणहत्यायां द्वादशरात्रमब्भक्षो द्वादशरात्रमुपवसेत्।। ह हाणमनृतेनाभिशं(श)स्य पतनीयेनोपपतनीयेन वा मास-

मञ्मक्षः शुद्धवतीरावर्तयेत् ॥३३ अश्वमेधावभृथे वा गच्छेत्।।३४

एतेनैव चाण्डाळीव्यवायो व्याख्यातः ॥३५

अथापरः कुच्छूविधिः साधारणो व्यूढः।।३६ अहः प्रातरहर्नक्तमहरेकमयाचितम्।

अहः पराकं तत्रैकमेवं चतुरही परौ ॥३७ अनुग्रहार्थ विप्राणां मनुधर्मभृतां वरः।

बालवृद्धातुरेष्वेवं शिशुकुच्छूमुवाच ह ॥३८

अथ चान्द्रायणविधिः ।।३६

सासस्य कृष्णपक्षादौ प्रासानचाचतुर्दश। ब्रासापचयभोजी स्वात्पक्षरोषं समापयेत् ॥४०[.] एवं हि शुक्रपक्षादी त्रासमेकं तु भक्षयेत्। यासोपचयभोजी स्यात्पक्षशेषं समापयेत् ॥५१ अत्रैव गायेत्सामानि अपि वा व्याहृतीर्जपेत्। एष चान्द्रायणो मासः पत्रित्रमृषिसंस्तुतः ॥४२

अनादिष्टेषु सर्वेषु प्रायश्चित्तं विधीयते विधीयत इति ॥४३

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे त्रयोविशोऽध्यायः।

अथ चतुर्विशोऽध्यायः ।।
 अथ कुच्छ्रातिकुच्छ्विधिवर्णनम् ।

अथातिऋच्छः—॥१

ज्यहं प्रातस्तथा सायमयाचितं पराक इति क्रुच्छः॥२

यावत्सकृदाददीत तावदश्नीयात्पूर्ववःसोऽतिकृच्छः॥३

अव्भक्षः स कृच्छातिकृच्छः॥४

कृच्छाणां व्रतक्तपाणि—॥५

श्मश्रुकेशान्वापयेद्भु वोऽक्षिलोयशिखावर्जं नखान्निकृत्यैक-वासा अनिन्दितभोजी सकृद्रक्षमनिन्दितं त्रिषवणगुदकोपर्पर्शीं दण्डी कमण्डलुः स्त्रीशूद्रसंभाषणवर्जी स्थानासनशीलोऽहस्तिष्ठेद्रात्रावासीतेत्याह भगवान्वसिष्ठः॥६

स तद्यदेतद्धर्मशास्त्रं नापुत्राय नाशिष्याय नासंवत्सरोषिताय

द्यात्॥७

सहस्रं दक्षिणा सृषभैकादश गुरुप्रसादो वा गुरुप्रसादो वेति॥८

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे चतुर्विशोऽध्यायः।

।। अथ पश्चिवंशोऽध्यायः ॥
रहस्यप्रायश्चित्तवर्णनम् ।
अविख्यापितदोषाणां पापानां महतां तथा ।
सर्वेषां चोपपापानां शुद्धि वक्ष्याम्यशेषतः ॥१

अहिताग्नेविनीतस्य वृद्धस्य विदुषोऽपि वा। रहस्योक्तं प्रायश्चित्तं पूर्वोक्त मितरे जनाः ॥१ प्राणायामैः पवित्रेश्च दानेहोंमैर्जपैस्तवा । नित्ययुक्ताः प्रमुच्यन्ते पातकभ्यो न संशयः ॥३ प्राणायामान्पवित्राणि व्याहृतीः प्रणवं तथा । पवित्रपाणिरासीनो ब्रह्म नैत्यकमभ्यसेत् ॥४ आवर्तयेत्सदा युक्तः प्राणायामान्पुनः पुनः। आलोमाबात्रवात्राच तपस्तप्यतु उत्तमम् ॥५ निरोधाज्ञायते वायुर्वायोरग्निर्हि जायते। तापेनाऽऽपोऽथ जायन्ते ततोऽन्तः शुध्यते त्रिभिः ॥६ न तां तीत्रेण तपसा न स्वाध्यायेर्न चेज्यया। गतिं गन्तुं द्विजाः शक्ता योगात्संप्राप्नुवन्ति याम् ॥७ योगात्संप्राप्यते ज्ञानं योगो धर्मस्य लक्षणम्। योगः परं तपो नित्यं तस्माद्युक्तः सदा भवेत्॥८ प्रणवे नित्ययुक्तः स्याद्व्याहृतीषु च सप्तसु । त्रिपदायां च गायज्यां न भयं विद्यंते कचित्॥६ प्रणवाद्यास्तथा वेदाः प्रणवे पर्यवस्थिताः । वाङ्मयं प्रणवः सर्वं तस्मात्प्रणवमभ्यसेत् ॥१० एकाक्षरं परं ब्रह्म पावनं परमं स्मृतम्। सर्वेषामेव पापानां संकरे समुपस्थिते ॥११ अभ्यासोदशसाहस्रः सावित्र्याः शोधनं महत् ॥१२

सन्याहृति सप्रणवां गायत्री शिरसा सह । त्रिः पठेदायतप्राणः प्राणायामः स उच्यते स उच्यत इति ॥ इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे पश्चविंशोऽध्यायः।

-\$:\$:\$-

॥ अथ षड्विशोऽध्यायः ॥ अथ साधारणपापक्षयोपायाभिधानवर्णनम् ।

प्राणायामान्धारयेत्त्रीन्यो यथाविध्यतन्द्रितः। अहोरात्रकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥१ कर्मणा मनसा वाचा यदहा कृतमैनसम्। आसीनः पश्चिमां संध्यां प्राणायामैर्व्यपोहति॥२ कर्मणा मनसा वाचा यद्राच्या कृतसैनसम् ! उत्तिष्ठन्यूर्वसंध्यां तु प्राणायासैर्व्यपोहति ॥३ प्राणायामैर्य आत्मानं संयम्याऽऽस्ते पुनः पुनः। संद्ध्याचाधिकैवांऽपि द्विगुणैर्वा परं तु यः ॥४ सव्याहृतिकाः सप्रणवाः प्राणायामास्तु षोडश । अपि भ्रूणहनं मासात्पुनन्यहरहः कृताः ॥५ जप्त्वा कौत्समपेत्येतद्वासिष्ठं चेत्यृचं प्रति। सावित्रं शुद्धवत्यश्च शुरापोऽपि विशुध्यति ॥६ सकुज्जप्त्वाऽस्थवामीयं शिवसंकल्पमेव च । सुवर्णसप्रहत्यापि क्षणाद्भवति निर्मेलः ॥७

हविष्यन्तीयमभ्यस्य नतमंह इतीति च सुक्तं च पौरुषं जप्त्वा मुच्यते गुरुतल्पगः ॥८ अपिवाऽप्सु निमज्जानिक्षर्जपेद्घमर्षणम्। यथाश्वमेधावभृथस्तादृशं मनुरव्रवीत् ॥६ आरम्भयज्ञाज्जपयज्ञो विशिष्टो दशभिर्गुणैः। उपांशुः स्याच्छतगुणः सहस्रो मानसः स्पृतः ॥१० ये पाकयज्ञाश्चत्वारो विधियज्ञसमन्विताः । सर्वे ते जपयज्ञस्य कलां नाईन्ति षोडशीम् ॥११ जप्येनेव तु संसिध्येदुब्राह्मणो नात्र संसयः। कुर्यादन्यन वा कुर्यान्मेत्रो ब्राह्मण उच्यते ॥१२ जापिनां होमिनां चैव ध्यायिनां तीर्थवासिनाम्। न परिवसन्ति पापानि ये च स्नाताः शिरोव्रतैः ॥१३ यथाऽग्निर्वायुना धूतो हिवषा चैव दीप्यते । एवं जप्यपरो नित्यं ब्राह्मणः संप्रहीष्यते ॥१४ स्वाध्यायाध्यायिनां नित्यं नित्यं च प्रयतात्मनाम् । जपतां जुह्नतां चैव विनिपातो न विद्यते ॥१५ सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशावराम्। शुद्धिकामः प्रयुञ्जीत सर्वपापेष्वपि स्थितः ॥१६ क्षत्त्रियो बाहुवीर्येण तरेदापदमात्मनः। धनेन वेश्यशूद्री तु जपेहांमें द्विजोत्तमः ॥१७ यथाऽश्वा रथहीनाः स्यू रथो वाऽश्वेर्विना यथा। एवं तपस्वविद्यस्य विद्या वाऽप्यतपस्विनः ॥१८

यथाऽत्रं मधुसंयुक्तं मधु वाऽत्रेन संयुतम्।
एवं तपश्च विद्या च संयुक्तं भेषजं महत्।।१६
विद्यातपोभ्यां संयुक्तं ब्राह्मणं जपनैत्यकम्।
सदाऽपि पापकर्माणमेनो न प्रतियुज्यत, एनो न
प्रतियुज्यत। इति।।२०

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे षड्विशोऽध्यायः॥

सप्तविंशोऽध्यायः ।।
 अथ वेदाध्ययन प्रशंसावर्णनम् ।

यद्यकार्यशतं सात्रं कृतं वेदश्च धार्यते।
सवं तत्तस्य वेदाग्निर्दृहत्यग्निरिवेन्धनम्।।१
यथा बातबलो वहिर्दृहत्याद्रानिपि द्रुमान्।
तथा दहति वेदाग्निः कर्मजं दोषमात्मनः।।२
हत्वाऽपि स इमाँ होषान्भुञ्जानोऽपि यतस्ततः।
ऋग्वेदं धारयन्वित्रो नैनः प्राप्नोति किंचन।।३
न वेदबलमाश्रित्य पापकर्मरितर्भवेत्।
अज्ञानाच प्रमादाच दहाते कर्म नेतरत्।।४
तपस्तप्यति योऽरण्ये मुनिर्मूलफलाशनः।
ऋचमेकां च योऽधीते तच्च तानि च तत्समम्।।१

इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपवृंहयेत्। विभेत्यलपश्रुताद्वेदो मामयं प्रहरिष्यति ॥ई वेदाभ्यासोऽन्वहं शक्तचा महायज्ञक्रियाक्रमः। नाशयत्याशु पापानि महापातकजान्यपि ॥७ वेदोदितं स्वकं कर्म नित्यं कुर्यादतनिद्रतः। तद्धि कुर्वेन्यथाशत्त्या प्राप्नोति परमां गतिम्।।८ याजनाध्यापनाद्यौनात्तर्थैवासत्प्रतिप्रहात्। विप्रेषु न भवेद्दोषो ज्वलनार्कंसमो हि सः ॥६ शङ्कास्थाने समुत्पन्ने अभोज्याभोज्यसंज्ञके । आहारशुद्धिं वक्ष्यामि तन्मे निगद्तः शृणु ॥१० अक्षारलवणां रूक्षां पिबेद्बाह्यीं सुवर्चलाम्। त्रिरात्रं शङ्खपुर्व्प(दर्वी) च ब्राह्मणः पयसा सह ॥११ पालाशविल्वपत्राणि कुशान्पद्मानुदुम्बरान् । काथयित्वा पिवेदापिसरात्रेणैव शुध्यति ॥१२ गोमूत्रं गोमयं क्षीरं द्धिसपिः कुशोदकम्। एकरात्रोपवासश्च श्वपाकमपि शोधयेत्।।१३ गोमूत्रं गोमयं चैव क्षीरं दिध घृतं तथा। पञ्चरात्रं तदाहारः पञ्चगव्येन शुध्यति ॥१४ यवान्विधिनोपयुञ्जानः प्रत्यक्षेणैव शुध्यति । विशुद्धभावे शुद्धाः स्युरशुद्धे तु सरागिणः ॥१४ हविष्यान्त्रातराशांस्त्रीन्सायमाशांस्त्रथैव च। अयाचितं तथैव स्यादुपवासत्रयं भवेत्।।१६

अथ चेत्त्वरते कर्तुं दिवसं मारुताशनः।
रात्रौ जलाशये व्युष्टः प्राजापत्येन तत्समम्॥१७
सावित्र्यष्टसहस्रं तु जपं कृत्वोत्थिते रवौ ।
मुच्यते पातकैः सर्वेर्यदि नो ब्रह्महा भवेत् ॥१८
यो वै स्तेनः सुरापो वा भ्रूणहा गुरुतलपगः।
धर्मशास्त्रमधीत्यैव मुच्यते सर्वपातकैः॥१६
दुरितानां दुरिष्टानां पापानां महतां तथा।
कृच्छ्रं चान्द्रायणं चैव सर्वपापप्रणाशनम्॥२०
एकैकं वर्धयेत्पण्डं शुक्ले कृष्णे च हासयेत्।
अमावास्यां न भुद्धीत एवं चान्द्रायणो विधिरेवं
चान्द्रायणो विधिरिति॥२१

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे सप्तविशोऽध्यायः॥

॥ अथाष्टविंशोऽध्यायः॥

स्वयं विप्रतिपन्नादीनां दूषितस्त्रीणां त्यागाभावकथम्।

न स्त्री दुष्यित जारेण न विप्रो वेदकर्मणा। नापोऽऽपो मूत्रपुरीषेण नाग्निर्दहनकर्मणा।।१ स्वयं विप्रतिपन्ना वा यदि वा विप्रवासिता। बहात्कारोपभुक्ता वा चोरहस्तगताऽपि वा ।।२

Sध्यायः] स्त्रीणां पतनहेतवः सर्वेवेदपवित्राभिधानवर्णनम् १५३६

न त्याज्या दूषिता नारी नास्यास्यागो विधीयते। पुष्पकालमुपासीत ऋतुकालेन शुध्यति ॥३ स्त्रियः पवित्रमतुलं नेता दुष्यन्ति कर्हिचित्। मासि मासि रजो ह्यासां दुष्कृतान्यपकर्षति ॥४ पूर्व स्नियः सुरैभुक्ताः सोमगन्धर्वविद्विभिः। गच्छन्ति मानुषान्पश्चान्नेता दुष्यन्ति धर्मतः ॥५ तासां सोमोऽदद्(दा) च्छीचं गन्धवं: शिक्षितां गिरम् । अग्निश्च सर्वभक्षत्वं तस्मान्निष्कलमषाः स्त्रियः ॥६ त्रीणि स्त्रियः(याः) पातकानि लोके धर्मविदो विदुः। भर्तुर्वधो भ्रूणहत्या स्वस्य गर्भस्य पातनम् ॥७ वत्सः प्रस्रवणे मेध्यः शकुनिः फलपातने। क्षियश्च रतिसंसर्गे श्वा मृगप्रहणे शुचिः ॥८ अजाश्वा मुखतो मेध्या गावो मेध्यास्तु पृष्ठतः। त्राह्मणाः पादतो मेष्याः स्त्रियो मेध्यास्तु सर्वतः ॥६ सर्वेत्रेद्पवित्राणि वक्ष्याम्यहमतः परम्। येषां जपैश्च होमेश्च पूयन्ते नात्र संशयः ॥१० अघमर्षणं देवकृतं शुद्धवत्यस्तरत्समाः । कूष्माण्डानि पावमान्यो दुर्गा सावित्रिरेव च (?) ॥११ अभीवङ्गाः पद्स्तोमाः सामानि व्याहृतिस्तथा (?)। भारण्डानि च सामानि गायत्रं रेवतं तथा ॥१२ पुरुषव्रतं न्यासं च तथा देवव्रतानि च। अब्लिङ्गं वाईस्पत्यं च वाक्सूक्तं मध्यृचस्तथा ॥१३

शतरुद्रियमथर्वशिरिश्वसुपर्णं महाव्रतम् ।
गोसून्तं चारवसून्तं च शुद्धः शुद्धे ति सामनी ॥१४
त्रीण्याज्यदोहानि रथंतरं च अग्नेर्वतं वामदेव्यं बृहच ।
एतानि जप्तानि पुनन्ति जन्तूङ्जातिस्मरत्वं स्नभते यदीच्छेत् ॥१५
अग्नेरपत्यं पथमं सुवर्णं भूवैंद्यावी सूर्यसुताश्च गावः ।
तासामनन्तं फरुमश्नुवीत यः काञ्चनं गां च महीं च द्यात् ॥१६

उपरुन्धन्त दातारं गौरश्वः कनकं क्षितिः।
अश्रोत्रियस्य विप्रस्य हस्तं दृष्ट्वा निराकृतेः।।१७
वैशाख्यां पौर्णमास्यां च ब्राह्मणान्सम पश्च वा।
तिलान्क्षौद्रेण संयुक्तान्कृष्णान्वा यदि वेतरान्॥१८
प्रीयतां धर्मराजेति यद्वा मनसि वर्तते।
यावज्जीवकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति॥१६
सुवर्णनाभं कृत्वा तु सखुरं कृष्णमार्गणम्।
तिलेः प्रच्छाद्य यो द्यात्तस्य पुण्यफलं शृणु॥२१
ससुवर्णगुहा तेन सशेलवनकानना।
चतुर्वत्त्वा भवेदत्ता पृथिवी नात्र संशयः॥२१
कृष्णाजिने तिलान्कृत्वा हिरण्यं मधुसपिषी।
ददाति यस्तु विप्राय सर्वं तरित दुष्कृतमिति
सर्वं तरित दुष्कृतमिति॥२२

इति वासिष्ठे,धर्मशास्त्रेऽष्टाविंशोऽध्यायः॥

॥ अधैकोनत्रिशोऽध्यायः॥ अथ दानादीनां फलनिरूपणम्।

दानेन सर्वकामानवाप्नोति ॥१ चिरजीवित्वं ब्रह्मचारी रूपवान् ॥२ अहिंस्युपपद्यते स्वर्गम् ॥३ अग्निप्रवेशाद्ब्रह्मलोकः ॥४ मीनात्सीभाग्यम् ॥४ नागाधिपतिरुद्कवासात् ॥६ नीरुजः क्षीणकोशः॥७ तोयदः सर्वकामसमृद्धः ॥८ अन्नप्रदाता सुचक्षुः ॥६ स्मृतिमान्मेधावी सर्वतोऽभयदाता ॥१० गोप्रयुक्ते सर्वतीर्थोपस्पर्शनम् ॥११ शय्यासनदानादन्तःपुराधिपत्यम् ॥१२ छत्रदानाद्गृहलाभः ॥१३ गृहप्रदो नगरमाप्नोति ॥१४ उपानत्प्रदाता यानमासादयति ॥१५ अथाप्युदाहरन्ति—॥१६ यत्किचित्कुरुते पापं पुरुषो वृत्तिकर्षि(शि)तः। अपि गोचर्ममाञेण भूमिदानेन गुध्यति ॥१७ विप्रायाऽऽचमनार्थं तु द्वात्पूर्णं कमण्डलुम्। प्रेत्य तृप्तिं परां प्राप्य सोमपो जायते पुनः ॥१८ अनडुहां सहस्राणां दानानां धुर्यवाहिनाम्। सुपात्रे विधिद्त्तानां कन्यादानेन तत्समम् ॥१६

त्रीण्याहुरतिदानानि गावः पृथ्वी सरस्वती ।

खादिदानं हिरण्यानां विद्यादानं ततोऽधिकम् ॥२०
आत्यन्तिकफलप्रदं मोक्षसंसारमोचनम् ।
योगिनां संमतं विद्वानाचारमनुवर्तते ॥२१

श्रद्धानः शुचिद्गिन्तो धारयेच्छृणुयादपि ।
विहाय सर्वपापानि नाकपृष्ठे महीयत, इति
नाकपृष्ठे महीयत, इति ॥२२

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ त्रिंशोऽध्यायः॥

अथ प्राणाग्निहोत्रविधिवर्णनम्।

धर्म चरत माऽधर्म सत्यं वदत नानृतम्। दीर्घ पश्यत मा हस्वं परं पश्यत माऽपरम्।।१ ब्राह्मणो भवत्यग्निरग्निर्वे ब्राह्मण इति श्रुतेः।।२ तचकथम्।।३ तत्र सदो ब्राह्मणस्य शरीरं वेदिः संकल्पो यज्ञः पशुरात्मा रशना बुद्धिः सदो मुखमा-हवनीयं नाभ्यामुद्ररोऽग्निर्गार्हपत्यः प्राणोऽध्वर्युर-पानो होता व्यानो ब्रह्मा समान उद्गाताऽऽत्मे-न्द्रियाणि यज्ञपात्राणि य एवं विद्वानिन्द्रियरिद्रियाथं जुहोतीति॥४ अपि च काठके विज्ञायते॥५ पाति त्राति च दातारमात्मानं चैव किल्विषात्।
वेदेन्धनसमृद्धे षु हुतं विप्रमुखाग्निषु ॥७
न स्कन्दते न व्यथते नैनमध्यापदेच यत्।
विरिष्ठमग्निहोत्रातु ब्रह्मणस्य मुखे हुतम्॥८
ध्यानाग्निः सत्योपचयनं क्षान्त्या पृष्टिश्रवं त्रिः पुरोहाशमहिंसा च संतोषो यूपः कुच्च्छ्रं भूतेभ्योऽभयदाक्षिण्यं स्मृतिं कुत्वा कतुं मानसं याति क्षयं वुधः ॥६
जीर्यन्ति जीर्यतः केशा दन्ता जीर्यन्ति जीर्यतः।
जीवनाशा धनाशा च जीर्यतोऽपि न जीर्यति ॥१०
या दुस्त्यजा दुर्मतिभिर्या न जीर्यति जीर्यतः।
याऽसौ प्राणान्तिको व्याधिस्तां तृष्णांत्यजतः मुखमिति।४१
नमोऽस्तु मित्रावरुणयोरुर्वश्यात्मजाय शतयातदे
विसष्टाय विसष्टायेति॥१२

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे त्रिशोऽध्यायः ॥

समाप्ताचेयं वशिष्ठसमृतिः।

ॐ तत्सत्।

--कुक्किक्--

॥ अथ॥

॥ औशनस संहिता॥

—#**#:**#:**#**:

श्रीगणेशाय नमः।

अथानुलोमप्रतिलोमजात्यन्तराणां निरूपणवर्णनम् ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि जातिवृत्तिविधानकम् । अनुलोमविधानच्च प्रतिलोमविधि तथा ॥१ सान्तरालकसंयुक्तं सर्व संक्षिप्य चोच्यते । नृपाद् ब्राह्मणकन्यायां विवाहेषु समन्वयात् ॥२ जातः सूतोऽत्र निर्दिष्टः प्रतिलोमविधिर्द्धिजः । वेदानहस्तथा चैषां धर्माणामनुबोधकः ॥३

सूताद्विप्र प्रसूतायां सूतो वेणुक उच्यते। नृपायामेव तस्यैव जातो यश्चर्मकारकः।।४

ब्राह्मण्यां क्षत्त्रियाचौर्याद्रथकारः प्रजायते।

वृत्तभ्य शूद्रवृत्तस्य द्विजत्वं प्रतिषिध्यते।।

अनुलोमप्रतिलोमजात्यन्तराणांनिरूपणं, तद्धर्माभिधानवा । १५४५

यानानां ये च वोढ़ारस्तेषाश्व परिचारकाः। शूद्रवृत्त्या तु जीवन्ति न क्षात्त्रं धर्ममाचरेत् ॥६ ब्राह्मण्यां वैश्यसंसर्गाज्ञातोमागध उच्यते । वन्दित्वं ब्राह्मणानाञ्च क्षत्त्रियाणां विशेषतः ॥७ प्रशंसावृत्तिको जीवेद्वेश्यप्रेष्यकरस्तथा । ब्राह्मण्यां शूद्रसंसर्गाज्ञातश्चाण्डाल उच्यते ॥८ सीसमाभरणं तस्य कार्ष्णायसमथापि वा । वधीं कण्ठे समाव्ध्य भहरीं कक्षतोऽपि वा ॥६ महापकर्षणं ग्रामे पूर्वाह्वे परिशुद्धिकम्। नापराह्वे प्रविष्टोऽपि वहिर्घामाच नैकृते ॥१० पिण्डोभूता भवन्त्यत्र नोचेद् बध्या विशेषतः। चाण्डालाद्वेश्यकन्यायां जातः श्वपंच उच्यते ॥११ श्वमांसभक्षणं तेषां श्वान एव च तद्वलम्। नृपायां वैश्यसंसर्गादायोगव इति स्मृतः ॥१२ तन्तुवाया भवन्त्येव वसुकांस्योपजीविनः। शीलिकाः केचिद्त्रैव जीवनं वस्त्रनिर्मिते ॥१३ आयोगवेन विप्रायां जातास्ताम्रोपजीविनः। तस्यैव मृपकन्यायां जातः सूनिक उच्यते ॥१४ सूनिकस्य नृपायान्तु जाता उद्बन्धकाः स्मृताः। निर्णेजयेयुर्वस्वाणि अस्पृश्याश्च भवन्त्यतः ॥१६ नृपायां वैश्यतश्चौर्यात् पुलिन्दः परिकीर्तितः। पशुवृत्तिभवेत्तस्य हन्युस्तान् दुष्टसत्वकान् ॥१६

नृपायां शूद्रसंसर्गाज्ञातः पुकश उच्यते। सुराष्ट्रितं समारुह्य मधुविक्रयकर्मणा ॥१७ ष्ठतकानां सुराणाञ्च विक्रेता याचको भवेत्। पुक्तशाद्वेश्यकन्यायां जातो रजक उच्यते ॥१८ नृपायां शूद्रतश्चीर्याज्ञातो रञ्जक उच्यते । बैश्यायां रञ्जकाजातो नर्त्तको गायको भवेत् ॥१६ वैश्यायां शुद्रसंसर्गाजातो वैदेहिकः स्मृतः। अजानां पालनं कुर्यान्महिषीणां गवामपि ॥२० द्धिक्षीराज्यतकाणां विक्रय।ज्ञीवनं भवेत्। वैदेहिकातु विप्रायां जाताश्चर्मोपजीविनः।।२१ नृपायामेव तस्यैव स्नचिकः पाचकः स्मृतः। वैश्यायां शूद्रतश्चौर्याजातश्चकी च उच्यते ॥२२ तैलिपष्टकजीवी तु लवणं भावयन् पुनः। विधिना ब्राह्मणः प्राप्य नृपायान्तु समन्त्रकम्।।२३ जातः सुवर्ण इत्युक्तः सानुलोमद्विजः स्मृतः। अथ वर्णिक्रयां कुर्बन्नित्यनैमित्तिकीं क्रियाम्।।२४ अश्वं रथं हस्तिनं वा बाहयेद्वा नृपाज्ञया। सैनापत्यश्व भैषज्यं कुर्याज्ञीवेत्तु वृत्तिषु ॥२४ नृपायां विप्रतश्चीर्यात् संजातो यो भिषक् स्मृतः। अभिषिक्तनृपस्याज्ञां परिपाल्येतु वैद्यकम् ॥२६ आयुर्वेद्मथाष्ट्रः तन्त्रोक्तं धर्ममाचरेत्। ज्यौतिषं गणितं वाऽपि कायिकी वृत्तिमाचरेत्।।२७

नृपायां विधिना विप्राज्ञातो नृप इति स्पृतः। नृपायां नृपसंसर्गात् प्रमादाद् गूढजातकः।।२८ सोऽपि क्षत्त्रिय एव स्याद्भिषेके च वर्जितः। अभिषेकं विना प्राप्य गोज इत्यभिधायकः ॥२६ सर्वन्तु राजवृत्तस्य शस्यते प(ट्ट)दवन्दनम्। पुनर्भूकरणे राज्ञां नृपकानीन एव च ॥३० वैश्यायां चिधिना विप्राज्ञातो ह्यम्बष्ठ उच्यते । कृष्याजीवो भवेत्तस्य तथेवाग्नेयवृत्तिकः ॥३१ ध्वजिनी जीविका वाऽपि अम्बष्ठाः शस्त्रजीविनः। वैश्यायां विप्रतश्चौर्यात् कुम्भकारः स उच्यते ॥३२ कुलालवृत्त्या जीवेत नापिता वा भवन्त्यतः। सूतके प्रेतके वाऽपि दीक्षाकालेऽथ वापनम् ॥३३ नाभेरूद्र्ध्वं तु वपनं तस्मान्नापित उच्यते। कायस्थ इति जीवेतु विचरेच इतस्ततः ॥३४ काकाहील्यं यमात् क्रीयं स्थपतेरथ कुन्तनम्। आद्याक्षराणि संगृद्ध कायस्थ इति कीर्तितः ॥३४ शुद्रायां विधिना विप्राज्ञातः पारशवोमतः। भद्रकादीन् समाश्रित्य जीवेयुः पूजकाः स्मृताः ॥३६ शिवाद्यागमविद्याद्यैस्तथामण्ड(र्द)लवृत्तिभिः। तस्यां वै चौरसो वृत्तो निषादो जात उच्यते ॥३७ वने दुष्टमृगान् हत्वा जीवनं मांसविक्रयम्। नृपाजातोऽथ वैश्यायां गृह्यायां विधिना सुतः ॥३८

वैश्यवृत्या तु जीवेत क्षात्त्रधर्मं न चाचरेत्। तस्यां तस्येव चौरेण मणिकारः प्रजायते ॥३६ मणीनां राजतां कुर्यान्मुक्तानां वेधनक्रियाम् । प्रवालानाश्व सूत्रित्वं शाखानां बलयकियाम् ॥४० शुद्रस्य विप्रसंसर्गाज्ञात उप्र इति स्पृतः । नृपस्य दण्डधारः स्थाइण्डं दण्ड्ये षु सञ्चरेत् ॥४१ तस्यैव चौरसंवृस्या जातः शुण्डिक उच्यते । जातदुष्टान् समारोप्य शुण्डाकर्मणि योजयेत्।।४२ शूद्रायां वैश्यसंसर्गाद्विधिना सूचकः स्पृतः। सूचकाद्विप्रकन्यायां जातस्तक्षक उच्यते ॥४३ शिल्पकर्माणि चान्यानि प्रासाद् अक्षणं तथा। नृपायामेव तस्यैव जातो यो मत्स्यबाधकः ॥४४ शूद्रायां वैश्यतश्चौर्यात् कटकार इति स्मृतः। वशिष्ठशापात्त्रेतायां केचित् पारशवास्तथा ॥४५ वैखानसेन केचित्तु केचिद्रागवतेन च। वेदशास्त्रावलम्वास्ते भविष्यन्ति कलौ युगे ॥४६ कटकारास्ततः पश्चान्नारायणगणाः समृताः। शाखा वैखानसेनोक्ता तन्त्रमार्गविधिक्रियाःः ॥४७ निषेकाद्याः श्मशानान्ताः क्रियाः पूजाङ्गसृचिकाः। पश्चरात्रेण वा प्राप्तं प्रोक्तं धर्मं समाचरेत् ॥४८ शूद्रादेव तु शूद्रायां जातः शूद्र इति स्मृतः। द्विजशुश्रूषणपरः पाकथज्ञपरान्वितः ॥४६

सच्छूद्रं तं विजानीयादसच्छूद्रस्ततोऽन्यथा। चौर्यात् काकवचो ज्ञेयश्चाश्वानां तृणवाहकः॥५० एतत् संक्षेपतः प्रोक्तं जातिवृत्तिविभागशः। जात्यन्तराणि दृश्यन्ते संकल्पादित एव तु॥५१

इत्यौशनसं धर्मशास्त्रं समाप्तम्।

शुक्र (औशनस) संहिता समाप्ता ।

॥ अथ ॥

॥ औशनसस्मृतिः॥

--::::::::::::

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

...00...

॥ प्रथमोऽध्यायः ॥

अथ ब्रह्मचारिणां क्रमागतकतेव्य वर्णनम्।

शौनकाद्याश्च मुनय औशनं भागवं मुनिम्। नत्वा पप्रच्छुरिक्छं धमशास्त्रविनिर्णयम्।।१

मृषीणां शृण्वतां पूर्वमुशना धर्मतत्ववित्। धर्मार्थकाममोक्षाणां कारणं पापनाशनम्।।२ सुसमाधिहदो यूयं शृणुध्वङ्गदतो मम। भार्गवं पितरं नत्वा उशनं धर्ममत्रवीत्।।३ कृतोपनयनो वेदानधीयीत द्विजोत्तमः। गर्भाष्टमे व्यष्टमे वा स्वसूत्रोक्त विधानतः॥४ दण्डे च मेखलासूत्रे कृष्णाजिनधरे मुनिः। भिक्षाहारो गुरुहिते वीक्षमाणो गुरोर्मुखम् ॥५ कार्पासमुपवीतात् सित्रिर्मितं ब्रह्मणा पुरा। ब्राह्मणानान्त्र्यवित् सूत्रं कौशिवादास्त्रमेव वा ॥६ सदोपवीती चैव स्यात् सदा बद्धशिखो द्विजः। अन्वथा यत्कृतं कर्म तद्भवत्या यथाक्रमम्।।७ वसेदविकृतं वासः कार्पासं वा कशायकम्। तदेव परिधानीयं शुक्रमत्स्यद्रुमुत्तमम्।।८ उत्तरीयं समाख्यातं वासः कृष्णाजिनं शुभम्। अभावे भव्यमजिनं रौरवं वा विधीयते ॥६ उपवीतं वामबाहुं सन्यं वाहु समन्वितम्। उपवीतं भवेन्नित्यन्निवीतं कर्णलम्बनम् ॥१० सन्यबाहुं समुद्धृत्य दक्षिणेन धृता द्विजाः। प्राचीनावीतमित्युक्तं पित्र्ये कर्मणि धारयेत्।।११ अग्न्यगारे गवाङ्गोष्ठे होमे जप्ये तथैव च। स्वाध्यायभोजने नित्यं ब्राह्मणानाश्व सिष्ठधी ॥१२

उपासने गुरूणाञ्च सन्ध्ययोहभयोरपि। उपवीती अवेत्रित्यं विधिरेषः सनातनः ॥१३ मौञ्जी त्रिवृत्समा श्रक्ष्णा कार्या विप्रस्य मेखला। मुञ्ज्यभावे कुशानाहु प्रनिथनैकेन वा त्रिभिः॥१४ धारयेद्देल्वपालाशौ दण्डौ केशान्तगो द्विजः। यज्ञाक्यवृक्षजं वाथ सौम्यं वृषणमेव च ॥१४ सायं प्रातर्द्विजः सन्ध्यामुपासीत समाहितः। कामाल्लोभाद्भयान्मोहात् कदा न पतितो भवेत्।।१६ अग्निकार्यं ततः कुर्यात्सायं प्रातः प्रसन्नधीः। स्नात्वा सन्तर्पयेदेवानृषीन् पितृगणांस्तथा ॥१७ देवाभ्यचन्तितः कुर्यात् पुष्पैः पत्रेण चाम्बुभिः। अभिवादनशोलः स्यान्नित्यं वृद्धे ष्टधर्मतः ॥१८ असावहम्भो नामेति सम्यक् प्रणतिपूर्वकम्। आयुरारोग्यवान् वित्तं द्रव्याद्यपरिवर्जितः ॥१६ आयुष्मान् भव सौम्येति वाच्यो विप्राभिवादने। अकारश्चास्य नाम्नोऽन्ते वाच्यः पूर्वाक्षरस्ततः ॥२० यो न चेत्यभिवाद्स्य द्विजः प्रत्यभिवाद्नम्। नाभिवाद्यः स विदुषा यथा शूद्रस्तथैव सः ॥२१ सव्येन पाणिना कार्यं उपसंत्रहणं गुरोः। सब्येन सब्यः स्प्रष्टब्यो दक्षिणेन तु दक्षिणम् ॥२२ लौकिकं वैदिकं वाऽपि तथाध्यात्मिकमेव वा। आददीत यतो ज्ञानं तत्पूर्वमभिवाद्येत्।।२३

नोद्कं धारयेद्भेक्षं पुष्पाणि समिधस्तथा। एवं विधानि चान्यानि न देवार्थेषु किञ्चन ॥२४ ब्राह्मणं कुशलं पृच्छेत् क्षत्त्रयञ्चाप्यनामयम् ॥२५ वेश्यं क्षेमं समागम्य शूद्रकारोग्यमेव च। उपाध्यायः पिता ज्येष्ठो भ्राता चैव महीपतिः ॥२६ मातुलश्रशुरश्रातृमातामहपितामहौ । वर्णकाश्च पितृब्यश्च पञ्चेते पितरः स्मृताः ॥२७ माता मातामही गुर्वी पितृमात्स्वसाद्यः। श्वश्रु पितामही ज्येष्ठा ज्ञातव्या गुरवः ख्रियः ॥२८ इत्युत्तवा गुरवः सर्वे मातृतः पितृतस्तथा । अनुवर्तनमेतेषां मनोवाकायकर्मभिः ॥२६ गुरुं दृष्ट्वा समुत्तिष्ठेद्भिवाद्य कृताञ्जलिः। न तै रुपवसेत्साद्धं विवादेनार्थकारणात्।।३० जीविताथमपि द्वेषं गुरुभिनैव भाषणम्। उदितोऽपि गणैरन्यैगुंरुद्वेषी पतत्यधः ॥३१ गुणानामपि सर्वेषां पूजाः पञ्च विशेषतः। तेषामाद्यस्त्रियः श्रेष्ठास्तेषां माता सुपूजिता ॥३२ यो हि वासयति दिवा येन सद्योपदिश्यते। ज्येष्ठो भ्राता च भर्ता च पश्च ते गुरवस्तथा ॥३३ आत्मनः सर्वयत्नेन प्राणयागेन वा पुनः। पूजनीयाः प्रयत्नेन पञ्चैते भृतिमिच्छता ॥३४

यावत् पिता च माता च द्वावेतौ निर्विकारणम्। तावत् सर्वं परित्यज्य पुत्रः स्यात्तस्परायणः। पिता माता च सुप्रीतौ स्यातां पुत्रगुणैर्यदि ॥३५ स पुत्रः सकलं कर्म्म प्राप्तुयात्तेन कर्मणा। नास्ति मारुसमं दैवं नास्ति पिरुसमो गुरुः ॥३६ तयोः प्रत्युपकारोऽपि न हि कश्चन विद्यते। तयोर्नित्यं प्रियं कुर्यात्कर्मणा मनसा गिरा। न ताभ्या मननुज्ञातो धम्ममेकं समाचरेत्॥३७ वर्जयत्वा मुक्तिफलं नित्यनैमित्तिकं तथा। धर्मसारः समुद्दिष्टः प्रेत्यानन्द्फलप्रदः ॥३८ सम्यगाचारवक्तारं विसृष्टस्तद्नुज्ञया। शिष्यो विद्याफलं भुङ्क्ते प्रेत्य चापद्यते दिवि ॥३६ यो भातरं पिरुसमं ज्येष्ठं मूढ़ोऽवमन्यते। तेन दोषेण संप्रेत्य निरयं सम्प्रयच्छति ॥४० पुंसाञ्चात्मनि वेषेण पूज्यो भत्तां च सम्मतः। यानि दातरि लोकेऽस्मिन्तुपकारोऽपि गौरवम्।।४१ ये नरा भर्तृ पिण्डार्थं स्वान् प्राणान् सन्त्यजन्ति हि। तेषामेव परान् लोकानुवा च भगवान् भृगुः ॥४२ मातुलांश्च पितृन्यांश्च श्वशुरान् ऋत्विजान् गुरून्। असावयमिति ब्रूयात्प्रत्युक्ताय यवीयसः ॥४३ आचार्यो दीक्षितो नाम्ना यवीयानपि यो भवेत्। भोःशब्दपूर्वकं चैनमभिभाषेत धर्म्मवित् ॥४४

अभिवाद्याश्च पूर्वेन्तु शिरसावघशर्म च। ब्राह्मणक्षत्त्रियाद्येश्च श्रीकामैः साद्रं सद्। ॥४४ नाभिवाद्यास्तु विप्राणां क्षत्त्रियाद्याः कथञ्चन । ज्ञानकर्म्मगुणोपेता यद्यप्येते बहुश्रुताः ॥४६ ब्राह्मणाः सर्ववर्णानां स्वस्ति कुर्यादिति स्थितिः। सवर्णेऽप्यसवर्णानां कार्य्यमेवाभिवादनम् ॥४७ गुरुरमिर्द्विजातीनां वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः। पतिरेको गुरुः स्त्रीणां सर्वस्याभ्यागतो गुरुः ॥४८ विद्या कर्म्भ वयो बन्धुर्वित्तं भवति यस्य वै। मान्यस्थानानि पञ्चाहुः पूर्वं पूर्वं गुरूणि च ॥४६ पञ्चानां त्रिषु वर्णेषु भवेत्तु गुणवान् हि यः। यत्र स्यात्सोऽत्र मानाईः क्षुद्रोऽपि स भवेद् यदि ॥ ५० पिण्डादेभ्यो ब्राह्मणभ्यः स्त्रियै राज्ञेऽस्य चक्षुषे। वृद्धाय भावहीनाय रोगिणे दुर्वछाय च ॥५१ भिक्षामाहृत्य शिष्टानां गृहेभ्यः प्रयतोऽन्वहम्। निवेद्य गुरवेऽश्नीयाद्वाग्यतस्तद्नुज्ञया ॥५२ भवत्पूर्वं चरेद्भेक्षमुपनीतो द्विजोत्तमः। भवन्मध्यन्तु राजन्यो वैश्यस्तु भवदुत्तरम् ॥५३ मातरं वा स्वसारं वा मातुर्वा भगिनीं तथा। भिक्षेत भिक्षां प्रथमं या तु नैनं विमानयेत्। सजातीयमहेष्वेवं सर्ववर्णिकमेव वा। भैक्षस्याचरणं प्रोक्तं पतितादिषु वर्जितम् ॥५४

वेदयज्ञादिहीनानां प्रशस्तानां स्वकर्मसु। ब्रह्मचारी चरेद्भेक्षं गृहस्थः प्रयतोऽन्वहम् ॥ १४ गुरोः कुले न भिक्षेत न ज्ञातिकुलबन्धुषु । अभावेऽप्यथ गेहानां पूर्वं पूर्वं विवर्जयेत् ॥५६ सर्वं वापि चरेद् य्रामं पूर्वोक्तानामसम्भवे। नियम्य प्रयतो वाचं दिशश्चानवलोकयन् ॥५७ समाहृत्य तु तद्भेक्षं यावद्र्थमिहाज्ञया। भुञ्जीत प्रयतो नित्यं वाग्यतो नान्यमानसः ॥५८ भैक्षेण वर्तयेन्नित्यं कामनाशीर्भवेद् व्रती। भैक्षेण वृत्तिनो वृत्तिरुपवाससमं स्मृता ॥५६ पूजयेदशनं नित्यमद्यादन्नमकुत्सयन्। हृष्ट्रा हृष्येत्प्रसीदेच प्रतिनन्देच सर्वतः ॥६० अनारोग्यमनायुष्यमस्वग्यं कुत्सभोजनम्। अपुण्यं लोकविद्विष्टं तस्मात्तत्परिवर्जयेत् ॥६१ प्राङ्गुखोऽन्नानि भुञ्जीत दक्षिणामुख एव वा। नाद्यादुदृङ्मुखो नित्यं विधिपूर्वं सनातने ॥६२ प्रक्ष्याल्य पाणिपादौ च भुञ्जानो द्विरूपरपृशेत्। शुचौ देशे समासीनो भुक्त्वान्ते द्विरूपस्पृशेत् ॥६३ मण्डलं पूर्वतः कृत्वा तत्र स्थाप्याथ भोजयेत्। स्वप्राणाहुसिपर्यन्तं मौनमेव विधीयते ॥५४ इत्यौशनसस्मृतौ प्रथमोऽध्यायः।

॥ अथ द्वितीयोऽध्यायः॥

अथ ब्रह्मचारिप्रकरणे शौचाचारवर्णनम्।

भुक्ता पीत्वा च स्नात्वा च तथा रथ्योपसर्पणे। ओष्ठावलोमकौ रष्टश्रा वासो विपरिधाय च ॥१ रेतोमूत्रपूरीषाणामुत्सर्गेणान्तभाषणे । तथा चाध्ययनारम्भे कासश्वासाग्मे तथा।।२ चत्वरं वा रमशानं वा समागम्य द्विजोत्तमः। सन्ध्ययोरभयोस्तद्वदाचान्ते चाचमेत् पुनः ॥३ चण्डात्रम्हेच्छसम्भाषे स्त्रीशूद्रोच्छिष्टभाषणे । उच्छिष्टं पुरुषं स्पृष्ट्रा भोज्यं वापि तथाविधम्।।४ अश्रुपाते तथाचामे अहितस्य तथैव च। भोजयेत् सन्ध्ययोः स्नात्वा पीत्वा मृत्रपुरीषयोः ॥५ आचान्तोऽप्याचमेत् स्पृष्टुा सकृत् सकृद्थान्यतः। अग्नेर्गवामयालम्भे रष्ट्रष्ट्रा प्रयत एव वा ॥६ नृणामथाश्मनः स्पर्शे नीवीं विपरिधाय च। उपस्पृशेज्जलं शुद्धं तृणं वा भूमिमेव वा ॥७ कोशानां चात्मनः स्पर्शे वाससां क्षालितस्य च। अनुष्णाभिरफेनाभिरदुष्टाभिश्च सर्वशः ॥८ शौचे च सुखमासीनः प्राङ्मुखो वाप्युदङ्मुखः। शिरः प्रावृत्य कर्णं वा मुक्तकच्छशिखोऽपिवा ॥६

ऽध्यायः |

अकृत्वा पादयोः शौचमाचान्तोऽप्यशुचिर्भवेत्। सोपानत्को जलस्थो वा नोष्णीषी वाऽऽचमेद् बुधः ॥१० न चैव वर्षधाराभिने तिष्ठत्र घृतोद्कैः। नैकहस्तार्पितजलेर्विना शूद्रेण वा पुनः ॥११ न पादुकासनस्थो वा बहिर्जानुरथापि वा । न जरुपन्न हसन् प्रेक्षमाणश्च प्रह्न एव वा । नावीक्षमाणाद्भिन्नोष्णाद्भिन्नफेनाद्थापि वा ॥१२ शूद्राशुचिकरेर्मुक्तेनक्षाराभिस्थैव च। न चैवाङ्कुलिभिः शब्दमकुर्वन्नान्यमानसः ॥१३ न वर्णरसंदुष्टाभिर्नचैव प्रद्रोदकैः। न प्राणिजनिताभिर्वा न बहिः कल्सेव वा ॥१४ हृद्राभि: पूयते विप्रः कणाभिः क्षत्त्रियः शुचिः । प्राशिताभिस्तथा वैश्यः (स्त्री) शूद्रः संस्पर्शनैस्ततः ॥१५ अङ्कु उमूलान्तरतो रेखायां ब्रह्म उच्यते। अन्तराङ्क्युदेशिन्यो पितृणां तीर्थमुत्तमम्।।१६ कनिष्ठो मूलतः पश्चात्प्राजापत्यं प्रचक्षते। अङ्गुल्यमे समृतं दैवं तथैवार्षं प्रक्रीर्तितम्। मूले स्यादैवमार्षं स्यादाग्नेयं मध्यतः स्पृतम् ॥१७ तदेव सौमिकं तीर्थमेतज्ज्ञात्वा न मुह्यति। ब्राह्मेणैव तु तीर्थेन द्विजो नित्यमुपस्पृशेत्। कारेन वा दैवतेन न तु पित्र्येण वा द्विजाः ! ॥१८

त्रिः प्राश्नीयाद्पः पूर्वं ब्राह्मणः प्रयतः स्पृतः । संवृत्ताङ्कष्ठमूलेन मुखं वे समुपस्पृशेत्।।१६ अङ्कुष्ठानामिकाभ्यां तु स्पृशेत्रत्रद्वयं ततः। तर्जन्यञ्जष्ठयोगेन सृशेन्नासापुटं ततः ॥२० कनिष्ठाङ्कष्ठयोगेन श्रवणे समुपस्पृशेत्। सर्वासामथ योगेन हृदयन्तु तलेन वा।।२१ संस्पृशेद्धे शिरस्तद्वदङ्गुष्ठेनाथवा द्वयम्। त्रिः प्राश्नीयादेवमेव प्रीतास्तेनास्य देवताः ॥२२ ब्रह्मविष्णुमहेशाश्च सम्भवन्यनुशुश्रुमः । गङ्गा च यमुना चैव प्रीयते परिमार्जनात्।।२३ प्रसंस्पर्शाह्रोचनयोः प्रीयेते शशिभास्करौ । नासत्यौ चैव प्रीयेते स्पृष्टं नासापुटद्वयम् ॥२४ कर्णयोः रष्ट्रश्योस्तद्वत्त्रीयेते चानलानिली । संखुटे हृद्ये चास्याः प्रीयन्ते सर्वदेवताः ॥२४ मूर्षिन संस्पर्शनादेव श्रीतस्तु पुरुषो भवेत्। नोच्छिष्टं कुर्वते मुख्यं विप्रयोगं नयन्ति याः ॥२६ अन्तवदन्तसिळळिजिह्वास्पर्शे शुचिर्भवेत्। सृशन्ति बिन्दवः पादौ य आचामयतः परम् ॥२७ भूमिगैस्ते समाज्ञेयाः न तैरप्रयतो भवेत्। मधुपर्के च सोमे च ताम्बूटस्य च भक्षणे ॥२८ कलमूलेश्चदण्डे च न दोषो भागवोऽत्रवीत्। प्रचरंखान्नपानेषु यदुच्छिष्टो भवेद् द्विजः ॥२६

भूमौ निक्षिप्य तद्द्रव्यमाचम्य प्रोक्षयेतु यत्। तेजसं वे समादाय भवेदुच्छेषणात्ततः ॥३० अनिधाय च तद्द्रव्यमाचान्तः शुचितामियात्। वस्नादीनां विकल्पत्वात् स्ष्टृष्ट्वा च देवमेव हि ॥३१ आरभ्यानुर्के रात्री चोरो वाप्याकले पथि। कृत्वा मूत्रपुरीषं वा द्रव्यहस्तेन दुष्यति ॥३२ निधाय दक्षिणे कर्णे ब्रह्मसूत्रमुद्र मुखः। अथ कुर्यात् शकुन्मूत्रे रात्रौ चेद्दक्षिणामुखः ॥३३ अन्तर्धाय महीं काष्ठैः पर्णैलींष्ट्रतृणेन वा । प्रतिचीनशिराः कुर्यात् कुच्छ्रमूत्रविसर्जने ॥३४ छायाकूपनदीगोष्ठे चैत्याम्भः पथि भस्मसु । अग्नौ चैव श्मशाने च विण्मृत्रोण समाचरेत्।।३४ न गोमये न कुड़चे वा न गोष्ठे नैव शाद्वले। न तिष्ठन् वा न निर्वासा न च पर्वतमस्तके ॥३६ न जीर्णदेवायतने न वल्मीके कदाचन। न च सर्वेषु गर्तेषु न च गच्छन् समाचरेत्॥३७ तुषाङ्गारकपालेषु राजमार्गे तथैव च। न क्षेत्रे न बिले चापि न तीर्थे च चतुष्पथे।।३८ नोद्यानोपसमीपे वा नोषरे न पराशुचौ। न चोपानत्कपादौ च छत्री वर्णान्तरीक्षके ॥३६ न चैवाभिमुखः स्त्रीणां गुरुब्राह्मणयो गेवाम्। न देवदेवालययो र्नापामपि कदाचन ॥४०

नदीज्योतीिष वीक्षित्वा तद्वाद्याभिमुखोऽपि वा।
प्रत्यादित्यं प्रत्यनिलं प्रतिसामं तथैव च ॥४१
आदय मृत्तिकां कृर्यात् लेपगण्डापकर्षणम्।
कुर्यादतिन्द्रतः शौचं विशुद्धे रद्धृतोदकैः॥४२
नाहरेन्मृत्तिकां विप्रः पांशुलां नच कर्दमात्।
न मार्गान्नोषरादेशाच्छौचाविष्टोऽपरस्य च ॥४३
न देवायतनात् कुड्याद् प्रामान्न तु कदाचन।
उपस्पृशेत्ततो नित्यं पूर्वोक्तेन विधानतः॥४४
तारव्याहृतिगायत्र्या वर्णानामेरणैः क्रमात्।
तन्मंत्रितं पिबेद्यस्तु मन्त्राचमनमीरितम्॥४५
गायत्र्या चमनेनाथ श्रुत्याचमनमीरितम्।

इत्यौरानसस्मृतौ द्वितीयोऽध्यायः।

।। अथ तृतीयोऽध्यायः ॥ अथ ब्रह्मचारिप्रकरणेऽनेकप्रकरणवर्णनम् ।

एवं देहादिभियुंक्तः शौचाचारसमन्वितः। आहृत्याऽध्ययनं कुर्याद्वीक्षमाणो गुरोर्मुखम् ॥१ नित्यमुद्यतपाणिश्च सन्ध्याचारसमन्वितः। आस्यतामिति चोक्तश्च नासीताभिमुखं गुरोः भर प्रतिश्रवणसम्भाषे शयानो न समाचरेत्। आसीनो न च भुञ्जानो न तिष्ठन्न पराङ् मुखः। न च शय्यासनं चास्य सर्वदा गुरुसन्निधौ ॥३ गुरोस्तु चक्षुर्विषये न यथेष्टासनो भवेत्। नोदाहरेदस्य नाम परोक्षमि केवलम् ॥४ न चैवास्यानुकुर्वीत गतिभाषणचेष्टितम्।।५ गुरोर्यत्र परीवादो निन्दा वाऽपि प्रवर्त्तते । कर्णी तत्र पिधातव्यौ गन्तव्यं परितोऽन्यतः ॥६ दूरस्थो नार्चयेद्देवात्र कुद्धो नान्तिके स्त्रियः। न चैवास्योत्तरं ब्रूयात्र तेनासीत सन्निधौ ॥७ उद्कुम्भं कुशान् पुष्पं सिमधोऽप्याहरेत्सदा । मार्जनं लेपनं नित्यमङ्गानां वै समाचरेत्॥८ नास्य निर्माल्यशयनं पादुकोपानहावपि। आक्रामेदासनं तस्य छायामपि कदाचन ॥६ ये दन्तकाष्ठादीन् लब्ध्वा न चास्यै विनिवेदयेत्। अनापृच्छच न गन्तव्यन्नत्वप्रियहिते रतः ॥१० न पादौ स्थापयेदस्य सन्निधाने कदाचन। जुम्भितं हसितं चैव क्षपकं प्रावरणं तथा ॥११ वर्जयेत् सन्निधौ नित्यं नखस्फोटनमेव च । यथाकालमधीयीत यावन्न विमना गुरुः। आसनादौ गुरोः कूर्चे फलके वा समाहितः॥१२

आसने शयने पाने न च तिष्ठेतकथश्वन। धावन्तमनुधावेत गच्छन्त मनुगच्छति ॥१३ गजोष्ट्रयानप्रासादप्रस्तरेषु कटेषु च। नासीत गुरुणा साद्धं शिलाफलतलेषु च ॥१४ जितेन्द्रियः स्यात् सततं वश्यात्माऽक्रोधनः शुचिः। प्रयुक्जीत सदा वाचं मधुरां हितभाषिणीम्।।१४ गण्डमाल्यां रसं कन्यां सूक्ष्मप्राणिविहिंसनम्। अभ्यङ्गञ्चाञ्जनोपानच्छत्रधारणमेव च ॥१६ कामं क्रोधं भयं निद्रां गीतवाद्त्रिनर्त्तनम्। द्यूतं जनपरीवादं स्त्रीप्रेक्षालापनं तथा ॥१७ परोपतापपैशुन्यं प्रयत्नेन विवर्जयेत्। उद्कुम्भं सुमनसो गोशकुन्मृत्तिकां कुशान्।।१८ आहरेद्यावदन्यानि भेक्षञ्चाहरहश्चरेत्। तथैव लवणं सर्वं भक्ष्यं पर्युषितं नयेत् ॥१६ अनन्यदर्शी सततं भवेद्गीतादिनिः स्पृहः। नादर्शब्चैव वीक्षेत न चरेहन्तधावनम्।।२० एकान्तमशुचिः स्त्रीभिः शूद्राद्यैरिभभाषणम्। गुरूच्छिष्टं भेषजार्थं न प्रयुद्धीत कामतः।।२१ मलापकर्षणं स्नानन्नाचरेद् वै कदाचन । नचातिसृष्टो गुरुणा स्वान् गुरूनिभवाद्येत्।।२२ विद्यागुरुष्वेतदेव नित्यवृत्तिः स्वयोनिषु। प्रतिषेधत्सु वा धर्म हितं चोपदिशन् स्वयम् ॥२३

श्रेयः सुगुरुवद्वृत्ति नित्यमेवं समाचरेत्। गुरुपत्नीषु पुत्रोषु गुरोश्चैव स्वबन्धुषु ॥२४ बालः समानजन्मा वा शिष्यो वा यज्ञकर्मसु। अध्यापयन् गुरुसुतो गुरुवन्मानमईति ॥२५ उत्सादनं वै गात्राणां स्नानं चोच्छिष्टभोजने। न कुर्याद् गुरुपुत्रस्य पादयोः शौचमेव च ॥२६ गुरुवत्प्रतिपूज्याश्च सवर्णा गुरुयोषितः। असवर्णास्तु संपूज्याः प्रत्युत्थानाभिवादनैः ॥२७ अभ्यञ्जनं स्नापनञ्च गात्रोत्सादनमेव च। गुरुपत्न्या न कार्याणि केशानाश्व प्रशोधनम्।।२८ गुरुपत्नी च युवती नाभिवाद्येह पादयोः। कुर्वीत वदनं भूम्यामसावहमिति ब्रुवन् ॥२६ विप्रस्य पाद्महणमन्वह्श्वाभिवाद्नम्। गुरुदारेषु कुर्वीत सदा धर्ममनुस्मरन् ॥३० मातृष्वसा मातुलानी श्वश्रूश्चापि पितृष्वसा। संपूज्या गुरुपत्नी च समास्ता गुरुभार्यया ॥३१ भ्रातृभार्योपसंप्राह्या ज्ञातिसम्बन्धयोषितः। पितुर्भगिन्या मातुश्च जायायाश्व स्वसर्यपि ॥३२ मात्वद् वृत्तिमातिष्ठेन्माता तेभ्यो गरीयसी। एवमाचारसम्पन्नमात्मवन्तं सदा हितम्।।३३ वेदं धमं पुराण व तथा तत्त्वानि नित्यशः। सम्वत्सरोषिते शिष्ये गुरुज्ञीन मनिर्दिशेत् ॥३४

हरते दुष्कृतं तस्य शिष्यस्य वत्सरे गुरुः। आचार्यपुत्रशुश्रुषु र्ज्ञानदो धार्मिकः शुचिः ॥३४ शक्तो गुर्वीर्धमेधावी नाध्याप्यो दशधर्मतः। कृतज्ञश्च तथा द्रोही मेथावी शुभकुन्नरः ॥३६ प्राप्य विप्रोऽप्यविधिवत् षडध्यात्मा द्विजोत्तमैः। एतेषु ब्राह्मणो दानमन्यत्र न यथोदितम् ॥३७ आचम्य संयतो नित्यमधीयीत उदङ् मुखः। उपसंगृह्य तत्पादौ वीक्ष्यमाणो गुरोर्मु खम् ॥३८ अधीष्व भो ! इति ब्रूयात् विरामोऽस्त्वित वाचयेत्। प्राक्कुशोषु समासीनः पवित्रैरवपावितः ॥३६ प्राणायामे स्त्रिभिः पूर्वं तथा चोङ्कारमहंति। ब्राह्मणः प्रणवं कुर्याद्तते च विधिवद्द्विजः ॥४० कुर्याद्ध्ययनं निश्यं ब्रह्माञ्जलिकृतस्थितिः। सर्वेषामेव भूतानां वेदश्रक्षुः सनातनः ॥४१ अधीते विधिवन्नित्यं ब्रह्मण्याच्च्यवतेऽन्यथा। योऽधीयीत ऋचो नित्यं श्लीराहुत्या स देवताः ॥४२ प्रीणाति तपंयन्त्येनं कामैस्तृप्ताः सदैव हि। यइं योऽधीते सततं दृष्ना प्रीणाति देवता ॥४३ सामान्यधीते प्रीणाति घृताहुतिभिरन्वहम्। अथर्वाङ्गिरसो नित्यमध्यात् प्रीणाति देवता ॥४४ धर्माङ्गानि पुराणानि मीमांसैस्तृप्यते सुरान्। अपां समीपे नियतो नैत्यकं विधिमाश्रितः ॥४४

गायत्रीमप्यधीयीत गत्वारण्यं समाहितः। सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशापराम् ॥४६ गायत्रीं वै जपेन्नित्यं जपश्च त्रिः प्रकीर्तितः। गायत्रीं चैव वेदांश्च तुलया तुलयन् प्रभुः ॥४७ एकतश्चतुरो वेदान् गायत्रीं च तथैकतः। ओङ्कारमादितः ऋत्वा व्याहृतीस्तद्नन्तरम् ॥४८ ततोऽधीयीत एकायं श्रिया परमयान्वितः। अध्यापयेतु एकाम्रं गायत्री परया तु या ॥४६ पुराकल्पे समुत्पन्ना भूर्भुवः स्वर्गनामतः। महाव्याहृतयस्तिस्रः सर्वाशुभनिबर्हणाः ॥५० प्रधानं पुरुषः कालो ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः। सत्यं रजस्तमस्तिस्रः कामा व्याहृतयस्रयः ॥५१ ओङ्कारस्तत्परं ब्रह्म गायत्री स्यात्तदक्षरम्। एवं मन्त्रो महायोगः साक्षात्सार उदाहृतः ॥५२ योऽधीतेऽह्न्यमाने तां गायत्रीं वेद्मातरम्। विज्ञायाथं ब्रह्मचारी स याति परमाङ्गतिम् ॥५३ न गायज्याः परं जप्यमेतद्विज्ञानमुच्यते । श्रवणस्य तु मासस्य पौर्णमास्यां द्विजोत्तमाः ! ॥५४ आषाह्यां प्रौष्ठपद्यां वा वेदोपक्रमणं स्मृतम्। उत्मृज्य मामनगरं मासान्विप्रोऽर्थपञ्चमान् ॥५५ अधीयीत शुचौ देशे ब्रह्मचारी समाहितः। पुष्ये तु झन्दसां कुर्याद्वहिरुत्सर्जनं द्विजाः ! ॥४६

माघे वा मासि संप्राप्ते पूर्वाह्वे प्रथमेः हिन। छन्दांस्यूर्ध्वमधीयीत शुक्रपक्षे तु वै द्विजाः ! ॥५७ वेदाङ्गानि पुराणं वा कृष्णपक्षे तु मानवः। इमन्नित्यमनध्यायानधीयानो विसर्जयेत्।।६८ अध्यापनञ्च कुर्वाणो अध्येस्यन्नपि यत्नतः। कर्माधुरे दिवारात्रौ दिवावासं समूहने ॥५६ विद्युत्स्त्तनितवर्षासु महोल्कानाश्व पातने। आकस्मिकमनध्यायमेतेष्वेव प्रजापतिः ॥६० एता न स्युर्दिता नाद्यान्यद्प्राग्दुष्क्रतादिषु। तदा विन्दादनर्थाय मन्यते जाप्रदर्शने ॥६१ निर्घाते वाऽथ चलने ज्योतिषां चोपसर्पणे । एतानकालिकान् विन्द्याद्नर्थायागतावपि ॥६२ प्राग्दुष्कृतेष्त्रप्रिषु च विद्युस्तनितनिस्वने। सद्यो हि स्यादनध्यायमनृतं मुनिरव्रवीत्।।६३ निध्याय एवं स्याद् मामेऽरण्येषु नगरेषु च। कर्मनैपुण्यगामानां पूतिगन्धे च नित्यशः ॥६४ अन्त्यानां सङ्गते प्रामे वृषलस्य च सन्निधौ। अनध्यायो निन्धमाने समवाये जनस्य च ॥६४ उदये मध्यरात्रौ च विण्मूत्रो च विसर्जयेत्। उच्छिष्ठश्राद्धभुक् चैव मनसा न विचिन्तयेत्।।६६ प्रतिगृह्य द्विजो विद्यादेको दिष्टस्य केतनम्। तदाह कीर्त्तयेद् ब्रह्म राज्ञो राहोश्च सृतके ॥६७

धावकोऽनुलिप्तस्य स्नेहोगाधस्य बिष्ठति । विप्रस्याविदुषो देहे तावद् ब्रह्म न कीर्त्तयेत् ॥६८ शयानः प्रौढपाद्श्च कृत्वा वै वावसित्थकाम्। नाधीयीतामिषञ्जग्ध्वा सूतकान्नाद्यमेव च ॥६६ नीहारैर्वाणशब्दैश्च सन्ध्ययोरुभयोरपि । अमावास्यां चतुर्दश्यां पौर्णमास्यष्टमीषु च ॥७० उपाकर्मणि चोत्सर्गे त्रिरात्रं क्षपणं समृतम्। अष्टकासु च कुर्वीत मितमान् तासु रात्रिषु ॥७१ मार्गशीर्षे तथा पौषे माघे मासे तथैव च। तिस्रोऽष्टकाः समाख्याता कृष्णे पक्षे च सूरिभिः॥७२ श्लेब्मातकस्य छायायां शाल्मलेर्मधुकस्य च। कदाचिद्पि नाध्येयं कोविदारकपित्थयोः ॥७३ समानविद्येऽनुमृते तथा सब्रह्मचारिणि। आचार्ये संस्थिते वाऽपि त्रिरात्रं क्षपणं समृतम्।।७४ ब्रिद्रेष्वेतेषु विप्राणामनध्यायाः प्रकीर्तिताः। हिंसन्ति राक्षसास्ते च तस्मादेतान् विसर्जयेत्।।७४ नैत्यके नास्त्यनध्यायः सन्ध्योपासन एव च। उपाकर्मणि कर्मान्ते होममन्त्रोषु चैव हि ॥७६ एकार्चमथवैकं वा यजुः सामाथवा पुनः। अष्टकायाः स्वधीयत मारुते चापि वापदि ॥७७ अनध्यायो विनाशे च नेतिहासपुराणयोः। निधर्म्भशास्त्रेष्वन्येषु पर्वण्येतान् विसर्जयेत्।।७८

एष धर्मः समासेन कीर्तितो ब्रह्मचारिणः। ब्रह्मणाभिहितः पूर्वमृषीणां भावितात्मनाम् ॥७६ योऽन्यत्र कुरुते यत्नमनधीत्य श्रुति द्विजः। स वै मूढो न सम्भाष्यो वेदवाह्यो द्विजातिभिः।।८० न वेदपाठमात्रोण सन्तुष्टो वै द्विजोत्तमः। पाठमात्रावसानस्तु पङ्को गौरिव सीदति ॥८१ योऽधीत्य विधिवद्वेदं वेदान्तं न विचारयेत्। स सान्वयः शूद्रकल्पः स पाद्यं न प्रपद्यते ॥८२ यदि वा ज्यन्तिकं वासं कर्तुमिच्छति वै गुरौ। युक्तः पंरिचरेदेनमाशरीरविमोक्षणात्।।८३ गत्वा वनं वा विधिवज्जुहुयाज्जातवेदसम्। अधीयीत सदा नित्यं ब्रह्मविद्यां समाहितः॥८४ सावित्रीं शतरुद्रीयं वेदानां च विशेषतः। अभ्यसेत्सततं वेदं भरमस्नानपरायणः ॥८५ वेदं वेदो तथा वेदाः वेदान्वे चतुरो द्विज !। अधीत्य विधिगम्यार्थं ततः स्नायाद् द्विजोत्तमः ॥८६ वेदोदितं स्वकं कर्म नित्यं कुर्यादतनिद्रतः। अकुर्वाणः पतत्याशु निरयानितभीषणान् ॥८७ अभ्यसेत्प्रयतो वेदं महायज्ञान हापयेत्। कुर्याद् गृह्याणि कर्माणि सन्ध्योपासनमेव च ॥८८ नित्यं स्वाध्यायशीलः स्यान्नित्यं यज्ञोपवीतकः। सत्यवादी जितकोधो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥८६

सन्ध्यास्नानरतो नित्यं ब्रह्मयज्ञपरायणः। अनसूयो मृदुर्दान्तो गृहस्थः प्रत्यवर्तते ॥६० उदानाय ततः कुर्यात्समानायेति पञ्चमम्। विज्ञाय तत्त्वमेतेषां जुहुयादात्मनि द्विजः।।९१ शेषमत्रं यथाकामं भुञ्जीत व्यञ्जनैर्युतम्। ध्यात्वा तन्मानसे देवमात्मानं वे प्रजापतिम्।।६२ अमृतापिधानमसीत्युपरिष्टाद्पः पिबेत्। आचान्तः पुनराचामेद्यं गौरिति भाषयेत्।।६३ अधीत्य विधिवद्वेदानर्थं चैवोपलभ्य च। धर्ममकायनिवृत्तिश्चेदेतद्विज्ञानमुच्यते ॥६४ यः स्वयं नियतो भूत्वा धर्मपाठं पठेद्दिजः। अध्यापयेच्छ्रावयेद् वा ब्रह्मलोके महीयते ॥६४ प्रातःकृत्यं समाप्याथ वैश्वदेवपुरःसरम्। मध्याह्रे भोजयेद्विप्रान् सम्यक् भूतात्मभावनः ।।६६ प्राङ्मुखस्तानि भुञ्जीत सूर्याभिमुख एव वा। आसीनस्त्वासने शुद्धे भूमौ पादौ निधापयेत्।।६७ आयुष्यं प्राङ्मुखो भुङ्क्ते यशस्यं दक्षिणामुखः। श्रियं प्रत्यङ्मुखो भुङ्क्ते ऋणं भुङ्क्ते उदङ्मुखः। पश्चात् स भोजनं कुर्यात् भूमौ वा तन्निधापयेत्।।६८ उपवासेन तत्तुल्यमित्येवम्भार्गवोऽत्रवीत्। उपिंदय शुची देशे पादी प्रक्षालय वै करी ।।६६

आचान्तोऽक्रोधनो नक्तं पश्चात्तु भोजनं चरेत्। इह व्याहृतिभिस्त्वन्नं परिधायोद्केन तु ॥१०० परिषेचनमन्त्रोण परिषिच्य ततः परम्। चित्रगुप्तबलिं दत्त्वा तद्भं परिषिच्य च ॥१०१ अमृतोपस्तरणमसीत्यापोशनक्रियां चरेत्। स्वाहाप्रणवसंयुक्तं प्राणायेत्याहुति ततः ॥१०२ अपानायाहुतिं हुत्वा व्यानाय तद्नन्तरम्। उदानाय ततः कुर्यात्समानायेति पञ्चमम् ॥१०३ विज्ञाय तत्त्वमेतेषां जुहुयादात्मनि द्विजः। शेषमत्रं यथाकामं भुञ्जीत व्यञ्जनैर्युतम्। ध्यात्वा तन्मानसे देवमात्मानं वै प्रजापतिम् ॥१०४ अमृतापिधानमसीत्युपरिष्टादपः पिबेत्। आचान्तः पुनराचामेद्यं गौरिति मन्त्रतः ॥१०४ त्रिपदां वा त्रिरावृत्य सर्वपापप्रणाशनीम्। प्राणानां प्रन्थिरसीत्यालभेद्धृद्यं ततः ॥१०६ आचम्याङ्गुष्ठमानीय पादाङ्गुष्टेन दक्षिणम्। निःस्नावयेद्धस्तजलमूर्द्धहस्तः समाहितः ॥१०७ हुत्वानुमन्त्रणं कुर्यात् स्वधायामिति मन्त्रतः। अथोक्षणे स्वमात्मानं यो जपेद् ब्रह्मणेति च ॥१०८ सर्वेषामेव यागानामात्मयागः परः स्मृतः। अथ श्राद्धममावास्याप्राप्तं कार्य्यं द्विजोत्तमैः ॥१०६

पिण्डान्वाहार्यकं श्राद्धं क्षीणे राजनि शस्यते। अपराह्ने द्विजातीनां प्रशस्तेनामिषेण तु ।।११० प्रतिपत्प्रभृतिर्द्धन्यास्तिथयः कृष्णपक्षके । चतुर्दशीं वर्जयित्वा पञ्चमीं ह्युत्तरोत्तराम्।।१११ अमावस्याष्टकास्तिस्रः पौर्णमास्यादिषु त्रिषु । तिस्रश्चाप्यष्टकाः पुण्या मासि पञ्चदशी तथा ॥११२ त्रयोदशी मघा कृष्णावर्षासु त्वविशेषतः। नेमित्तिकं तु कर्तव्यं दिवसे चन्द्रसूर्य्ययोः बालकानां च मरणे नारकी स्यात्ततोऽन्यथा। काम्यानि चैव श्राद्धानि शस्यन्ते प्रहणादिषु ॥११४ अयने विषुवे चेव व्यतिपाते त्वनन्तकम्। संकान्त्यामक्षयं श्राद्धं तथा जन्मदिनेष्वपि ॥११४ नक्षत्रतिथिवारेषु कार्यं काम्यं विशेषतः। स्वर्गं तु लभते कृत्वा कृत्तिकासु द्विजोत्तमाः ! ।।११६ द्रव्यब्राह्मणसम्पत्तौ न कालं नियमं ततः। कर्मारम्भेषु सर्वेषु कुर्यादभ्युदयं ततः।।११७ पुत्रजन्मादिषु श्राद्धं पार्वणं पावणं समृतम्। अहन्यहिन नित्यं स्यात् काम्ये नैमित्तिकं पुनः ॥११८ सन्निकृष्ट्रमतिक्रम्य श्रोत्रियं यः प्रयच्छति । स तेन कम्मणा पापी दहत्यासप्तमं कुलम् ॥११६ यदिस्याद्धिको विप्रः शीलविद्यादिभिः स्वयम्। तस्मै यत्नेन दातव्यमतिक्रम्यापि सन्निधिम्।।१२० 33

अपूपञ्च हिरण्यं च गामश्वं पृथिवीं तिलान्। अविद्वान् प्रतिगृह्वानो भस्मी भवति काष्ठवत् ॥१२१ मासमारोहणं कुर्यात् भर्तृचित्यां पतिव्रता। तन्मृताह्नि संप्राप्ते पृथक् पिण्डे नियोजयेत् ॥१२२ धर्म्मपिण्डोद्कं श्राद्धं पार्वणं नप्नसंज्ञकम्। अस्थिसञ्चयनं कर्म्म दृशाहभवनं तथा।।१२३ और्ध्वं दशाहमुत्कर्षे शेषस्य यदि वा भवेत्। पिण्डोद्कं नवश्राद्धं पुनः कार्यं यथाविधि ।।१२४ यदास्थिस अवयं कर्म दृशाहमूर्ध्वभाक् भवेत्। नष्टे वापहृतेऽस्थीनि दाह्येद्यदि वा पुनः ॥१२५ कुर्याद्हरहः श्राद्धं प्रभीतिपतृको द्विजः। साम्निकोऽमिको वापि तीर्थे वेषविशेषतः ॥१२६ उत्तानं वा विवर्त्तं वा पितृपात्रं यदा भवेत्। अभोज्यं तद्भवेदमं कुद्धैः पितृगणैश्च तैः ॥१२७ अन्नहीनं क्रियाहीनं मन्त्रहीनं तु यद्भवेत्। सर्वमच्छिद्रमित्युक्त्या ततो यत्नेन भोजयेत् ॥१२८ एकोदिष्टन्तु विशेयं वृद्धिश्राद्धं तु पार्वणम्। एतत्पञ्चविधं श्राद्धं भृगुपुत्रोण सूचितम् ॥१२६ यात्रायां षष्ठमाख्यातं तत्प्रयत्नेन पावनम्। शुद्धयेत् सप्तमं श्राद्धं ब्रह्मणा परीकर्तितम् ॥१३० दैविकं चाष्टमं श्राद्धं यत् कृत्वा मुच्यते भयात्। सन्ध्याराज्यो र्न कर्तव्यमहोरात्रमदर्शनात् ॥१३१

देशानान्तु विशेषेण भवेत् पुण्यमनन्तकम्। गयायामक्षयं श्राद्धं प्रयागे मरणादिषु ॥१३२ गायन्ति गाथां ते सर्वे कीर्त्तयन्ति मनीषिणः।।१३३ एष्टव्या बहवः पुत्राः शीलवन्तो गुणान्विताः। तेषां तु समवेतानां यद्येकोऽपि गयां व्रजेत् ॥१३४ गयां प्राप्यानुषङ्गेण यदि श्राद्धं समाचरेत्। तारिताः पितरस्तेन स याति परमाङ्गतिम् ॥१३४ वाराहपर्वते चैव गयां चैव विशेषतः। एवमादिष्वतीतेषु तुष्यन्ति पितरस्तद्।।।१३६ त्रीहिभिश्च यवैर्मापैरद्भिर्मूलफलेन वा। श्यामार्केश्च तु वै शाकैनीवारेश्च प्रियङ्गभिः ॥१३७ गोधूमैश्च तिलैर्मुद्गैर्मापैः प्रीणयते पितृन्। मृष्टान् फलरसानिक्ष्न् मृदुकान् सस्यदाड़िमा<mark>न्</mark> विदार्थ्याश्च करण्डाश्च श्राद्धकाले प्रदापयेत्। लाजां मधुयुतां द्याद् द्ध्ना शक्रया सह ॥१३८ द्द्यात् श्राद्धे प्रयत्नेन शृङ्गां गजशुकैवृ कान्। द्वी मासौ मत्स्यमांसेन त्रिमासान् हरिणेन च ॥१३६ औरभ्रेणाथ चतुरः शाके नेह च पश्च तु। षण्मासांश्ङ्वागमांसेन रौरवेण च वै नतु ॥१४० द्शमासांस्तु तृप्यन्ति वराहमहिषाविकैः। शशर्णवृकयोमांसैसासानेकाद्शैवतु ॥१४१

सम्बत्सरन्तु गव्येन पयसा पायसेन च।
सदैव सस्यमांसेन तृप्तिर्द्वांद्शवार्षिकी ॥१४२
कालशाकं महाशाकं खगलोहामिषं मधु।
अनन्तान्येव च कल्पन्ते मूलान्यन्यानि सर्वशः॥१४३
कृत्वा लब्ध्वा स्वयं वाथ मृतानाहृत्य वै द्विजः।
द्याच्छ्राद्धे प्रयत्नेत द्त्तस्याक्षयमुच्यते॥१४४
पिष्पलीक्रमुकं चैव तथा चैव सस्रकम्।
कश्मलालाबुवार्ताकान् मन्त्रणं सारसं तथा॥१४५
कृत्भ्व भद्रमूल्भ्व तण्डुलीयकमेव च।
राजमाषांस्तथा क्षीरं माहिषभ्व विवर्जयेत्॥१४६
कोद्रवान् कोविदारांश्च स्थलपाक्ष्यामरीस्तथा।
वर्जयेत्सर्वयत्नेन श्राद्धकाले द्विजोत्तमः॥१४७

इत्यौशनसस्मृतौ तृतीयोऽध्यायः।

श्व चतुर्थोऽध्यायः ॥श्राद्धप्रकरणवर्णनम्।

स्नात्वा यथोक्तं सन्तर्ण्य पितृदेवान् सृषींस्तथा। पिण्डान्वाहार्यकं श्राद्धं कुर्यात् सौम्यमनाः शुचिः।।१ पूर्वमेव निरीक्षेत ब्राह्मणान्वेदपारगान्। तीथं तद्धव्यकव्यानां प्रदाने चातिथिः स्मृतः।।२ ये सोमपाननिरता धर्मज्ञा सत्यवादिनः। त्रतिनो नियमस्थाश्च ऋतुकालाभिगामिनः ॥३ पश्चाग्निरप्यधीयानो यजुर्वेदविदोऽपि च। बह्वस्तु सुवर्णाश्च त्रिमधुर्वाथ वा भवेत्।।४ त्रीनाविकेन च्छन्दो वे ज्येष्ठसामगणोऽपि वा। अथर्वशिरसोऽध्येता रुद्राध्याच्या विशेषतः ॥५ अग्निहोत्रपरो विद्वान् पापविच षडङ्गवित्। गुरुदेवाग्निपूजासु प्रसक्तो ज्ञानतत्परः ॥६ अहिंसोपरता नित्यमप्रतिप्राहिणस्तथा। सत्रिणो दाननिरता ब्राह्मणाः पङ्क्तिपावनाः ॥७ असमानप्रवरगा असगोत्रास्तथेव च। असम्बन्धश्च विज्ञेयो ब्राह्मणः पङ्क्तिपावनः ॥८ भोजयेद्योगिनं पूर्वं तत्त्वज्ञानरतं परम्। अलाभे नैष्ठिकं दान्तमुपकुर्वाणकं तु वा ।।६ तद्राभे गृहस्थस्तु मुमुक्षुः सङ्गवर्जितः। सर्वालाभे साधकं वा गृहस्थं मा विभोजयेत् ॥१० प्रकृतेगुणतत्त्वज्ञं योऽश्नातीह यति भवे। पलं वेदविदां तस्य सहस्रादितिरिच्यते ॥११ तस्माद्यत्नेन योगीन्द्रमीश्वरज्ञानतत्परम्। भोजयेद्धव्यकव्येषु अलाभादिह च द्विजान् ॥१२ एष वै प्रथमः कल्पः प्रदाने हव्यकव्ययोः। अनुकल्पः स्वयं ज्ञेय स्तदा सद्भिरनुच्छ्तः ॥१३

मातामहं मातुलञ्च स्वस्रेयं श्रशुरं गुरुम्। दौहित्रं विबुधं सर्वमित्रकल्पांश्च भोजयेत्।।१४ न श्राद्धे भोजयेन्मित्रं धनैः कार्योऽस्य संप्रहः। पैशाचदक्षिणाहीनैर्वामुत्र फलसम्पदः ॥१४ कामं श्राद्धे ऽचयेन्मित्रं नाभिरूपमतित्वरम्। द्विषतां हि हविर्भुक्तं भवति प्रेत्य निष्फलम् ॥१६ तथानुचेद्वविर्दस्वा न दाता लभते फलम्। यावतो प्रसते पिण्डान् हव्यकव्येषु मन्त्रवित्।।१७ ततोऽहि प्रसते प्रेत्य दीप्तान् स्थूलानधोमुखान्। अथ विद्यानुकूले हि युक्ताश्च स वृतोऽथवा ॥१८ यत्रैते भुञ्जते हव्यं तद्भवेदासुरं द्विजाः !। यश्च वेदश्च वेदी च विच्छेद्येत त्रिपृरुषम् ॥१६ स वै दुर्बाह्मणो ज्ञेयः श्राद्धादी न कदाचन। शूद्रप्रेष्योद्धतो राज्ञो वृषलो प्रामयाजकः ॥२० बधबन्धोपजीबी च षडेते ब्रह्मबन्धवः। द्स्वा तु वेद्नात्यर्थं पतितान्मनुरत्रवीत् ॥२१ वेद्विक्रयिणश्चेते श्राद्वादिषु विगर्हिताः। श्रुतिविक्रयिणो यत्र परपूर्वाः समुद्रगाः ॥२२ असमानान् याजयन्ति पतितास्ते प्रकीर्तिताः। असंस्तुताध्यापका ये भृतकान् पाठयन्ति ये ॥२३ अधीयीत तथा वेदान् भृतकास्ते प्रकीर्तिताः। वृद्धश्रावकनिर्गूढाः पञ्चरात्रविदो जनाः ॥२४

कापालिकाः पाशुपताः पाषण्डाश्चेव तद्विधाः। यस्याश्ननित हवीं घ्येते दुरात्मानस्तु तामसाः ॥२५ न तस्या सद्भवेत् श्राद्धं प्रेत्यापि हि फलप्रदाः। अनाश्रमी यो द्विजः स्यादाश्रमी स्यान्निरर्थकः ॥२६ मिथ्याश्रमी च विप्रेन्द्रा विज्ञेयाः पङ्क्तिदूषकाः। दुश्रमीं कुनखी कुष्ठी शिवत्री च श्यावदन्तकः ॥२७ क्र्रो वीजनकश्चैव स्तेनः क्षीबोऽथ नास्तिकः। मद्यपी वृषली सक्तो वीरहा दीधिषूपतिः ॥२८ आगारदाही कुण्डाशी सोमविक्रयिणो द्विजाः। परिवेत्ता तथा हिंस्रः परिवेत्तिर्निराकृतिः ॥२६ पौनर्भवः कुसीदी च तथा नक्षत्रदर्शकः। गीतवादित्रशीलश्च व्याधितः काण एव च ॥३० हीनाङ्गश्चातिरिक्ताङ्गो द्यवकीर्णी तथैव च । कन्याद्रोही कुण्डगोली अभिशक्तोऽथ देवलः ॥३१ मित्रध्रुक् पिशुनश्चैव नित्यं नार्या निक्रन्तनः। मातापितृगुरुत्यागी दारत्यागी तथैन च ॥३२ अनपत्यः कूटसाक्षी पाचकोरगजीवकः। समुद्रयायी कृतहा रथ्यासमयभेदकः ॥३३ वेदनिन्दारतश्चैव देवनिन्दारतस्तथा । द्विजनिन्दारतश्चैव ते वर्ज्याः श्राद्धकर्मेषु ॥३४ कृतघ्नः पिशुनः क्रूरो नास्तिको वेदनिन्द्कः। मित्रघ्नः पारदार्यश्च मिथ्यापण्डितदृषकः ॥३५

बहुनात्र किमुक्तेन विहितान्येव कुर्वते । निन्दितान्याचरन्ते ते वर्ज्याः श्राद्धे प्रयत्नतः ॥३६ इत्यौशनसस्मृतौ चतुर्थोऽध्यायः।

॥ अथ पश्चमोऽध्यायः ॥

श्राद्धप्रकरणवर्णनम्।

गोमयेनोदकैः पूर्व शोधियत्वा समाहितः।
सित्रपात्य द्विजान् सर्वान् साधुभिः सित्रमन्त्रयेत्।।१
श्वो भविष्यति मे श्राद्धं पूर्वेद्युरभिवक्ष्यति।।२
असम्भवे परेद्युर्वा यथोक्तैर्र्छक्षणेयुतम्।
तस्य ते पितरः श्रुत्वा श्राद्धकाल उपस्थिते।।३
अन्योन्यमनसा ध्यात्वा सम्पतित मनोजवाः।
ब्राह्मणास्ते समायान्ति पितरो द्यन्तरिक्षगाः।।४
वायुभूताश्च तिष्ठन्ति भुक्तवा यान्ति पराङ्गतिम्।
आमन्त्रिताश्च ये विष्ठाः श्राद्धकाल उपस्थिते।।४
वसेरित्रयताः सर्वे ब्रह्मचर्यपरायणाः।
अक्रोधनोऽत्वरो यत्र सत्यवादी समाहितः।।६
भरमैथुनमध्वानं श्राद्धभुग्वर्जयेज्ञपम्।
आमन्त्रितो ब्राह्मणो वै योऽन्यस्मे कुरुते क्षणम्।।७

आमन्त्रयित्वा यो मोहाद्दन्यं वा मन्त्रयेत् द्विजः। स तस्माद्धिकः पापी विष्ठाकीटो हि जायते ॥८ श्राद्धे निमन्त्रितो विप्रो मैथुनं योऽधिगच्छति। ब्रह्महत्यामवाप्नोति तियग्योनिषु जायते ॥६ निमन्त्रितश्च यो विप्रो ह्यध्वानं याति दुर्मतिः। भवन्ति पितरस्तस्य तन्मासं पांशुभोजनम्।।१० निमन्त्रितश्च यः श्राद्धे प्रकुर्यात्कलहं द्विजः। भवन्ति तस्य तन्मासं पितरो मलभोजनाः ॥११ तस्मान्निमन्त्रितः श्राद्धे नियतात्मा भवेद् द्विजः। अक्रोधनः शौचपरः कर्त्ता चैव जितेन्द्रियः॥१२ शोभते दक्षिणां गत्वा दिशं दर्भात् समाहितः। समूलान्नाहरेद्वारि दक्षिणात्रान् सुनिर्मलान् ॥१३ दक्षिणाप्रवणं स्निग्धं विभक्तशुभलक्षणम्। शुचि देशं विविक्तञ्च गोमयेनोपलेपयेत्।।१४ नदीतीरेषु तीर्थेषु स्वभूमौ गिरिसानुषु। विविक्तेषु च तुष्यन्ति दत्तेन पितरस्तथा।।१४ परस्य भूमिभागे तु पितृणां वै न निर्वपेत्। स्वामित्वात् स विहन्येतं मोहाद्यत्क्रियते नरैः ॥१६ अटव्यः पर्वताः पुण्या स्तीर्थान्यायतनानि च । सर्वाण्यस्वामिकान्याहु नेहि तेषु परिग्रहः ॥१७ तिलांश्चाविकरेत्तत्र सर्वतो बन्धयेद् द्विजः। असुरोपहतं सवं तिलै: शुष्यत्यजेन वा ॥१८

ततोऽस्रं बहुसंस्कारं नैकव्यञ्जनमव्ययम्। चोष्यं पेयं समृद्धं च यथा शक्त्युपकल्पयेत् ॥१६ ततो निवृत्ते मध्याह्रे लुप्तलोमनखान् द्विजान्। अभिगम्य यथामार्गं प्रयच्छेद्दन्तधावनम् ॥२० तैलमभ्यञ्जनं स्नानं स्नानीयं च पृथग्विधम् । पात्रेरोदुम्बरेर्द्चाद्वेश्वदेवं तु पूर्वकम् ॥२१ तत्र स्नात्वा निवृत्तेभ्यः प्रत्युत्थानकृतः ज्जलिः। पाद्यमाचमनीयं च संप्रच्छेद्यथाक्रमम्।।२२ ये चात्र विवदेरन् वै विप्राः पूर्वं निमन्त्रिताः। प्राङ् मुखान्यासनान्येषां सद्भीपहितानि च ॥२३ द्क्षिणायैकद्भाणि प्रोक्षितानि तिलोद्कैः। तेषूपवेशयेदेतान् ब्राह्मणान् देवकल्पकान् ॥२४ अस्यन्ध्यमिति संकल्प त्वासिरंस्थे पृथक् पृथक्। द्वी दैवे प्राङ् मुखौ पित्र्ये त्रयश्चोदङ् मुखास्तथा ॥२५ एकेकं वा भवेत्तत्र एवं मातामहेष्वपि। सिक्तयां देशकाली च शौचं ब्राह्मणसम्पदम्। पञ्चैतान्विस्तरोहन्ति तस्मैनैहेत विस्तरम्।।२६ अथवा भोजयेदेकं ब्राह्मणं वेदपारगम्। श्रुतिशीलादिसम्पन्नमलक्षणविवर्जितम् ॥२७ प्रशस्तपात्रे चान्नन्तु सर्वस्मात् प्रयतात्मनः। देवतायतने चास्मै त्रिलोकात् सम्प्रवर्त्तते ॥२८

प्राश्येदमौ तद्नन्तु द्दाच ब्रह्मचारिणे। भिक्षको ब्रह्मचारीव भोजनार्थमुपस्थितः ॥२६ उपविष्टेषु यच्छाद्धे कामन्तमपि भोजयेत्। अतिथि र्यत्र नाश्नाति न तच्छाद्धं प्रकाश्यते ॥३० तस्मात् प्रयत्नात्तीर्थेषु पूज्या अतिथयो द्विजैः। अतीर्य रमते श्राद्धे भुञ्जते ये द्विजातयः ॥३१ काकयोनिं व्रजन्त्येते दुन्वा चैव न संशयः। हीनाङ्गः पतितः कुष्ठी वणिक्पुक्रसनासिकः ॥३२ कुक्कुटः शूकरश्वानो वर्ज्याः श्राद्धेषु दूरतः। वीभत्समशुचिं म्लेच्छं न खुरोच रजस्वलाम् ॥३३ नीलकाषायवसनं पाषण्डांश्च विवर्जयेत्। यत् तत्र क्रियते कर्म पैतृकं ब्राह्मणान् प्रति ॥३४ तत्सर्वमेव कर्त्तव्यं वैश्वदेवस्य पूजनम्। यथोपविष्टान् सर्वास्तानलङ्कर्याद्विभूषणैः ॥३५ या दिव्या इति मन्त्रेण हस्तेत्वर्घ्यं विनिश्चिपेत्। प्रदद्याद् गन्धमाल्यानि धूपादीनि च शक्तितः ॥३६ अपसव्यं ततः कृत्वा पितृणां दक्षिणामुखः। आवाहनं ततः कुर्यादुशन्तस्वेत्यृचा बुधः ॥३७ आवाह्य तदनुज्ञातो जपेदायान्तु न स्ततः। शन्नो देव्युदकं पात्रे तिलोऽसीति तिलांस्तथा ॥३८ क्षिप्त्वा चार्घ्य तथा पूर्वं दत्त्वा हस्तेषु वै पुनः। संस्रावांश्च ततः सर्वान् पात्रीकुर्यात् समाहितः ॥३६

पितृभिः सममेतेन ह्यार्च्यपात्रं निधाय च। अग्नौ करिष्येत्वादाय पृच्छेदन्नं घृतप्छुतम्।।४० कुरुष्वेति ह्यनुज्ञातो जुहुयादुपवीतवत्। यज्ञोपवीतिना होमः कर्त्तव्यं कुशपाणिना ॥४१ प्राचीनावीतकः पित्र्यं वैश्वदेवं तु होमयेत्। दक्षिणं पातयेजानुं देवान् परिचरंस्तदा ॥४२ सोमाय वै पितृमते स्वधा नम इति ब्रुवन्। अग्नये कव्यवाह्नाय स्वधेति जुहुयात्ततः ॥४३ अग्न्यभावे तु विप्रस्य पाणावेवोपपाद्येत्। महादेवान्तिके वाथ गोष्ठे वा सुसमाहितः ॥४४ ततस्तैरभ्यनुज्ञातो कृत्वा देवप्रदक्षिणम्। गोमयेनोपलिप्योर्व्यां कुर्यात् स्वस्यच देवतम् ॥४५ मण्डलं चतुरस्रं वा दक्षिणं चोन्नतं शुभम्। त्रिरुक्षिखेत्तस्य मध्यं दुर्भेणैकेन चैव हि ॥४६ ततः संस्तीर्य तत् स्थाने दर्भान् वै दक्षिणायकान्। त्रीन् पिण्डान्निवेपेत्तत्र हविःशेषान् समाहितः ॥४७ द्राप्यपिण्डां स्ततस्तत्र निमृज्याल्लेपभागिनाम् । तेष्वदर्भेष्वथाचम्य त्रिराचम्य शनैरसून् ॥४८ उदकं निनयेच्छेषं शनैः पिण्डान्तिके पुनः। अवक्षिप्यावहन्यात्तान् पिण्डान् यथा समाहितः ॥४६ अथ पिण्डावशिष्टान्नं विधिना भोजयेद् द्विजम्। षडप्यत्र नमस्कुर्यात् पितृन् देवांश्च धर्मवित् ॥५०

श्राद्धभोजनकाले तु दीपो यदि विनश्यति। पुनरत्रं न भोक्तव्यं भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत्।।५१ माषानपूपान्विविधान्दद्यात् सरसपायसम्। सूपशाकफलानिष्टान् पयो दिध घृतं मधु ॥५२ अन्नब्चैव यथाकामं विधिसम्भक्ष्यपेयकम्। यद्यदिष्टं द्विजेन्द्राणां तत्तत् सर्वं निवेद्येत् ॥५३ धान्यांस्तिलाश्च विविधाः शर्करा विविधा स्तथा। उष्णमत्रं द्विजातिभ्यो दातव्यं श्रेय इच्छता ॥५४ अन्यत्र फलमूलेभ्यः पानकेभ्य स्तथैव च । नाश्रूणि पातयेजातु न कुप्यान्नानृतं वदेत्।।५५ न पादेन स्पृशेदन्नं न चैनमवधूनयेत्। क्रोधेनैव च यहत्तं यद् दत्तं त्वरया पुनः ॥५६ यातुधाना विछम्पन्ति यश्च पापोपपादितम्। स्वित्रगात्रो न तिष्ठेत सन्निधौ तु द्विजन्मनाम् ॥५७ न च पश्येत काकादीन् पक्षिणस्तु न वारयेत्। तद्रूपाः पितर स्तत्र समायान्ति बुभुत्सवः ॥६८ न दद्यात्तत्र हस्तेन प्रत्यक्षलवणं तथा। नचायसेन पात्रोण न चैवाश्रद्धया पुनः ॥५६ काञ्चनेन तु पात्रेण तथा त्वौदुम्बरेण च। उत्तमाधिपतां याति खड्गेन तु विशेषतः ॥६० पात्रो तु मृण्मये यो वै श्राद्धे भोजयते पिपृत्। स याति नरकं घोरं ओक्ता चैव पुरोधसः ॥६१

न पङ्क्त्या विषमं दद्यात् न याचेत न वाद्येत्। याचिताद्पि चात्मानं नरकं याति भीषणम्।।६२ भुञ्जीत वाग्यतो रष्टष्टं न ब्रूयात् प्रकृतान् गुणान्। तावद्धि पितरोऽश्ननित यावन्नोक्ता हविर्गुणाः ॥६३ नामासनोपविष्टस्तु भुञ्जीत प्रथमं द्विजः। बहूनां पश्यतां सोऽज्ञः पङ्त्तया हरति किल्विषम् ॥६४ न कि चिद्वर्जयेत् श्राद्धे नियुक्तस्तु द्विजोत्तमः। न मार्ष प्रतिषेधेत न चान्यस्यात्रमीक्षयेत्।।६५ यो नाश्नाति द्विजो माषं नियुक्तः पितृकर्म्मणि। स प्रेस पशुतां याति सन्ततामेकविंशतिम् ॥६६ स्वाध्यायं श्रावयेदेषां धर्मशास्त्राणि चैव हि । इतिहासपुराणानि श्राद्धकल्पान् सुशोभनान् ॥६७ ततोऽन्यमुत्सृजेद् भुक्तेष्वप्रतो विकिरेद् भुवि। ष्ट्रा स्वदितमित्येव तृप्तानाचामयेत्ततः ॥६८ आचान्ताननुजानीयाद्भितो रम्यतामिति। स्वस्थाः स्मेति च तं त्रूयुर्त्राह्मणा स्तद्नन्तरम् ॥६६ ततो अक्तवतां तेषामन्नशेषन्तु वेद्येत्। यथा त्रूयात्तथा कुर्याद्नुज्ञातस्तु तैर्द्विजैः ॥७० पित्रोः स्वदितमित्येवं वाच्यं गोष्ठेषु सूनृतम्। सम्पन्नमित्याभ्युद्ये दैवेनोच्यत इत्यपि ॥७१ विसृज्य ब्राह्मणांस्तान् वै देवपूर्वन्तु वाग्यतः। दक्षिणां दिशमाकाह्नुन् याचतेऽदो वरान् पितृन् ।।७२

दातारो नोऽभिवधंन्तां वेदाः सन्ततिरेव च । श्रद्धा च नो मा व्यगमद् बहु देयश्व नोऽस्त्वित ॥७३ पिण्डांस्तु भोज्यं विप्रेभ्यो द्द्याद्ग्नौ जलेऽपि वा। प्रक्षिपेत्सत्सु विप्रेषु द्विजोच्छिष्टं न मार्जयेत् ॥७४ मध्यमं तं ततः पिण्डं दद्यात्पत्न्ये सुतार्थकः। प्रक्षाल्य हस्तावाचम्य ज्ञातिशेषेण भोजयेत् ॥७५ ज्ञतिष्वपि च तुष्टेषु स्वान् भृत्यान् भोजयेत्ततः। पश्चात् स्वयं च पत्नीभिः शेषमत्रं समाचरेत्।।७६ नोद्वीक्षेत तदुच्छिष्टं यावन्नास्तं गतोरविः। ब्रह्मचर्यं चरेतान्तु दम्पती रजनीं तु ताम् ॥७७ द्त्वा श्राद्धं ततो भुक्ता सेवते यस्तु मैथुनम्। महारौरवमासाद्य कीटयोनि ब्रजेत् पुनः ॥७८ शुचिरक्रोधनः शान्तः सत्यवादी समाहितः। स्वाध्यायञ्च तथा ध्यानं कत्ता भोक्ता विसर्जयेत्।।७६ श्राद्धं दत्त्वा परं श्राद्धं भुञ्जते ये द्विजातयः । महापातकिना तुल्या यान्ति ते नरकान् वहून्।।८० एष वोऽभिहितः सम्यक् श्राद्धकल्पः सनातनः। आमं निवर्त्तयन्नित्यमुदासीनो न तत्त्वतः ॥८१ अनग्निरध्वगो वापि तथैव व्यसनान्वितः। आमश्राद्धं द्विजः कुर्याद् वृषलस्तु सदैव हि ॥८२ आमश्राद्धं द्विजः कुर्य्याद्विधिज्ञः श्रद्धयान्वितः । तेनाग्नी करणं कुर्यात् पिण्डांस्तैरेव निर्वपेन् ॥८३

यो हि तद् विधिना कुर्याच्छाद्धं संयतमानसः। व्यपेतकलम्पो नित्यं यात्यसौ वैष्णवं पद्म् ॥८४ तस्मात् सर्वप्रयत्नेन श्राद्धं कुर्याद् द्विजोत्तमः। आराधितो भवेदीशस्तेन सम्यक् सनातनः ॥८४ अपिमूलफलेर्वापि प्रकुर्यात्रिधेनो द्विजः। तिलोदकै स्तर्पयित्वा पितृन् स्नात्वा द्विजोत्तमः ॥८६ न जीवत्पितृको द्दाद्धोमान्तं वा विधीयते। तेषां चापि समाद्द्यात्तेषां चैके प्रचक्षते ॥८७ पिता पितामहश्चेव तथैव प्रपितामहः। यो यस्य म्रियते तस्मै देयं मान्यस्य ते न तु ॥८८ भोजयेद्वापि जीवन्तं यथाकामं तु भक्तितः। न जीवन्तमतिक्रम्य ददाति श्रयते श्रुतिः ॥८६ द्वामुष्यायणको दचाद्वीजहेतुस्तथाहि सः। रिक्तया भार्य्या दद्यान्नियोगोत्पादितो यदि ॥६० अनियुक्तः सुतो यस्तु शुक्रतो जायते त्विह । प्रदद्याद्वीजिने पिण्डं क्षेत्रिणे तु तदन्यथा ॥६१ द्वौ पिण्डौ निर्वपेत्ताभ्यां क्षेत्रिणे वीजिने यथा। कीर्त्तयेदथ वैकस्मिन् बीजिनं क्षेत्रिणे ततः ॥६२ मृतेऽहनि तु कर्तव्यमेकोदिष्टविधानतः : आशोचत्वनिरीक्षाणः काम्यं कामयते पुनः ॥६३ पूर्वाह्वे चैव कर्त्तव्यं श्राद्धमभ्युद्यार्थिना । दैवं तत्स वेमेवं स्यान्न वै कार्या बहिः क्रिया ॥६४

दर्भाश्च परितः स्थाप्या स्तदा स भोजयेद् द्विजान्। नान्दीमुखाश्च पितरः प्रीयन्तामिति वाचयेत्। मातृश्राद्धं तु पूर्वं स्यात् पितृणां तदनन्तरम्।। ततो मातामहानाञ्च वृद्धौ श्राद्धत्रयं स्पृतम्। देवपूर्वं प्रद्दााद् वे न कुर्याद्प्रदक्षिणम्।।६६ प्राङ्मुखो निर्वपेत् पिण्डानुपवीती समाहितः। स्थण्डिलेषु विचित्रोषु प्रतिमासु द्विजातिषु ॥६७ पुष्पैध्रेपैश्च नैवेद्यैर्भूषणैरिप पूज्यःच । पूजयित्वा मातृगणं कुर्याच्छ्राद्धत्रयं बुधः ॥६८ अकृत्वा मातृयागञ्च यःश्राद्धं परिवेषयेत्। तस्य क्रोधसमाविष्टा हिंसामिच्छन्ति मातरः ॥६६

इत्यौशनसस्पृतौ पश्वमोऽध्यायः।

॥ अथ षष्ठोऽध्यायः॥ अथाशौचप्रकरणवर्णनम्।

दशाई प्राहुराशौचं सपिण्डेषु विपश्चितः। मृतेऽथवाथ जातेषु ब्राह्मणानां द्विजोत्तमाः ! ॥१ नित्यानि चैव कर्माणि काम्यानि च विशेषतः। न कुर्यादिहतं किञ्चित् स्वाघ्यायं मनसापि च।।२ 200

ग्रुचिरक्रोधनस्वन्यान् कालेऽन्नौ भोजयेद् द्विजान्। शुष्कान्नेन फलैर्वापि पितरं जुहुयात्तथा ॥३ न स्षृशेयुरिमानन्ये न भूतेभ्यः समाचरेत्। सृतके तु सपिण्डानां संस्पर्शो नैव दुष्यति । सूतके सूतकाञ्चेव वर्जियत्वा तृणं पुनः ॥४ अधीयानस्तथा यज्वा वेदविचाऽपि यो भवेत्। चतुर्थे पश्चमे वाह्नि संस्पर्शे कथितो वुधैः ॥५ सृश्यास्तु सर्वमेवैते स्नानात्तु दशमाहनि ॥६ द्शाहं निर्गुणं प्रोक्तमाशौचं दासनिर्गुणे। एवं द्वित्रिगुणैर्युक्तं चतुश्चैकदिने शुचि ॥७ दशाहातु परं सम्यगधीयीत जुहोति च। चतुर्थे त्वस्य संस्पर्शो मनुराह प्रजापतिः।।८ क्रियाहीनस्य मूर्वस्य महारोगिण एव च। ये एषां मरणस्याहुर्मरणान्तमशौचकम्।।६ त्रिरात्रं दशरात्रं वा ब्राह्मणानामशौचकम्। प्राक्संस्कारात्त्रिरात्रं स्यादृशरात्रमतःपरम् ॥ जन्मद्विवर्षगे प्रेते मातापित्रोस्तद्घ्यते । त्रिरात्रेण शुचिस्त्वन्यो यदिहात्यन्तनिर्गुणः ॥११ अद्नतजातमरणे मातापित्रोस्तद्ब्यते। जातदन्ते त्रिरात्रं स्यादन्तः स्यात् यत्र निर्णयः ॥१२ <mark>आदन्तजन्मनः सद्य आचीलादे</mark>करात्रकम् । त्रिरात्रमुपनयनाद्दशरात्रमुदाहृतम् ॥१३

जातमात्रस्य वा तस्य यदि स्यान्मरणं पितुः। मातुश्च सूतकाति स्यात् पिताऽस्य स्पृश्य एव हि ॥१४ सद्यः शौचं सपिण्डानां कर्त्तव्यं सोद्रस्य तु। ऊर्ध्वं दशाहादेकाहं सोदरो यदि निर्गुणः ॥१४ अथोद्ध्वं दन्तजन्म स्यात् सपिण्डानामशौचकम्। एकरात्रं निर्गुणानाञ्चौलादूद्ध्वं त्रिरात्रिकम् १६ आद्नतजातमरणं सम्भवेद्यदि सत्तमाः !। एकरात्रं सपिण्डानां यदि चात्यन्तनिगुणः॥१७ त्रतादेंशात् सपिण्डानां गर्भस्रावाच पाततः। गर्भच्युतावहोरात्रं सपिण्डेऽत्यन्तनिर्गुणे ॥१८ यथेष्टाचरणाद्ज्ञातौ त्रिरात्रादिति निर्णयः। सूतके यदि सूतिश्च मरणे वा गतिभवेत्।।१६ रोषेणैव भवेच्छुद्धिरहः शेषे द्विरात्रकम्। मरणोत्पत्तियोगे तु मरणेन समाप्यते ॥२० अद्धं वृतिमनाशौच मूर्ध्वमन्येन शुद्धचिति । देशान्तरगतः श्रुत्वा सूतकं शाव एव वा ॥२१ तावद्प्रयतोऽन्ये वा यावच्छेषः समाप्यते । अतीते सूतके प्रोक्तं सपिण्डानां त्रिरात्रकम्।।२२ तथैव मरणे स्नानमूर्ध्वं संवत्सराद् व्रती। वेदांश्च यस्त्वधीयानो न भवेत् वृत्तिकर्शितः ॥२३ सद्यः शौचं भवेत्तस्य सर्वावस्थासु सर्वदा। स्त्रीणामसंस्कृतानान्तु प्रदानात् परतः पितुः ॥२४

सिपण्डानां त्रिरात्रं स्यात् संस्कारो भर्तुरेव च । अहस्त्वदत्तकन्यानामशौचं मरणे स्मृतम् ॥२५ द्विवष जन्ममरणे सद्यः शौचमुदाहृतम्। आदन्तात् सोदरः सत्य आचौलादेकरात्रकम् ॥२६ आव्रतानां त्रिरात्रं स्याद्शमन्तु ततः परम्। मातामहानां मरणे त्रिराजं स्याद्शौचकम् ॥२७ एकोदराणां विज्ञेयं सृतके चैतदेव हि। पक्षिणी योनिसम्बन्धे बान्धवेषु तथैव च ॥२८ एकरात्रं समुद्दिष्टं गुरौ सब्रह्मचारिण । प्रेते राजनि सद्यस्तु यस्य स्याद्विषये स्थितः ॥२६ गृहे मृतासु दत्तासु कन्यकासु त्र्यहं पितुः। परपूर्वासु भार्यासु पुत्रोषु कुलजेषु च ॥३० त्रिरात्रं स्यात्तथाचार्ये भार्यासु प्रत्यगासु च। आत्रार्यपुत्रपत्न्योश्च अहोरात्रमुदाहृतम् ॥३१ एकरात्रमुपाध्याये तथैव श्रोत्रियेषु च। एकरात्रं सपिण्डेषु स्वगृहे संस्थितेषु च ॥३२ त्रिराजं श्रश्रमरणे श्रशुरे तथैव च। सदाः शौचं समुद्दिष्टं सगोठो संस्थिते सति ॥३३ शुध्येत् द्विजो दशाहेन द्वादशाहेन भूपतिः। वैश्यः पञ्चदशाहेन शूद्रो मासेन शुध्यति ॥३४ क्षत्रविट् शूद्रदायादा ये स्युर्विप्रस्य सेवकाः। तेषाभशेषं विप्रस्य दशाहात् द्युद्धिरिष्यते ॥३५

राजन्यवैश्यावप्येवं हीनवर्णासु योनिषु। षड्रात्रं वा त्रिरात्रं वाऽप्येकरात्रक्रमेण हि ॥३६ वैश्यक्षत्रियविप्राणां शूद्रैश्चाशौचमेव तु। अद्धं मासोऽथ षड्रागं त्रिरागं द्विजपुङ्गवाः ! ॥३७ शूद्रक्षत्रियविप्राणां शूद्रेष्वशौचमिष्यते । षड्रात्रं द्वाद्शाहञ्च विप्राणां वैश्यशूद्रयोः ॥३८ अशौचं क्षत्रिये प्रोक्तं क्रमेण द्विजपुङ्गवः !। शूद्रविद्क्षत्रियाणान्तु ब्राह्मणे संस्थिते यदि ॥३६ द्शरात्रेण शुद्धिः स्यादित्याह कमलोद्भवः। असपिण्डं द्विजप्रेतं विप्रो निस्सृत्य बन्धुवत् ॥४० अशित्वा च सहोषित्वा दशरात्रेण शुध्यति । यदि निद्हिति क्षिप्रं प्रलोभात् क्रान्तमानसः ॥४१ दशाहेन द्विजः शुध्येत् द्वादशाहेन भूमिपः। अर्द्ध मासेन वैश्यस्तु शूद्रो मासेन शुध्यति ॥४२ षड्ात्रोणाथवा सप्तत्रिरात्रेणाथवा पुनः। अनाथञ्चैव निर्बन्धुं ब्राह्मणं धनवर्जितम् ॥४३ स्नात्वा सम्प्राश्य तु घृतं शुध्यन्ति ब्राह्मणाद्यः। अपरश्चेत्परं वर्णमपरश्चापरो यदि ॥४४ एकाहात् क्षत्त्रिये शुद्धिवैंश्ये तु स्यात् द्वचहे सति। शूद्रेषु च त्र्यहं प्रोक्तं प्राणायामशतं पुनः ॥४५ अनिश्यसिवते शूद्रे रौति चेद् ब्राह्मणः स्वकैः । त्रिरात्रं स्यात्तथाऽशौचमेकाहं क्षत्त्रवैश्ययोः ॥४५

अन्यथा चैव स ज्योतिर्वाह्मणे स्नानमेव च। अनस्थिसिवते विप्रे ब्राह्मणो रौति चेत्तदा ॥४७ स्नानेनैव भवेच्छुद्धिः सचैलेन न संशयः। यस्तैः सहात्रं कुर्याच यानादीनि तु चैव हि ॥४८ ब्राह्मणे वाऽपरे वाऽपि दशाहेन विशुध्यति । य स्तेषामन्नमश्नाति स तु देवोऽपि कामतः॥४६ तदाशौचनिवृत्तेषु स्नानं कृत्वा विशुध्यति। यावत्तद्रममश्नाति दुर्भिक्षाभिहतो नरः। तावन्यहान्यशुद्धिः स्यात् प्रायश्चित्तं ततश्चरेत्।।५० दाहादाशीचं कर्तव्यं द्विजानामग्निहोत्रिणाम्। सपिण्डानां तु मरणे मरणादितरेषु च ॥५१ सपिण्डता च पुरुषे सप्तमे विनिवत्तंते। समानोद्कभावस्तु जन्मनाम्नोर वेदने ॥५२ पिता पितामहश्चेव तथैव प्रपितामहः। हेपभाजस्तु यश्चात्मा सापिण्ड्यं सप्तपौरुषम् ॥५३ कर्वानाण्येव सापिण्ड्य माह देवः प्रजापितः। ये चैकजाता बहवो भिन्नयोनय एव च ॥५४ भिन्नवर्णास्तु सापिण्ड्यं भवेत्तेषां त्रिपृरुषम्। कारवः शिल्पिनो वैद्यदासीदासास्तथैव च ॥५५ राजानो राजभृत्याश्च सद्यः शौचाः प्रकीर्तिताः। दातारो नियमी चैव ब्रह्मविद् ब्रह्मचारिणी ॥५६

गृह्स्थानां प्रेतकर्मविधिवर्णनम्।

ऽध्यायः]

सित्रणो त्रितिनस्तावत् सद्यः शौचमुदाहृतम्।
राजा चैवाभिषिक्तश्च प्राणसित्रण एव च ॥१७
यज्ञे विवाहकाले च देवयागे तथैव च ।
सद्यः शौचं समाख्यातं दुर्भिक्षे वाप्युपद्रवे ॥१८
विषाद्युपहृतानाश्च विद्युता पार्थिवैद्विजैः ।
सद्यः शौचं समाख्यातं सर्पादिमरणेऽपि च ॥१६
अग्निमेरुप्रपतने विषौघान्यपराशने ।
गोत्राह्मणान्ते सन्न्यस्ते सद्यः शौचं विधीयते ॥६०
नैष्ठिकानां वनस्थानां यतीनां ब्रह्मचारिणाम् ।
नाशौचं विद्यते सद्भिः पतिते च तथा मृते ॥६१

इत्यौशनसस्मृतौ षष्ठोऽध्यायः।

।। अथ सप्तमोऽध्यायः ॥ अथ गृहस्थानां प्रेतकर्मविधि वर्णनम्।

पतितानां न दाहः स्यान्नान्त्येष्टिर्नास्थिसश्वयः।
न चाश्रुपातः पिण्डे च कार्यं श्राद्धादिकं कचित्।।१
व्यापाद्येत्तथात्मानं स्वयं योऽग्निविषादिभिः।
सहितं तस्य नाशौचं नचस्यादुद्कादिकम्।।२
अथ कश्चित्प्रमादेन म्नियतेऽग्निविषादिभिः।
तस्याशौचं विधातव्यं कार्यव्चैवोद्कादिकम् ३

जाते कुमारे तद्ह आमं कुर्यात् प्रतिप्रहम्। हिरण्यधान्यगोवासस्तिलान्नगुड्सर्पिषः ॥४ फलानीक्षुश्व शाकश्च लवणं काष्ट्रमेव च। तायं दिघ घृतं तैलमौषधं श्लीरमेव च ॥ १ आशौचिनो गृहात् प्राह्यं शुष्कान्नबचैव नित्यशः। अहिताग्निर्यथान्यायं दातव्यं त्रिभिरग्निभिः ॥६ अनाहिताग्निर्गृद्येण लौकिकेनेतरैर्द्विजे:। देहाभावात् पलाशेन कृत्वा प्रतिकृतिं पुनः ॥७ दाहः कार्यो यथान्यायं सपिण्डैः श्रद्धयान्वितैः। सक्रत्प्रसिञ्चे दुद्कं नाम गोत्रेण वाग्यतः ॥८ दशाहं बान्धवैः साद्धं सर्वे चैवार्द्रवाससः। पिण्डं प्रतिदिनं द्युः सायं प्रातर्यथाविधि ॥६ प्रेताय च गृहद्वारि चतुरो भोजयेद् द्विजान्। द्वितीयेऽहनि कर्तव्यं क्षुरकर्म सवान्धवैः ॥१० सर्वेरस्थनां सञ्चयनं ज्ञातिरेव भवेत्तथा। त्रिपूर्वं भोजयेद्विप्रानयुग्मान् श्रद्धया शुचीन् ॥११ पश्चमे नवमे चैत्र तथैवैकादशेऽहनि। अयुग्मान् भोजयेद्विप्रान् नवश्राद्धं तु तद्विदुः ॥१२ एकाद्शेहि कुर्वीत प्रेतमुहिश्य भावतः। द्वाद्शे वाथ कर्तव्य मग्निदैस्वथवाऽहनि ॥१३ एकं पवित्र मेकं वा पिण्डमात्रं तथैव च। एवं मृतेऽह्नि कर्तव्यं प्रतिमासन्तु वत्सरम्।।१४

सपिण्डीक्रणं प्रोक्तं पूर्णे सम्वत्सरे पुनः। कुर्यात् चत्वारि पात्राणि प्रेतादीनां द्विजोत्तमाः ! ।।१४ प्रेतार्थं पितृपात्रोषु पात्रमासेचयेत्ततः। ये समाना इति द्वाभ्यां पिण्डानप्येवमेव हि ॥१६ सपिण्डीकरणश्राद्धं दैवपूर्वं विधीयते । पितृनावाहरोत्तत्र पुनः प्रेतञ्च निर्दिशेत् ॥१७ ये सपिण्डोक्टताः प्रेता न तेषां स्यात् पृथक् क्रिया। यस्तु कुर्यात् पृथक् पिण्डं पितृहा त्वभिजायते ॥१८ मृते पितरि वै पुत्रः पिण्डशब्दं समाविशेत्। द्याचान्नं सोद्कुम्भं प्रत्यहं प्रेतधर्मतः ॥१६ पार्वणेन विधानेन साम्वत्सरिकमिष्यते। प्रतिसम्वत्सरं कार्यं विद्धिरेष सनातनः ॥२० मातापित्रोः सुतैः कार्यं पिण्डदानादि किञ्चन। पत्नी कुर्यात् सुताभावे पत्न्यभावे तु सोद्रः ॥२१ एष वः कथितः सम्यक् गृहस्थानां यथाविधि । स्त्रीणाञ्च भर्तृशुश्रूषा धर्मी नान्य इहेज्यते ॥२२ यः स्वधर्मपरो नित्यभीश्वरार्पितमानसः। प्राप्नोति परमं स्थानं यदुक्तं वेदसम्मितम् ॥२३ इत्यौशनसृतौ सप्तमोऽध्यायः।

॥ अष्टमोऽध्यायः ॥

अथ प्रायश्चित्तप्रकरणवर्णनम्।

ब्रह्महा मद्यपः स्तेनो गुरुपल्पग एव च। महापातकिनस्वेते यः स तैः सह सम्वसेत् ॥१ सम्वत्सरेण पतित संसर्गं कुरुते तु यः। यो हि शय्यासने नित्यं वसन्वे पतितं भवेत्।।२ याजनं योनिसम्बन्धं तथैवाध्ययनं द्विजः । कृत्वा सद्यः पतेत् ज्ञानात् सहभोजनमेव च ॥३ अविज्ञायापि यो मोहात् कुर्याद्ध्ययनं द्विजः। सम्वत्सरेण पतति सहाध्ययनमेव च ॥४ ब्रह्महा वां दशाब्दानि कुण्ठीकृत्वा वने वसेत्। भेक्ष्यं चात्मविशुध्यर्थं क्रत्वा शवशिरोध्वजम् ॥५ ब्रह्मणावसथान् सर्वान् देवागाराणि वर्जयेत् । विनिन्दा च स्वमात्मानं ब्राह्मणञ्च स्वयं स्मरेत् ॥६ असङ्कराणि योग्यानि सप्तागाराणि संविशेत्। विघूमे शनकैर्नित्यं व्याहारे भुक्तवर्जिते ॥७ कुर्यादनशनं वाद्यं भृगोः पतनमेव च। ज्वलन्तं वा विशेद्गिंन जलं वा प्रविशेत् स्वयम् ॥८ ब्राह्मणार्थे गवार्थे वा सम्यक् प्राणान् परित्यजेत्। दीर्घमामयिनं विप्रं ऋत्वा नामयिनं तथा ॥६

द्त्वा चान्नं स विदुषे ब्रह्महत्यां व्यपोहति। अश्वमेधावभृतके स्नात्वा यः शुध्यति द्विजः ॥१० सवंस्वं वा वेद्विदे ब्राह्मणाय प्रदापयेत्। ब्रह्महा मुच्यते पापैर्द्धा वा सेतुदर्शनम्।।११ सुरापस्तु सुरां तप्तामग्निवर्णां पिबेत्तदा। निर्दग्धकायः स तदा मुच्यते च द्विजोत्तमः ॥१२ गोमूत्रमग्निवर्णं वार्गोशकृद्द्रवमेव वा । पयो घृतं जलं वाऽथ मुच्यते पापकात्ततः ॥१३ जलाद्रवासाः प्रयतो ध्यात्वा नारायणं हरिम्। ब्रह्महत्याव्रतं चाथ चरेत्तत्पापशान्तये ॥१४ स्वर्णस्तेयी सकृद्वित्रो राजानमधिगम्य तु। स्वकर्म ख्यापयन् ब्रूयान्मां भवाननुशास्त्वित ॥१४ गृहीत्वा मुसलं राजा सकृद्धन्यात्तु तं स्वयम्। स वै पापात्ततः स्तेनो ब्राह्मणस्तपसाथ वा ।।१६ करेणादाय मुसलं लगुडं वाऽथ घातिनम्। सिबत्योभयतस्तीक्ष्णमायसं दण्डमेव च ॥१७ राजा न स्तेन मद्दीत मुक्तकेशेन धावता। अचक्षाणश्च तत्पापमेवं कर्माणि शाधि माम्।।१८ शासनाद्वापि मोक्षाद्वा ततः स्तेयाद्विमुच्यते । अशासित्वा च तं राजा स्तेयस्याप्नोति किल्विषम् ॥१६ तपसा द्रुतमन्यस्य सुवर्णस्तेयजं फलम्। चीरवासा द्विजोऽरण्ये सञ्बरेद् ब्रह्मणो व्रतम्।।२०

स्नात्वाश्वमेधावभृथे पूतः स्याद्थ वा द्विजः। प्रदद्याचाथ विप्रेभ्यः स्वात्मतुल्यं हिरण्यकम् ॥२१ चरेद्वा वत्सरं कृत्सनं ब्रह्मचर्यपरायणः। ब्राह्मणः स्वर्णहारी च तत्पापस्यापनुत्तये ॥२२ गुरुभार्या समारुद्य ब्राह्मणः काममोहितः। उपमृहेत् स्त्रियं तप्तां कान्तां कालायसीकृताम् ॥२३ स्वयं वा शिश्नवृष्णे उत्कृत्यादथवाञ्जलौ । अ।तिष्ठेदक्षिणामाशा मा निपातमजिह्यतः ॥२४ गुर्वर्थे बहवः शुध्ये चरेद् वा ब्रह्मणो व्रतम्। शाखां कर्कटकोपेतां परिष्वज्याथ वत्सरे ॥२४ अधःशयीत निरतो मुच्यते गुरुतल्पगः। कुच्छ्ञ्बाब्द्भरेद्विप्रश्चीरवासाः समाहितः ॥२६ अश्वमेधावभृतके स्नात्वा मुच्येद् द्विजोत्तमः। कालेऽष्टके वा भुञ्जानो ब्रह्मचारी सदाव्रतः ॥१७ स्थानासनाद्यं विचरेद्धंनोऽप्यु पयत्नतः। अधःशायी त्रिभिर्वर्षेस्ततः शुध्येत पातकात्।।१८ चान्द्रायणानि वा कुर्यात् पश्च चत्वारि वा पुनः। पतितैः सम्प्रयुक्ताना मयं गच्छति निष्कृतिम्। पतितेन तु संस्पर्शं लोभेन कुरुते द्विजः ॥१६ सकृत् पापापनोदार्थं तस्यैव व्रतमाचरेत्। तप्तकुच्छूं चरेद्वाथ सम्वत्सरमतन्द्रितः॥२०

षाण्मासिकेऽथ संसर्गे प्रायश्चित्तार्थमाचरेत्।
एभिः पूते रथो इन्ति महापातिकनो मलम् ॥२१
पुण्यतीर्थाभिगमनात् पृथिव्यामथ निष्कृतिः।
ब्रह्महत्यां सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमम् ॥२२
कृत्वा चैवं महापापं ब्राह्मणः काममोहितः।
कुर्याद्नशनं विप्रः पुण्यतीर्थे समाहितः॥२३
जले वा प्रविशेद्गनौ ध्यात्वा देवं कपर्दिनम्।
न ह्यन्या दुष्कृतिर्देष्टा सुनिभिः कर्मवेदिभिः॥२४
इत्यौशनसस्मृतौ अष्टमोऽध्यायः।

अथ नवमोऽध्यायः ॥ प्रायश्चित्तवर्णनम् ।

गत्वा दुहितरं विद्रं स्वसारं सा स्नुषामि ।
प्रविशेज्ज्वलनं दीप्तं मितपूर्वमिति स्थितिः ॥१
मातृष्वसां मातुलानीं तथैव च पितृष्वसाम् ।
भागिनेथीं समारह्य क्रुर्यात् कुच्छ्रादिपूर्वकम् ॥२
चान्द्रायणानि चत्वारि पश्च वा सुसमाहितः ।
पैतृष्वस्रेथीं गत्वा तु स्वस्त्रियां मातुरेव च ॥३
मातुलस्य सुतां वाऽपि गत्वा चान्द्रायणं चरेत् ।
भार्या सखीं समाहृद्य गत्वा श्यालीं तथैव च ॥४

अहोरात्रोषितो भृत्वा तप्तकुच्छू समाचरेत्। उद्दयागमने विप्रक्षिरात्रेण विशुध्यति ॥५ क्षत्त्रीमैथुनमासाद्य चरेचान्द्रायणव्रतम्। पराकेणाथवा शुद्धिरित्याह भगवानजः। मण्डूकं नकुलं काकं विड्वराहञ्च मृषिकम्।।६ श्वानं हत्वा द्विजः कुर्यात् षोडशाख्यमहाव्रतम्। पयः पिबेत्त्रिरात्रन्तु श्वानं हत्वा त्वतन्द्रितः।।७ मार्जारं चाथ नकुछं योजनं वाऽध्वनो ब्रजेत्। कृच्छ्रं द्वादशमात्रन्तु कुर्यादश्वबधे द्विजः ॥८ अथ कृष्णायसीं दद्यात् सर्पं हत्वा द्विजोत्तमः। बलाकं रङ्कवं चैव मृषिकं कृतलम्भकम्।।९ वराहन्तु तिलद्रोणं तिलाटञ्चैव तित्तिरिम्। शुकं द्विहायनं वत्सं क्रीश्वं हत्वा त्रिहायनम्।।१० हत्वा हंसं बलाकञ्च बकटिट्टिभमेव च। वानरञ्चेव भासञ्च स्वयं वा ब्राह्मणाय गाम्।।११ क्रज्यादांस्तु मृगान् हत्वा धेनुं द्द्यात् पयस्विनीम्। अक्रव्यादं वत्सतरमुष्ट्रं हत्वा तु कृष्णलम्।।१२ जीविते चैव तृप्ताय द्वाद्श्यिमतां वधे। अस्थ्नाञ्चेव हि हिंसायां प्राणायामेन शुध्यति ॥१३ फलदानन्तु विप्राणां चेदनादाहिकं शतम्। गुल्मवह्रीलतानाञ्च वीरुधां फलमेव च ॥१४

पुष्पागमानाञ्च तथा घृतप्राशो विशोधनम्। चान्द्रायणं पराकञ्च कुर्य्यात् हत्वा प्रमादतः ॥१४ मतिपूर्वं बधे चास्याः प्रायश्चित्तं न विद्यते । मनुष्याणाञ्च हरणं स्त्रीणां कृत्वा प्रहस्य च ॥१६ वापीकूपजलानाञ्च शुध्येचान्द्रायणेन तु। द्रव्याणामल्पसाराणां स्तेर्यं कृत्वाऽन्यवेश्मनः ॥१७ चरेत् सन्तापनं कृच्छं चरित्वाऽऽत्मविशुद्धये। धान्याद्धिनचौर्यं च पञ्चगव्यविशोधनम् ॥१८ तृणकाष्ठद्रमाणाञ्च पुष्पा**णा**ञ्च बलस्य च । चेळचर्मामिषाणाञ्च त्रिरात्रं स्यादभोजनम् ॥१६ मणिप्रवालरत्नानां सुवर्णरजतस्य च । अयः कांस्योपलानाञ्च द्वाद्शाहमभोजनम् ॥२० एतदेव व्रतं कुर्याद् द्विशफैकशफस्य च। पक्षिणामोषधीनाञ्च हरेचापि ज्यहं पयः ॥२१ न मांसानां हतानान्तु दैवे चान्द्रायणं चरेत्। उपोध्य द्वादशाहं तु कुष्माण्डेर्जुहुयाद् घृतम्।।२२ नकुलोॡकमार्जारं जम्ध्वा सान्तपनं चरेत्। श्वानं जग्ध्वाऽथ कुच्छ्रेण शुभक्षेण च शुध्यति ॥२३ प्रकुर्याचैव संस्कारं पूर्वेणैव विधानतः। शललञ्च बलाकञ्च हंसं कारण्डवं तथा ॥२४ चक्रवाकञ्च जम्बा च द्वादशाहमभोजनम्। कपोतं टिट्टिमं भासं शुकं सारसमेव च ॥२४

जलौकं जालपातञ्च जम्बा ह्येतद् व्रतञ्चरेत्। शिशुमारं तथा मार्ष मत्स्यं मांसं तथैव च ॥२६ जम्बा चैव वराहञ्च एतदेव व्रतञ्चरेत्। कोकिलं चैव मत्स्यादं मण्डूकं भुजगं तथा।।२७ गोमूत्रयावकाहारैमसिनैकेन शुध्यति। जलेचरांश्च जलजान्यातुधानविपाषितान् ॥२८ रक्तपादांस्तथा जम्बा सप्ताहं चैतदाचरेत्। मृतमांसं वृथा चैवमात्माथं वा यथाकृतम्।।२६ भुक्ता मासञ्चरेदेतत्तत्पापस्यापनुत्तये । कपोतं कुञ्जरं शियुं कुक्कुटं रजकां तथा।।३० प्राजापत्यं चरेज्ञम्या तथा कुम्भीरमेव च। पलाण्डुं लग्जनञ्चेव भुक्ता चान्द्रायणं चरेत्।।३१ वार्ताकुं तण्डुलीयं च प्राजापत्येन शुध्यति । अश्मातकं तथोपेतं तप्तकुच्छ्रेण शुध्यति ॥३२ प्राजापत्येन शुद्धिः स्यात्ककुभ्यां शशभक्षणे। अलाबुं गृझनं चैव भुक्ताऽप्येतद् व्रतं चरेत् ॥३३ उदुम्बर्ञ्च कामेन तप्तकृच्छेण शुध्यति । वृथा कृसरसंयावं पायसाऽपूपशष्कुलीन् ॥३४ भुक्ता चैवं वृतं तत्र त्रिरात्रेण विशुध्यति । पीत्वा क्षीराण्यपेयानि ब्रह्मचारी विशेषतः ॥३४ गोमूत्रयावकाहारो मासार्धेन विशुध्यति। अनिर्दशाया गोः क्षीरं माहिषं वार्क्षमेव च ॥३६

गर्भिण्या वा विवत्सायाः पीत्वा दुग्धमिदं चरेत्। एतेषाश्व विकाराणि पीत्वा मोहेन वा पुनः ॥३७ गोमूत्रयावकाहारो सप्तरात्रेण शुध्यति। भुत्तवा चैव नवश्राद्धं सूतके मृतकेऽथवा ॥३८ चान्द्रायणेन शुध्येत ब्राह्मणस्तु समाहितः। यस्य यद्भूयते नित्यं न यस्यायं न दीयते ॥३६ चान्द्रायणं चरेत् सम्यक् तस्यान्नप्राशने द्विजः। अभोज्यानान्तु सर्वेषां भुत्तवा चान्नमुपस्कृतम्।।४० अन्त्यस्यात्ययिनोऽन्नञ्च तप्तकुच्छूमुदाहृतम्। चाण्डालानं द्विजो अुत्तवा सम्यक् चान्द्रायणं चरेत्।।४१ अज्ञानात् प्राश्य विण्मूत्रं सुरासंस्पर्शमेव च । पुनः संस्कारमहीनित त्रयो वर्णा द्विजातयः ॥४२ क्रव्यादानां पक्षिणाञ्च प्राश्य मूत्रपुरीषकम्। महासान्तपनं कुर्यात्तेषां मोहाद् द्विजातयः ॥४३ भासमण्डूककुक्कुरवायसे कुच्छ्रमाचरेत्। प्राजापत्येन शुध्येत ब्राह्मणः क्रिष्टभोजनात् ॥४४ क्षत्रिय स्तप्तकुच्छं, स्याद् वैश्य श्रेव त्रिकुच्छ्कम्। सुराभाण्डोदकं वापि पीत्वा चान्द्रायणं चरेत्।।४५ शुनोच्छिष्टं द्विजो भुत्तवा त्रिराज्ञेण विशुष्यति । गोमूत्रयावकाहारः पीतशेषभ्व वा पयः ॥४६ आपो मूत्रपुरीषाद्यै रूपेताः प्राशयेदादि । तदा सान्तपनं कुर्याद् त्रतं कायविशोधनम् ॥४७

चाण्डालकूपभाण्डेषु यद्ज्ञानात् पिवेज्जलम्। चरेत् सान्तपनं कुच्छूं ब्राह्मणः पापशोधनम् ॥४८ चाण्डालेन च संस्पृष्टं पीत्वा वारि द्विजोत्तमः। त्रिराजेण विशुध्येत पञ्चगव्येन शुध्यति ॥४६ महापातकसंस्पर्शे अुत्तवा स्नात्वा द्विजोत्तमः। बुद्धिपृर्वन्तु मूढात्मा तप्तकुच्छ्ं समाचरेत्।।५० अन्यजातिविवाहे च स महापातकी भवेत्। तस्य पातकिसंसर्गात्पातकित्वमवाप्नुयात्।।५१ चतुर्विशतिकुच्छ्रं स्याद् विवाहे त्वन्यकस्यया। संसर्गस्य तदद्धं स्यात् प्रायश्चित्तं सुतेन हि ॥५२ दृष्ट्रा महापातिकनं चाण्डाळं वा रजस्वळाम्। प्रमादाद्गोजनं फुत्वा त्रिरात्रेण विशुध्यति ॥५३ स्नानाद्रों यदि भुझीत अहोराजेण शुध्यति। बुद्धिपूर्वं तु कुच्छ्रेण भगवानाह पद्मजः ॥५४ शुष्कं पर्युषितादीनि गन्धादिप्रतिदृषितम्। भुक्त्वोपवासं कुर्वीत चरेद्विप्रः युनः पुनः ॥**५**५ अज्ञानाद् भुक्तिग्रुध्यर्थं मज्ञानस्य विशेषतः। मृत्यानां यजनं कृत्वा परेषामन्यकर्मणि ॥५६ अभिचारमनई च त्रिभिः कुच्छ्रैविंशुध्यति । ब्राह्मणाभिहतानाश्च कृत्वा दाहादिकं द्विजः ॥५७ गोमृत्रयावकाहारः प्राजापत्येन शुध्यति । तैलाभ्यक्तः प्रभाते च कुर्यानमृत्रपुरीषके ॥६८

अहोरात्रोण शुष्येत श्मश्रुकर्माण मैथुने। एकाहेति विवाहाग्निं परिभाव्य द्विजोत्तमः ॥५६ त्रिरात्रेण विद्युध्येत त्रिरात्रात् षडहं पुनः । द्शाहे द्वाद्शाहे वा परिहास्य प्रमाद्तः ॥६० कुच्छूचान्द्रायणं कुर्यात्तत्पापस्यापनुत्तये । पतितद्रव्यमादाय तदुत्सर्गेण शुध्यति ॥६१ चरेच विधिना कुच्छ्र मिलाह भगवान् प्रभुः। अनाशकनिवृत्ता तु प्रव्रज्योपासिता तथा ॥६२ आचरेत् त्रीणि कुच्छाणि त्रीणि चान्द्रायणानि च। पुनश्च जातकर्मादि संस्कारैः संस्कृता द्विजाः ॥६३ शुद्धो यस्तद् व्रतं सम्यक्चरेयुर्धर्म्मदर्शिनः ॥६४ अनुपासितसिद्धस्तु तं व्यापकवशेन च। अजसं संयतमना रात्रौ चेद्रात्रिमेव हि ॥६४ अकृत्वा समिधाधानं ग्रुचिः स्नात्वा समाहितः। गायत्र्यष्टसहस्रस्य जपं कृत्वा विशुध्यति ॥६६ उपासीत न चेत्सन्ध्यां गृहस्थोऽपि प्रमादतः। स्नात्वा विशुध्यते नद्याः परिश्रान्तः सुसंयमात् ॥६७ वैदिकानि च निसानि कर्माणि च विलोप्य तु। स्नातकव्रतलील्यन्तु कृत्वा चोपवसेदिनम् ॥६७ सम्वत्सरभारेत् कुच्छ्रं मनुच्छन्दे द्विजोत्तमः। चान्द्रायणं चरेद् घृत्या गोत्रदानेन शुध्यति ॥६८

नास्तिकाद्यदि कुर्वीत प्राजापत्यं चरेद् द्विजः। देवद्रोहं गुरुद्रोहं तप्तकुच्छ्रेण शुध्यति ॥६६ उष्ट्रयानं समारुहा खरयान अ कामतः। त्रिराचेण विशुध्येत नम्नो न प्रविशेज्जलम्।।७० पष्ठात्रकालमासं वा संहिताजपमेव वा। होमाच शाकलान्नित्यमपत्यानां विशोधनम्।।७१ नीछं रक्तं वसित्वा तु ब्राह्मणो वस्त्रमेव हि। अहोरात्रोषितः स्नातः पञ्चगव्येन शुध्यति ॥७२ वेद्धर्भपुराणाश्च चण्डालस्य च भाषणम्। चान्द्रायणेन शुद्धिः स्यान्न ह्यन्या तस्य निष्कृतिः ॥७३ उद्बन्धनादिनिहतं संस्पृश्य ब्राह्मणः कचित्। चान्द्रायणेन शुद्धः स्यात् प्राजापत्येन वा पुनः ॥७४ उच्छिष्टो यदि नाचान्तश्चण्डालादीन् स्पृशेद् द्विजः। उच्छिष्ट स्तत्र कुर्वीत प्राजापत्यं विशुद्धये । १७५ चण्डालसूतकशवांस्तथा नारी रजस्वलाम्। स्पृष्ट्रा स्नायाद्विशुध्यर्थं तरस्पृष्टान् पतितांस्तथा ॥७६ चण्डालसूतकशावैः संस्पृष्टं स्पर्शयेद् यदि । प्रमाद्।त् स्नात् आचम्य जपं कृत्वा विशुध्यति ॥७७ असृष्टस्पर्शनं कृत्वा स्नात्वा शुध्येद् द्विजोत्तमः। आचमेत विद्युष्यर्थं प्राह देवः पितामहः ॥७८ विज्ञानस्य तु विप्रस्य कदाचित् स्रवते गुद्म्। कृत्वा शीर्च तसः स्नात्वा उपोध्य जुहुयाद् घृतम् ॥७६

चाण्डाछन्तु शवं रष्टृष्ट्रा कुच्छ्रं कुर्यात् द्विजोत्तमः। दृष्ट्रा नभस्थं नक्षत्रमहोरात्रेण शुध्यति ॥८० सुरां स्टुष्ट्रा द्विजः कुर्यात् प्राणायसत्रयं शुचिः। पलाण्डुं लग्जुनं चैव घृतं प्राश्य विशुध्यति ॥८१ ब्राह्मणस्तु शुना दृष्टस्त्रयहं सायं पयः पिबेत्। नभिरूद्ध्वस्य दृष्टस्य तदेव त्रिगुणं भवेत्।।८२ स्यादेतत्त्रगुणं बाह्वोर्मूर्धिन स्यात् चतुर्गुणम्। स्नात्वा जपेतु गायत्री श्वभिद्ष्टो द्विजोत्तमः ॥८३ पञ्चयज्ञानकृत्वा तु यो भुङ्क्ते प्रयहं गृही। अनातुरस्य निधनं क्रच्छ्राद्धंन विशुध्यति ॥८४ आहिताग्ने रूपस्थानं यः कुर्यात्र तु पर्वणि । भृतौ गच्छेत् न भार्यायां सोऽपि कुच्छ्राद्धं माचरेत्।।८४ विना द्विरप्सु वा कुर्याच्छरीरं सिन्निषेवते। सचैहो जलमाप्लुत्य गामालभ्य विशुध्यति।।८६ गायत्र्यष्टसहस्रन्तु त्र्यहं चोपवसेद् गृही। अनुगच्छेच यः शूद्रं प्रेतभूतं द्विजोत्तमः ॥८७ गायज्यष्टसहस्रन्तु जपं कुर्यान्नदीषु च। अकृत्वा शपथं विप्रो विप्रस्य विधिसंयुते ॥८८ मृषैव यावकान्नेत्रे क्रुर्याचान्द्रायणं व्रतम्। पंक्ती विषमदानश्च कृत्वा कुच्छ्रेण शुध्यति ॥८६ **ब्रायां श्वपाकस्यारुह्य स्नात्वा सम्प्राश्येद् घृतम्**। रक्षेदादित्यमशुचि दृष्ट्रामीनद्रजमेव च ॥६०

मानुष्यास्य च संस्पृष्ट्रा स्नानमेव विशुध्यति। कृत्वाप्यध्यनं विप्रश्चरेद्भिक्षानुवत्सरम्।।११ कृतव्नो ब्राह्मणगृहे पश्चसम्बत्सरं व्रती । हुङ्कारं ब्राह्मणस्योत्तवा त्वङ्कारन्तु गरीयसः ॥६२ स्नात्वाचम्य ततः शेषं प्रणिपत्य प्रसाद्येत्। ताडियत्वा तृणेनैव कर्णे बद्ध्वा च वाससा ॥६३ विवादे परिनिर्जित्य प्रणिपत्य प्रसाद्येत्। अवगृद्य चरेत् कुच्छ्मतिकुच्छ्निपातने ॥६४ कुच्छ्रातिकुछ्: कुर्वीत विप्रस्योत्पाद्य शोणितम्। गुरोराक्रोशने चैव कुच्छं कुर्य्यादिशोधनम्।।६४ एकरात्रं द्विरात्रं वा तत्पापस्यापनुत्तये। देवर्षीणामभिमुखं ष्ठीवताकोशनाकृते ॥६६ उलूकादि जनुर्जिस्वा दातव्यश्व हिरण्यकम्। देवोद्यानेन यः कुर्यान्मृत्रोद्यारं सकृद् द्विजः ॥६७ चित्रन्याचित्रन्तु शुद्ध्यथं चरेत्रान्द्रायणं व्रतम्। देवतायतने मूत्रं कृत्वा देहाद् द्विजोत्तमः ॥६८ शिश्नस्योत्कृन्तनं कृत्वा चान्द्रायणमथाचरेत्। देवतानामृषीणाञ्च वेदानाञ्चेव कुत्सनम्।।६६ कृत्वा सम्यक् प्रकुर्वीत प्राजापत्यं द्विजोत्तमः। तेलु सम्भाषणं कृत्वां स्नात्वा देवान् समर्चयेत्।।१०० स्री यदा बालभावेन महापापं करोति हि। प्रायश्चित्तं व्रतस्यास्य पित्रा तद्वतृतचारिणीम् ॥१०१

उद्घेदिभिरूपान्तमन्यथा पतितस्तु सः। अपि राजन्यकवये वार्षिकब्राह्मणोवृतम्।।१०२ तस्यान्ते वृषभैकेन सहस्रं गोदानमाचरेत्।

सपं हत्वा माषमात्रं द्द्यात् सुवर्णरजततास्रत्रप्रसीसकांस्या-सनामद्भिरेवमृत्स्नायुक्ताभिस्तेजसाञ्चोच्छिष्टानां भस्मना त्रिः। प्रक्षा-छनं कनकरजतमणिशङ्खशुक्तयुपलानां वज्रविदलरज्जुचर्म्मणाञ्चाद्भिः शौचमिति ।

अपि चाण्डालश्वपचस्पृष्टे वा विण्मूत्र एव च ।
तिरात्रेण विशुद्धिः स्याद् भुक्तोच्छिष्टः सदाचरेत्।।१०३
पिता पितामहो यस्य अयजो वाथ कस्यचित् ।
तपोऽग्निहोत्रमन्त्रोषु न दोषः परिदेवने ।।१०४
अमावास्यायां यो ब्राह्मणं समुद्दिश्य पितामहम् ।
ब्राह्मणीं स्त्रीं समभ्यच्यं मुच्यते सर्वपातकैः ।।१०५
अमावास्यां तिथि प्राप्य यममाराधयेद्भवम् ।
ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु सर्वपापैः प्रमुच्यते ।।१०६
कृष्णाष्टम्यां महादेवं तथा कृष्णचतुर्दशीम् ।
संपूज्य ब्राह्मणमुखेः सर्वपापैः प्रमुच्यते ।।१०७
त्रयोदश्यां तथा रात्रौ सोपहारं त्रिलोचनम् ।
ह्ये व प्रथमे यामे मुच्यते सर्वपातकैः ।।१०८
सर्वत्र दानप्रहणे मुच्यते सोमयागतः ।
शान्त्या च दक्षिणां गृह्मन् हिरण्यप्रतिमामिष ।।१०६
अयुतेनैव गायज्या मुच्यते सर्वपातकैः ।

इत्यौरानस्मृतौ नवमोऽध्याय:। समाप्ताचेयं-औरानसस्मृति:। ॐ तत्सत्।

ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः।

3121

॥ बृहस्पतिस्मृतिः॥

श्रीगणेशाय नमः।

तत्रादोससुवर्णपृथिवीदानफलमहत्ववर्णनम् ।
इष्ट्रा क्रतुशतं राजा समाप्तवरदक्षिणम् ।
मघवान् ! वाग्विदां श्रेष्ठं पर्य्यपृच्छद् बृहस्पतिम् ॥१
भगवन् केन दानेन सर्वतः सुखमेधते ।
यदत्तं यन्महार्घं च तन्मे ब्रूहि महातप !॥२
एविमन्द्रेण पृष्टोऽसौ देवदेवपुरोहितः ।
वाचस्पतिमेहाप्राक्षो बृहस्पतिरुवाच ह ॥३
सुवर्णदानं गोदानं भूमिदानं च वासव !॥
एतत् प्रयच्छमानस्तु सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥४
सुवर्णं रजतं वस्तं मणिरत्नं च वासव !॥
सर्वमेव भवेदत्तं वसुधां यः प्रयच्छिति ॥५

फालकृष्टां महीं दस्ता सबीजां शस्यशालिनीम् । यावत् सूर्य्यकरा लोकास्तावत् स्वर्गे महीयते ॥६ यत्किश्वत् कुरुते पापं पुरुषो वृत्तिकर्शितः । अपि गोचर्ममात्रेण भूमिदानेन शुध्यति ॥७ दशहस्तेन दण्डेन त्रिंशहण्डानि वर्त्तनम् । दश तान्येव विस्तारो गोचर्मे तन्महाफलम् ॥८ सवृषं गोसहसं च यत्र तिष्ठत्यतिन्द्रतम् । बालवत्सप्रसूतानां तद् गोचर्म इतिस्मृतम् ॥६

विप्राय दद्याच गुणान्विताय तपोवियुक्ताय जितेन्द्रियाय । यावन्मही तिष्ठति सागरान्ता तावत् फलं तस्य भवेदनन्तम् ॥१०

यथा वीजानि रोहन्ति प्रकीणीनि महीतले।
एवं कामाः प्ररोहन्ति भूमिदानसमार्जिताः ॥११
यथाप्सु पतितः सद्य रतैलिवन्दुः प्रसपिति।
एवं भूमिकृतं दानं सश्ये सश्ये प्ररोहति॥१२
अन्नदाः सुखिनो नित्यं वस्नदश्चैव रूपवान्॥१३
स नरः सर्वदो भूप यो ददाति वसुन्धराम्।
यथा गौर्भरते वत्सं क्षारमुत्सृज्य क्षीरिणी॥१४
एवं दत्ता सहस्राक्ष ! भूमिभरति भूमिदम्।
राङ्क्षं भद्रासनं छन्नं चरस्थावरवारणाः॥१५
भूमिदानस्य पुण्यानि फलं स्वर्गः पुरन्दर!।
आदित्यो वरुणो विह्नर्नह्या सोमो हुताशनः॥१६

शूलपाणिश्च भगवानभिनन्दति भूमिदम्। आस्फोटयन्ति पितरः प्रहर्षन्ति पितामहाः ॥१७ भूमिदाता कुछे जातः स नस्नाता भविष्यति । त्रीण्याहुरति दानानि गावः पृथ्वी सरस्वती ॥१८ तार्यन्ति हि दातारं सर्वात्पापाद्संशयम्। प्राष्ट्रता बखदा यान्ति नग्ना यान्ति त्यवखदाः ॥१६ तृप्ता यान्यग्निद्वातारः क्षुधिता यान्त्यनन्नदाः ! कांक्षन्ति पितरः सर्वे नरकाद्भयभोरवः ॥२० गयां यो यास्यति पुत्रः स नस्त्राता भविष्यति । एष्ट्रव्या बहवः पुत्राः यद्येकोऽपि गयां वूजेत्।।२१ यजेत वाश्वमेधेन नीलं वा वृषमुत्सृजेत्। लोहितो यस्तु वर्णेन पुच्छाम्रे यस्तु पाण्डुरः ॥२२ श्वेतः खुरविषाणाभ्यां स नीलो वृष उच्यते। नील: पाण्डुरलाङ्गूलस्तृणमुद्धरते तु यः ॥२३ षष्टिवर्षसहस्राणि पितरस्तेन तर्पिताः। यच शृङ्गगतम्पङ्कं कृलस्तिष्ठति चोद्धृतम्।।२४ पितरस्तस्य नश्यन्ति सोमलोकं महाद्युतिम्। पृथोयंदोर्दिलीपस्य नृगस्य नहुषस्य च ॥२५ अन्येषाश्व नरेन्द्राणां पुनरन्या भविष्यति । बहुभिर्वसुधा दत्ता राजभिः सगरादिभिः॥२६ यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम्। यस्तु ब्रह्मध्नः स्त्रीध्नो वा यस्तु वै पितृघातकः ॥२७

सफलंनीलब्रुषभलक्षणं भूमिहर्तुर्निन्दा च वर्णनम्। १६१३

गवां शतसहस्राणां हन्ता भवति दुष्कृती ।
स्वद्तां परदत्तां वा यो हरेच वसुन्धराम् ॥२८
श्विष्ठायां क्रिमिर्भूत्वा पितृभिः सह पच्यते ।
आक्षेप्ता चानुमन्ता च तमेव नरकं व्रजेत् ॥२६
भूमिदो भूमिहत्तां च नापरं पुण्यपापयोः ।
उद्ध्वांधो वाऽवितष्ठेत यावदाभूतसंप्रवम् ॥३०
अग्नेरपत्यं प्रथमं हिरण्यं भूवेष्णवी सूर्यसुताश्च गावः ।
लोकास्त्रयस्तेन भवन्ति दत्ता यः काञ्चनं गाञ्च महीञ्च द्द्यात्॥

षडशीति सहस्राणां योजनानां वसुन्धराम्। स्वतो दत्ता तु सर्वत्र सर्वकामप्रदायिनी ॥३२ भूमि यः प्रतिगृह्णाति भूमि यश्च प्रयच्छति । उभी तौ पुण्यकर्माणौ नियतं स्वर्गगामिनौ ॥३३ सर्वेषामेव दानानां एकजन्मानुगं फलम्। हाटकक्षितिगौरीणां सप्तजन्मानुगं फलम् ॥३४ यो न हिस्यादहं ह्यात्मा भूतप्रामं चतुर्विधम्। तस्य देहाद्वियुक्तस्य भयं नास्ति कदाचन ॥३४ अन्यायेन हता भूमियें नरेरपहारिता। हरन्तो हारयन्तश्च हन्युस्ते सप्तमङ्कुलम् ॥३६ हरते हरयेचस्तु मन्दबुद्धिस्ततो वृतः। स बध्यो वारुणैः पाशैस्तियंग्योनिषु जायते ॥३७ अ(स) श्रुभिः पतितैस्तेषां दानानामपकीर्त्तनम्। ब्राह्मणस्य हते क्षेत्रे हतं त्रिपुरुषं कुलम् ॥३८

वापीकूपसहस्रेण अश्वमेधशतेन च। गवां कोटिप्रदानेन भूमिहत्तां न शुध्यति ॥३६ गामेकां स्वर्णमेकं वा भूमेरप्यद्धं मङ्गलम्। रुन्धन्नरकमायाति यावदाभूतसंष्ठवम्। हुतं दत्तं तपोऽधीतं यत्किञ्चद्वर्मसञ्चितम् ॥४० अर्द्धाङ्कुलस्य सीमाया हरणेन प्रणश्यति । गोवीथीं ग्रामरथ्याञ्च श्मशानं गोपितं तथा।।४१ सम्पीड्य नरकं याति यावदाभूतसंप्रवम्। ऊषरे निर्जले स्थाने प्रस्तं शस्यं विसजयेत् ॥४२ जलाधारश्च कर्तव्यो व्यासस्य वचनं यथा। पश्च कन्यानृते हन्ति दश हन्ति गवानृते ॥४३ शतमश्वानृते हन्ति सहस्रं पुरुषानृते। हन्ति जाता न जातांश्च हिरण्यार्थेऽनृतं वदेत्।। ४४ सर्वं भूम्यनृते हनित मा सम भूम्यनृतं वदीः। ह्यस्वे मा रतिं कुर्याः प्राणैः कण्ठगतैरपि ॥४५ अनौषधमभेषज्यं विषमेतद्वलाहलम्। न विषं विषमित्याहुः ब्रह्मस्वं विषमुच्यते ॥४६ विषमेकाकिनं हन्ति ब्रह्मस्वं पुत्रपौत्रकम्। लोह्खण्डाश्मचूणं च विषश्व ज्वरयेन्नरम् ॥४७ ब्रह्मस्वं त्रिषु लोकेषु कः पुमान् ज्वरयिष्यति । मन्युप्रहरणा विप्रा राजानः शस्त्रपाणयः ॥४८

अन्यायेनभूमिहरणेफलं-कन्यानृतादिविषये दोषनिरूपणफलम् १६१५

शस्त्रमेकाकिनं हन्ति विप्रमन्युः कुलक्ष्यम्। मन्युप्रहरणा विप्रा श्रकप्रहरणो हरिः ॥४६ चक्रात्तीव्रतरो मन्युस्तस्माद्विप्रं न कोपयेत्। अग्निदग्धाः प्ररोहन्ति सूर्यदग्धास्तथैव च ॥५० मन्युदग्धस्य विप्राणामङ्करो न प्ररोहति । अग्निर्इति तेजसा सूर्यो दहति रश्मिभः ॥५१ राजा दहति दण्डेन विप्रो दहति मन्युना। ब्रह्मस्वेन तु यत् सीख्यं देवस्वेन तु या रितः ॥५२ तद्धनं कुलनाशाय भवस्यात्मविनाशकम्। ब्रह्मस्वं ब्रह्महत्या च दरिद्रस्य च यद्धनम् ॥५३ गुरुमित्रहिरण्यश्व स्वर्गस्वमिष पीडवेत्। नहास्वेन तु यच्छिद्रं तच्छिद्रं न प्ररोहति ॥५४ प्रच्छादयति सच्जिद्रभन्मत्र तु चिसर्पति । ब्रह्मस्वेन तु पुष्टानि साधनानि बळानि च ॥४४ संप्रामे तानि छीयन्ते सिकतासु यथोदकम्। श्रोत्रियाय कुलीनाय दरिद्राय च वासव ! ॥५६ सन्तुष्टाय विनीताय सर्बभूताहिताय च। वेदाभ्यासस्तपो ज्ञानमिन्द्रियाणां च संयमः ॥५७ ईटशाय सुरश्रेष्ठ ! यदतं हि तदक्षयम्। आमपात्रे यथान्यस्तं क्षीरं दिघ घृतं मधु ॥६८ विनश्येत्पात्रदौर्वल्यात्तव पात्रं विनश्यति । एवं गाञ्च हिरण्यञ्च वस्त्रमन्नं महीं तिलान् ॥५६

अविद्वान् प्रतिगृह्वाति भस्मीभवति काष्ठवत्। यस्य चैव गृहे मूर्ली दूरे चाषि बहुश्रुतः ॥६० बहुश्रुताय दातव्यं नास्ति मूर्वे व्यतिक्रमः। कुछं तारयते धीरः सप्त सप्त च वासव ! ॥६१ यस्तडाकं नवं कुर्यात् पुराणं वाऽपि खानयेत्। स सर्वं कुलमुद्घृत्य स्वर्गे लोके महीयते।।६२ वापीकृपतडागानि उद्यानोपवनानि च। पुनः संस्कारकर्ता च लभते मौलिकं फलम्।।६३ निदाघकाले पानीयं यस्य तिष्ठति वासव !। स दुर्गं विषमं कृत्स्नं न कदाचिद्वाप्नुयात्।।६४ एकाहं तु स्थितं तोयं पृथिव्यां राजसत्तम ! कुळानि तारयेत्तस्य सप्त सप्त पराण्यपि ॥६४ दीपालोकप्रदानेन वपुष्मान् स भवेन्नरः। प्रोक्षणीयप्रदानेन स्मृतिं मेधाञ्च विन्दति ॥६६ कृत्वाऽपि पापकर्माणि यो दद्यादन्नमर्थिने। ब्राह्मणाय विशेषेण न स पापेन लिप्यते ॥६७ भूमिर्गाव स्तथा दाराः प्रसद्ध हियते यदा। नचाऽऽवेदयते यस्तु तमाहुर्वहाघातकम्।।६८ निवेदितस्तु राजा वे ब्राह्मणैर्मन्युपीडितेः। तं न तारयते यस्तु तमाहुर्बद्धावातकम्।।६६ उपस्थिते विवाहे च यज्ञे दाने च वासव।। मोहाचरति विघ्नं यः स मृतो जायते क्रिमिः ॥७० धनं फलति दानेन जीवितं जीवरक्षणात्। रूपमैश्वर्यमारोग्यमहिंसाफलमश्नुते ॥५१ फलमूलाशनात् पूज्यं स्वर्गं सत्येन लभ्यते। प्रायोपवेशनाद्राज्यं सर्वत्र सुखमश्नुते ॥७२ गवाढ्यःशकद्रीक्षायाः स्वर्गगामी तृणाशनः । खिय खिषवणसायी वायुं पीत्वा क्रतुं लभेत्।।७३ नित्यसायी भवेदकः सन्ध्ये द्वे च जपन् द्विजः न तत्साधयते राज्यं नाकप्रष्टमनाशके ॥७४ अग्निप्रवेशे नियतं ब्रह्मलोके महीयते। र्ब्ला(सा)नां प्रतिसंहारे पशून् पुत्रांश्च विन्दति।।७५ नाके चिरं स वसते उपवासी च यो भवेत्। सततं चैकशायी यः स लभेदीप्सिताङ्गतिम् ॥७६ वीरासनं वीरशय्यां वीरस्थानसुपाश्रितः। अक्षय्यास्तस्य लोकाः स्युः सर्वकामगमास्तथा ॥७७ उपवासञ्च दीक्षाञ्च अभिषेकञ्च वासव !। कृत्वा द्वादशवर्षाणि वीरस्थानाद्विशिष्यते ॥६८ अधीत्य सर्ववेदान् वै सची दुःखात् प्रमुच्यते ॥६६ पावनं चरते धर्मं स्वर्गे लोके महीयते ॥८० बृहस्पति मतं पुण्यं ये पठन्ति द्विजातयः। चत्वारि तेषां वर्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम् ॥८१

इति वृहस्पतिप्रणीतं धर्म्भशास्त्रं सम्पूर्णम्। समाप्ताचेयं, वृहस्पतिस्मृतिः। ॐतत्सत्त।

॥ अथ ॥

-॥ लघुच्याससंहिता ॥-

---:***:---

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

-:緣::緣:-

अथ प्रथमोऽध्यायः।

अथ सफलं स्नानविधि वर्णनम्।

भृषय ऊचुः।

अहन्यहिन कर्तव्यं क्रमाणां हि क्रमाद्विधिम् । ब्राह्मे सुहुर्ते उत्थाय धर्मार्थावनुचिन्तयेत् ॥१ कायक्लेशाश्च तन्मूलान् वेदतत्त्वार्थमेवच । उषः काले तु संप्राप्ते कृत्वाचावश्यकं बुधः ॥२ स्नायात्रदीषु शुद्धासु शौचं कृत्वा यथाविधि । प्रातः स्नानेन पूयन्ते येऽपि पापकृतो जनाः ॥३ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन प्रातःस्नानं समाचरेत् । प्रातः स्नानं प्रशंसन्ति दृष्टादृष्टफलप्रदम् ॥४

मृषीणां कुर्वतां नित्यं प्रातःस्नानं न संशयः। मुखे सुप्तस्य सततं लालानित्यं स्रवन्ति हि ॥५ ततो नैवाचरेत्कर्माण्यकृत्वा स्नानभादितः। अलक्ष्मी कालकर्णी च दुःस्वप्नं दुर्विचिन्तनम्।।६ प्रातःस्नानेन पूयन्ते सर्वपापात्र संशयः। न हि स्नानं विना पुंसां प्राशस्त्यं कर्मसु स्मृतम् ॥७ होमे जप्ये विशेषेण तस्मात् स्नानं समाचरेत्। अशक्तोऽवशिरस्कं वा स्नानमात्रं विधीयते ॥८ आर्र्रेण वाससा चाङ्गमार्जनं कापिलं स्मृतम्। अप्राशस्त्ये समुत्पन्ने स्नानमेव समाचरेत्।।६ ब्राह्मचादीन्यथवाशक्तौ स्नानान्याहुर्मनीषिणः। ब्राह्ममाग्नेय मुद्दिष्टं वायव्यं दिव्यमेव च ॥१० वारुणं यौगिकं चैव सदा स्नानं प्रकीर्तितम्। ब्राह्मं तु मार्जनं मन्त्रेः कुशैः सोदकविन्दुभिः ॥११ आग्नेयं भरमना स्नानं वायव्यं गोरजः स्मृतम्। यत्तु सातपवर्षेण तत स्नानं दिव्यमुच्यते ॥१२ वारणञ्चावगाहञ्च मानसञ्चात्मवेदनम्। यौगिकं स्नानमाख्यातं योगोऽयं विष्णुचिन्तनम् ॥१३ आत्मतीर्थमिदं ख्यातं सेवितं ब्रह्मवादिभिः। मनःशुद्धिकरं पुंसां नित्यं तत् स्नानमाचरेत्।।१४ शक्तश्चेद्वारुणं विद्वानप्राशस्ये तथैव च। प्रक्षाल्य दन्तकाष्ठञ्च भक्षयित्वा विधानतः ॥१४

आचम्य प्रयतो नित्यं प्रातःस्नानं समाचरेत्। मध्याङ्कु लिसमस्वील्यं द्वादशाङ्कु लिसम्मितम् ॥१६ सत्वचन्दन्तकाष्ठं स्यात्तस्याप्रेण तु धावयेत्। क्षीरवृक्षसमृद्भूतं मालिनीसम्भवं शुभम्।।१७ अपामार्प्रश्च विल्वश्च करवीरं विशेषतः। वर्जियत्वा निषिद्धानि गृहीत्वैकं यथोदितम्।।१८ अपहृत्य दिनं पापं भक्षयित्वा विधानवित्। आचम्य प्रयतोनित्यं स्नानं प्रातः समाचरेत् ॥१६ नोत्पाद्येइत्तकाष्ठमङ्कुल्या धावयेत् कचित्। प्रक्षाल्य भक्त्या तर्जन्या शुची देशे समाहितः॥२० स्नात्वा सन्तर्पयेदेवान् ऋषीन् पितृगणान् क्रमात्। आचम्य मन्त्रवन्नित्यं पुनराचम्य वाग्यतः॥२१ मार्जनं वारुणैर्मन्त्रैरात्मानं सकुशोदकैः। आपोहिष्ठादिव्याहृतिभिः सावित्र्या वारुणेरतथा।।२२ ओङ्कारव्याहृतियुतां गायत्रीं वेद्मातरम्। जप्वा जलाञ्जलि द्याद्वास्करं प्रति तन्मनाः ॥२३ प्राक्तु तेन समासीनो दर्भेषु सुसमाहितः। प्राणायामत्रयं कृत्वा ध्यायेत्सन्ध्यामिति श्रुतिः ॥२४ या सन्ध्या सा जगत्सृष्टिस्थितिसंयमकारिणी। ऐश्वरी तु पराशक्ति स्तत्र यत्र समुद्भवा ॥२४ सवितु मण्डलगतां गायत्रीं वै जपेद्बुधः। प्राङ्गुखः प्रयतो विष्रः सन्ध्योपासन माचरेत्।।२६

सन्ध्याहीनोऽशुचिनित्य मनर्हः सर्वकर्मसु ।
यदन्यत् कुरुते कर्म न तस्य फलमाप्नुयात् ॥२७
अनन्यचेतसो शान्ता ब्राह्मणा वेदपारगाः ।
उपास्य विधिवत्स न्ध्यां प्राप्ताः पूर्वे पराङ्गतिम् ॥२८
योऽन्यतः कुरुते यत्नं धर्मकार्ये द्विजोत्तमः ।
विहाय सन्ध्याप्रणति स याति नरकायुतम् ॥२६
तस्मात्सर्व प्रयत्नेन सन्ध्योपासं समाचरेत् ।
उपासितो भवेत्तेन देवयोगतनुः परः ॥३०
सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशावराम् ।
गायत्रीं वै जपेद्विद्वान् ब्राह्मणः प्रयतः स्थितः ॥३१

इति लघुन्यासस्मृतौ प्रथमोऽध्यायः।

अथ द्वितीयोऽध्यायः। अथ कर्तव्यकर्मविशेषवर्णनम्।

अथागम्य गृहं विप्रः समाचम्य यथाधिधि । अग्निं प्रष्वाल्य विधिवत् जुहुयाज्ञातवेदसम् ॥१ भृत्विक् पुत्रोऽथवा पत्नी शिष्योऽपि च सहोदरः । प्राप्यानुज्ञां विशेषेण जुहुयाद्वा यथाविधि ॥२ पवित्रपाणिः शुद्धात्मा शुद्धाम्बरधरोऽपरः । अनन्यमानसो वह्नौ जुहुयात्संयतेन्द्रियः ॥३ विना दर्भेण यत्कर्भ विना सूत्रेण वा पुनः। नाक्षयस्तद्भवेत्सर्वं नेहासुत्र फलप्रद्म् ॥४ देवतादीन्नमस्कुर्यादुपहारं निवेद्येत्। द्चात्पुष्पादिकां स्तेषां वृद्धांश्चेवाभिवाद्वेत् ॥५ गुरुञ्चेवाप्युपासीत हितं तस्य समाचरेत्। वेदाभ्यासस्ततः कुर्यात्प्रयत्नाच्छक्तितो द्विजः ॥६ वेदमध्यापयेच्छिष्यान् धारयेच विपाठयेत्। अपेक्षेत च शास्त्राणि मन्वादीनि द्विजोत्तमाः !। वैदिकान्नियमान्वेदान्वेदाङ्गानि च सर्वशः॥७ उपेयादीश्वरञ्चेव योगक्षेमाथसिद्धये। साघयेद्विविधानयांन् कुटुम्बार्थे तथैव च ॥८ ततो मध्याद्वसमये स्नानार्थं मृद्माहरेत्। पुष्पाक्षतान्कुशिलतान् गोमयं गन्धमेव च ॥६ नदीषु देवखातेषु तटाकेषु सरित्सु च। स्नानं समाचरेत्रित्यं नदीप्रस्रवणेषु च ॥१० परकीयनिपानेषु न स्नायाद्वे कदाचन। पञ्च पिण्डान् समुद्भृत्य स्नायाद्वा सम्भवात् पुनः ॥११ मृदैकया शिरः क्षालय द्वाभ्यां नाभे स्तथोपरि। अतस्रतस्रभिः कार्यः पादौ षड्भि स्तथैव च ॥१२ मृत्तिका च समाविष्टा त्वाद्रीमलकमात्रतः। गोमयस्य प्रमाणं तत् तेनाङ्गं लेपयेत्ततः ॥१३

लेपयेदथतीरस्थस्ति झेनेव मन्त्रतः। प्रक्षााल्याचम्य विधिवत् ततः स्नायात्समाहितः ॥१४ अभिमन्त्र्य जलर्मन्त्रेरव्लिङ्गवीरुणैः शुभैः। आपो नारायणोद्भूता स्नानेवास्यायनं पुनः ॥१५ तस्मान्नारायणं देवं स्नानकाले स्मरेद्बुधः। प्रोक्ष्यसोङ्कारमादित्यं त्रिनिमञ्जेज्ञलाशये।।१६ आचान्तः पुनराचामेनमन्त्रेणानेन मन्त्रवित्। अन्तश्चरसि भूतेषु गुहायां विश्वतोमुखः ॥१७ त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कार आपोज्योती रसोऽमृतम्। द्विपदां वा त्रिरभ्यस्येद्व्याहृति प्रणवादिकाम्।।१८ सावित्रीं वा जपेद्विद्वान् स्तथैवाप्यघमर्षणम्। ततः सन्मार्जनं कुर्यादापोहिष्टामयोशुवः ॥१६ इद्मापः प्रवहत व्याहृतिभिस्तथैव च। ततोऽभिमन्त्र्य तत्तीर्थमापोहिष्ठादिमन्त्रकैः ॥२० अन्तर्गत जलेमग्ना जपेत् त्रिरघमर्षणम्। द्विपदां वाथ गायत्रीं तद्विष्णोः परमम्पदम्।।२१ आवर्त्त येद्वा प्रणवं देवं वा संस्मरेद्धरिम्। द्विपदोहि परो मन्त्रो यजुर्वेदे प्रतिष्ठितः ॥२२ अन्तर्जलात्त्रिरावृत्या सर्वपापैः प्रमुच्यते । आपः पाणौ समादाय जप्त्वा वा मार्जने कृते।।२३ विन्यस्य मूर्धिन तत्तोयं सर्वपापैः प्रमुच्यते। यथाश्वमेधः क्रतुराट् सर्वपाप प्रणोदनः ॥२४

तथाघमर्षणं सूर्कं सर्वपाप प्रणोदनम्। अथोपतिष्ठेतादित्य मूर्ध्वं पुष्पाञ्जलान्वितम् ॥२५ प्रक्षिप्य देवमादित्यं भृग्यजुः सामरूपिणम्। उदित्यश्चित्रमित्येतत् तचक्षुरितिमन्त्रतः ॥२६ हंसः शुचिषु इत्येतत्साविज्या च विशेषतः। अन्यैश्च वैदिकेर्मन्त्रीः सर्वपाप प्रणाशनैः ॥२७ सावित्रीं वै जपेत्पश्चाज्जपयज्ञः प्रकीर्तितः । विविधानि पवित्राणि गुह्यविद्यास्तथैव च ॥२८ तिष्ठन् तदेक्षमाणोऽकं जपं कुर्यात्समाहितः। आसीनः प्राङ्मुखो नित्यं जपं कुर्याद्यथाविधि ॥२६ स्फटिकेन्द्राक्षपद्माक्षैः पत्र दीप कुरुक्षकैः। कर्तव्या त्वक्षमाला स्यात् विशिष्टाः चोत्तरोत्तरा ॥३० जपकाले न भाषेत नाङ्गानि चालयेत्तथा। न कम्पयेच्छिरोघीवां दन्तान्वै न प्रकाशयेत्।।३१ गुद्यका राक्षसाः सिद्धा हरन्ति प्रसमं हि तत्। एकान्ते तु शुची देशे तस्माज्जप्यं समाचरेत्।।३२ चण्डालाशुद्वपतितान् दृष्ट्याचम्य पुनर्जपेत् । आचम्य प्रयतो नित्यं जपेद्शुचिद्रश्ने ॥३३ सौरान्मन्त्रान्यथोत्साहं पावमानांश्च शक्तितः। आचम्य च यथाशास्त्रं शत्तया स्वाध्यायमाचरेत् ॥३४ ततः सन्तर्पयेद्वान् ऋषीन् पितृगणान् क्रमात्। आदी ॐकार मुच्यार्य नाम्नोऽन्ते तर्पयामि च ॥३५

देवान् ब्रह्मऋषींश्चेव तर्पयेदश्वतोद्कैः। पितृन् तिलोद्कैश्चैव विधिना तर्पयेद्बुधः ॥३६ अपसब्येन सब्येन पाणिना दक्षिणेन तु। देवर्षीं स्तर्पयेद्धीमानुदकाञ्जलिभिः पितृन् ॥३७ यज्ञोपवीती देवानां निवीति ऋषितर्पणे। प्राचीनावीति पित्रयेषु स्वेन तीर्थेन भाषितम्।।३८ निष्पीडचव तु वस्त्रश्व समाचम्य यथाविधि। येर्मन्त्रेरर्चयेर्देवान् पुष्पैः पत्रौस्तथाम्बुभिः ॥३६ ब्रह्माणं शङ्करं सूर्यन्तथेव मधुसूदनम् । अन्यांश्चाभिमतान् देवान् पूजयेद्भक्तितो द्विजः ॥४० प्रदद्याद्वाथ पुष्पाणि विन्यसेच पृथक् पृथक् । न विष्ण्वाराधनात् पुण्यं विद्यते कर्म वैदिकम् ॥४१ तस्मादनादिमध्यान्तं नित्यमाराधयेद्धरिम्। तद्विष्णोरितिमन्त्रेण सूक्तेनापौरुषेण च ॥४२ नैताभ्यां सदृशो मन्त्रो वेदेषूक्तश्चतुर्विप । निवेद्यित्वा चात्मानं विमलन्तत्र तेजसि ॥४३ तदात्मा तन्मनः शान्तः तद्विष्णोरितिमन्त्रतः। अथवा देवमीशान्भगवन्तं सनातनम् ॥४४ आराधयेन्महेशानं महादेवं महेश्वरम्। मन्त्रेण रुद्रगायच्या प्रणवेनाथ वा पुनः ॥४५ ईशाने नाथ वा रुद्रैस्त्र्यम्बकेन समाहितः। पुष्पैः पत्रैरथाद्भिर्वा चन्दनाद्येहेश्वरम् ॥४६

अथोनमः शिवायेति मन्त्रेणानेन वाचयेत्। नमस्कुर्यान्महादेव ममृतं परमेश्वरम् ॥४७ निवेद्यित्वा स्वात्मानं यो ब्रह्माणमतःपरम्। प्रदक्षिणन्ततः कुर्यात्ततो ब्रह्माणि वै जपेत् ॥४८ ध्यायेत देवमीशानं व्योममध्यगतं शुभम्। अथवालोकयेदकं हंसः शुचिषदित्यृचा ॥४६ कुर्यात् पश्वमहायज्ञान् गृहङ्गत्वा समाहितः। देवयज्ञं पितृयज्ञम्भूतयज्ञन्तथैव च ॥५० म्तुष्यं ब्रह्मयज्ञश्व पञ्चयज्ञान् प्रचक्षते । यदि स्यात्तर्पणाद्वांक् ब्रह्मयज्ञः कृतो न हि। कृत्वामनुष्य यज्ञं हि ततः स्वाध्याय मारभेत्।।५१ अग्नेः पश्चिमतो देशे भूतयज्ञान्तरेऽथवा । कुशपूर्तेः समासीनं कुशपाणिः समाहितः ॥५२ श्रीताग्नी लौकिकेचापि जले भूम्या मथापिवा। वश्वदेवश्च कर्त्तव्यो वेदयज्ञः स संस्कृतः ॥५३ यदि स्याङ्गीकिके पक्वं तदन्नं तत्र हूयते। शालाग्नौ तत्रचेदग्नौ विधिरेषः सनातनः ॥५४ देवेभ्यश्च हुताद्भाच्छेषाद्भूत वर्लि हरेत्। श्वभ्यश्च श्वपद्भ्यश्च पतितिदिभ्य एव च ॥५५ द्याद्भृमा भूत बलिं किमिभ्योऽथ द्विजोत्तमः। सायन्तनस्य सिद्धस्य पक्तमन्नं बिं हरेत्।।४६

वैश्वदेवं विनार्थेन सायम्प्रातर्विधीयते। एकन्तु भोजयेद्विप्रं पितृनुहिश्य यत्सदा ॥५७ नित्यश्राद्धं तदुद्दिष्टं पितृयज्ञो गतिप्रदः। उदुभृत्य वाथवाशक्तः किश्विदन्नं समाहितः ॥५८ वेदार्थ तत्व विदुषे द्विजाये वोप पाद्येत्। पूजयेश्वासनं नित्यं नमस्येदचयेश्व तम् ॥५६ मनोवाक्कमभिः शान्तमागतं स्व गृहं गतम्। हन्तकार मथार्य वा भिक्षां वा शक्तितो द्विजः ॥६० दद्याद्तिथये नित्यं बुध्येत परमेश्वरम्। भिक्षामाहुर्यासमात्रमयं तस्य चतुष्टयम् ॥६१ पुष्कलं हन्तकारस्यात्तचतुर्गुण मुत्तमम्। गोदोह कालमात्रं वै प्रतीक्ष्यं ह्य तिथि स्वयम् ॥६२ अभ्यागतान्यथाशक्ति भोजयेद्तिथिं सदा। आदत्वा देवता भूत भृता तिथि पितृष्वपि ॥६३ भुञ्जीत चेत्समूढात्मातिर्यग्योनिश्व गच्छति। वेदाभ्यासोऽन्वहंशत्तया महायज्ञक्रिया क्रमाः ॥६४ नाशयन्याशु पापानि वेदानामर्चनं तथा। यो मोहादथवा लोभादकृत्वा देवतार्चनम् ॥६४ भुङ्क्ते स यानि नरकान् शूकरेष्वभिजायते। तस्मात्सर्व प्रयत्नेन कृत्वा कर्माणि वै शनैः ॥६६ भुञ्जीत स्वजनैः सार्धं स याति परमाङ्गतिम्। प्राङ्मुखोऽन्नानि भुञ्जीत सूर्याभिमुख एव वा।

आयुष्यं प्राङ्मुखो भुङ्क्ते यशस्यं दक्षिणामुखः। श्रियं प्रत्यङ्मुखोभुङ्क्ते भृणं भुङ्क्ते उदङ्मुखः ॥६७ आसीनस्त्वासनेशुद्धे भूम्यां पादौ निधाय च। उपवासेन तत्तुल्यं मनुराह प्रजापतिः ॥६८ पञ्चाद्रीभोजनं कुर्यात् भूम्यां पादौ निधाय च। उपलिप्त शुचौ देशे पादौ प्रक्षाल्य वै करौ।।६९ आर्द्रवागाननोभूत्वा पञ्चाद्रीभोजनञ्चरेत्। महाव्याहृतिभिश्चान्नं परिधायोद्केन तु ॥७० अमृतोपस्तरणमसीत्यापोशनिकयाभ्वरेत्। स्वाहा प्रणवसंयुक्तं प्राणायान्नाहुति ततः ॥७१ अपानाय ततोहुत्वा व्यानाय तद्नन्तरम्। उदानाय ततोहुत्वा समानायेति पञ्चमम्।।७२ विज्ञाय चार्थमेतेषां जुहुयादात्मवान् द्विजः। शेषमन्नं यथाकामं भुङ्जीत व्यञ्जनैयुंतम्।।७३ ध्वात्वा तन्मनसा देवमात्मानं वै प्रजापतिम्। अमृतापिधानमसीत्युपरिष्टाज्जलं पिबेत्।।७४ आचम्याङ्गुष्टमात्रेण पादाङ्गुष्ठे तु दक्षिणे । निधापयेद्धस्तजल मूर्ध्वहस्तः समाहितः ॥७४ हुत्वानुमन्त्रणं कुर्य्याच्छ्रद्वायामिति मन्त्रतः। अथाक्षरेण स्वात्मानं योजयेत् ब्रह्मणेति हि ॥७६ सर्वेषामेव योगानामात्मयोगः परं स्मृतः। योगेन विधिना कुर्यात् स याति ब्रह्मणः पद्म् ॥७७

यज्ञोपवीती भुञ्जीत सुगन्धालङ्कृतोत्तरम्। सायम्प्रात(दिवारात्र्युपलक्षणं)स्तु भुञ्जीत विशेषेण समाहितम् ॥७८ नाचात्मूर्य्यप्रहात्पूर्व महिसायं शशिप्रहात्। याहकाले च नारनीयात् स्नात्वाश्नीयात्प्रमुक्तयोः ॥**७**६ अमुक्तयोरस्तगयोरचाद्दष्टा परेऽहनि। नाश्नीयात्प्रेक्षमाणाना मप्रदायापि दुर्गतः ॥८० न यज्ञशिष्टाद्न्यत्वात्कुलो मान्यो ममातुरः। आत्मार्थ भोजनं यस्य सुर्खार्थ यस्य मैथुनम्।।८१ वृत्त्यथं यस्य चाधीतं निष्फलं तस्य जीवितम्। यो भुङ्क्ते वेष्टितशिरा यस्तु भुङ्क्ते विदिङ्मुखः॥८२ सोपानत्कश्च यो भुङ्क्ते सर्वं विद्यात्तदासुरम्। नार्धरात्रे न मध्याह्वे नाजीर्णे नार्द्रवस्त्रधृक्।।८३ न च भिन्नासनगतो न शयान स्थितोऽपि वा। नोपानत्पादुकी चापि न च संविल्पन्नपि ॥८४ भृङ्क्ते गुलमास्थाय तदन्नं परिणामयेत्। इतिहास पुराणाभ्यां वेदार्थ मुपवृ हयेत्।।८५ ततः सन्ध्या मुपासीत पूर्वोक्त विधिना द्विजः। आसीनस्तु जपेदेवीं गायत्रीं पश्चिमाम्प्रति ॥८६ नानुतिष्ठति यः पूर्वामुपास्ते न च पश्चिमाम्। म शूद्रेण समोलोके सर्वकर्म विगर्हितः।।८७

हुत्वाग्नी विधिवन्म है भूत्तवा यज्ञावशिष्टकम्।

विस्रुच्य वान्धवजनं शपेच्छुष्कपदो निशि ।
नोत्तराभि मुखः सुप्यात् पश्चिमाभिमुखो न च ।।८८
अवाङ्मुखो न नग्नो वा न च भिन्नासने कचित् ।
न भग्नायान्तु खट्टायां शून्यागारे तथैव च ।।८६
इत्येव मिखलं श्रोक्त महन्यहनि वे पुरा ।
ब्राह्मणोक्तं कृत्यजात मपवर्ग फलप्रदम् ।।६०
नास्तिक्याद्थवालस्यात् ब्राह्मणो न करोति यः ।
स याति नरकान् घोरान् शूकरेष्वभि जायते ।।६१
नान्यो विमुक्तये पन्था मुक्काप्रमधिकं स्वकम् ।
तस्मात्सर्व्वाणि भूतानि मुक्तये परमेष्टिनः ।।६२

लघुव्यासस्मृतौ द्वितीयोऽध्यायः । इति लघुव्याससंहिता समाप्ता । ॐ तत्सत ।

॥ अथ ॥

॥ (वेद) व्यासस्मृतिः॥

—\$:\$:\$—

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

...00...

॥ प्रथमोऽध्यायः ॥

अथ धर्माचरणादेशप्रयुक्त-वर्ण-षोडशसंस्कारवर्णनम् ।
वाराणस्यां सुखासीनं वेद्व्यासं तपोनिधिम् ।
पप्रच्छुर्मुनयोऽभ्येत्य धर्मान् वर्णव्यवस्थितान् ॥१
स पृष्टः स्मृतिमान् स्मृत्वा स्मृति वेदार्थगिभिताम् ।
उवाचाथ प्रसन्नात्मा मुनयः श्रूयता मिति ॥२
यत्र यत्र स्वभावेन कृष्णसारो मृगः सदा ।
चरते तत्र वेदोक्तो धर्मो भिवतु मर्हति ॥३
श्रुतिस्मृतिपुराणानां विरोधो यत्र दृश्यते ।
तत्र श्रौतं प्रमाणन्तु तयोद्धैधे स्मृतिर्वरा ॥४
ब्राह्मणःक्षत्रियोवैश्यस्त्रयो वर्णा द्विज्ञातयः ।
श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तधर्मयोग्यास्तु (ते नराः) नेतरे ॥५
गृद्रोवर्णश्चतुर्थोऽपि वर्णत्वाद्धर्ममहेति ।
वेद्मन्त्रस्वधास्वाहावषट्कारादिभिर्विना ॥६

विप्रविद्वप्रविज्ञासु क्षत्रविज्ञासु विप्रवत्। जातकर्माणि कुर्वीत ततः शूद्रासु शूद्रवत्।।७ वैश्यासु विप्रक्षत्त्राभ्यां ततः शूद्रासु शूद्रवत्। अधमादुत्तमायान्तु जातः शूद्राधमः स्मृतः ॥८ ब्राह्मण्यां शूद्रजनितश्चाण्डालो धर्मवर्जितः। कुमारीसम्भवस्त्वेकः सगोत्रायां द्वितीयकः ॥६ ब्राह्मण्यां शूद्रजनितश्चाण्डालिह्मविधः स्मृतः । वर्द्ध की नापितो गोप आशापः कुम्भकारकः ॥१० वणिक्किरातकायस्थमालाकार कुटुम्बनः। एते चान्ये च वहवः शूद्रा भिन्नः स्वकर्मभिः। चमकारो भटो भिल्लो रजकः पुष्करो नटः। वरटोमेदचण्डालदास(श)स्वपचकोलकाः ।।११ एतेऽन्त्यजाः समाख्याता ये चान्ये च गवाशनाः। एषां सम्भाषणात् स्नानं दुर्शनाद्कवीक्षणम् ॥१२ गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तो जातकर्म च। नामक्रिया निष्क्रमणेऽन्नाशनं वपनिक्रया ॥१३ कर्णवेधो व्रतादेशो वेदारम्भक्रियाविधिः। केशान्तः स्नानमुद्वाहो विवाहाग्निपरिप्रहः ॥१४ त्रेताग्निसंप्रहरचेति संस्काराः षोडश स्मृताः। नवताः कर्णवेधान्ता मन्त्रवर्जं क्रियाः खियाः ॥१५ विवाहो मन्त्रतस्तस्याः शूदस्यामन्त्रतो दश। गर्भाधानं प्रथमतस्त्रतीये मासि पुंसवः ॥१६

सीमन्तश्राष्ट्रमे मासि जाते जातकिया भवेत्। एकादशेऽह्नि नामार्कस्येक्षा मासि चतुर्थके ॥१७ षष्ठे मास्यान्नमश्नीयाचूडाकर्म कुलोचितम्। कृतचूडे च बाले च कर्णवेधो विधीयते।।१८ विप्रो गर्भाष्टमे वर्षे क्षत्त्रमेकादशे तथा । द्वादशे वैश्यजातिस्तु व्रतोपनयनक्रिया ॥१६ तस्य प्राप्तव्रतस्यायं कालः स्यात् द्विगुणाधिकः। वेदव्रतच्युतो व्रात्यः स व्रात्यस्तोममईति ॥२० द्धे जन्मनी द्विजातीनां मातुः स्यात् प्रथमं तयोः। द्वितीयं छन्दसां मातुर्प्रहणाद्विधिवद्गुरोः ॥२१ एवं द्विजातिमापन्नो विमुक्तो बाल्यदोषतः। श्रुतिस्मृतिपुराणानां भवेद्ध्ययनक्षमः ॥२२ उपनीतो गुरुकुले वसेन्नित्यं समाहितः। विभृयादण्डकौपीनोपवीताजिनमेखलाः ॥२३ पुण्येऽह्नि गुर्वनुज्ञातः कृतमन्त्राहुतिक्रियः। स्मृत्वोङ्कारञ्च गायत्रीमारभेद्वेदमादितः ॥२४ शौचाचारविचारार्थं धर्मशास्त्रमपि द्विजः। पठेत गुरुतः सम्यक् कर्म तद्दिष्टमाचरेत्।।२४ ततोऽभिवाद्य स्थविरान् गुरुञ्चेव समाश्रयेत्। स्पाध्यायार्थं तदा यतनः सर्वदा हितमाचरेत्।।२६ नापक्षिप्तोऽपि भाषेत (विरञ्येत) नोब्रजेत्ताडितोऽपि वा। विद्वेषमथ पैशुन्यं हिंसनश्वार्कवीक्षणम् ॥२७

तौर्यत्रिकानृतोन्मादपरिवादानलङ्क्रियाम्। अञ्जनोद्वर्त्तनाद्शैस्नग्विलेपनयोषितः ॥२८ वृथाटनमसन्तोषं ब्रह्मचारी विवर्जयेत्। ईषचिलतमध्याह्र ऽनुज्ञातो गुरुणा स्वयम्।।२६ आलोलुपश्चरेद्भेक्षं व्रतिषूत्तमवृत्तिषु । सद्यो भिक्षान्नमादाय वित्तवत्तदुपस्पृशेत्।।३० कृतमाध्याहिकोऽप्रनीयाद्नुज्ञातो यथाविधि । नाद्यादेकात्रमुच्छिष्टं भुक्तवा चाऽऽचामितामियात्।।३१ नान्यद्भिक्षितमाद्यादापन्नो द्रविणादिकम्। अनिन्दामन्त्रितः श्राद्धे पैत्र्येऽ वाद्गुरुचोदितः ॥३२ एकान्न मप्यविरोधे व्रतानां प्रथमाश्रमी। भुक्तवा गुरुमुपासीत कृत्वा सन्धुक्षणादिकम् ॥३३ समिधोऽप्रावादधीत ततः परिचरेद्गुरुम्। अधीत(शयीत)गुर्वनुज्ञातः प्रह्लश्च(प्रवुद्धः)प्रथमं गुरोः ॥३४ एवमन्वहमभ्यासी ब्रह्मचारी व्रतश्वरेत्। हितोपवादः प्रियवाक् सम्यग्गुवर्थसाधकः ॥३४ नित्यमाराधयेदेनमा समाप्तेः श्रुतियहात्। अनेन विधिनाऽधीतो वेदमन्त्रो द्विजं नयेत्।।३६ शापानुप्रहसामर्थ्यमृषीणाञ्च सलोकताम्। पयोऽमृताभ्यां मधुभिः साज्यैः प्रीणन्ति देवताः ॥३७ तस्माद्हरहर्वेदमनध्यायमृते पठेत्। यदङ्गं तदनध्याये गुरोर्वचनमाचरेत्।।३८

व्यतिक्रमादसम्पूर्णमनहंक्तिराचरेत्।
परत्रेह च तद्ब्रह्म अनधीतमिप द्विजम्।
यस्तूपनयनादेतद्ममुत्योर्त्रतमाचरेत्।।३६
स नैष्ठिको ब्रह्मचारी ब्रह्मसायुज्यमाप्नुयात्।
उपकुर्वाणकोयस्तु द्विजः षिंद्वशवार्षिकः।।४०
केशान्तकर्मणा तत्र यथोक्तचिरतव्रतः।
समाप्य वेदान् वेदौ वा वेदं वा प्रसमं द्विजः।।४१
सनायीत गुर्वनुज्ञातः प्रवृत्तोदितदंक्षिणः।

इति श्रीवेद्व्यासीये धर्मशास्त्रे ब्रह्मचर्याधिकारो नाम प्रथमोऽध्यायः।

॥ द्वितीयोऽध्यायः ॥अथ विवाहविधिवर्णनम् ।

एवं स्नातकतां प्राप्तो द्वितीयाश्रमकाङ्क्षया।
प्रतीक्षेत विवाहाथमनिन्द्यान्वयसम्भवाम्।।१
अरोगादुष्ट्वंशोत्थामग्रुल्कादानदूषिताम्।
सवर्णामसमानार्षाममातृपितृगोत्रजाम्।।२
अनन्यपूर्विकां लद्भीं ग्रुभलक्षणसंयुताम्।
धृताधोवसनां गौरीं विख्यातदशपूरुपाम्।।३
ख्यातनाम्नः पुत्रवतः सदाचारवतः सतः।
दातुमिच्छोदु हितरं प्राप्य धर्मेण चोद्वहेत्।।४

ब्राह्मोद्वाह्विधानेन तद्भावेऽपरो विधिः। द्रातव्येषा सदक्षाय वयोविद्यान्वयादिभिः॥५ पितृतितपतृश्रातृषु पितृव्यज्ञातिमातृषु । पूर्वाभावे परो द्यात् सर्वाभावे स्वयं व्रजेत्।।६ यदि सा दातृवैकल्याद्रजः पश्येत् कुमारिका । भ्रूणह्त्याश्च यावत्यः पतितः स्यात्तद्प्रदः ॥७ तुभ्यं दास्याम्यहमिति ब्रहीच्यामीति यस्तयोः। कृत्वा समयमन्योन्यं भजते न स दण्डभाक्।।८ त्यजन्नदुष्टां दण्ड्यः स्याद्दूषयंश्चाप्यदूषिताम्। तावन दुष्टं दुष्टं च स्वार्थेभ्यो भेद्यंश्च तत्। ऊढायां हि सवर्णायामन्या वा काममुद्रहेत् ॥६ तस्यामुत्पादितः पुत्रो न सवर्णात् प्रहीयते ॥१० उद्वहेत् क्षत्त्रियां विप्रो वैश्याञ्च क्षत्त्रियो विशाम्। न तु शूद्रां द्विजः कश्चित्राधमः पूर्ववर्णजाम् ॥११ नानावर्णासु भार्यासु सवर्णा सहचारिणी। धर्म्या धर्मेषु धर्मिष्ठा ज्येष्ठा तस्य स्वजातिषु ॥१२ पाटितोऽयं द्विजाः पूर्वमेकदेहः स्वयम्भुवा। पतयोऽद्धे न चार्द्धे न पत्न्योऽभूवन्निति श्रुतिः ॥१३ यावन विन्दते जायां तावदृद्धी भवेत् पुमान्। नाद्धं प्रजायते सर्वं प्रजायेतेत्यपि श्रुतिः ॥१४ गुर्वी सा भूष्तिवर्गस्य वोढुं नान्येन शक्यते। यतस्ततोऽन्वहं भूत्वा स्ववशो विभ्रयाच ताम्।।१६

कृतदारोऽमिपत्नीभ्यां कृतवेश्मा गृहं वसेत्। स्वकृत्यं वित्तमासाद्य वैतानाम्नि न हापयेत्।।१६ स्मार्त्तं वैवाहिके वहाँ। श्रौतं वैतानिकाग्निषु। कर्म कुर्यात् प्रतिदिनं विधिवत् प्रीतिपूर्वतः ॥१७ सम्यग्धर्मार्थकामेषु दम्पतिभ्यामहर्निशम्। एकचित्ततया भाव्यं समानव्रतवृत्तितः ॥१८ न पृथग्विद्यते स्त्रीणां त्रिवर्गविधिसाधनम्। भावतो ह्यतिदेशाद्वा इति शास्त्रविधिः परः ॥१६ पत्युः पूर्वं समुत्थाय देहशुद्धि विधाय च । उत्थाप्य शयनाद्यानि कृत्वा वेश्मविशोधनम् ॥२० मार्जनैर्लेपनैः प्राप्य सामिशालं स्वमङ्गनम् । शोधयेदम्रिकार्याणि स्निग्धान्युष्णेन वारिणा ॥२१ प्रोक्षण्येरिति तान्येव यथास्थनं प्रकल्पयेत्। द्वन्द्वपात्राणि सर्वाणि न कदाचिद्वियोजयेत्।।२२ शोधयित्वा तु पात्राणि पूरियत्वा तु धारयेत्। महानसस्य पात्राणि बहिः प्रक्षाल्यं सर्वथा ॥२३ मृद्भिश्च शोधयेचुल्छीं तत्राग्नि विन्यसेत्ततः। समृत्वा नियोगपात्राणि रसांश्च द्रविणानि च ॥२४ कृतपूर्वाह्नकार्या च स्वगुरूनभिवाद्येत्। ताभ्यां भर्तृपितृभ्यां वा भ्रातृमातुलबान्धवैः ॥२४ वस्रालङ्काररत्नानि प्रदत्तान्येव धारयेत्। मनोवाक्समीभः गुद्धा पतिदेशानुवर्तिनी ॥२६

छायेवानुगता स्वच्छा सखीव हितकर्मसु। दासीवाऽऽदिष्टकार्येषु भार्या भर्तुः सदा भवेत्।।२७ ततोऽन्नसाधनं कृत्वा पतये विनिवेद्य तत्। वैश्वदेवकृतैरन्नैभीजनीयांश्च भोजयेत्।।२८ पतिञ्चेतद्नुज्ञाता शिष्टमन्वाद्यमात्मना । भुक्तवा नयेदहःशेषमायव्ययविचिन्तया ॥२**६** पुनः सार्यं पुनः प्रातर्गृह्युद्धं विधाय च ॥३० कृतात्रसाधना साध्वी मुशृशं भोजयेत् पतिम्। नातितृत्या स्वयं भुत्तवा गृहनीतिं विधाय च ॥३१ आस्तीर्य साधुशयनं ततः परिचरेत् पतिम्। सुप्ते पतौ तद्भ्यासे स्वपेत्तद्गतमानसा। अनग्ना चाप्रमत्ता च निष्कामा च जितेन्द्रिया ॥३२ नोचेर्वदेन परुषं न बहून पत्युरियम्। न केनचित् विवदेच अप्रलापविलापिनी ॥३३ नचातिव्ययशीला स्यात्र धर्मार्थविरोधिनी। प्रमादोनमाद्रोषेष्यांवञ्चनञ्चातिमानिताम् ॥३४ पैग्रुन्यहिंसाविद्वेषमहाहङ्कारधूर्त्तताः। नास्तिक्यसाहसस्तेयद्म्भान् साध्वी विवर्जयेत्।।३४ एवं परिचरन्ती सा पति परमदैवतम्। यशः शमिह यात्येव परत्र च सलोकताम्।।३६ योषितो नित्यकर्मोक्तं नैमित्तिकमथोच्यते । रजोद्रशनतोदोषात् सर्वमेव परित्यजेत्।।३७

ऽध्यायः] स्त्रीणां नित्यकर्म, सपातिव्रत रजस्वलाधर्म निरूपणञ्च १६३६

सर्वेरलक्षिता शीघं लज्जिताऽन्तर्गृहे वसेत्। एकाम्बरावृता दीना स्नानालङ्कारवर्जिता ॥३८ मौनिन्यधोमुखी चक्षुष्पाणिपद्भिरचश्चला। अश्नीयात् केवलं भक्तं नक्तं मृण्मयभाजने ॥३६ स्वपेद्भूमावप्रमत्ता क्षपेदेवसहस्त्रयम्। स्नायीत सा त्रिरात्रान्ते सचैलमुदिते रवौ ॥४० विलोक्य भर्त्तुर्वद्नं शुद्धा भवति धर्मतः। कृतशौचा पुनः कर्म पूर्ववच समाचरेत्।।४१ रजोदर्शनतो याः स्यू रात्रयः षोडशर्त्तवः। ततः पुंबीजमाक्षिष्टं शुद्धे क्षेत्रे प्ररोहति ॥४२ चतस्रश्चाऽऽदिमा रात्रीः पर्ववच विवर्जयेत्। गच्छेद्युग्मासु रात्रीषु पौष्णपित्रर्क्षराक्षसान् ॥४३ प्रच्छादितादित्यपथे पुमान् गच्छेत् स्वयोषितः। क्षामाऽलङ्कृद्वाप्नोति पुत्रं पूजितलक्षणम् ॥४४ भृतुकालेऽभिगम्यैवं ब्रह्मचर्ये व्यवस्थितः। गच्छन्नपि यथाकामं ने दुष्टः स्यादनन्यकृत्।।४५ भ्रूणहत्यामवाप्नोति भृतौ भार्यापराङ्मुखः। सा त्ववाप्याऽन्यतो गर्भं त्याज्या भवति पापिनी ॥४६ महापातकदुष्टा च पतिगर्भविनाशिनी । सद्वृत्तचारिणीं पत्नीं त्यत्तवा पतित धर्मतः ॥४७ महापातकदुष्टोऽपि नाप्रतीक्ष्यस्तया पतिः। अगुद्धे क्षयमादूरं स्थितायामनुचिन्तया ॥४८

व्यभिचारेण दुष्टानां पतीनां दर्शनाहते। धिक्ऋतायामवाच्यायामन्यत्र वासयेत् पतिः ॥४६ पुनस्तामार्त्तवस्नातां पूर्ववद् व्यवहारयेत्। धूर्ताध्व धर्मकामध्नीमपुत्रां दीर्घरोगिणीम्।।५० सुदुष्टां व्यसनासक्तामहितामधिवासयेत्। अधिविन्नामपि विभुः स्त्रीणान्तु समतामियात्।।५१ विवर्णा दीनवद्ना देहसंस्कारवर्जिता। पतिव्रता निराहारा शोष्यते प्रोषिते पतौ ॥५२ मृतं भत्तीरमाद्।य ब्राह्मणी वह्निमाविशेत्। जीवन्ती चेत्यक्तकेशा तपसा शोधयेद्वपुः ॥५३ सर्वावस्थासु नारीणां न युक्तं स्याद्रक्षणम्। तदेवानुक्रमात् कार्यं पितृभर्तृसुतादिभिः ॥५४ जाताः सुरक्षिताया ये पुत्रपौत्रप्रपौत्रकाः। ये यजन्ति पितृन् यहौमीक्षप्राप्तिमहोदयः ॥ १४ मृतानामग्निहोत्रेण दाहयेद्विधिपूर्वकम्। दाह्येदविलम्बेन भायांभ्यात्र व्रजेत सा ॥५५

इति श्रीवेदव्यासीये धर्मशास्त्रे स्त्र्यधिकारोनाम द्वितीयोऽध्याय:।

॥ वृतीयोऽध्यायः ॥

अथ सस्नादिविधि पूर्वाह्वकृत्यवर्णनम्। नित्यं नैमित्तिकं काम्यमिति कर्म त्रिधा मतम्। त्रिविधं (कम) तच वक्ष्यामि गृहस्थस्यावधार्यताम् ॥१ यामिन्याः पश्चिमे यामे त्यक्तनिद्रो हरिं स्मरेत्। आलोक्य मङ्गलद्रव्यं कर्माऽऽवश्यकमाचरेत्।।२ कृतशौचो निषेव्याम्नि दन्तान् प्रक्ष्याल्य वारिणा। स्नात्वोपास्य द्विजः सन्ध्यां देवादीश्चेव तर्पयेत् ॥३ जुहोत्यनुदिते भानावित्येक उदिते रवौ । जपेदादित्यदेवत्यान्मन्त्रान्मन्त्रनियोगवित्। वेद्वेदाङ्गशास्त्राणि इतिहासानि चाभ्यसेत्। अध्यापयेच सिच्छिष्यान् सिंहप्रांश्च हिजोत्तमः ॥४ अलब्धं प्रापयेह्नब्ध्वा क्षणमात्रं समापयेत्। समर्थो हि समर्थेन नाविज्ञातः कचिद्रसेत् ॥४ सरित्सरसि वापीषु गर्तप्रस्रवणादिषु । स्नायीत यावदुद्धृत्य पञ्च प्रिण्डानि वारिणा ॥६ तीर्थाभावेऽप्यशक्त्यां वा स्नायात्तोयैः समाहृतैः । गृहाङ्गणगतस्तत्र यावद्म्बरपीडनम्।।७ स्नानमब्दैवतैः कुर्यात् पावनैश्चापि मार्जनम् । मन्त्रैः प्राणांस्त्रिरायम्य सौरैश्चार्कं विलोकयेत् ॥८ तिष्ठन् स्थित्वा तु गायत्रीं ततः स्वाध्यायमारभेत्। भृचाञ्च यजुषां साम्नामथर्वाङ्गिरसामपि ॥६

इतिहासपुराणानां वेदोपनिषदां द्विजः। शत्तया सम्यक् पठेन्नित्यमल्पमप्यासमापनात् ॥१० स यज्ञदानतपसामखिलं फलमाप्नुयात्। वेदेभ्योऽन्यत्र संतुष्टः स विप्रः शूद्रतामियात्। तस्मादहरहर्वेदं द्विजोऽधीयीत वाग्यतः।।११ धर्मशास्त्रेतिहासादि सर्वेषां शक्तितः पठेत्। कुतस्वाध्यायः प्रथमं तर्पयेचाथ देवताः ॥१२ जान्वा च दक्षिणं दभैंः प्रागमैः सयवैस्तिलैः। पुरः क्षिप्तैः करामाभ्यां निर्गतैः प्राङ्मुखो द्विजः। एकैकाञ्जलिदानेन प्रकृतिस्थोपवीतकः।।१३ समजानुद्रयो ब्रह्मसूत्रहार उद्डमुखः। तिर्य्यग्द्भैश्च वामाग्रैर्यवैस्तिलविमिश्रितैः ॥१४ अम्भोभिरूत्तरक्षिप्तः कनिष्ठामूलनिर्गतैः। द्वाभ्यां द्वाभ्यामञ्जलिभ्यां मनुष्यांस्तर्पयेत्ततः ॥१४ दक्षिणाभिमुखः सन्यं जान्वा च द्विगुणैः कुशैः। तिलैर्जलैश्च देशिन्या मूलदर्भाद्विनिःसृतैः ॥१६ दक्षिणांसोपवीतः स्यात् क्रमेणाञ्जलिभिक्षिभिः। सन्तर्पये दिव्यपितृ स्तत्परांश्च पितृन् स्वकान् ॥१७ स्वधा वर्जन्यमानेवसेक इच्छन्ति तर्पणे। द्विजतिजीबत्पितृकोऽत्येतानन्यांश्च तर्पयेत्।। तर्पयेहिन्यपितृँश्च पितृपूर्वान्पितृन्स्वकान् । मारमातामहांस्तद्वत्त्रीनेवं हि त्रिभिस्निभिः। मातामहाश्च येऽप्यन्ये गोत्रिणो दाहवर्जिताः ॥१८ तानेकाञ्जलिदानेन तर्पयेब पृथक् पृथक्। असंस्कृतप्रमीता ये प्रेतसंस्कारवर्जिताः ॥१६

वस्त्रनिष्पीड्नाम्भोभिस्तेषामाप्यायनम्भवेत्। अतर्पितेषु पितृषु वस्नं निष्पीड़येच यः ॥२० निराशाः पितरस्तस्य भवन्ति सुरमानुषैः। पयोदर्भस्वधाकारगोत्रनामतिलैर्भवेत् ॥२१ सुदत्तं तत्पुनस्तेषामेकेनापि वृथा विना। अन्यचित्तेन यहत्तं यहत्तं विधिवर्जितम् ॥२२ अनासनिक्षतेनापि तज्जलं रुधिरायते। एवं सन्तर्पिताः कामैस्तर्पकांस्तर्पयन्ति च ॥२३ ब्रह्मविष्णुशिवादित्यमित्रावरुणनामभिः । पूजयेह्रस्थितैर्मन्त्रौजेलमन्त्रोक्तदेवताः ॥२४ उपस्थाय रवेः काष्ठां पूजियत्वा च देवताः। ब्रह्माग्नीन्द्रौषधीजीवविष्णुनामहतांहसाम् ॥२५ अपां यत्तेति सत्कायं नमस्कारैः स्वनामभिः। कृत्वा मुखं समालभ्य स्नानमेवं समाचरेत्।।२६ ततः प्रविश्य भवनमावसथ्ये हुताशने। पाकयज्ञाश्च चतुरो विदध्याद्विधिवद् द्विजः ॥२७ अनाहितावसथ्याग्निरादायात्रं घृतप्छुतम्। शाकलेन विधानेन जुहुयां हो किकेऽनले ॥२८ व्यस्ताभिव्याहृतीभिश्च समस्ताभिस्ततः परम्। षड्भिर्देवकुतस्येति मन्त्रवद्भिर्यथाक्रमम् ॥२६ प्राजापत्यं स्विष्टकृतं हुत्वैवं द्वादशाऽऽहुतीः । ओङ्कारपूर्वः स्वाहान्तस्त्यागः स्विष्टविधानतः ॥३० भुविदर्भान् समास्तीर्थ्य बलिकमे समाचरेत्। विश्वेभ्योदेवेभ्य इति सर्वेभ्यो भूतेभ्य एव च ॥३१

भूतानां पतये चेति नमस्कारेण शास्त्रवित्। दद्याद्वलित्रयञ्चाप्रे पितृभ्यश्च स्वधा नमः ॥३२ पात्रनिर्णेजनं वारि वायव्यां दिशि निःक्षिपेत्। उद्भृत्य षोड्शयासमात्रमन्नं घृतोक्षितम्। इद्मन्नं मनुष्येभ्यो हन्तेत्युत्तवा समुत्सृजेत्। गोत्रनामस्वधाकारैः पितृभ्यश्चापि शक्तितः ॥३३ षड्भ्योऽन्नमन्वहं दद्यात् पितृयज्ञविधानतः। वेदादीनां पठेत् कि चिद्रह्पं ब्रह्मस्वाप्तये ॥३४ ततोऽन्यद्न्रमादाय निर्गत्य भवनाद्वहिः। काकेभ्यः श्वपचेभ्यश्च प्रक्षिपेद्वासमेव च ॥३४ उपविश्य गृहद्वारि तिष्ठेद्यावन्मुदूर्तकम्। अप्रमुक्तोऽतिथिं लिप्सुर्भावशुद्धः प्रतीक्षकः ॥३६ आगतं दूरतः (श्रान्ते) शान्तं भोक्तुकाममकिञ्चनम्। दृष्ट्रा संमुखमभ्येत्य सत्ऋत्य प्रश्रयाचेनैः॥३७ पाद्धावनसम्मानाभ्यञ्जनादिभिरर्चितः। त्रिद्वं प्रापयेत्सद्यो यज्ञस्याभ्यधिकोऽतिथिः ॥३८ कालागतोऽतिथिईष्टवेदपारो गृहागतः। द्वावेती पृजिती स्वर्गे नयतोऽधस्त्वपृजिती। विवासस्रातकक्ष्माभृदाचार्यसहहत्वजः ॥३६ अर्घ्या भवन्ति धर्मेण प्रतिवर्षं गृहागताः । गृहागताय सत्कृत्य श्रोत्रियाय यथाविधि ॥४०

भत्तयोपकल्पयेदेकं महाभागं विसर्जयेत् , विसर्जयेद्नुव्रज्य सुतृप्तश्रोत्रियातिथीन्। मित्रमातुलसम्बन्धिवान्धवान् समुपागतान् ॥४१ भोजयेद् गृहिणो भिक्षां सत्कृतां भिक्षुकोऽर्हति। स्वाद्रन्नमश्ननन्नस्वादु ददद्गच्छत्यधोगतिम् ॥४२ गर्भिण्यातुरभृत्येषु बालवृद्धातुरादिषु। बुभुक्षितेषु भुञ्जाने गृहस्थोऽश्नाति किल्विषम् ॥४३ नाद्याद्गृध्येत्र पाकान्नं कदाचिद्निमन्त्रितः। निमन्त्रितोऽपि निन्दोन प्रत्याख्यानं द्विजोऽईति ॥४४ क्षुद्राभिशस्तवार्धुष्यवाग्दुष्टक्रूरतस्कराः। क्रुद्धापबिद्धबद्धोप्रवधबन्धनजीविनः ॥४५ शैलूषशौण्डिकोन्नद्धोन्मत्तव्रात्यवत्तच्युताः। नम्नास्तिकनिर्द्धं पिशुनव्यसनान्विताः ॥४६ कद्र्य्येक्षीजितानार्य्यपरवादकृता नराः। अनीशाः (अमित्रा)कीर्तिमन्तोऽपि राजदेवस्वहारकाः ॥४७ शयनासनसंसर्गवृत्तकर्मादिदूषिताः। अश्रद्धानाः पतिता भ्रष्टाचारादयश्च ये ॥४८ अभोज्यान्नाः स्युरन्नादो यस्य यः स्यात्स तत्समः। नापितान्वयमित्रार्द्धं सीरिणो दासगोपकाः ॥४६ शूद्राणामप्यमीषान्तु भुत्तवाऽन्नं नैव दुष्यति । धर्मेणान्योन्यभोज्यान्ना द्विजास्तु विदितान्वयाः ॥५०

स्ववृत्त्योपार्जितं मेध्यमकेशकुमिमक्षिकम्। अश्वलीढप्रगोबातमसृष्टं शूद्रवायसैः ॥५१ अनुच्छिष्टमसंदुष्टमपर्युषितमेव च। अम्लानवाष्पमन्नाद्यमद्यान्नित्यं सुसंस्कृतम्।।५२ क्रुसरापूपसंयावपायसं शष्कुलीति च । नाश्नीयाद् ब्राह्मणो मांसमनियुक्तः कथञ्बन ॥५३ कतौ श्राद्धे नियुक्तो वा अनश्नन्य पतति द्विजः। मृगयोपार्जितं मांसमभ्यर्च्य पितृदेवताः ॥५४ क्षत्त्रियो द्वादशोनं तत् क्रीत्वा वैश्योऽपि धर्मतः। द्विजोजम्बा वृथामांसं हत्वाऽप्यविधिना पशून् ॥ १४ निरयेष्वक्षयं वासमाप्नोत्याचन्द्रतारकम्। सर्वान् कामान् समासाद्य फलमश्वमखस्य च ॥५६ मुनिसाम्य मवाप्नोति गृहस्थोऽपि द्विजोत्तमः। द्विजभोज्यानि गव्यानि माहिष्याणी पयांसि च ।।५७ निह्रशासन्धिसम्बन्धिवत्सवन्तीपयांसि च। अलावुशिग्रुकवकच्छत्राकलशुनानि च। पलाण्डुश्वेतवृन्ताकरक्तमूलकमेव च ॥५८ गृञ्जनारुणवृक्षासृग्जन्तुगर्भ फलानि च । अकालकुसुमादीनि द्विजोजस्बैन्दवं चरेत्।।४६ वाग्दूषितमविज्ञातमन्यपीडितकार्य्यपि। भूतेभ्योऽन्नमद्स्वा च तदन्नं गृहिणो दहेत्।।६० हैमराजतकांस्येषु पात्रोष्वद्यात् सदा गृही। तद्भावे साधुगन्ध(मेध्य)लोध्रद्रुमलतासु च ॥६१

पलाशपद्मपनोषु गृहस्थो भोक्तुमईति । ब्रह्मचारी यतिश्चैव श्रेयोयद्गोक्तुमहिति ॥६२ अभ्युक्ष्यान्नं नमस्कारेर्भुवि दद्याद्वलित्रयम्। भूपतये भुवः पतये भूतानां पतये तथा ॥६३ अपः प्राश्य ततः पश्चात् पञ्चप्राणाहुतिःक्रमात्। स्वाहाकारेण जुहुयाच्छेषमद्याद्यथासुखम् ॥६४ अनन्यचित्तो भुञ्जीत वाग्यतोऽन्नमकुत्सयन्। आतृत्तेरन्न मश्नीयाद्क्षुण्णां पात्रमुत्सृजेत् ॥६५ उच्छिष्टमन्नमुद्धृत्य प्रासमेकं भुवि क्षिपेत्। आचान्तः साधुसङ्गेन सद्विद्यापठनेन च ॥६६ वृत्तवृद्ध(पुरावृत्त)कथाभिश्चशेषाहमतिवाहयेत्। सायं सन्ध्यामुपासीत हुत्वाऽग्नि भृत्यसंयुतः ॥६७ आपोशानक्रियापूर्वमश्नीयादन्वहं द्विजः। सायमप्यतिथिः पूज्यो होमकालागतो(द्विजः)ऽनिशम् ॥६८ श्रद्धया शक्तितो नित्यं श्रुतं हन्यादपूजितः। नातितृप्त उपस्पृश्य प्रक्षालय चरणौ शुचिः ॥६६ अप्रत्यगुत्तरशिराः शयीत शयने शुभे। शक्तिमानुचिते काले स्नानं सन्ध्यां न हापयेत्।।७० ब्राह्मे मुहूर्त्ते चोत्थाय चिन्तयेद्धितमात्मनः। शक्तिमान् मतिमान् नित्यं वृत्तमेतत् समाचरेत्।।७१ इति वेदव्यासीये धर्मशास्त्रे गृहस्थाहिकोनाम तृतीयोऽध्यायः।

॥ चतुर्थोऽध्यायः॥

अथ गृहस्थाश्रमप्रशंसापूर्वक तीर्थधर्म वर्णनम्।

इति व्यासकृतं शास्त्रं धर्मसारसमुचयम्। आश्रमे यानि पुण्यानि मोक्षधर्माश्रितानि च ॥१ गृहाश्रमात् परो धर्मो नास्ति नास्ति पुनः पुनः। सर्वतीर्थफळं तस्य यथोक्तं यस्तु पालयेत्।।२ गुरुभक्तो भृत्यपोषी द्यावाननुसूयकः । नित्यजापी च होमी च सत्यवादी जितेन्द्रयः ॥३ स्त्रदारे यस्य सन्तोषः परदारनिवर्तनम्। अपवादोऽपि नो यस्य तस्य तीर्थफलं गृहे ।।४ परदारान् परद्रव्यं हरते यो द्विने दिने। सर्व्वतीर्थाभिषेकेण पापं तस्य न नश्यति ॥४ गृहेषु सेवनीयेषु सर्वतीर्थफलं ततः। अन्नद्स्य त्रयो भागाः कर्ता भोगेन लिप्यते ॥६ प्रतिश्रयं पादशौचं त्राह्मणानाश्व तर्पणम्। न पापं संखुशेत्तस्य विंह भिक्षां ददाति यः ॥७ पादोदकं पाद्वृतं दीपमन्नं प्रतिश्रयम्। यो ददाति ब्राह्मणेभ्यो नोपसर्पति तं यमः ॥८ विप्रपादोदकिकलना यावत्तिष्ठति मेदिनी। तावत् पुष्करपात्रेषु पिबन्ति पितरोऽमृतम्।।६

यत्फलं कपिलादाने कार्तिक्यां ज्येष्टपुष्करे। तत्फलं ऋषयः(पाण्डव)श्रेष्ठा विप्राणां पादशौ(ध)चने ॥१० स्वागतेनाग्नयः श्रीता आसनेन शतकतुः। पितरः पादशौचेन अन्नाद्येन प्रजापतिः ॥११ मातापित्रोः परं तीर्थं गङ्गा गावो विशेषतः। ब्राह्मणात् परमं तीर्थं न भूतं न भविष्यति ॥१२ इन्द्रियाणि वशीकृत्य गृह एव वसेन्नरः। तत्र तस्य कुरुक्षेत्रं नैमिषं पुष्कराणि च ॥१३ गङ्गाद्वारञ्च केदारं सन्निहत्यां तथैव च। एतानि सर्वतीर्थानि कृत्वा पापैः प्रमुच्यते ॥१४ वर्णानामाश्रमाणाञ्च चातुर्वर्णस्य (पार्थिव) भो द्विजाः। दानधर्मं प्रवक्ष्यामि यथा व्यासेन भाषितम् ॥१४ यहदाति विशिष्टेभ्यो यचाश्नाति दिने दिने। तच वित्तमहं मन्ये शेषं कस्याभिरक्षति ॥१६ यहदाति यदश्नाति तदेव धनिनो धनम्। अन्ये मृतस्य क्रीडन्ति दारैरपि धनैरपि ॥१७ किं धनेन करिष्यन्ति देहिनोऽपि गतायुषः। यद्वद्वं यितुमिच्छन्तस्तच्छरीरमशाश्वतम्।।१८ अशाश्वतानि गात्राणि विभवो नैव शाश्वतः। नित्यं सन्निहितो मृत्युः कर्तव्यो धर्मसंप्रहः ॥१६ यदि नाम न धर्माय न कामाय न कीर्तये। यत्परित्य ज्य गन्तव्यं तद्धनं किं न दीयते।।२०

जीवन्ति जीविते यस्य विप्रा मित्राणि वान्धवाः। जीवितं सफलं तस्य आत्मार्थे को न जीवति ॥२१ क्रिमयः किं न जीवन्ति भक्षयन्ति परस्परम्। परलोकाविरोधेन यो जीवति स जीवति ॥ पशवोऽपि हि जीवन्ति केवलात्मोद्रम्भराः। किं कायेन सुगुप्तेन (सुपुष्टेन) विलना चिरजीविनः ॥२२ प्रासाद्धेमपि प्रासमर्थिभ्यः किं न दीयते। इच्छ। मुख्यो विभवः कदा कस्य भविष्यति ॥२३ अदाता पुरुषस्यागी धनं संत्यज्य गच्छति । दातारं कृपणं मन्ये मृतोऽप्यथं न मुञ्चिति ॥२४ प्राणनाशस्तु कर्तव्यो यः कृतार्थो न सो (र्थः सनो) ऽमृतः। अकृतार्थस्तु यो मृत्युं प्राप्तः खरसमोहि सः ॥२५ अनाहूतेषु यद्तं यच दत्तमयाचितम्। भविष्यति युगस्यान्तस्तस्यान्तो न भविष्यति ॥२६ मृतवत्सा यथा गौश्च तृष्णा होभेन दुद्यति । परस्परस्य दानानि लोकयात्रा न धर्मतः ॥२७ अदृष्टे चाशुभे (चाश्रुते) दानं भोक्ता चैव न दृश्यते। पुनरागमनं नास्ति तत्र दानमनन्तकम्।।२८ मातापितृषु यद्द्याद् भ्रातृषु श्वशुरेषु च। जायापत्येषु यदद्यात् सोऽनन्तः स्वर्गसंक्रमः ॥२६ पितुः शतगुणं दानं सहस्रं मातुरुच्यते। भगिन्यां शतसाहस्रं सोद्रे दत्तमक्षयम्।।३० इन्दुक्षयः पिता ज्ञेयो माता चैव दिनक्षयः। संक्रान्तिभगिनी चैव व्यतीपातः सहोद्रः॥ अहन्यहिन दातव्यं ब्राह्मणेभ्यो मुनीश्वर। आगमिष्यति यत् पात्रं तत्पात्रं तारयिष्यति ॥३१

Sध्याय:] दानधर्म प्रकरणे सत्पात्रनिरूपण वर्णनम्।

किश्विद्वेदमयं पात्रं किश्वित् पात्रं तपोमयम्। पात्राणामुत्तमं पात्रं शूद्रान्नं यस्य नोद्रे ॥३२ यस्य चैव गृहे मूर्खो दूरे चाऽपि गुणान्वितः। गुणन्विताय दातव्यं नास्ति मूर्खे व्यतिक्रमः ॥३३ देवद्रव्यविनाशेन ब्रह्मस्वहरणेन च। कुलान्यकुलतां यान्ति ब्राह्मणातिक्रमेण च ॥३४ ब्राह्मणातिक्रमो नास्ति विप्रे वेद्विवर्जिते। ज्वलन्तमग्निसुत्सृज्य न हि भस्मनि हूयते ॥३४ सन्निकृष्टमधीयानं त्राह्मणं यो व्यतिक्रमेत्। भोजने चैव दाने च हन्यात्त्रिपुरुषं कुलम्।।३६ यथा काष्ट्रमयो हस्ती यथा चर्ममयो मृगः। यश्च विप्रोऽनधीयानस्वयस्ते नामधारकाः ॥३७ **प्रामस्थानं** यथा शून्यं यथा कूपश्च निर्जलः । यश्च विप्रोऽनधीयानस्त्रयस्ते नामधारकाः ॥३८ ब्राह्मणेषु च यहत्तं यच वेश्वानरे हुतम्। तद्धनं धनमाख्यातं धनं शेषं निरर्थकम् ॥३६ सममन्नाह्मणे दानं द्विगुणं न्नाह्मणनुवे। सहस्रगुणमाचार्ये ह्यनन्तं वेदपारगे ॥४० ब्रह्मबीजसमुत्पन्नो मन्त्रसंस्कारवर्जितः। जातिमात्रोपजीवी च स भवेद् ब्राह्मणः समः ॥४१ गर्भाधानादिभिर्मन्त्रैर्वेदोपनयनेन च। नाध्यापयति नाधीते स भवेद् ब्राह्मणबुवः ॥४२

अग्निहोत्री तपस्वी च वेद्मध्यापयेच यः। सकल्पं सरहस्यश्व तमाचार्यं प्रचक्षते ॥४३ इष्टिभिः पशुबन्धेश्च चातुर्भास्येस्तथैव च। अप्रिष्टोमादिभियं है येन चेष्टं स इ(यि) ष्टवान् ॥४४ मीमांसते च यो वेदान् षड्भिरङ्गैः सविस्तरैः। इतिहासपुराणानि स भवेद्वेदपारगः ॥४४ ब्राह्मणा येन जीवन्ति नान्यो वर्णः कथ्यन । ईहक्पथमुपस्थाय कोऽन्यस्तं त्यक्तुमुत्सहेत्।।४६ ब्राह्मणः स भवेचैव देवानामपि देवतम्। प्रत्यक्षञ्चेव लोकस्य ब्रह्मतेजो हि कारणम् ॥४७ ब्राह्मणस्य मुखं क्षेत्रं निष्ककरमकण्टकम्। वापयेत्तत्र बीजानि सा कृषिः सार्वकासिकी ॥४८ सुक्षेत्रो वापयेद्वीजं सुपात्रो द्रापयेद्धनम्। सुक्षेत्रो च सुपात्रो च क्षिप्तं नैव विदुष्यति ॥४६ विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गृहमागते। क्रीडन्त्योषधयः सर्वा यास्यामः परमां गतिम्।।५० नष्टशीचे व्रतम्रष्टे विप्रे वेदविवर्जिते। दीयमानं रुद्त्यनं भयाद्वे दुष्कृतं कृतम् ॥४१ वेदपूर्णमुखं विप्रं सुभुक्तमि भोजयेत्। नच मूर्वं निराहारं षड्रात्रमुपवासिनम् ॥५२ यानि यस्य पवित्राणि कुक्षौ तिष्ठन्ति भो (भारत)द्विजाः। तानि तस्य प्रयोज्यानि न शरीराणि देहिनाम् ॥५३

यस्य देहे सदाऽरनन्ति हन्यानि त्रिदिवौकसः। कव्यानि चैव पितरः किम्भूतमधिकं ततः ॥५४ यद्भुङ्क्ते वेदविद्विष्टः स्वकर्मनिरतः शुचिः। दातुः फलमसङ्ख्यातं प्रतिजन्म तद्श्यम्।।५५ हस्त्यश्वरथयानानि केचिदिच्छन्ति पण्डिताः। अहं नेष्छामि मुनयः कस्यैताः शस्यसम्पदः ॥५६ वेदलाङ्गलकृष्टेषु द्विजश्रेष्ठेषु सत्सु च। यत्पुरा पातितं बीजं तस्यैताः सस्यसम्पदः ॥५७ शतेषु जायते शूरः सहस्रोषु च पण्डितः ॥ ४८ वक्ता शतसहस्रेषु दाता भवति वा न वा। न रणे विजयाच्छूरोऽध्ययनात्र च पण्डितः ॥५६ न वक्ता वाक्पटुत्वेन न दाता चार्थदानतः। इन्द्रियाणां जये शूरो धर्मं चरति पण्डितः ॥६० हितप्रियोक्तिभिर्वक्ता दाता सम्मानदानतः ॥६१ यद्येकपङ्क्त्यां विषमं ददाति स्नेहाद्भयाद्वा यदि वार्थहेतोः। वेदेषु दृष्टं ऋषिभिश्च गीतम् तद्ब्रह्महत्यां मुनयो वद्नित ॥६२ उषरे वाऽपितं वीजं भिन्नभाण्डेषु गोदुहम्।

उपरे वाऽपितं वीजं भिन्नभाण्डेषु गोदुहम् । हुतं भस्मिन हव्यश्च मूर्खे दानभशाश्वतम् ॥६३ मृतसृतकपुष्टाङ्गो द्विजः शूद्रान्नभोजने । अहमेवं न जानामि कां योनि स गमिष्यति ॥६४ शूद्रान्नेनोदरस्थेन यदि कश्चिन्मियेत यः । स भवेत्च्छूकरो नूनं तस्य वा जायते कुळम् ॥६४ गृध्रो द्वादश जन्मानि सप्त जन्मानि शूकरः।
श्वा चैव सप्त जन्मानि इत्येवं मनुरत्रवीत्।
अमृतं ब्राह्मणान्नेन दारिद्रं क्षत्रियस्य च ॥६६
वेश्यान्नेन तु शूद्रत्वं शूद्रान्नान्नरकं ब्रजेत्।
यश्च भुङ्केऽथ शूद्रान्नं मासमेकं निरन्तरम् ॥६७
इह जन्मनि शूद्रत्वं मृतः श्वा चैव जायते।
यस्य शूद्रा पचेन्नित्यं शूद्रो वा गृहमेधिनी ॥६८
वर्जितः पितृदेवस्तु रौरवं याति स द्विजः।
भाण्डसङ्करसङ्कीणां नानासङ्करसङ्कराः॥६६
योनिसङ्करसङ्कीणां निरयं यान्ति मानवाः।
पङ्किमेदी वृथापाकी नित्यं ब्राह्मणनिन्दकः॥७०
आदेशी वेदविकता पञ्चते ब्रह्मघातकाः॥७१
इदं व्यासमतं नित्यमध्येतव्यं प्रयत्नतः।
एतदुक्ताचारवतः पतनं नव विद्यते॥७२

इति श्रीवेदव्यासीये धर्मशास्त्रे गृहस्थाश्रमप्रशंसादिवर्णनो नाम चतुर्थीऽध्यायः।

समाप्ता चेयं व्यासस्मृतिः।

ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः।

॥ अथ ॥

॥ देवलस्मृतिः॥

---:8::8:----

श्रीगणेशाय नमः।

अथ प्रायश्चित्तवर्णनम्।

सिन्धुतीरे सुखासीनं देवलं सुनिसत्तमम्। समेत्य मुनयः सर्वे इदं वचनमत्रुवन्।।१ भगवन्म्लेच्छनीता हि कथं शुद्धिमवाप्नुयुः। ब्राह्मणाः क्षत्त्रिया वैश्याः शूद्राश्चेवानुपूर्वशः।।२ कथं स्नानं कथं शौचं प्रायश्चित्तं कथं भवेत्। किमाचारा भवेयुस्ते तदाचक्ष्व सविस्तरम्।।३

देवल उवाच—

त्रिशङ्कं वर्जयेदेशं सर्वं द्वादशयोजनम् । उत्तरेण महानद्या दक्षिणेन तु कीकटम् ॥४ प्रायक्षित्तं प्रवक्ष्यामि विस्तरेण महर्षयः ॥४

षृतसूते तु दासीनां पत्नीनां चानुलोमिनाम्। स्वामितुल्यं भवेच्बौचं मृते स्वामिनि यौनिकम् ॥६ अपेयं येन संपीतमभक्ष्यं चापि भक्षितम्। म्हेच्छेनीतेन विप्रेण अगम्यागसनं कृतम्।।७ तस्य शुद्धि प्रवक्ष्यामि यावदेकं तु वत्सरम्। चान्द्रायणं तु विप्रस्य सपराकं प्रकीर्तितम्।।८ पराक्रमेकं क्षत्त्रस्य पादकुच्छ्रेण संयुतम्। पराकार्धं तु वैश्यस्य शूद्रस्य दिनपञ्चकम्।।६ नखलोमविहीनानां प्रायश्चित्तं प्रदापयेत्। चतुर्णामपि वर्णानामन्यथाऽशुद्धिरस्ति हि ॥१० प्रायश्चित्तविहीनं तु यदा तेषां कलेवरम्। कर्तव्यस्तत्र संस्कारो मेखलादण्डवर्जितः ॥११ म्लेच्छेनीतेन शुद्रैवा हारिते दण्डमेखले। संस्कारप्रमुक्षं तस्य सर्वं कार्यं यथाविधि ॥१२ संस्कारान्ते च विप्राणां दानं घेनुश्च दक्षिणा। दातव्यं शुद्धमिच्छद्धिरश्वगोभूमिकाञ्चनम्।।१३ तदाऽसी तु कुटुम्बानां पङ्क्ति प्राप्नोति नान्यथा। स्वभायां च यथान्यायं गच्छन्नेव विद्युध्यति ॥१४ अथ संवत्सरादृष्वं म्लेच्छेनीतो यदा भवेत्। प्रायश्चित्ते तु संचीर्णे गङ्गास्नानेन शुःयति ॥१५ सिन्धुसौवीरसौराष्ट्रं तथा प्रयन्तवासिनः। किञ्जकोङ्कणान्यङ्गान्गत्वा संस्कारमईति ॥१६

बलाहासीकृता ये च म्लेन्ज्ञचाण्डालद्स्युभिः। अशुभं कारिताः कर्म गवादिप्राणिहिंसनम्।।१७ उच्छिष्टमार्जनं चव तथा तस्यैव भोजनम्। खरोष्ट्रविड्वराहाणामामिषस्य च भक्षणम् ॥१८ तत्वीणां च तथा सङ्गं ताभिश्व सह भोजनम्। मासोषिते द्विजातौ तु प्राजापत्यं विशोधनम्।।१९ चान्द्रायणं त्वाहिताग्नेः पराकस्त्वथ वा भवेत्। चान्द्रायणं पराकं च चरेत्संवत्सरोषितः ॥२० संवत्सरोषितः शूद्रो मासार्धं यावकं पिबेत्। मासमात्रोषितः शूद्रः कुच्छ्रपादेन शुध्यति ॥२१ ऊर्ध्वं संवत्सरात्कल्प्यं प्रायश्चित्तं द्विजोत्तमैः। संवत्सरैश्रतुर्भिश्च तद्भावमधिगच्छति ॥२२ ह्रासो न विद्यते यस्य प्रायिश्चतं दुरात्मनः। गुह्यकक्षशिरोभ्रूणां कर्तव्यं केशवापनम्।।२३ प्रायश्चित्तं समारभ्य प्रायश्चित्तं तु कारयेत्। स्नानं त्रिकालं कुर्वीत धौतवासा जितेन्द्रियः ॥२४ कुशहस्तः सत्यवक्ता देवलेन ह्युदाहृतम्। वत्सरं वत्सरार्धं वा मासं मासार्धमेव वा ॥२४ बलान्ग्लेच्छैस्तु यो नीतस्तस्य शुद्धिस्तु को हशी। संवत्सरोषिते शूद्रे शुद्धिश्चान्द्रायणेन तु ॥२६ पराकं वत्सरार्धे च पराकार्धं त्रिमासिके । मासिके पादकुच्छ्रश्च नखरोमविवर्जितः ॥२७

पादोनं क्षत्त्रियस्योक्तमधं वैश्यस्य दापयेत्। प्रायितं द्विजस्योक्तं पादं शूद्रस्य दापयेत्।।२८ प्रायश्चित्तावसाने तु दोग्धी गौर्दक्षिणा मता। तथाऽसौ तु कुटुबान्ते ह्युपविष्टो न दुष्यति ॥२६ अशीतिर्यस्य वर्षाणि बालो वाऽप्यूनषोडशः। प्रायश्चित्तार्धमईन्ति खियो रोगिण एव च ॥३० **ऊनैकादशवर्षस्य पश्चवर्षात्परस्य च**। प्रायश्चित्तं चरेद्भाता पिता वाऽन्योऽपि वर्धिता ॥३१ स्वयं व्रतं चरेत्सर्वमन्यथा नैव शुध्यति। तिलहोमं प्रकुर्वीत जपं कुर्यादतिनद्रतः ॥३२ संलापस्पर्शनिःश्वाससहयानासनाशनात्। याजनाध्यापनाद्योनात्पापं संक्रमते नृणाम् ॥३३ याजनं योनिसंबन्धं स्वाध्यायं सहभोजनम्। कृत्वा सद्यः पतत्येव पतितेन न संशयः ॥३४ संवत्सरेण पतित पतितेन सहाऽऽचरन्। याजनासनयज्ञादि कुर्वाणः साबैकामिकम् ॥३५ अतः परं प्रवक्ष्यामि प्रायश्चित्तमिदं शुभम्। स्त्रीणां म्लेच्लेश्च नीतानां वलात्संवेशने कचित्।।३६ ब्राह्मणी क्षत्त्रिया वैश्या शूद्रा नीता यदाऽन्त्यजैः। ब्राह्मण्याः कीदृशं न्याय्यं प्रायश्चित्तं विधीयते ॥३७ ब्राह्मणी भोजयेन्स्लेच्छ्रमभक्ष्यं भक्षयेद्यदि । पराकेण ततः शुद्धिः पादेनोत्तरतोत्तरान् (दानेनोत्तरोत्तरा) न कृतं मैथुनं ताभिरभक्ष्यं नैव भक्षितम्। शुद्धिस्तदा त्रिराजेण म्लेच्झान्नेनेव अक्षिते ॥३६ रजस्वला यदा सृष्टा म्लेच्छेनान्येन वा पुनः। त्रिरात्रमुषिता स्नात्वा पञ्चगव्येन शुध्यति ॥४० सृष्ट्रा रजस्वलाऽन्योन्यं ब्राह्मणी क्षत्त्रिया तथा। त्रिरात्रेण विशुद्धिः स्याद्देवलस्य वचो यथा ॥४१ स्तृष्ट्रा रजस्वलाऽन्योन्यं ब्राह्मणी शुद्रजा तथा। पश्चरात्रं निराहारा पश्चगव्येन शुध्यति ॥४२ ब्राह्मण्यनशनं कुर्यात्क्षत्त्रिया स्नानमाचरेत्। सचैलं वैश्यजातीनां नक्तं शूद्रे विनिर्दिशेत्।।४३ म्लेच्छान्नं म्लेच्छसंस्पर्शो म्लेच्छन सह संस्थितिः। वत्सरं वत्सरादृध्वं त्रिरात्रेण विशुध्यति ॥४४ म्लेच्छेर्ह् तानां चौरैर्वा कान्तारेषु प्रवासिनाम्। भुक्तवा भक्ष्यमभक्ष्यं वा क्षुधार्तेन भयेन वा ॥४४ पुनः प्राप्य स्वकं देशं चातुर्वर्ण्यस्य निष्क्रतिः। कुच्छ्मेकं चरेद्विप्रस्तद्धं क्षत्त्रियश्चरेत्। पादोनं च चरेद्वैश्यः शूद्रः पादेन शुष्यति ॥४६ गृहीता स्त्री बलादेव म्लेच्डेगुंवींकृता यदि । गुर्वी न शुद्धिमाप्नोति त्रिरात्रेणेतरा शुचिः ॥४७ योषा गर्भ विधत्ते या म्लेच्छात्कामाद्कामतः। ब्राह्मणी क्षत्त्रिया वैश्या शूद्रा वर्णेतरा च या ॥४८

अअक्ष्यभक्षणं कुर्यात्तस्याः शुद्धिः कथं भवेत्। कुच्छूं सांतपनं शुद्धिचृ तैयोंनेश्च पाचनम् ॥४६ असवर्णेन यो गर्भः स्त्रीणां योनौ निषच्यते । अशुद्धा सा भवेन्नारी यावच्छस्यं न सुञ्चति ॥५० विनिःसृते ततः शल्ये रजसो वाऽपि दशंने। तदा सा शुभ्यते नारी विमलं काञ्चनं यथा ॥ ११ स गर्भी दीयतेऽन्यस्मै स्वयं श्राह्यो न किहिचित्। स्वजातौ वजयेद्यस्मात्संकरः स्यादतोऽन्यथा ॥५२ गृहीतो यो बलान्म्लेच्छैः पञ्च षट् सप्त वा समाः। द्शादि विंशतिं यावत्तस्य शुद्धिर्विधीयते ॥५३ प्राजापत्यद्वयं तस्य शुद्धिरेषा विधीयते । अतः परं नास्ति शुद्धिः क्रच्छ्मेव सहोषिते ॥५४ म्लेच्छै: सहोषितो यस्तु पञ्चप्रभृति विंशतिः। वर्षाणि शुद्धिरेषोक्ता तस्य चान्द्रायणद्वयम् ॥५५ कक्षागुद्यशिरःश्मश्रुभ्रू लोमपरिकृन्तनम्। प्राहृत्य पाणिपादानां नखलोम ततः शुचिः॥५६ यो दातुं न विजानाति प्रायश्चित्तं द्विजोत्तमः। शुद्धं ददाति चान्यस्मै तद्शुद्धेः स भोजनम् ॥५७ सभायां स्पर्शने चैव म्लेच्छेन सह संविशेत्। क्र्यांस्नानं सचैलं तु दिनमेकमभोजनम् ॥५८ माता म्लेच्छत्वमागच्छेत्वितरो वा कथंचन। असूतकं च नष्टस्य देवलस्य वचो यथा ॥५६

मातरं च परित्यज्य पितरं च तथा मुतः।
ततः पितामहं चैव शेषपिण्डं तु निर्वपेत्।।६०
श्वीणां चैव तु शूद्राणां पिततानां तथेव च।
पश्वगव्यं न दातव्यं दातव्यं मन्त्रवर्जितम्।।६१
वर्तणो देवता मूत्रे गोमये हव्यवाहनः।
सोमः क्षीरे दिष्न वायुर्घ ते रिवर्तदाहतः।।६२
गोमूत्रं ताम्रवर्णायाः श्वेतायाश्चेव गोमयम्।
पयः काञ्चनवर्णाया नीलायाश्चापि गोदंधि।।६३
घृतं वै कृष्णवर्णाया विभक्तिवर्णगोचरा।
उद्दं सर्ववर्णं स्यात्कस्य वर्णो न गृह्यते।।६४

पण्मात्रिकं (एकमात्रं)तु गोम्त्रं गोम्तयं (द्विमात्रकं)च कुशोदकम् । त्रिमात्रिकं घृतं क्षीरं दिध स्याद्दशमात्रिकम् ॥६६ व्रते तु सर्ववर्णानां पञ्चगव्यं तु संख्यया । प्रायश्चित्तं यथोक्तं तु दातव्यं ब्रह्मवादिभिः ॥६६ अन्यथा दापयेद्यस्तु प्रायश्चित्ती भवेद्द्विजः ॥६० किपलायाश्च गोर्डु ग्ध्वा धारोष्णं यः पयः पिबेत् । एष व्यासकृतः कुच्छः श्वपाकमि शोधयेत् ॥६८ तिलहोमं प्रकुर्वीत जपं कुर्याद्तिन्द्रतः । विष्णो रराटमन्त्रेण प्रायश्चित्ती विद्युध्यति ॥६८ बहुनाऽत्र किमुक्तेन तिलहोमो विधीयते । तिलान्द्त्वा तिलान्भुत्त्वा कुर्वीताधनिवारणम् ॥७०

संपादयन्ति यद्विप्राः स्नानं तीर्थफलं तपः। संपादी क्रमते पापं तस्य संपद्यते फलम्।।७१ प्रायश्चित्तं समाख्यातं यथोक्तं देवलेन तु। इतरेषामृषीणां च नान्यथा वाक्यमईथ ॥७२ सुवर्णदानं गोदानं भूमिदानं गवाह्विकम्। विप्रेभ्यः संप्रयच्छेत प्रायश्चित्ती विशुध्यति ॥७३ पञ्चाहान्सहवासेन संभाषणसहाशनैः। संप्राश्य पश्चगव्यं तु दानं दस्वा विशुध्यति ॥७४ एकद्वित्रिचतुःसंख्यान्वत्सरान्संवसेद्यदि । म्लेच्छवासं द्विजश्रेष्ठः क्रमतो द्रव्ययोगतः ॥७४ एकाहेन तु गोमूत्रं व्यहेनैव तु गोमयम्। ज्यहात्क्षीरेण संयुक्तं चतुर्थे दिधिमिश्रितम्।।७६ पञ्चमे घृतसंपूर्णं पञ्चगव्यं प्रदापयेत्। पञ्चसप्तदशाहानि पञ्चदशाच विंशतिः॥७७ संवासं च प्रवक्ष्यामि देहशुद्धिं द्विजन्मनाम्। पश्चाहं पश्चगव्यं स्यात्पाद्कुच्छूं दशाहिके ॥७८ पराकं पञ्चद्शभिविशेऽतिकृच्छूमेव च। उद्रं प्रविशेद्यस्य पञ्चगव्यं विधानतः ॥७६ यत्किचिद्दुष्कृतं तस्य सर्वं नश्यति देहिनः। पश्च सप्ताष्ट दश वा द्वादशाहोऽपि विशतिः। म्छेच्छेनींतस्य विप्रस्य पञ्चगव्यं विशोधनम् ॥८० सांतपनादि कृच्छ्रचान्द्रायणान्त विधि वर्णनम्।

पञ्चगव्यं च गोक्षीरं दिध मूत्रं घृतं पयः। प्राश्यापरेऽह्र्युपवसेत्ह्रच्छ्ं सांतपनं चरेत्।।८१ **पृथक्सांतपनं द्र**व्येः षडहः सोपवासकः। सप्ताहेन तु कृच्छ्रोऽयं महासांतपनः स्मृतम्।।८२ पर्णोदुम्बरराजीवविल्वपत्रकुशोद्केः। प्रत्येकं प्रत्यहं पीतैः पू(प)र्णकुच्छ्र उदाहृतः ॥८३ तप्तक्षीरघृताम्बूनामेकैकं प्रत्यहं पिवेत्। एकरात्रोपवासश्च तप्तकुच्छ्रस्तु पावनः ॥८४ एकभक्तेन नक्तेन तथैवायाचितेन तु। उपवासेन चैकेन पादकुच्छू उदाहतः ॥८५ कुच्छ्रातिकुच्छ्ः पयसा दिवसानेकविंशतिम्। द्वादशाहोपवासेन पराकः परिकीर्तितः ॥८६ पिण्याकशाकतकाम्बुसक्तूनां प्रतिवासरम्। एकरात्रोपवासश्च कुच्छ्रः सौम्यः प्रकीर्तितः ॥८७ एषां त्रिरात्रमभ्यासादेकेकस्य यथाक्रमम्। तुलापुरुष इत्येष ज्ञेयः पञ्चदशाहिकः ॥८८ तिथि वृद्धया चरेतिपण्डाव्छुक्ले शिख्यण्डसंमितान्। एकेकं हासयेत्पण्डान्कुच्छ्चान्द्रायणं चरेत्।।८६ यथाकथंचित्पिण्डानां चत्वारिंशच्छतद्वयम्। इति देवछ(छ) [न] क्रतं धर्मशास्त्रं प्रकीर्तितम्।।६० समाप्तेयं देवलस्पृतिः।

।। ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः ।।

॥ अथ ॥

-॥ प्रजापतिस्मृतिः॥-

श्रीगणेशाय नमः।

अथ ब्रह्माणं प्रति रुचेः प्रश्नः, श्राद्धकालाभिधानश्च
पितुर्वाक्यार्थकारी च रुचिः प्रम्लोचया सह ।
नमस्योवाच देवेशं ब्रह्माणं जगतः पतिम् ॥१
ब्रह्मान्विषे विरिञ्चेति धातः शंभो प्रजापते ।
त्वत्प्रसादादिमं धमं जग्राह पितृवाक्यतः ॥२
अनया सह तीर्थेषु मया श्राद्धान्यनेकशः ।
कृतानि पितृतुष्ट्यर्थं धनार्थं पुत्रकाम्यया ॥३
स्मृतयश्च पुराणानि त्वया दृष्टान्यनेकशः ।
दृष्टस्त्वनेकधा धातः श्राद्धकृत्पः सविस्तरः ॥४

तथाऽप्यसंशयापन्नं क्रियमाणिविधि वद् ।
येन विज्ञानमात्रेण न मुह्येऽहं कदाचन ॥
चतुर्णामिप वेदानां शाखाः सन्ति सहस्रशः ।
अज्ञानादलपशास्त्रार्था मोहयन्ति पदे पदे ॥
किस्मन्काले च कर्तव्यं कर्ता श्राद्धस्य कीदृशः ।
द्रव्यं देशः पाककर्ता कदा विप्रान्निमन्त्रयेत् ॥
ब्राह्मणाः कीदृशास्तत्र नियमास्तत्र कीदृशाः ।
श्राद्धोपहारपात्राणि भक्ष्यं तत्कालदेवता ॥
ततः श्राद्धेषु के मन्त्राः पदार्थादिक्रमः कथम् ।
आसनावाहनान्यघोऽम्रो होमः पात्रा(त्र)लम्भनम् ॥
विप्रभोज्यं पिण्डदानं क्षमापनविधिक्रमम् ।
विप्रभोज्यं पिण्डदानं क्षमापनविधिक्रमम् ।
विप्रभोज्यं पिण्डदानं क्षमापनविधिक्रमम् ।

ब्रह्मोवाच-

पितरस्तव तुष्टा वे रुचे शृणु महामते।
मालिन्यां रौच्यनामा वे त्वत्तः पुत्रो भविष्यति।।११
नदीं तर्तुमनाः पारं पराचारस्य वि(वे)त्ति कम्(कः)।
त(क)ल्पशास्त्र(स्नाणि)स्मृतयः श्राद्धकल्पा वुधैर्द्विजाः(कृताः)॥
ममापि संशयस्तत्र श्राद्धकल्पाम्बुधौ रुचे।
तथाऽपि शास्त्राण्यालोच्य वक्ष्ये निःसंशयं वचः।।१३
शास्त्रनिष्ठैः शुक्रवाष्येर्मुद्धन्ति द्विजसत्तमाः।
भवन्ति वलिनस्तस्माद्राक्षसा बलहारिणः।।१४

निरस्य शुक्रवाक्यानि(णि) सिद्धान्तस्मृतिनिश्चयम्। श्राद्धकल्पस्य वक्ष्येऽहं भक्त्या तुष्टो रुचे तव ॥१४ त्वया पृष्टं कदा श्राद्धं रुचे प्रम्लोचया सह। शृणु संक्षेपतो विचम कालकर्ता ह्यनुक्रमात्।।१६ वृद्धौ क्षयेऽह्नि ग्रहणे युगादौ महालये श्राद्धममासु तीर्थे। सूर्यक्रमे पर्वसु वैधृती च रुचौ व्यतीपातगतेऽष्टकासु ॥१७ द्रव्यस्य संपत्सु मुन्यं (नी)न्द्रसङ्गे काम्येषु मन्वादिषु सद्वते स्यात्। <mark>छायासु मातं</mark>गभवासु नित्यं श्राद्धस्य कालः स च सर्वदोक्तः ॥१८ वृद्धौ प्राप्ते च यः कुर्याच्छ्राद्धं नान्दीमुखं पुमान्। तस्याऽऽरोग्यं यशः सौख्यं विवर्धन्ते धनप्रजाः ॥१६ श्राद्धं कृतं येन महालयेऽस्मिन्पित्रोः क्षयाहे प्रहणे गयायाम्। किमश्वमेधेः पुरुषेरनेकैः पुण्येरिमैरन्यतमेः कृतेः किम्।।२० द्शंश्राद्धं च यः कुर्याद् ब्राह्मणैर्वह्मवादिभिः। पितरस्तेन तुष्टा वे प्रयच्छन्ति यथेप्सितम्।।२१ माघे पञ्चदशी कृष्णा नभस्ये च त्रयोदशी। तृतीया माधवे शुक्का नवम्यूर्जे युगाद्यः ॥२२ भाद्रे किल्हापरे चैव माघे त्रेतातृतीया नवमी कृते च। युगाद्यः पुण्यतमा इमाश्च दत्तं पितृणां किल चाक्षयं स्यात् २३ यावदायाति तत्पर्व वर्धते द्विगुणक्रमम्। दिने दिनेऽखिलं दानं दत्तं वैधृतपर्वणि ॥२४ संक्रान्तौ च व्यतीपाते मन्वादिषु युगादिषु। श्रद्धया स्वल्पमात्रं च दत्तं कोटिगुणं भवेत्।।२५

पूर्वजान्मनुजान्देवान्सित द्रव्ये न वै यजेत्।

मन्दाग्नि रामयावी च द्रिद्ध प्रजायते।।२६

छायासु सोमोद्भवजासु पुण्यं देवार्चनं गोतिलभूप्रदानम्।

करोति यो वै पितृपिण्डदानं दूरे न तस्यास्ति विभोविमानम्।।२७
चन्द्रप्रहे लक्षगुणं प्रदत्तं विवधते कोटिगुणं रिवप्रहे।

गजाश्वभूरुक्मितिलाज्ययोधिद्दानस्य संख्या न मयाऽत्र गण्यते।।२८

पितृणां नरकस्थानां जलं तीर्थस्य दुर्लभम्। तेन संतर्पिताः सर्वे स्वर्गं यान्तीति महचः ॥२६ अष्टकासु च सर्वासु तथा चान्वष्टकासु च। पिण्डदानं प्रकर्तव्यमक्षय्यतृप्तिकारकम् ॥३० अष्टकासु च सर्वासु सामिकेर्नवदैवतम्। पित्राद्यं मातृमध्यं च कर्तव्यं न निरग्निकै: ॥३१ महायज्ञरतः शान्तो छौकिकारिन च रक्षयेत्। धर्मशास्त्रोक्तमार्गी या स साग्निकसमो मतः॥३२ इष्टे गृहसमायाते पूज्ये यज्त्रनि मन्त्रदे। वेद्ज्ञैः सर्वशास्त्रज्ञैहं ज्यन्त्यखिलपूर्वजाः ॥३३ व्रतस्थो व्रतसिद्ध चर्यं श्राद्धं कुर्यादिपण्डकम्। विना श्राद्धे न यत्कर्म तत्सर्वं निष्फलं भवेत्।।३४ सपिण्डदानं सौभाग्यं काम्यश्राद्धं त्रिपौरुषम्। कार्यं भार्यासु तेनेतत्सर्वकामफलप्रदम् ॥३४ नित्यश्राद्धं सदा कार्यं पितृणां तृप्तिहेतुकम्। स विष्णुरिति विज्ञेयो नित्यं प्रीणाति पूर्वजान् ॥३६

श्राद्धान्यनेकशः सन्ति पुराणोक्तानि वै रुचे !। फलप्रदानि सर्वाणि तेषामग्यो महालयः ॥३७ सत्यवाक् शुद्धचेता यः सत्यव्रतपरायणः। नित्यं धर्मरतः शान्तः स भिन्नालापवर्जितः ॥३८ अद्रोहोऽस्तेयकर्मा च सर्वप्राणिहिते रतः। स्वस्तीरतः सविनया (यो) नयचक्षुरकर्कशः ॥३६ पितृमातृवचःकर्ता गुरुवृद्धपराष्टि (ति) कः। श्रद्धालुर्वेद्शास्त्रज्ञः क्रियावान्भेक्ष्य (क्ष) जीवकः ॥४० स तु श्राद्धं यदा कुर्यात्पत्रपाकेन सद्द्विजैः। तदा श्राद्धसहस्रेयत्त्रीतिस्तजायते भृशम् ॥४१ तियङ्गनुष्ययोनौ हि को भेदः क्षुत्तृषा समाः। सत्यवाङ्मानुषो धर्मः सुखं दुखं समं स्मृतम्।।४२ भैक्यं (क्षं) द्रव्यं हि विप्राणां क्षत्त्रियाणां प्रजापितम्। वंश्यानां कृषिवाणिज्यं शूद्राणां सेवयाऽऽगतम् ॥४३ धनं पवित्रं विप्राणामस्ति तीर्थसमर्पितम्। तर्पयेनेन वै देवान्मृतान्पितृगणातिथीन् ॥४४ स्वम्नि वाच्य द्विजैनीतं धनं दुष्टप्रतिप्रहम्। अग्नितीर्थेषु पतितं सद्यो याति पवित्रताम् ॥४५ अयाचितं धनं पृतं शुक्लवृत्त्या समागतम्। विवाहलब्धं वेजिनं (विजितं) पैत्रं(पित्रयं)शिष्यनिवेदितम्।।४६ ब्राह्मणः क्षत्त्रियविशां जीव्यवृत्तिं समाश्रयेत्। स्ववृत्ते हपहानित्वान्न श्ववृत्त्या (ति) कदाचन ॥४७

वर्णानां तु त्रिधा वृत्तिरुत्तमा मध्यमाऽधमा । ह्वासपुण्यफलांशस्य क्रमात्तद्धनद्दानलः (तः) ।।४८ <mark>धनं</mark> चिकित्सासंबन्धि यामयाच(ज)कगायिनी(नाम्)। कथं त्व (या) च समानीतमप्राद्यं पितृकर्मणि ॥४६ चित्रकृत्रटवेश्यानां धारकार(रे)क्षुमर्दिनाम्। स्वस्त्या अपि न तद्याह्यं धनं कथककूटयोः ॥५० मूल्येश्चिकित्सां कुरुते कथां चित्रां तनोति यः। गीतं गायति भृत्यर्थं विष्रः सन्प्लवगो मतः ॥५१ युगधर्मेण वर्णानां धनं ब्राह्यं द्विजातिभिः । प्रकृतिना परिस्वस्त्या न्यायागतमथो यदि ॥५२ सरित्समुद्रतोयेक्ये वापीकूपसरित्तटे। देवजुष्टे च संप्राप्ते देशे श्राद्धे गृहान्तरे ॥५३ धात्रीदिल्यवटाश्वत्थमुनिचंत्यगजावि(न्वि)ना। श्राद्धं छायासु कर्त<mark>व्यं प्रासादाद्रो म</mark>हावने ॥५४ न गहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते। गृहे तिष्ठति सा यावत्तावत्तीर्थसमं गृहम्।।४४ पत्नी पाकं यदा कुर्यात्पुत्रः पुष्पकुशान्ह्रेत्। कि गयायां यदि श्राद्धं स्वकाले स्वगृहे भवेत्।।५६ स्वगोत्रा सुभगा नारी भ्रातृभर्तृसुतान्विता। गुरुशुभूपणोपेता पित्रन्नं कतुंमहीति ॥५७ आचार्यांनी मातुलानी पितृमातृस्वसा स्वसा। एता ह्यविधवा कुर्युः पितृपाकं सुता स्नुपा ॥५८

बहुपजास्तु या नार्यो भ्रातृवत्यः कुलोङ्गवाः। पश्वाशत्परितोऽब्दानां यदि वा विधवा अपि ॥५६ पितृहयभ्रातृजायाश्च मातरः पितृमातरः। कुर्युः सदा पित्र (त्र्यं) मृदुः(दु)शीला च गोत्रिणी ॥६० सितार्द्रवाससा युक्ता मुक्तकेशा विकञ्चुकी। शिरोस्नाता व्याधिता स्त्री पाकं कुर्यान पैतृकम्।।६१ श्राता पितृव्यो श्रातृव्यः स्वसृपुत्रः स्वयं पचेत्। पित्रानं (ताऽत्रं) च सुतः शिष्यो दौहित्रो दुहितुः पतिः ॥६२ अक्रोधनैः शौचपरैरिति गाथामुदीरयन्। सायमामन्त्रयेद्विप्राच्छाद्धे दैवे च कर्मणि ॥६३ निमन्त्रणं स्वयं दद्याद्भात्र(ता)शिष्यः सुता अपि। न स्रीवालैः स्वगोत्रान्येने स्याप्यं न च दूरतः ॥६४ दैवे वृद्धी तीर्थकाम्यनदोत्पन्नेः(न्न)समागते। न दुष्यति मनःश्येर्यात्त्रातः सद्योनिमन्त्रणम् ॥६५ प्रसाद्यतामितीत्युक्तवा द्विसिर्देयं निमन्त्रणम्। यस्वीकृतं खिया सम्यक्सत्यं वितथमन्यथा (!) ॥६६ यतीनामगृहस्थानां प्राघूर्णब्रह्मचारिणाम्। सर्वदानं मन्त्रणं वन्धुभृत्यवालसुहृतिस्रया (!) ॥६७ अदैवान्तरतःश्राद्धदम्पत्यङ्गी वृथा भृवेन् (!) निमन्त्रणं भवेद्यस्य लोभात्काकत्वमाप्नुयात् ॥६८ निमन्त्रणेऽप्रयातव्यं तं नियुक्तो लघुर्वजेत् (!) । सर्वदानलघोज्यें हो वथापाकी तु वा यतः (!) ॥६६

ब्रह्मकर्मरताः शान्ता अपापा अग्निसंश्रिताः । कर्मनिष्ठास्तपोनिष्ठा वेदार्थज्ञाः कुलोद्भवाः ॥७० मातृपितृपराश्चैव ब्राह्म्यै (ह्म) वृत्त्युपजीविनः। अध्यापको ब्रह्मविदो ब्राह्मणाः श्राद्धसंपदि ॥७१ स्वकीयशाखिनो मुख्याः श्राद्धे वेद्विदां वर !। पङ्क्तिपावनाः सर्वेषामेको वै सामविद्भवेत्।।७२ गुरुश्वशुरजामातृदौहित्रभगिनीसुताः। आसनार्हाः पितृश्राद्धे योग्याः पूज्याश्च मातुलाः ॥७३ भार्या रजस्वला यस्य हता त्यत्तवा दिवं गता। अश्राद्वाहाः सर्वध्यास्य मृतनुकं गर्भदृषिता(!) ॥७४ योऽभार्यः सन्बलं चेतः संयम्याविधरो भवेत्। क्रियापरः श्रुतेर्वेत्ता श्राद्धे वै भोजयेत्पतुः ॥७५ श्रुतिज्ञं कुलजं शान्तं प्रजावन्तं जितेन्द्रियम्। मृतभार्यमपि श्राद्धे भोजयेदविशङ्कितः ॥७६ अप्रजो मृतपत्नोकः सर्वकर्मसु गर्हितः। छन्दो विनाऽपि न स्थेयं दिनमेकं विनाऽऽश्रमम्।।७७ यस्य पुत्राः सद्वाचाराः श्रुतिज्ञा धर्मसंमुखाः। पितृभक्तिरता दान्ता न वैधव्यं (धुर्यं) मृतस्त्रियि ॥७८ तुरीये धाम्नि यस्तिष्ठेत्संधौ मध्यनिशि क्षणम्। अनार्योऽप्यनपत्योऽपि श्राद्धे पुण्यैरवाप्यते ॥७६ षोडशाब्दात्परं श्राद्धे विप्राणां सप्तसप्तकैः । भोजयेत्पितृकार्यार्थे ततोऽन्यान्देवकर्मणि।

न पुत्रपुत्री तद्परायां न बन्धुरङ्गीकृतचित्तधारणम्। संप्राप्य वैधन्य(धुर्य) मनङ्गसंभवो यस्तिष्ठति न्यक्ततया स वर्ज्यः ॥८१ रोगी हीनातिरक्ताङ्गः काणः पौनर्भवस्तथा। अवकीणीं कुष्डगोहीं कुनखो श्यावदन्तकः ॥८२ भृतकाष्यापकः कुष्ठी कन्यादूष्यभिशस्तकः। क्लीवान्धमूकविधराः कुजशी (नर्खः) वृषलीपतिः ॥८३ परपूर्वापतिः स्तेनः कर्मदुष्टश्च निन्दितः। भोक्तारः षोडशे यस्य (ये च) ते वर्ज्या द्रव्यलोभतः ॥८४ वृषोत्सर्गस्य कर्तारो वर्जनीयाः सदैव हि। पितुर्गृहेषु या कन्या रजः पश्यत्यसंस्कृता ॥८५ सा कन्या वृषली ज्ञेया तत्पतिव षलीपतिः। महिषोत्युच्यते भार्या सा चैव व्यभिचारिणी ॥८६ तान्दोषान्क्षमते यस्तु स वे माहिषकः स्मृतः। अज्ञानादथ वा होभान्मोहाद्वाऽपि विशेषतः ॥८७ समघ योऽन्नमादाय महार्षं तु प्रयच्छति । स वै वाधुं विको नाम अनर्हः सर्वकर्मसु ॥८८ वृषोत्सगस्य कर्तारं यदि पश्यन्ति पूर्वजाः। रौरवं नरकं यान्ति कुम्भीपाकं सुदारुणम्।।८६ कालालकं वार्धुषिकं मध्ये च व्यलीपतिम्। श्राद्ध माहिषकं दृष्ट्रा निराशा यान्ति पूर्वजाः ॥६० यो लोभादसवर्णानामाद्यश्राद्धान्यनुक्रमात्। स षोडशकं (शं) वृषोत्सगं कुर्यात्कालालकः स्मृतः ॥६१

अथ श्राद्ध नियमानाह—

दन्तधावनताम्ब्र्लं स्निग्धस्नानमभोजनम् । दानं प्रतिप्रहो होमः श्राद्धभुगष्ट वर्जयेत् ॥६२ श्राद्धे निमन्त्रितो विप्रो वर्जयेत्स्नीनिषेवणम् । पूर्वेद्युश्च परेद्युश्च वर्जयेद्धोजनद्वयम् ॥६३ नीचसंभाषणं याज्यं दिवानिद्रां प्रतिप्रहम् । स्नोममुष्णोदकैः स्नानं वर्जयेच्छ्राद्धकृद् ध्रुवम् ॥६४ न च सीमान्तरं गच्छेन्न श्मशानं जिनालयम् । श्राद्धकृत्सर्वदा पश्येन्नोदक्याः (क्यां) श्वपचं शवम् ॥६५

श्रीखण्डं द्र्भसूत्रं यवतिलतुलसीशतपवित्रा(शातपत्रं च) कर्ता घूपं(पो)दीपोदपात्रं दुसुन्भ(म)फलजन्यं(लं) पत्रभूम्भोम(म्यास)नानि। श्रीशः शाल्वे च पात्रे दिजमधुसकृद्।च्छित्रहेमाघेपात्राण्यनं-श्राद्योपहारः सुतगृहगृहणीशुभ्वासांसि कालः ॥६६

श्रीखण्डमर्चयेच्छ्रेष्ठं सकर्पूरं सकेसरम्।
पूर्वजानां तु देवानां नान्यन्मलयजादिकम्।।६७
मन्त्रपूता हरिद्वर्णाः प्रातर्विप्रसमुद्घृताः।
गोकर्णमात्रा दर्भाः स्युः पवित्रा पुण्यभूमिजाः।।६८
शुक्कः कृष्णः कृष्णतस्त्रतुर्थो जतिलस्तिलः।
उत्तरोत्तरतः श्राद्धे पितृणां तृप्तिकारकाः।।६६
तुलस्यः सर्वदेवानां समञ्जर्यः शुभावहाः।
पूर्वजानां यथा प्राप्ता सैकोदिष्टे विमञ्जरी।।१००

अगस्त्यं भृङ्गिराजं च तुलसी शतपत्रिका। तिलं च तिलपुष्पं च षडेते पितृवहभाः ॥१०१ त्रिगुणं सूत्रमादाद्यात्प्रतिपिण्डं नवोद्गतम्। सामगानां तु संलग्नं सर्वेषामेकतन्तुना ॥१०२ धूपं (पो) गुग्गुलुना कार्यं(यों) दीपस्तैलघृतेन तु। तुलसीशतपत्राभ्यां पूजनं पितृवल्लभम् ॥१ ३ चम्पको दमनः कुन्दकलम(र)वीरोऽथ केतव । जातिदर्शनमात्रेण निराशा यान्ति पूर्वजाः ॥ ४ अनन्तर्गर्भिणं साम्रं कौशं द्विद्छमेव च। ब्रादेशमात्रं सर्वत्र पवित्रं सर्वकर्मसु ॥१०५ वासश्चतुर्विधं प्रोक्तं त्वक्सूत्रं कृमिरोमजम्। उत्तरोत्तरतः श्रेष्ठं प्रक्षाल्यं श्राद्धकर्मणि ॥१०६ धौतं सप्ताष्टहस्तैः स्यादुत्तरीयं तद्धेकम्। वाससी सर्वदाचा (धा)र्ये दग्धरूच्या(क्षा)द्रवर्जिते ॥१०७ त्यजेत्पर्युषितं पुष्पं त्यजेत्पर्युषितं जलम्। न त्यजेजाह्नवीतोयं तुलसीदलपङ्कजम्।।१०८ गोमयेनोपलिप्ता भूः पवित्रा सर्वकर्मसु । गोमूत्रेणोक्षिता तीर्थे विष्णुपादाम्बुसेविता ॥१०६ पात्राण्यर्घाणि ख(खा)ड्गानि हेमरूप्यमृदामपि। उ(औ)दुम्बराणि प(पा)णीनि देवत्वे(क्र)त्योद्भवानि च ॥११० हेमरूप्यमये पात्रे पिण्डत्रयं विनिक्षिपेत्। शौल्वे कांस्ये खाड्गपात्रो न च मृण्मयकाष्ठजे ॥१११

पाकपात्राणि शौल्वानि सर्वधातुमयानि वा । सर्वेभ्यो मृण्मयं श्रेष्टमिपृतजलाव्छतम् ॥११२ लोहपात्रोषु यत्प**क्वं** तद्त्रं काकमांस**व**त्। भुक्त्वा चान्द्रायणं कुर्याच्छ्राद्धे नान्येषु कर्मसु ॥११३ ताम्रपात्रे न गोक्षीरं पचेद्त्रं न छोहजे ! क्रमेण घृततेलाक्ते गाम्रलोहे न दुष्यतः ॥११४ रौप्यहैमानि पात्राणि नन्यसौराष्ट्रजानि वा। पत्रावल्यः पवित्राः स्युर्विप्राणां श्राद्धभोजने ॥११५ कांस्यखर्परशुक्राश्ममृत्काष्ठफळळोहजंः। नाऽऽचामेद्वैकृतैः पात्रीः श्राद्धे वे चर्मवारिणा ॥१९६ औदुम्बरेण पात्रेण कुर्यादाचमनक्रियाम्। तारताम्रसुवर्णांशैर्मिश्रधातुसमुद्भवैः ॥११७ कांस्यपात्राच्च्युतं वारि स्नाने च देवतार्चने। श्वानमूत्रसमं तोयं पुनः स्नानेन शुध्यति ॥११८ नीवारा माष्मुद्गाश्च गोधूमाः शालयस्तथा । यवाश्च चणकाश्चेव श्राद्धे भक्ष्यास्तथा तिलाः ॥११६ कद्लीकन्द्फलकं धात्री बिल्वी च तूलकाः। कारकद्रोणपुष्पी च तण्डुली चक्रवर्तिका ॥१२० डपोदकी चर्मफलं कोशातक्याः फलं शमी। जीवन्ती तुण्डिकाऽम्लीका कालशाकस्तथाऽऽर्द्रकम्।।१२१ उर्वारक्षीरिणीपीलुद्राक्षाम्नकदलीफलम् । बीजपूरं कलिम्बुनि चर्भदं जानि चिर्भटम् (!) ॥१२२

कर्कोटकं कारवेल्लं सूरागं मृष्टपिण्डिकाः। कोटिभण्टं तत्त्रिविधं निशाचिह्नी च वासुकः (१) ॥१२३ मरीचं हिङ्कु तैलानि सद्द्रव्याण्यविदाहि च। श्राद्धे व्वेतानि मुख्यानि तथा लवणजीरकैः ॥१२४ गवां क्षीरं दिध घृतं क्षौद्रभिक्षुरसं तथा। शर्करा गुडमत्स्यण्डी तथा मृष्टफलानि च ॥१२५ श्यामाकान्कोद्रवान्कङ्गून्कलञ्जान्राजमाषकान्। निष्पावकान्कद्म्बानि वर्जयेच्छ्राद्वकर्मणि ॥१२६ किल्कं चैव वृन्ताकं कूष्माण्डं रक्तनीलकम्। हस्तीमुण्डफलं मर्ज्यमलाबु च तुषाम्रकम्।।१२७ करीरजं कुसारीजं सार्षपं राजिकोद्भवम्। वर्जयेत्पितृकार्येषु वह्नकौसुम्भपर्परौ ॥१२८ क्षीरं दिध घृतं तक्रमविच्छागसमुद्भवम्। माहिषं च द्धि क्षीरं श्राद्धे वर्ज्यं प्रयन्नतः ॥१२६ माहिषं मृतवत्सागोः सृतिकागोश्च वर्जयेत् (१) ॥१३० मिश्रितं घेनुपयसा सापत्यमहिषीपयः। मेध्यमभ्युक्षितं गा(ह्ये)तद्गायज्या सर्वकर्मसु ॥१३१ क्षेरं कठिनपदवं स्याद्याघसं स्याद्विलेपकम्। पीशी(रं)द्रवरूपं तत्क्षीरे यन्त्रिविधामता (?) ॥१३२ पिन्नानवदेवानां पाशीरक्षीरपायसैः (?)। जायते परमा तृप्तिः समध्वाज्यैः सशर्करैः ॥१३३

पायसं शूद्रतो प्राह्यं यद्यम्बुरहितं भवेत्।
नन्यमृत्पात्रपक्वं चेत्पित्रर्थेऽपि न दुष्यित ॥१३४
पायसं सक्तवो धानास्तिलिपष्टं तथौषधम्।
साम्बून्येतानि गृह्णीयादिष शूद्रान्न दुष्यिति ॥१३५
क्रीतं विप्रघृतं नीत्वा यदि विप्रांश्च भोजयेत्।
दाता भोक्ता च विक्रेता पूर्वजाश्च पतन्ति ते ॥१३६
लावण्य (क्य)तित्तिरिशकुन्तकिषञ्जलानां

भारण्डसारसमसू(यू)र[क]वी(की)रकाण(णाम्) । धूम्यारकारिकुटरीदहनाटभार-

द्वा[जा]ख्यलाटशि(कुर?)रीकिकिदीविकानाम्।।१३७ सारङ्गशम्बरवराहककृष्णसार

शशसानि(शाशानि)दुर्छभतसानि सदा पितॄणाम् ॥१३८ खङ्गमांसैयदा पिण्डान्कुर्योद्वा भोजयेद्दिजान् । तदा भवति पूर्वेषां चृष्तिद्वादशवार्षिकी ॥१३६ खड्गास्थि यदि विद्येत श्राद्धकाले समीपगम् । गयाश्राद्धे न सा चृष्तिः पितॄणां सा भवेत्तदा ॥१४० कथयन्तीति पितरः कुले कश्चिद्धविष्यति । यः खड्गमांसिपण्डांश्च कुर्योद्वा पितृभोजनम् ॥१४१ कूर्चलो विलमण्डश्च गोधा कक्वपजाहकः (१) । पश्च पश्चनखा ह्येते दुर्लभाः श्राद्धकर्मणि ॥१४२ व्याधेभ्यो मेध्यमांसानि प्राह्याणि द्रव्यपर्ययैः । पितृश्वं स्वगृहे हिंसन्खाद्ममांसं न पापभाक्॥१४३

विना श्राद्धं विना यज्ञं मधुपर्कविधि विना। पापी स्यास्वार्थतः कुर्वज्ञीवघातं विल विना ॥१४४ न जीवेन विना तृष्तिर्जीवस्यापि हि सर्वदा। अतः ससर्ज भगवाञ्जीवो जीवेन हिंस्यते ॥१४५ प्रवृत्तिर्व(तिं व)चनात्कुर्वन्निवृत्तिर(म)पि कर्भणाम्। एवं व्यवहरेत्रित्यं गृहस्थोऽपि हि मुन्यते ॥१४६ न प्रवृत्तेः पुण्यहानिस्तन्निवृत्ते महस्फलम्। तदा दातव्यं धर्मज्ञैधर्मकारुण्यसंश्रयः(यैः) ॥१४७ कारुण्यं प्राणिषु प्रायः कर्तव्यं पुण्यहेतवे। अहिंसा परमो धर्मस्तस्मादात्मवदाचरेत्।।१४८ यज्ञेषु पशुहिंसायां सावर्णिव्यवसायवत्। फलं सहस्रगुणितं हिंस्यो राजा भवेद्नु ॥१४६ कारुण्यात्सर्वभूतेषु आत्मवंतः सतः । उक्तकमसु सर्वत्र तदामांसनिषधनम्।।१५० मद्यमप्यानृ(प्यमृ)तं श्राद्धे कलौ तत्तु विवर्जयेत्। मांसान्यपि हि सर्वाणि युगधर्मक्रमाद्भवेत्।।१५१ अतो माखा(षा)न्नमेवैतन्मांसार्थे ब्रह्मणा कृतम्। पितरस्तेन तृप्यन्ति श्राद्धं कुर्व(र्या)न्न तद्विना ।।१५२ यथा बलिष्ठं मांसत्वान्माखा(षा)न्नपि तत्समम्। सौगन्धिकं च स्वादिष्ठं मधुरं द्रव्यभेदतः॥१५३ भक्यं भक्ष्यविधौ यत्त गर्हितं तद्विवर्जयेत्। अभस्यमपि भक्ष्यं स्याहेशधर्मेण वै मुने ॥१५४

अथ(थ) शब्दस्तु रवि भागे जन्यान्ते राजवर्जिते (!)। वाजं देयं प्रयत्नेन कथि (अर्थि)भ्यो वज्रमिश्रितम्।।१५५ त्रिग्रहूर्तस्तु प्रातः स्यात्तावानेव तु संगवः । मध्याह्निमुहूर्तः स्याद्पराह्नस्तथैव च ॥१५६ सायं तु त्रिमुहूर्तः स्यात्पञ्चधा काल उच्यते ! अतोऽपराह्वः पूर्वेषां भोष्टयकाल उदाहृतः ॥१५७ ·आरम्भं कुतपं(पे) कुर्याद्रौहिणं तु न लङ्घयेत्। <mark>एतत्पञ्चमु</mark>रूर्तान्तः श्राद्धकाल उदाहृतः ॥१५८ मुर्ह्तास्तत्र विज्ञेया दश पञ्च च सर्वदा। तत्राष्ट्रमो मुहूर्तो यः स कालः कुतपः स्मृतः ॥१५६ विवृद्धा यत्र पुरतः कुतपस्पर्शिनी तिथिः। श्राद्धे सांवत्सराङ्के च निर्णयोऽयं कृतः सदा ॥१६० आषाढ्याः पञ्चमे पक्षे यान्यहानि तु षोडश । क्ररुभिस्तानि तुल्यानि तेषु दत्तं महाफलम् ॥१६१ चतुर्दश्यां समारम्भः पौर्णमासादि पार्वणः। प्रातरन्तमजस्रं स्यादस्यान्तः पार्वणो विधिः॥१६२ त्राह्मान्मुरूर्तादारभ्य कुर्यान्मासार्धयामतः। श्राद्धं महालयं नाम तत्तु तीर्थवदाचरेत्।।१६३ पक्षेऽपरे च भरणी महती सा प्रकीर्तिता। तस्यां श्राद्धं प्रकुर्वीत गयाश्राद्धसमं फलम् ॥१६४ नन्दायां भागवदिने मप्रा(घा)सु च युगादिषु। पिण्डपातं प्रकुर्वीत ज्येष्ठपुत्रो विनश्यति ॥१६४

पौर्णमास्यादिसंयोगे योऽधिकुर्यान्महालयम्। पिण्डदाननिषिद्धे ऽपि न निषिद्धं कदाचन ॥१६६ महालये त्रयोद्श्यां भवेद्यद् पितुर्दिनम्। पिण्डदानं विप्रभोज्यं श्राद्धं तत्स्याद्गयासमम् ॥१६७ पक्षश्राद्धं वा पञ्चमीप्रभृती(ति) स्यान्महालये। पितुः पितामहस्याप्य(पि?) प्रपितामहमृद्दिने ।।१६८ कालो ह्यनन्तरूपस्तु कालो वै परमेश्वरः। तस्मात्काले प्रसन्नेन कर्तव्यं कर्म निश्चितम् ॥१६६ गर्भस्थोऽपि [च] दौहित्रो अश्वयुक्प्रतिपद्दिने। कुर्यान्मातामहश्राद्धं पितरौ यदि जीवतः ॥१७० आश्वप्रतिपदि श्राद्धं नन्दीश्राद्धवदिष्यते (?)। नात्यंसपाकशुद्धिः (?) स्यादा मध्याह्नाद्विशिष्यते ॥१७१ सृतकादिनिमित्तेन द्रव्याभावादिभेद्तः। स्थितं महालयं कुर्याचावद्वश्चिकदशनम्।।१७२ कन्यागते सवितरि पितरो यान्ति वै गुरु[गृह]म्। तिष्ठन्याकाङ्क्षिणस्तावद्यावद्वृश्चिकदर्शनम् ॥१७३ कन्दमूलफलैर्वाऽपि कतंव्यं पितृतर्पणम्। अन्यथा दारुणं शापं दत्त्वा यान्ति बुसुक्षिताः ॥१७४ एको दिष्टं तु मध्याह्रे दिवसस्य विधीयते। आद्ये मुहूर्ते वा या]मस्य पिण्डदानं च भोजनम्।।१७४ पितृक्षयाहे संप्राप्ते यदि कश्चिन्महालयः। तदा क्षयाहः कर्तव्योऽपरेऽहिन महालयम् [यः] ॥१७६

पूर्वाह्वे कानि[मि]कं श्राद्धं कुर्यात्रान्दीमुखं तथा। माध्याह्निकं यदा कुर्यान्नित्यश्राद्धं तदा भवेत्।।१७७ द्वी दे[दै]वे च त्रयः पित्रय एकेकमुभयत्र वा। मातामहानामप्येवं तन्त्रं वा वेशेवदैविकम्।।१७८ इष्टिश्राद्धे कतुदक्षी काम्ये च ध्वनिरो[धुरिलो]चनी। पुरूरवार्द्रवसंज्ञौ [तु] पार्वणे समुदाहृतौ ।।१७६ सापिण्डे कालकामा(मी)तौ वृद्धौ सत्यवसू स्मृतौ। यज्ञे च वहवः सन्ति श्राद्धे श्राद्धे पृथक्पृथक् ॥१८० पितरश्च पितामहास्तथा च प्रपितामहाः । एवं पार्वणसंज्ञा च तथा मातामहेष्वपि ॥१८१ एषां पत्न्यः क्रमाद्पाह्यास्तिस्रस्तिस्रश्च पार्वणे । उक्तानि चत्त्रार्येतानि पार्वणानि न पश्चमम्।।१८२ वृद्धौ द्वादशदैवत्यात्र चैवान्वष्टकासु च [१]। षड्दर्शे त्रीणि यज्ञे च एक एव क्ष्येऽहनि ॥१८३ पार्वणं च क्षयाहे स्याद्ध्द्रौ स्यान्नवदैतम्। दर्शे षड्दैवतं श्राद्धं काम्ये जैपौरुषं भवेत् ॥१८४ वसुरुद्रादित्या अमी इज्यन्ते सहमेलने। चतुर्थस्यानिवत्तिः स्यादाद्यतेतो भवेदिति ॥१८५ श्राद्धं स्त्रीपुंसयोः कार्यमेकोहिष्टमसंततेः। अतः संततिमन्तोऽमी इज्यन्ते बहुभिः सह ॥१८६ आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं पूर्वजाः सन्ति ये कुले। तृप्ता भवन्ति ते सर्वे पुत्रहस्तेन नान्यथा ॥१८७

प्रजापतिसमृतिः।

अपुत्रस्य गतिर्नास्ति स्वर्गी नैव च नैव च। येन केनाप्युपायेन पुत्रमुत्पाद्येत्सुधीः ॥१८८ सैकोहिष्टं दैवहीनं यतः पुत्रो न विद्यते। आयान्ति पुत्रिणः पूर्वे देवर्षिपितृवेष्टिताः ॥१८६ द्शें द्वे पार्वणे कार्ये मातुर्मातामहस्य च। क्षयाहे च पितुर्मातुः पार्णवं (पार्वणं) पार्वणं कृतम्।।१६० अम्बष्टकासु नवभिः पिण्डैः श्राद्धसुदाहृतम्। पित्रादौ मातृमध्यस्थं ततो मातामहान्तिकम् ॥१६१ अन्वष्टक्ये पितृभ्यश्च ततस्त्रीभ्यश्च दैवतम्। ताभ्यस्वदैवतं वृद्धौ तेभ्यश्चापि सदैवतः (?) ॥१६२ मातरः प्रथमं पूज्याः पितरश्च ततः परम्। मातामहश्च तद्नु वृद्धिश्राद्धे त्वयं क्रमः ॥१६३ पार्वणानि मयोक्तानि विपरीतानि तानि ते। अथर्वणास्तर्पयन्ति तद्वेदोक्तमतं यथा ॥१६४ अतिथिं श्राद्धरक्षार्थमते(न्ते) विष्णुस्वरूपिणम्। निवेशये वि(द्वि) ज्णुसमं ब्राह्मणं वेदपारगम् ॥१६५ कञ्यवाहादयो येऽमी विद्यन्ते ये च पूर्वजाः। सर्वेषामेव वर्णानां श्राद्धे तृष्यन्ति देवताः ॥१६६ साक्षाद्विष्णुर्धर्मराजः श्राद्धदेवश्च कथ्यते । विश्वे देवाः पितृतिथिः सर्वं विष्णुरिति स्मृतम्।।१६७ पूर्वजास्तुष्टिनायान्ति दाता भोक्ता न संशयः ॥१६८

इति प्रजापतिस्मृतिः समाप्ता । ॐ तत्सत् ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः।

॥ अथ ॥

-॥ लघ्वाश्वलायनस्मृतिः॥-

।। श्रीगणेशाय नमः ॥

॥ प्रथमोऽध्यायः॥

तत्र प्रथमसाचारप्रकरणवर्णनम्।

आश्वलायनमाचार्यं नत्वाऽष्ट्रच्छन्मुनीश्वराः।
द्विजधर्मान्वदास्माकं स्वर्गप्राप्तिकरान्मुने।
इति तद्वचनं श्रुत्वा सन्धर्मान्मुनिरत्रवीत्॥१
धर्मान्त्रः पुरतो वक्ष्ये ध्यात्वाऽहं भो मुनीश्वराः।
लोकस्य च हितार्थाय त्रह्ममार्गरतस्य च ॥२
साम्याद्विकी क्रिया पश्चयज्ञाद्यतिथिपूजनम्॥३
१०६

दानशिष्टप्रतिवाहौ पोष्यवर्गैः सहाशनम्। सत्कथाश्रवणं सायंसंध्याहोमादिकं च हि ॥४ शयनं च यथाकाले धर्मपत्न्या सह गृही। ब्रह्मचारी स्वधर्मस्थो गुरुसेवापरो वसेत्।।४ यजनं याजनं चैव वेद्स्याध्ययनं च हि। अध्यापनं तथा दानं प्रतिप्रहमि(इ)होच्यते ॥६ एतानि ब्राह्मणः कुर्यात्षट्कर्माणि दिने दिने। अतः प्रातः समुत्थाय चिन्तयेदात्मनो हितम्।।७ निर्गृणं निरहंकारं नारायणमनामयम्। सगुणं च श्रिया युक्तं देवं देवीं सरस्वतीम्।।८ बथाविधि ततः कुर्यादुत्सर्गं मलमूत्रयोः। ब्रह्मचारी गृहस्थश्च शौचमद्भिम दाऽऽचरेत् ॥६ एका लिङ्गे करे तिस्रः करयोर्मृद्द्वयं गुद्दे। पञ्च वामे दश प्रोक्ताः करे सप्ताथ हस्तथोः ॥१० एतच्छोचं गृहस्थस्य द्विगुणं ब्रह्मचारिणः। वानप्रस्थस्य त्रिगुणं यतेश्चैव चतुर्गृणम् ॥११ स्वपादं पाणिना विप्रो वामेन क्षालयेत्सदा। शौचे दक्षिणपादं तु पश्चात्सव्यकरावुभौ ॥१२ शौचं विना सदाऽन्यत्र सन्यं प्रक्षाल्य दक्षिणम्। एवमेवाऽऽत्मनः पादौ परस्याऽऽदौ तु दक्षिणम्।।१३ गण्डुषैः शोधयेदास्यमाच(चा)सेद्दन्तधावनम्। काष्ठैः पर्णेस्तृणेर्वाऽपि केचित्पर्णेः सदा तृणैः ॥१४

नवमी द्वादशी नन्दा पर्व चार्वभुषोणम्। श्राद्वाहं च परित्यज्य दन्तधावनमाचरेत् ॥१५ आचम्याथ द्विजः स्नायात्रद्यां वा देवनिर्मिते। तीर्थे सरोवरे चैव कूपे वा द्विजनिर्मिते ॥१६ त्रिराप्लुत्य समाचम्य शिखाबन्धं समाचरेत्। प्राणानायम्य संकल्प्य त्रिवारं मज्जयेत्पुनः ॥१७ आचम्य वारुणं जाप्यं जपेत्मूक्तं च मार्जनम्। कुर्यादापो हि सूक्तेन भृतमित्यघमर्षणम्।।१८ मार्जयेदथ चाङ्गानि गायत्र्या चाभिमन्त्रितम्। मस्तके च मुखे बाह्रोह दये पृष्ठदेशके ॥१६ ब्रह्माद्यश्च ये देवाः कृष्णद्वेपायनाद्यः। सोम इत्याद्यः प्रोक्ताः पितरो जलतर्पणे ॥२० यनमया दृषिषं तोयं शारीरमलसंभवम्। तस्य पापस्य शुद्धश्रर्थं यक्ष्माणं तर्पयास्यहम्।।२१ स विप्रः स शुचिः स्नातो ह्यस्पर्शस्पर्शनं विना । कालत्रयेऽपि कर्माईः स्वाध्यायनिरतोऽपि च ॥२२ अशक्तश्रेजलस्नाने मन्त्रस्नानं समाचरेत्। आपोहिष्ठादिभिर्मन्त्रेसिभिधानुक्रमणे तु ॥२३ पच्छः पादशिरेहत्सु शिरोहत्पत्सु चार्घतः। हत्पादमस्तवे धंवं प्रत्यूचा माजेयेदथ ॥२४ मस्तके मार्जनं कुर्यात्पादैः प्रणवसंयुतैः । बाह्यशुद्धिरनेन स्यादन्तः शुद्धिरथोच्यते ॥२४

प्रणवेन पिवेत्तीयं गायत्र्या चासिमन्त्रितम्। सद्यस्तेन भनेच्छुद्धः स्नातोऽपि हि सरित्सु च ॥२६ समाहितमना भूत्वा ब्राह्मणः सर्वदाऽपि हि। स्मरेन्नारायणं शुद्धो धारयेदम्बरं शुचि ॥२७ परिधाने सितं शस्तं वासः प्रावरणे तथा। पट्टकूछं तथा लाभे ब्राह्मस्य विधीयते ॥२८ आविकं त्रसरं चैव मरिधाने परित्यजेत्। शस्तं प्रावरणे प्रोक्तं स्पर्शदोषो न हि द्वयोः ॥२६ योजनं च मलोत्सर्गं कुवंते त्रसराष्ट्रताः। प्रक्षाल्य त्रसर् गुद्धं दुकूछं च सदा ग्रुचि ॥३० प्रावृत्य परिधायाथ प्राङासीनः समाचरेत्। इशपाणिहिंराचान्तस्वीरे सिळलसंनिधी ॥३१ प्रवावेन द्विराचामेहक्षिणेन तु पाणिना। उभी हस्ती च गही हावोष्टी पाणिह्यं खुरोत् ॥३२ पाद्रह्यं शिरधाऽऽस्यं नासारन्ध्रे च चक्षुषी। श्रोत्रे नाभि च हदेशं शिरश्चांसी सुशेकमात् ॥३३ प्राणानायम्य संकल्प्य ततः संध्यामुपास्महे (सयेत्) ॥३४ आप इत्यादिभिः पादैर्नवभिर्मार्जनं चरेत्। जलं यस्य क्षयाचेति प्रक्षिपेत महीतले ॥३४ आपो जनयधानेन न्यशिरः परिषेचयेत्। सूर्यधेत्यनुवाकेन भाराःकाले पिबेद्पः ॥३६

ऽध्यायः] स्नानवस्नाचमनपूर्वक संध्योपासन विधिवर्णनम् १६८७

आपः पुनन्तु मध्याह्वे सायमग्निश्च मन्त्रतः। आचम्याथ पुनश्चाप इत्येभिनविधः क्रमात् ॥३७ ऋगन्ते मार्जनं कुर्याद्विधिनाऽनेन बह्बचः। भृतं चत्यभिगन्त्र्यापः समाद्राय क्षिपेद्घः ॥३८ शृतं चंति ज्यूचं वाऽपि जप्त्वा तद्नवेक्षितः। समाचन्य ततस्तिष्ठेहिशश्चामिमुखो रवेः ॥३६ जलमञ्जलिनाऽऽदाय गायच्या चाभिमल्त्रयेत्। द्चाद्र्म्त्रयं तिष्ठंसिषु कालेषु बह् वृचः ॥४० प्रातर्भध्याह्नयोरप्सु क्षिपेत्सायं महीतले। मध्याह तु विशेषोऽयं प्रद्याद्धं स इत्यृचा ॥४१ आकृष्णेन द्वितीयाध्यं गायत्रया च तृतीयकम्। उपतिष्ठन्समाचम्य तिष्ठेदभिमुखो रवेः ॥४२ उदु त्यं चित्रमित्येतज्जयेत्मूक्तद्वयं च हि। तुष्टस्तेन भवेत्सूर्यः स आत्मा जगतो हि वै ॥४३ तेनैव सूक्तजाप्येन हरेरर्चनकुद्भवेत्। आच(चा)मेदुपविश्याथं प्राणायामत्रयं चरेत्।।४४ ध्यात्वा देवीं कुमारीं च तत्तत्कालानुरूपिणीम्। जपेत्रणवपूर्वाभिन्याहतीभिः सहैव तु ॥४५ तिसृभिर्भूःप्रभृतिभिर्गायत्रीं ब्रह्मरूपिणीम्। ब्रह्मचारी गृहस्थश्च शतमष्टोत्तरं जपेत् ॥४६ कालत्रयेऽप्यशक्तश्चेदष्टाविशतिमेव वा। ततः कुर्यादुपस्थानं जातवेदस इत्यृचा ॥४७

तच्छंयोरनुवाकेन शान्त्यर्थं जप ईरितः। प्रागादि च दिशं नत्वा मन्त्रस्थाश्चेव देवताः ॥४८ स्तुत्वा नत्वा ततः संध्यां सा मां संध्याऽभिरक्षतु । ब्रह्माणं हरिमीशानं तत्तच्छक्ति क्रमेण तु ॥४६ : नत्वा स्वयमथाऽऽत्मानं(मुक)गोत्रोऽहमभिवाद्येत्। अग्नेरुद्धरणं वुर्यात्पृवंमे बोदयाद्रवेः ॥५० आदित्यमुदितं पश्येन्नत्वा होमान्तिकं त्रजेत्। आदित्येऽभ्युदिते चैव प्रातर्हीमो विधीयते ॥५१ आहिताग्निस्तथैकाग्निः स्वस्वोक्तविधिना तथा। ध्यात्वा समिध्य चाभ्यर्च्य स्वस्थानस्थं हुताशनम्।।५२ संस्कुर्यात्साप्रिना हौम्यं पय आदि कुशेन च। मन्त्रणानेन सूर्याय स्वाहेति जुहुयादथ ॥५३ द्वितीयामाहुति तद्वत्प्रजापति गर्दं समरेत्। स्वाहान्तां चाऽऽहुतिं हुःवा तथेईं न ममोचरेत्। सर्वजीवादिहोमोऽयं विधिः सकुरुदाहतः ॥५४ उदस्वेदं परिविश्वामि तमरिन परिवचयेन्। जलेनेवाऽऽज्यहोमे तु यत्र चैतदुदीरितम् ॥ ४४ सूर्यों न इति सूक्तेन कुर्यात्प्रातरुपासनम्। उपासनं च सूर्यस्य प्रजापतिरतः परम् ॥५६ अग्ने त्वं चाग्न आयंषि सायमग्नेरपासनम्। कुर्यात्तिष्ठम्रुप्रस्थानं पूर्वस्य प्रजापतेः ॥५७

ऽध्यायः] गायत्रीमन्त्र जपपूर्वक प्रातहोंमविधिवर्णनम् । १६८६

प्रातः सार्यं जपेन्मन्त्रमों च मे स्वर इत्यथ । अभिवाद्य जपेदेवीं विभूति चव धारयेत् ॥ ५८ विभृतिधारणे मानस्तोकेऽयं मन्त्र उच्यते। वृहत्सामेति वा होमे नैत्यके च महामखे ॥५६ कर्मकाले तु सर्वत्र स्मरेद्विष्णुं हविर्भुजम्। तेन स्यात्कर्म संपूर्ण तस्मै सर्व निवेद्येत् ॥६० अग्निसंरक्षणे शक्तिर्यस्य चैव न वर्तते । तदाऽरण्यामजस्त्रामि स्थापयेद्विधिपूर्वकम् ॥६१ समित्प्रतपनेऽयं ते योनिर्मन्त्र उदीरितः। या ते अग्ने भवेन्मन्त्रः पाण्यारोपे स्मृतो बुधैः ॥६२ होमकालः प्रपद्येत पुनश्चैवं विधीयते । मन्त्रेणान्वाहिते वह्नावजस्नाग्नि क्षिपेदथ ॥६३ उपस्थानादिकं चैव सर्वं पूर्ववदाचरेत् ॥६४ कालद्वये यदा होमं द्विजः कर्तुं न शक्यते। सायमाज्याहुतिं चैव जुहुयात्प्रातराहुतिम् ॥६४ सायंकाले समस्तं स्यादाज्याहुतिचतुष्ट्यम्। हुत्वा कुर्यादुपस्थानं समस्येत्यन्निसूर्ययोः ॥६६ होमश्चेत्पुरतः काले प्राप्तः स्यात्काल उत्तरः। हुत्वा व्याहृतिभिश्चाऽऽज्यं कुर्याद्वोमद्वयं च हि ॥६७ विच्छिन्नवहिसंधानमपराह्वे विधीयते। सायमीपासनं कुर्यादस्तादुपरि भास्वतः ॥६८

नैव गच्छेद्दिना भार्या सीमामुहरूच्य योऽग्निमान्। यत्र तिष्ठति वै भार्या तत्र होमी विधीयते ॥६६ गत्वा भार्या विना होमं सीमामुझङ्घ्य यो द्विजः। कुरुते तत्र चेन्मोहाद्धुतं तस्य वृथा भवेत्।।७० यथा जातोऽग्निमान्विप्रसान्निवासालये सद्।। तस्या एवानुचारेण होमस्तत्र विधीयते ॥७१ धर्मानुचारिणी भार्या सवर्णां यत्र तिष्ठति । कुर्यात्तत्राग्निहोत्रादि प्रवदन्ति महर्षयः ॥७२ ततश्चैवाभ्यसेद्वेदं शिष्यानध्यापयेदथ । पोध्यवर्गार्थमन्नादि याचयेत यथोचितस्।।७३ माता पिता गुरुर्भार्या पुत्रः शिष्यस्तथैव च । अभ्याश्रितोऽतिथिश्चैव पोष्यवर्ग इति समृतः ॥७४ मध्याह्रे च पुनः स्नायाद्वीतशुक्ताम्बरावृतः। श्रुत्युक्तविधिनाऽऽचम्य प्राङासीनः कुशासने ॥७४ गायत्र्याऽपश्चतसृणां पादे व्याहृतयः स्मृताः । सप्त मन्त्रशिरोमन्त्राः षड्भिराचमनं समृतम् (१) ॥७६ गायज्याश्च पिबेत्पादैरापो हि नवभिः स्पृशेत्। व्याहृतिभिः शिरोमन्त्रैरङ्गानि ब्रह्मयज्ञके ॥७७ पाणिगण्डूषकावोष्ठौ पाणिपादौ शिरो गुखम्। नासाबिलेऽक्षिणी श्रोत्रे नाभिहन्मस्तकेंऽसकौ ॥७८ आदान्तौ प्रणवी मन्त्रौ परतः पृष्ठतौ ह्युभौ । त्रद्यको मध्यतो मन्त्रो गायज्या शिरसः समृतः ॥७६

ऽच्यायः] सध्याह्यसानादि विधिपूर्वक ब्रह्मयज्ञविधान वर्णनम् १६६१

कम्बले वाऽजिने पीठे कुशासनविनासने। न कुर्यादुपविष्टो वे ब्रह्मयज्ञं द्विजाचेनम् ॥८० न कुर्यात्तर्पणं श्राद्धं धृत्वा भालेऽनुलेपनम्। कदाचित्कुरुते मोहान्नरकं प्रतिपद्यते ॥८१ दक्षिणं चोपविश्योरं वामगुल्फोपरि न्यसेत्। वामोरी दक्षिणं गुल्फं तचोपस्थमुदीरितम्।।८२ प्राणानायम्य संकल्प्य कुरापाणिधरः करम्। कृत्वा तु सन्यमुत्तानं न्यसेदुपरि दक्षिणम् ॥८३ सन्यस्य पाणेरङ्ग्रष्टप्रदेशिन्योस्तु मध्यतः। दक्षिणस्याङ्गुळीर्न्यस्य चतस्रोऽङ्गुष्ठवर्जिताः ॥८४ तथा सन्यकराङ्गुष्ठं दक्षिणाङ्गुष्ठवेष्टितम्। संबद्धमेवं कुर्वीत न्यसेइक्षिणसिक्थनि ॥८४ प्रागमे हे पविजे तु धृत्वाउन्सःसंपुटी करौ। संन्यसेइक्षिणे जानी ब्रह्मयज्ञं समाचरेत्।।८६ ॐपूर्वा व्याहृतीस्तिस्रः स्वरतः सकुदुचरेत्। गायत्रीमुबरेत्सम्यक्पादमर्धमृचं क्रमात् ॥८७ ऋषिदैवतच्छन्दांसि प्रणवं ब्रह्मयज्ञके । मन्त्रादी नोचरेच्छाद्धे यागकालेऽपि चैव हि ॥८८ अग्निमील इषे त्वादि वेदांश्चैव स्वशक्तितः। अध्यायमनुवाकं वा पठेत्यूक्तमृचं च वा ॥८६ उपवीतं यथा यस्मिन्धत्ते कर्मणि वैदिके । महाचारी गृहस्यश्च तद्वद्वासोऽपि धारयेत्।।६०

सच्यांसे च स्थिते सूत्रो तत्सव्यं चाथ दक्षिणे। अपसब्यं भवेत्कण्ठे लम्बे सूत्रो निवीतकम् ॥६१ न्यग्जानु दक्षिणं कृत्वा देवान्संतर्पयेद्दषीन्। तद्वजानुद्वयं चाथ जानूर्ध्वं दक्षिणं पितृन्।।६२ सब्येन तपयेहेवानृषींश्चैव निवीतिना। पितृंश्चैवापसन्येन विधिरेष उदाहृतः ॥६३ तर्पयेद्विधिनाऽनेन देवांश्चेवाङ्गुळ वतः। ऋषींश्च वामभागेन पितृन्दक्षिणभागतः।।६४ एकैकं चाथ द्वी द्वी वे त्रींखीनेकैकमञ्जलीन्। अर्हन्त्येते क्रमाश्चं(चै)व देवर्षिपितरस्रयः ॥६४ प्रयञ्जलि समुबार्य मन्त्रां द्वाद्वथाञ्जलिम् । देवर्षिपितृनामानि प्रोक्ता मन्त्रा महर्षिभिः ॥६६ पित्राद्यस्यक्षाऽऽदौ तिस्रो मात्राद्यस्ततः। सापत्नजननी मातामहाद्यस्यस्तथा।।६७ मातामह्याद्यस्तिस्रः स्त्रीसुतन्त्रातरस्तथा। पितृव्यो मातुलश्चैव दुहिता भगिनी तथा ॥६८ दौहित्रो भागिनेयश्च पितुर्मातुश्च वै स्वसा। श्वशुरो गुरवश्चैव मिर्ग चैवेति केचन ॥६६ पुत्राद्यः सपत्नीकाः स्त्रियश्चैवाह्(थ) केवलाः। तर्पणेऽभिहितास्तीर्थे गयायां च सहाख्ये ॥१०० उत्तवा पित्रादिसंबन्धं नामगोर्गं स्वधानमः। बह् वृचस्तु क्रमेणैव तपयामीति तपयेत् ॥१०१

संबन्धं नामगोत्रं च स्वधामुचारयेत्ततः। श्राद्धे ऽपि विधिरेष स्यादाश्वलायनशाखिनाम्।।१०२ सव्यहस्तानुलग्नेन दक्षिणेन तु पाणिना। कुर्याद्वह् वृच एवं तु देवर्षिपितृतर्पणम् ॥१०३ वह वृचस्तर्पणं कुर्याज्ञले वाऽप्यथ वर्हिषि। तर्पयेहेवतादीश्च बर्हिष्येव तु याज्जुषः ॥१०४ समृत्युक्तविधनाऽऽचम्य ब्रह्मयज्ञं समाचरेत्। संतर्प्य देवतादीश्च बह् वृचस्तत आचमेत्।।१७४ मध्याह्रे ब्रह्मयह्नो वै नानुबन्धवशाद्भवेत्। <mark>प्रातरोपासनादृध्वं कुर्यादस्तम</mark>यावधि ॥१०६ नेसकं तपणं कुर्याद् ब्रह्मयज्ञपुरःसरम्। तचैव देवतादीनां यदा वा स्नानपूर्वकम् ॥१०७ स्नानं वारुणिकं चैव कचित्कर्तुं न शक्यते। तत्राऽऽद्री ब्रह्मयज्ञार्थं मन्त्रस्नानं विधीयते ॥१०८ पुण्यकालनिमित्तं यत्तर्पणं क्रियते यदि । पितृणां केवलं तद्धि प्रवदन्ति महर्षयः ॥१०६ निमित्तं चोपरागादे रात्राविप तथैव च । तीर्थान्तरेऽपि तद्वत्यादेकाहेऽप्यसक्रद्भवेत्।।११० नैत्यकं तर्पणं कुर्यादहन्येव तु बह् वृचः। तर्पणं च तथा सौरं नैव रात्री कदाचन ।।१११ श्राद्धाङ्गं तर्पणं यामे प्रथमे मधुवद्भवेत्। पयो नीरं च रुधिरं क्रमाद्यामेषु च त्रिषु ॥ ११२

न कुर्याद्ब्रह्मयझं च श्राद्धात्वृर्वं मृतेऽहिनि। पित्रोः श्राद्धं विधायाथ वैश्वदेवं च तर्पणम् ॥११३ ब्रह्मयज्ञं च वे कुर्यात्संध्यां मध्यंदिनस्य च । उपस्थानं च सूर्यस्य पूर्वोक्तमिह तद्भवेत् ॥११४ कृत्वाऽऽदौ तर्पणं संध्यां कुर्याद्वह् वृच एव हि। आवर्तने परे सन्ध्यां कृत्वा कुर्याच तर्पणस्।।११४ शुद्धचर्थं चाऽऽत्मनोऽन्नस्य वैश्वदेवं समाचरेत्। सिद्धान्नेन च गृह्याग्नावन्यस्मिन्ननलेऽपि च ॥११६ एकपाकाशिनः पुत्राः संसृष्टा भ्रातरोऽपि ज। वैश्वदेवं न ते कुयुरैकं कुर्यात्पितव हि ॥११७ वैश्वदेवं कचित्कर्तुं न शक्रोति पितेव हि। पितुरेवाऽऽज्ञया कुर्यात्पुत्रो भ्राता परोऽपि हि ॥११८ एकान्नाशिषु पुत्रेषु भ्रातृष्वेकत्र सत्सु च। तरीको वैश्वदेवः स्याद्वह् वृचानामयं विधिः ॥११६ पुत्रः स्वार्जितमेकाशी स्याचेत्पितरि जीवति। वैश्वदेवं पृथक्कुर्याद्यत्र कुत्रापि वा वसन् ॥१२० वैश्वदेवं द्विजः कुर्यात्सदा कालद्वयेऽपि च। आरम्भो वैश्यदेवस्य दिवा चैव विधीयते ॥१२१ अर्छेकुयानलं चान्नमधिश्रियानले चरेत्। सिद्धमादाय सूर्याय घृताक्तं जुहुयाद्वविः ॥१२२ प्रजापतय इत्युक्ता सोमायेखादितः क्रमात्। हुत्वा दशाऽऽहुतीः सार्यकाले चाग्नय आदितः ॥१२३

ऽञ्यायः] सर्वेश्वदेवभूतवल्यतिथिभिक्षादानानांवर्णनम् । १६६५

परिषिच्यानलं चैव जुहुयाव्याहृतीरथ। एताभ्यो देवताभ्योऽग्नेः ष्टथग्द्द्याद्वलीन्भुवि ॥१२४ प्राक्संस्थानन्तराछं स्थादद्भ्य इत्यादितः क्रमात्। एता देयास्तथैव स्युः सूत्रोक्ता देवता इह ॥१२४ प्रागादिष्वाहुती हे हे इन्द्रायेत्यादितः क्रमात्। प्राक्संस्थे वाऽप्युद्क्संस्थे चतुर्दिक्षु यथाक्रमम्।।१२६ अग्रभागेऽन्तरालस्य दक्षिणे मूल उत्तरे। दिग्देवताहुतीनां च सममायतनं स्मृतम् ॥१२७ ब्रह्माद्योऽस्तराख्स्य मध्ये शिष्टाश्च देवताः। प्राक्संस्थात्रापि वै ताः स्यू रक्षोभ्य इति चोत्तरे ॥१२८ स्वधा पितृभ्य इस्टर्भ द्वान्मन्त्रेण भूतले। दक्षिणे चापसन्यं च पितृभ्योऽथ स्वधा नमः ॥१२६ वैवस्वतकुलोत्पन्नी महाबीरी सुरोत्तमी। शुनौ हो शा(श्या)मशबली पितृभागार्थिनौ सदा ॥१३० ताभ्यां चापि बर्लि दद्याद्यान्ये चोदकपृथक्षृथक्। सब्येनानेव मन्त्रेण शा(श्या)माय शवलाय च ॥१३१ हविश्च जुहुयादग्नाबुदेशत्यागपूर्वकम्। स्वाहान्से चैव सर्वत्र होमकर्मणि चात्र तु।।१३२। स्वाहा स्याद्भतयज्ञेऽपि पितृयज्ञे स्वधा समृता । यज्ञे मानुषके चैव हन्तकारो विधीयते।।१३३ अतो मनुष्ययशार्थं दचाहिप्राय वाऽनले। सनकादिभ्य इत्युक्तवा हन्तकारेण वै हिवः ॥१३४

कृत्वा मनुष्ययज्ञान्तमुपस्थायों च मे स्वरः। हविर्भुजं नमस्कृत्य गोत्रनासपुरःसरम् ॥१३४ जप्ता चैव तु गायत्री धारयेद्वोमभस्म च। स्मृत्वा यञ्जपति देवं हुतं तस्मै निवेदयेत् ॥१३६ एवं चापि दिवा कृत्वा सायं चापि तथैव हि। दिवाचारिभ्य इत्यन्न नक्तंचारिभ्य इष्यते ॥१३७ उक्तं कर्म यथाकाले यदि कर्तुं न शक्यते। अकाले वाऽपि तरकुर्यादुल्लङ्घ्य वाऽपकृष्य च ॥१३८ वैश्वदेवे तथा ब्रह्मयज्ञे चैव(ष) विधिः स्मृतः। संध्ययोरुभयोश्चैव वाऽपकर्षणभिष्यते ॥१३६ देवतादिपितृयज्ञान्तं सायं चापि यथाक्रमम्। भूतेभ्योऽपि बल्लि रात्रौ दद्यात्पात्रेण वे भुवि ॥१४० द्वारादिदेवताभ्योऽत्रं दद्यात्पितामहादितः। हुतरोषं च भूतेभ्यो ये भूता इति मन्त्रतः ॥१४१ प्रक्षाल्य पाणिपादं च समाचम्य यथाविधि । शान्ता पृथिवीति मन्त्रेण गृहं संप्रोक्षयेज्जलैः ॥१४२ कुर्यात्पञ्च महायज्ञान्नित्यशः सृतकं विना। अर्च्यान्ता सूतके संध्या स्नानं स्यादिप किंचन ॥१४३ वैश्वदेवं पुरा कृत्वा नित्ये चाभ्युद्ये तथा। स्वाभीष्टदेवतादिभ्यो नैवेदं विनिवेद्येत् ॥१४४ अकृत्वा देवयज्ञं च नैवेद्यं यो निवेद्येत्। तद्त्रं नैव गृह्वन्ति देवताश्चापि सर्वथा ॥१४४

पादप्रक्षालनं कुर्यादिप्राणां देवरूपिणाम्। स्वयं चापि समाचम्य विप्रांस्तादुपवेशयेत् ॥१४६ मधुपकं विना रात्री द्विजपादाभिषेचनम्। न कुर्यात्पूजयेद्विप्रान्गन्धपुष्पाक्षतादिभिः॥१४७ ततो विप्रान्समभ्यर्च्य यथाविभवसारतः। द्द्याद्(देयम)त्रं यथाशक्ति भिक्षाऽतिथिभ्य एव च ॥१४८ अन्नमामं च वै भिक्षां दद्यादहरहर्द्विजः। स सर्वव(वि)द्धुतः पाकाद्त्राद्य(द)पि च यद्भवेत्।।१४६ नित्यं ददाति यः साधुरत्रं वेदविदो मुखे। मुक्तः स्याद्दुरितात्पापाद् ब्रह्मसायुज्यमश्नुते।।१५० परान्नत्यागिनामेव द्द्यादामं विशेषतः। अन्नादशगुणं पुण्यं लभेदाता न संशयः ॥१५१ भिक्षां द्दाति विप्राय यतये ब्रह्मचारिणे। स सर्वेल्लिभते कामांस्ततो याति परां गतिम् ।।१४२ दत्तं नैव पुनर्दद्यादपस्त्रं पक्तमेव वा। पुनश्च दीयते मोहान्नरकं पतिपद्यते ।।१५३ पोष्यवर्गसमोपेतो भुञ्जीयात्सह बन्धुभिः। भोजने परिविष्टान्नं गायज्या चाभिमन्त्रयेत् ॥१५४ सत्यं त्वर्तेन मन्त्रेण जलेन परिषेचयेत्। ततो बलित्रयं कुर्यान्मन्त्रेणापः पिबेदथ ॥१५५ यमायाथ च चित्राय भूतेभ्यो नम उचरेत्। द्त्त्वाऽमृतोपस्तरणमसीत्युक्तवा पिबेद्पः ॥१५६

गृह्वीयादाहुतीः पञ्च सपवित्रेण पाणिना । त्यक्त्वा पवित्रमश्नीयाद्धृत्वा तत्युनराचमेत्।।१५७ पुत्रवान्पितृमांश्चेव भुक्त्वा श्राद्धीयभोजनम्। न कुर्याद्वोजने मौनं प्राणाहुतीर्विना ॥१६८ पङ्किभेदेन यो भुङ्के प्रासमात्रमपि द्विजः। अघं स केवलं भुङ्क्ते हतश्रीजीयते भ्रुवम् ॥१५६ उत्तराचमनं पीत्वा मुखं प्रक्षालयेच्छुचिः। भुञ्जतेभ्यस्ततो द्यात्ताम्बूलं मुख्शुद्धये ॥१६० भुक्त्वा चैव स्वयं विप्रः कुर्यात्ताम्बूलचर्वणम्। ततो नयेदहःशेषं श्रुत्यादिश्रवणादिभिः ॥१६१ स्पृशेदुच्छिष्टमुच्छिष्टः श्वानं शूद्रमथापि च । उपोष्य रजनीमेकां पश्चगव्यं पिवेच्छुचिः ॥१६२ श्वानं शूद्रं तथोच्छिष्टमनुच्छिष्टो न संस्पृशेत्। मोहाद्विप्रः स्पृशेद्यस्तु स्नानं तस्य विधीयते ॥१६३ उच्छिष्टस्पर्शने स्नायाद्बाह्मणो विधिवर्जितम्। ब्रह्मविद्भजनोच्छिष्टपात्रचाळं विनेव तु ॥१६४ विप्रश्चेव स्वयं कुर्याद्दिजभुक्पाशचालनम्। प्रक्षालय पाणिपादं च द्विराचान्तः शुचिर्भवेत् ॥१६४ पात्राणि चालयेच्छ्राद्धे स्वयं शिष्योऽथ वा सुतः। असंस्कृतो न च स्त्री च न चान्यश्चालयेत्कचित्।।१६६ परपाकरुचिर्न स्यादनिन्यासन्त्रणाहते। कदाचित्स्यादापदि तु नैव नित्यं कदाचन ॥१६७

उच्छिष्टस्पर्शने चैव भुञ्जानश्च भवेद्यदि । पात्रस्थं चापि वाऽरनीयाद्ननं पात्रस्थितं च यत् ॥१६८ गायत्रया संस्कृतं चान्नं न त्यजेदभिमन्त्रितम्। गृहीतं चेत्पुनश्चाद्याद् गायत्रीं च शतं जपेत्।।१६६ अन्नं पर्युषितं भोज्यं स्नेहाक्तं चिरसंचितम्। अस्नेहा अपि गोधूमा यवगोरसविक्रियाः ॥१७० अपूपसक्तवो धानास्तकं दधि घृतं मधु । एतत्पण्येषु भोक्तव्यं भाण्डलेपो न चेद्भवेत्।।१७१ अन्नाक्तभाजनस्थानि दूष्यन्ते तानि चैवं हि । शुद्धभाण्डस्थितानीह प्राह्याण्याहुर्मनीषिणः ॥१७२ बाह्यं क्षा (क्षो) रविकारं स्यात्सर्वं चैवेक्षुसंभवम् । तैलक्षीराज्यपकं च जलसंमिश्रितं न हि ॥१७३ परान्नं नैव भुञ्जीयात्स्वकीयं चान्यपाचितम्। संस्काररहितं चैव नाश्नीयाद् ब्राह्मणः कचित् ।।१७४ ब्राह्मणो नैव भुञ्जीयाद्दुहित्रन्नं कदाचन। अज्ञानाद्यदि भुञ्जीत रौरवं नरकं व्रजेत् ॥१७४ पत्नी स्तुषा स्वयं पुत्रः शिष्योऽथ वा गुरुः सुतः । आचार्यो वा पचेदन्नं भुङ्गीयात्तन्न दुष्यति ॥१७६ शाकपाकादिकं निन्दं योऽन्नमद्यात्स्वकीयकम्। कचिच्छिष्टान्नमश्नीयाद्वत्सराभ्यन्तरे द्विजः ॥१७७ यद्येकत्र पचेदाममात्मनश्चापरस्य च। यस्तदननं द्विजो भुङ्क्ते प्राजापत्येन शुध्यति ॥१७८

न चैकत्र पचेदामं बहूनामथ वा द्वयोः। निषेधोऽयं परेषां तु पुत्रादीनां न हि कचित्।।१७६ एवं भुत्तवा द्विजञ्जैव श्रुत्वा श्राद्धस्य वै कथाम्। श्रुतिस्यृतिपुराणोक्तमितिहासं पुरातनम् ॥१८० घटिकैकाऽवशिष्टा स्याद्रवेरस्तमितस्य च। प्रक्षाल्य पाणिपादं च द्विराचानंतः शुचिर्भवेत् ।।१८१ प्राङासीनः समाचन्य प्राणायामपुरःसरम्। पूर्वोक्तविधिना चैव सायंसंध्यां समाचरेत् ॥१८२ आदित्येऽस्तमिते यावत्तारकादर्शनं न हि। सायंहोमं तदा कुर्यान्नो चेत्स्युर्नव नाडिकाः ॥१८३ वैश्वदेवं पुनः सायं कुर्याद्यज्ञत्रयं च हि। दैवं भूतं तथा पै(पि)त्र्यं भुत्तवा स्वाध्यायमभ्यसेत् ॥१८४ ततः स्वपेद्यथाकामं न कदाचिदुद्क्शिराराः। एतावन्नैत्यकं कर्म प्रवदन्ति मनीषिणः ॥१८४ अनेन विधिना यस्तु नैत्यकं कुरुते द्विजः। स याति परमं स्थानं पुनरावृत्तिदुर्लभम् ॥१८६ प्रयहं कर्मको(णो) योगः स्वाध्यायाभ्यसनं तथा। मन स्वस्थतया योगः स एवाऽऽत्मप्रकाशकः ॥१८७ त्यक्त्वेन्द्रियसुखं छोके यस्तिष्ठेद्यत्र कुत्रचित्। स एव योगी मुक्तः स्यात्सर्वसङ्गविवर्जितः ॥१८८ यः कचिन्मानवो लोके वारणस्यां त्यजेद्वपुः। स चाप्येको भवेन्युक्तो नान्यथा मुनयो विदुः॥१८६ इलाश्वलायनधर्मशास्त्रे ब्रह्ममार्गाचाराध्यायः [रप्रकरणम्]

शथ द्वितीयोऽध्यायः ॥अथ स्थालीपाकंप्रकरणम् ।

स्थालीपाकस्य चाऽऽरम्भः पौर्णमास्यां विधीयते । अग्निमान्त्रतिपद्येव प्रातरीपासनं चरेत् ॥१ प्रातरीपासनं हुत्वा ततोऽन्वाधानमाचरेत्। स्थालीपाकं करिष्येऽहं होमः श्वः प्रातरेव हि ॥२ सद्यस्कालो भवेदाद्वा कुर्याद्यत्र द्वयं न हि। अन्वाधानं ततः कुर्यात्स्थालीपाकं तथैव हि ॥३ प्राणानायम्य संकल्प्य विधाय स्थण्डिछं शुचिः। हस्तमात्रं चतुष्कोणं गोमयेन विखिष्य च ॥४ तण्डुलान्प्रकिरेद्रेलामुद्रम्संस्थां लिखेद्थ । प्राक्संस्थे पार्श्वयोर्मध्ये तिस्त्रश्चेवोदगायताः ॥६ निदध्याच्छकलं तत्र प्रोक्ष्य प्राप्नं निरस्य च। संप्रोक्ष्य पुनरद्भिश्च तथा चानलमानयेत्।।६ एहोत्यम्नि समादाय स्थापयेद्भूभूवः स्वरोम्। अग्निनाऽग्निस्ततो जुष्टः मनूनं तिस्र एव च ॥७ ध्यानं चत्वारि शृङ्गेति कुर्यादग्नेर्यथाविधि । विज्योतिषेत्यनेनैव मन्त्रेणाप्नि संमिन्धयेत् ॥८ ध्यात्वा रूपं ततो वह देशयेदेष हीत्यथ । धृत्वा तु सिमधी चाप्रिमप्रीषोमी च देवते ॥६

प्रधानदेवते चोत्त्वा तथा चैवाङ्गदेवताः। कमेण चरुणाऽऽज्येन सद्यो यक्ष्य इति क्षिपेत्।।१० पर्यूहनं ततः कुर्याज्ञलेन परिषेचयेत्। अनादेशे तु सर्वत्र दक्षिणः पाणिरच्यते ॥११ पाणिना सोदकेनाग्नेः समन्तात्परिमार्जनम् । अनुलेपमुदक्संस्थं कुर्यादीशानकोणतः १२ पर्युक्षणेऽप्युदक्संस्यं पाणिनेशानकोणतः। पुनरावर्तयेत्प्रत्यगीशानान्तं हविभुजम् ॥१३ प्रसारयेदुद्दर्शंस्थान्पूर्वप्रश्चिमयोः कुशान्। दक्षिणोत्तरतश्चेव प्राक्संस्थानपूर्वतः क्रमात् ॥१४ मुष्टिमार्जैः कुशैरानैः समन्ताद्धोमकर्मसु । परिस्तृणीयास्त्रागम्रेश्चतुद्क्षु यथःक्रमम् ॥१५ विन्यसेन्कुशमूळानां कुशायानुपरि क्रमात्। दक्षिणोत्तरयोश्चैव चतुष्कोणेषु चव हि ॥१६ आस्तीर्याग्नेरुद्धर्भान्प्रायप्रान्रत्निसंमितान्। द्वंद्वमासाद्येन्न्युञ्जं यज्ञपात्राणि तत्र तु ॥१७ स्थाली च प्रोक्षणा दवीं सुवः पूर्णाज्यभाजने। इध्मं चैव तथा वर्हि चरुहोमे विधीयते ॥१८ चौलोपनयनोद्वाहे पुनराधन एव च। प्रोक्षणीं सुवपूणाज्यमिध्माबर्हिसुवाज्यके ॥१६ अष्टाङ्कुलमितस्थाली प्रोक्षणी च षडङ्कुलाम्। चमसं चाऽऽज्यपात्रं च षडङ्कुलमिति समृतम् ॥२०

ऽध्यायः]स्थाल्यादीनांप्रमाणं,पूर्णपात्रस्थापनादिकमेनिरूपणम् १७०३

सुक्सुवौ हस्तमात्रौ तु स्यातां तौ यज्ञकर्मणि। द्विपादेशो भवे दिन्मो वर्हिः प्रादेशसंमितः ॥२१ आदायाऽःदौ कुशांस्त्रींस्त्रीनमूलर्मूलानि वेष्टयेत् । सव्यावृत्तान्कुराान्कुर्याद्धस्तात्तान्नयेदुद्क् ॥२२ वामस्थानितरांस्तद्वत्कुर्याद्रज्जुं त्रिसंधिताम्। उपविष्टां नयेत्तद्वतृतीयावर्तनं च हि ॥२३ रज्ज्रोधमं सक्ररावेष्टच रज्जुमूळं तथैव च। वेष्टितायाश्च पूर्वाया रज्ज्यमं च नयेद्धः ॥२४ रज्जुपन्थिमधः कृत्वा प्रागग्रान्सध[द]येद्थ । स्याचताम्रमयी स्थाली होमे कांस्यमयी पि वा।। तथा स्युः प्रोक्षणादीनि यथालाभानि वाऽपि वा ॥२५ दण्डपा[मा]त्रयुतौ शस्तौ सृक्सुवौ यागदाहजौ। तद्भावेऽथ वाऽश्वत्थपर्णकौ वाऽप्युदुम्बरौ ॥२६ प्रोक्षणं न्यक्पवित्राभ्यां प्रोक्ष्येत्सिळ्ळं ततः। कृत्वोत्तानं पवित्रो ते निधायापः प्रपूजयेत् ॥२७ सोदकाभ्यां पवित्राभ्यां त्रिः समुत्पृय चैव हि। कुर्यादेकैव मुत्तानं द्वंद्वं च प्रोक्षयेत्पुनः ॥२८ विस्रस्येधां तथा बर्हिर्निद्ध्या इससे च ते। पविजे पूर्येद्वारि गन्धपुष्पाणि च क्षिपेत्। १२६ निरस्य नैर्भृतान्दर्भान्निरस्त इति मन्त्रतः। कर्ताऽऽचरेदिमं मन्त्रमुत्तवा विष्टः कुशासने ॥३०

ब्रह्माणं वरयेदस्मिन्कर्मणि त्वं भवेरिति। ब्र्याद्ब्रह्माऽहमस्मीति ततः कर्ता तमर्चयेत्।।३१ भृत्वा पूर्णं करे सन्ये विधायोपरि दक्षिणम्। ब्रह्मन्नित्युचरन्मन्त्रं नीत्वा तन्नासिकात्रतः ॥३२ निद्ध्यादुद्गम् तन्मन्त्रंणों प्रणयेति च। कुशैराच्छादितं कुर्यात्पूर्णपात्रं तदुच्यते ॥३३ शूपं पश्चान्निधायाग्नेः पवित्रे स्थापयेच ते। निर्वपेचतुरोमु शस्तानेव प्रोक्षयेदथ ॥३४ तण्डुलानवहंस्रोस्रोन्कृत्वा तांस्निः फलीकृतान्। त्रिः प्रक्षाल्य पचेदग्नेरुद्दचेवाऽऽज्यभाजने ॥३४ सपवित्रे निषिच्याऽऽज्यं ततोऽङ्गारानपोह्य च। तत्राऽऽज्यभाजनं स्थाप्य संस्कुर्यादुल्मुके न च ॥३६ निक्षिपेत्कुशयोरग्नेः पर्यग्निकरणं ततः। त्रिः कुर्याज्ज्वलता तेन तत्प्राक्पारेहरेद्थ ॥३७ कर्षत्रिवोदगुद्वास्य भाजनं घृतपूरितम्। कुशामे निक्षिपेदग्नौ स्कन्दायेत्युचरन्नथ ॥३८ धृत्वा तूत्तानपाणिभ्यां पवित्रो चोद्गवके। सवितुष्ट्रति मन्त्रोण सक्तत्तूष्णी द्विरिष्यते ॥३६ उत्पूयाऽऽज्यं पवित्रो ते प्रोक्ष्याग्नौ प्रहरेद्कः। प्रसगासादयेद्ग्नेबंर्हिस्तचाऽऽज्यभाजनम् ॥४० प्रताप्य सकुशो द्वींस्वी द्वीं निधाय च। सब्येन स्रुवमादाय कुशानितरपाणिना ॥४१

ऽध्यायः] आज्योत्पवनं, स्नुवसंस्कारादिकर्माभिधानवर्णनम् १७०५

स्वस्य बिलमारभ्य यावद्र्यं भवेद्थ । अवतो बिलपृष्ठं तु तदारभ्य भवेद्विलम् ॥४२ निमृजेत्त्रिखरेकं तु कुशायैः सन्यवच हि। कुरामृलैश्च वै दण्डं कुरौः प्रोक्ष्य प्रतापयेत् ॥४३ आसाद्येतस्वं चाऽऽदी वर्हिष्युत्तरतो घृतात्। संस्कुर्यात्पूर्ववद्दवीं निद्ध्यादुद्धरे स्नुवान् ॥४४ संमार्जितान्कुशान्त्रोक्ष्य प्रहरेदनहे च तान्। सम्य गाज्यं निरीक्ष्याथ चर्ह पक्रमवेक्षयेत्।।४५ अभिघार्य सुवेणाऽऽज्यं चह्रमुद्वासयेदुदक्। ह्विर्भुगात्मनोश्चव मध्यतश्चरमानयेत् ॥४६ निद्ध्यात्तां चरोः स्थालीं बर्हिष्याज्यं च दक्षिणे। अभिघार्य चर्रं चान्यत्पात्रं स्यादुत्तरे चरोः ॥४७ देवतायै हविः स्थाप्य तत्र तद्विभजेत्क्रमात्। अमुष्ये चेदमित्युक्त्वा यथालिङ्गं यथाऋतु ॥४८ विश्वानीत्यष्टभिः पादैः पूर्व(र्वा)तो दिश्च चाष्ट्स । अर्चयेद्गन्धपुष्पाद्यैरिमं स्तुयाद्वृ(ह)चाऽऽन्स्यजा ॥४६ अलंकुत्याभिघार्येध्ममादायायं त इत्यथ । हुत्वेध्मं जुहुयादाज्यं तूष्णीं वायव्यकोणतः ॥५० ततश्चाऽऽग्नेयपर्यन्तं प्रजापतिमिदं समरेत्। स्वाहेत्युक्त्वाऽथ निऋ तिमारभ्येशानकोणतः ॥५१ गृह्यवद्गिरिमौ मन्त्रावाघाराविति भाषितौ। होमे चैव तु सर्वत्र विधिरेष उदाहृतः ॥ १२

अग्निरचेव तथा सोमश्रक्षणी जातवेद्सः। भवेदुत्तरमाग्नेयं सौम्यं चैवाक्षि दक्षिणम् ॥५३ सक्तुळाजात्रहोमे तु जुहुयादेव चक्षुषी। अनुप्रवचनीये च वर्जयेदाज्यहोमके ॥५४ अभिघार्य सुवेणेद्माग्नेयं मध्यतो हविः। द्वीं च ह्विरादाय विधिना स्थापयेदिह ॥५५ तर्जनीमध्यमांङ्कुष्ठपर्वमात्रं च वै स्रूचि । तत्पुरस्तात्तथाऽऽदाय निद्ध्यात्तत्तथैव हि ॥५६ पात्रस्थं चापि द्वींस्थं पुनरप्यभिघारयेत्। पश्चावत्तो तु पश्चार्धादादाय च हविस्तथा।।५७ जुहुयादग्नये स्वाहा दर्व्या मध्ये तु नेत्रयोः। आदाय चाग्नीषोमाभ्यामुत्तरस्थं च पूर्ववत् ॥ ४८ मन्त्रमुचार्य सर्वत्र स्वाहान्ते जुहुयाद्वेविः। समुबार्य चतुर्थ्यन्तं नामेदं न ममेति च ॥५६ द्वयोश्चापि हविःशेषं द्वयोश्चापि अवद्य च। दर्वा सकृदवद्याच द्विस्ततो वाऽभिघारयेत्।।६० यदस्येत्यनया हुत्वा प्रागुद्कु हविर्भुजः। रुद्राय जुहुयाद्रज्जुं विस्नंस्याचेध्मबन्धिनीम् ॥६१ सुक्सुवाज्याहुतेः शेषं विश्वेभ्यो जुहुयादथ । सर्वत्र जुहुयाद्धोमे प्रायश्चित्ताहुतीरथ ॥६२ अयाश्चाग्न इदं विष्णुश्चतस्रो व्याहृतीश्च हि। ब्रह्माऽपि जुहुयादेताः प्रायश्चित्ताहुतीरिमाः ॥६३

अनाज्ञातमिति द्वाभ्यां ज्ञाताज्ञतानिवृत्तये। सर्वत्रापि हि चैवं स्याद्विधिरेष उदाहृतः ॥६४ यत्पाकत्रोति मन्त्रोण न्यूनाधिकनिवृत्तये। मन्त्रतन्त्राधिकन्यूनविपर्याश्चत्स)विकर्मणः ॥६५ स्वरवर्णाद्छोपोत्थपापनिईरणाय च। यद्व इत्यनेनाजैकामाहुतिं जुहुयाद्थ ॥६६ सम्यक्पूर्णफलप्राप्त्यं होमस्येह कृतस्य च। कर्तेव जुहुयादाज्यं व्याहृतीभिश्चतसृभिः।।६७ खाल्यादीनि च पात्राणि नीत्वा तूष्णीं निधाय च। चमसं पुरतः कृत्वा निधायाथ च बर्हिषि ॥६८ पूर्णमसीत्यनेनैव तत्पूर्णमभिमन्त्रयेत्। दिशः प्रागायतो दभैः प्राच्यां मन्त्रेण मार्जयेत् ॥६६ आपो अस्मानिद्मापः सुमित्र्या न इति त्रिभिः। शिरसि स्वस्य पत्न्याश्च मार्जयेद्द्विष्म इत्यधः॥०० स्वस्य वामेऽञ्जलौ पत्न्या आसीनाया निषिश्वयेत्। माऽहं प्रजामनेनैव चमसस्थं जलं च हि ॥७१ जलेन तेन वै होता प्रोक्षयेच्छिरसी तयोः। तत्रस्थानक्षतांश्चेव क्षिपेत्प्रणवमुचरेत्।।७२ परिस्तरणदर्भाश्च विसृजेदुत्तरे हि तान्। ओं च म इत्यनेनारिन नत्वा पूर्ववदुचरेत् ॥७३ पर्यू (यु) ह्य परिषिच्याथ गन्धपुष्पक्षतांश्च हि। धूपं दीपं च नैवेद्यं द्यात्ताम्बूळदक्षिणाः ॥७४

तिष्ठन्नग्नेरुपस्थानं कूर्यादों च म इत्यथ ।
अभिवाद्य जपेदेवीं कृतं कर्म निवेदयेत् ॥७६
ग्रुभाशुभिक्रयार्थं च दत्तं विप्राय यद्धनम् ।
तत्सवं जगदीशस्य प्रीतये निश्चितं भवेत् ॥७६
हुतशेषं हविश्चाऽऽज्यं होत्रे दद्याच दक्षिणाम् ।
सुवर्णं च यथाशक्ति होमसाद्गुण्यहेतवे ॥७७
होमान्ते ब्रह्मणे द्याद्यज्ञपात्राणि चैव हि ।
होमे चैव तु सर्वत्र प्रवदन्ति मनीषिणः ॥७८
दर्शके पूर्ववत्सवं विशेषस्त्वथं कथ्यते ।
अग्नीषोमपदस्थान इन्द्राग्नी(ग्नि)पद्मुचरेत् ॥७६
पालाशस्तादिराश्वत्थशम्युदुम्बरजास्तथा ।
सिमधः खादिराः शस्ता होमकर्मसु चैव हि ॥८०
इत्याश्वलायनधर्मशास्त्रे स्थालीपाकप्रकरणवर्णनम् ।

॥ तृतीयोऽध्यायः ॥ अथ गर्भाधानप्रकरणम् ।

गर्भाधानं द्विजःकुर्याहतौ प्रथम एव हि। चतुर्थदिवसादृष्वं पुत्राधीं दिवसे समे ॥१ चरं दारुणभं पौष्णं दस्राग्नी च द्विदेवतम्। श्राद्वाहं चैव रिक्तां च हित्वाऽन्यस्मिन्विधीयते ॥२

नान्दीश्राद्धं पतिः कुर्यात्स्वस्तिवाचनपूर्वकम्। उपलेपादिकं ऋत्वा प्रातरीपासनादितः ॥३ प्रजापतेश्वरोरेकां हुत्वा चाऽऽज्याहुतीरथ। विष्णुर्योनि नेजमेष षडेका च प्रजापतेः ॥४ आसीनायाः शिरः सृष्ट्रा प्राङ्गुख्याः पाणिनापतिः। तिष्ठञ्जपेदिमे सूक्ते त्वपनश्च वघेन व ॥४ अग्निस्तुविश्रवरू ममित्यृचौ द्वे तथैव च। सूर्यो नो दिव इत्येतैः स्तुत्वा सूर्यं च पश्वभिः ॥ १ अश्वगन्धारसं पत्न्या दक्षिणे नासिकापुटे। उदीर्घ्वेति पठन्मणं सिञ्चेत्तद्वस्रशोधितम्।।७ ततः स्विष्टकृदादि स्याद्वाससी च नवे तयोः। फलानि च पतिस्तस्यै प्रद्द्यात्फलमन्त्रतः ॥८ मातुलिङ्गं नारिकेलं रम्भाखर्जूरपूरकम्। शस्तानि स्युरथान्यानि नारिङ्गादीनि वाऽपि च ॥६ वृषभं गां सुवर्णं च होत्रे द्दाच दक्षिणाम्। पुत्रवान्धनवांस्तेन भवेत्कर्ता न संशयः ॥१० भोजयित्वा द्विजानसम्यक्तोषयेदक्षिणादिभिः। संतुष्टा देवताः सर्वाः प्रयच्छन्तीप्सितं फलम् ॥११ स्थालीपाकं चाऽऽव्रयणं गर्भसंस्कार्कर्मसु । प्रातरौपासने कुर्यादग्नौकरणमेव च ॥१२ प्रसन्नातमा भवेत्कर्ता भुञ्जीत सह वन्धुभिः। तस्मिन्नेव दिने रात्री गर्भारोपणमिष्यते ॥१३

पतिवत्या(त्न्या)श्च दुर्भेद्यं प्रथमं स्याद्रजो यदि ।
पत्युस्तस्या भवेन्मृत्युः स्वी(स्वि)पूर्वाहियमेषु च ॥१४
मघाशक्रशिवादित्यविह्नभेषु च वा भवेत् ।
तत्रापि स्यान्महाशोको द्रिदं चानपत्यता ॥१६
तद्दोषपरिहारार्थं कुर्याच्छान्ति यथाविधि ।
तोषयेज्जपहोमाभ्यां तत्तदृक्षादिदेवताः ॥१६
आचार्यादीन्समभ्यच्यं भोजयेच्छ्रक्तितो द्विजान् ।
तदुद्दिश्य कृतेनाऽऽशु सर्वारिष्टं प्रणश्यति ॥१७
शान्तिकर्मविधानेन कृत्वाऽन्यस्मिन्दिने शुभे ।
गर्भाधानं ततः कुर्यादित्याचार्योऽज्ञवीदृचः ॥१८
अकृत्वा शान्तिकं कर्म न कुर्याद्गर्भसाधनम् ।
सर्वेषां शास्त्रिनामेव विधिरेष उदाहृतः ॥१६
इत्याश्वलायनधर्मशास्त्रे गर्भाधानप्रकरणम् ।

॥ चतुर्घोऽष्यायः ॥

अथ पुंसवनानवलोभनसीमन्तोष्ट्रयनप्रकरणम्।

कुर्यात्पुंसवनं मासि तृतीयेऽनवलोभनम्। सीमन्तोन्नयनं चैव चतुर्थे मासि तद्भवेत्।।१ नो चेत्पष्ठेऽष्टमे वाऽपि कर्तव्यं तद्द्वयं च हि। तावदेव भवेत्केचिद्यावस्याद्गर्भधारणम्।।२

ऽध्यायः] पुंसवनानवलोभनसीमन्तोन्नयन प्रकरणवर्णनम् १७११

पुष्यादित्याश्विनीहस्तविधिमूलोत्तरामृगाः। हरिपूषानुराधाश्च शस्तं पुंसवनादिकम् ॥३ कृत्वाऽऽभ्युद्यिकं श्राद्धं चतुर्ध्यन्तं च पूर्वकम्। द्धिमाषौ यवं तस्या निधाय प्रसृतौ च तान् ॥४ त्रिः पिबेत्कि पिबसीति पतिः पुंसवनं हि सा। प्रेाक्ष्यापः पुनरेव स्यात्त्रिवारं <mark>पु</mark>नराचमेत् ॥५ सिञ्चेद्दूर्वारसं तस्या दक्षिणे नासिकापुटे। आ ते गर्भ इति द्वाभ्यां सूक्ताभ्यां तावदुच्यते ॥६ प्रजापतये स्वाहेति जुहुयादाहुतिं चरोः। गुर्विण्या हृद्यं सृष्ट्रा यत्ते मन्त्रमुदीरयेत् ॥७ धाता ददातु मन्त्रौ द्वौ तथा राकामहं च तौ। नेजमेषत्रयो मन्त्रा एको मन्त्रः प्रजापतेः ॥८ अष्टावाज्याहुतीहु त्वा त्रिशुक्कशललीकुरौः। औदुम्बरेण युग्मेन ग्लफ्थे(द्रप्से) न सफलेन च (?) ॥६ पूर्णसूत्रावृतेनेह सहैवैकत्र मेव च। त्रिरुत्रयेति गर्भिण्याः सीमन्तेन समूलतः (?) ॥१० कृतकेशविभागं स्याद्योषिद्भालाग्रभागतः। सीमन्तं सधवाचिह्नं सदां सौभाग्यदायकम् ॥११ तिष्ठन्पश्चात्प्राङ् मुखोऽन्तेरुचरन्भुरभृवः स्वरोम्। चतुर्थ्योमूहतं कृत्वा विद्वायां तु निरुध्यते (!) ॥१२ सामस्वरेण मन्त्रं च सोमं राजानमुचरेत्। समीपस्थनदीनाम समुचार्य नमेद्थ ॥१३

पतिपुत्रवती नारी गर्भिण्या(णी)मुपदेशयेत्। मा कुरु क्लेशदं कर्म गर्भसंरक्षणं कुरु ।।१४ ततः स्वष्टकृदादि स्याद्धोमशेषं समापयेत्। पूर्ववत्फलदानानि कृत्वाऽऽचार्याय दक्षिणाम्।।१४ वृषभं घेनुसंयुक्तं दद्याद्विभवसारतः। भोजयेच्छक्तितो विप्रान्कर्मसाद्गुण्यहेतवे ॥१६ प्राशनं यत्पुंसवनं होमश्चानवलोभनम्। प्रतिगर्भमिदं कुर्यादाचार्येणेह आषितम् ॥१७ <mark>आज्यहोमश्च रा</mark>ळळी<mark>कुराल्यप्सु निमज्जनम् ।</mark> सीमन्तोन्नयनं तच प्रतिगर्भे न हि स्मृतम् ॥१८ प्रधानं पुंसवनं न स्यादङ्गं चानवलोभनम्। सीमन्तं च तथैव स्यात्केचिदुन्नयनं तथा ॥१६ इत्याश्वलायनधर्मशास्त्रे पुंसवनानवलोभनसीमन्तो न्नयन [प्रकरण]म्

।। पञ्चमोऽध्यायः ॥
अथ जातकर्मप्रकरणम् ।
जाते सुते पिता स्नायान्नान्दीश्राद्धं विधानतः ।
जातकर्म ततः कुर्यादैहिकामुब्मिकप्रदम् ॥१
सौवर्णे राजते वाऽपि पात्रे कांस्यमयेऽपि वा ।
मधुसर्पिर्निषिच्याथ हिरण्येनावघर्षयेत् ॥२

प्राशयेत्तं हिरण्येन कुमारं मधुसर्पिषी । प्रतिमन्त्रं पठेत्कर्णे हिरण्यं स्थाप्य दक्षिणे ।।३ तथा वामे जपेन्मेघां स्षृशेदंसावतः परम् । अश्मा भव जपेदिन्द्रः श्रेष्ठान्यस्मै प्रयान्ति च ।।४ एवं कुर्यात्सुतस्यैव तृष्णीमेव च योषितः । केचिदिच्छन्त्यनादिष्टहोममन्त्रादिना परे ।।४

इत्याख्वलायनधर्मशास्त्रे जातकर्मप्रकरणम्।

॥ षष्ठोऽध्यायः ॥

अथ नामकरणप्करणम्।

अहन्येकादशे कुर्यान्नामकर्म विधानतः।
कृत्वाऽऽभ्युद्यिकं श्राद्धं द्वादशे षोडशेऽपि वा।।१
मार्गशीर्षं समारभ्य मासानां नाम निर्दिशेत्।
नक्षत्रपादतो जातजन्मनाम तदुच्यते।।२
यद्वा तातपिताना(तुर्ना)म भवेत्संव्यावहारिकम्।
कृमेणानेन संख्ख्य नामानि च समर्चयेत्।।३
समाक्षरयुतं नाम भवेत्पंसः सुखप्दम्।
विषमं यदि तत्र श्रीः (श्री) समेतं च विनिर्दिशेत्।।४
आचार्येणात्र मन्त्रोऽयं नामानि तु उदाहृतः।
नमस्करोत्यसौ देवं ब्राह्मणेभ्यः पिता वदेत्।।६

त्रिक्षिः स्यात्प्रतिनामैवं ततः स्वस्तीति निर्दिशेत्।
भवन्तोऽस्य ब्रुवन्येवं प्रतिब्रुयुस्तथा द्विजाः ॥६
तत्तन्नाम शिशोस्त्रिस्त्रित्र्यात्तत्र तथाऽऽशिषः।
ब्राह्मणान्भोजयेच्छक्त्या भुझीयात्सह बन्धुभिः॥७
इत्याश्वलायनस्मृतौ नामकरण[पृकरण]म्॥

।। सप्तमोऽध्यायः ॥ अथ निष्क्रमणपूकरणम्।

मासे चैवं चतुर्थे तु कुर्यानिष्क्रमणं शिशोः।
कृत्वाऽऽध्युदयिकं श्राद्धमादायाङ्के शिशुं पिता।।१
स्वस्ति नो मिमीतां सूक्तं जपन्देवादिकं नयेत्।
आशुः शिशान इत्येतत्पठेत्तं श्वशुरालयम्।।२
नीत्वाऽन्यस्य गृहं वाऽपि प्राङ्गणे वाऽर्कमीक्षयेत्।
तचक्षुरिति मन्त्रेण दृष्ट्वाऽकं प्रविशेद्गृहम्।।३
इत्याश्वलायनस्मृतौ निष्क्रमण[प्रकरण]म्।।

ऽष्यायः] अन्नप्राशनं, चौल(चूड़ाकरण)कर्मप्रकरण**ञ्चवर्णनम् । १७१**४

॥ अष्टमोऽध्यायः॥

अथान्नप्राशनप्रकरणम्।

षष्ठेऽन्नप्राशनं कुर्यान्मासे पुंस्यष्टमेऽथ वा।
दशमे द्वादशे मासि केचिदेवं वद्दन्ति हि।।१
कृत्वाऽऽभ्युद्यिकं श्राद्धं शुभे चैव दिने पिता।
सौवर्ण राजते पात्रे कांस्ये वाऽथ नवे शुभे ॥२
क्षीराज्यमधुद्ध्यन्नं विधाय प्राशयेच्छिशून्।
मन्त्रेणान्नपतेऽन्नस्य हिरण्येन स्नुवेण च॥
पाणिना सपवित्रेण जलं चापि हि पाययेत्।
दत्त्वा विप्राय तत्पात्रं तूष्णीमेव च योषितः ॥४
ततो विभवसारेण न्नाह्मणांश्चापि भोजयेत्।
स्वयं चेव तु भुञ्जीयात्समाहितमना भवेत्।॥६
इत्याश्वलायनस्मृतावन्नप्रशन[प्रकरण]म्।

।। अथ नवमोऽध्यायः ॥
अथ चौल(चूड़ाकरण)कर्मप्रकरणम्
तृतीये वत्सरे चौलं बालकस्य विधीयते ।
शुभे चैव दिने मासि विहितं चोत्तरायणे ॥१
कृत्वाऽऽभ्युद्यिकं श्राद्धं पूर्वेद्युरपरेऽहिन ।
प्रातःसंध्यादिकं कृत्वा नान्दीश्राद्धं परेऽहिन ॥२

206

प्राणानायम्य संकल्प्य कुर्वीत स्थण्डिलादिकम्। पात्रासादनपर्यन्तं कृत्वा धान्यानि पूरयेत् ॥३ **उद्गग्नेः शरावेषु प्राक्सं**स्थेषु नवेषु च। तेषु वै क्रमतो व्रीहियवमाषतिलांश्च हि ॥४ पुरतः स्थे शरावे च विन्यसेद् वृषगोमयम्। तदुत्तरे नवेऽन्यस्मिञ्झमीपर्णानि पूरयेत्।।४ आघारान्तं ततः कुर्यात्कृत्वोत्तानानि पूरयेत्। ततश्च जुहुयादाज्यमिश्चेति चतसृभिः॥६ अम्र आयूंषि पवस इत्येका च प्रजापतेः। एता एवोपनयने गोदाने च विवाहिके।।७ मातुरङ्कोपविष्टस्य कुमारस्य तु चैव हि। पश्चातिथत्वा पिता शीतं जलमादाय पाणिना ॥८ द्क्षिणेनाथ सन्येन पाणिनोष्णं जलं तथा। दक्षिणोत्तरयोस्तत्र निनयेत्केशपक्षयोः ॥६ उष्णेन वायमन्त्रेण जलधारे तयोश्च ते। अनामिकाया चाऽऽदाय नवनीतं तथा दिध ॥१० प्रदक्षिणप्रकारेण वामकर्णप्रदेशतः । सकेशान्धारयेद् ब्रह्मा त्रीस्त्रीन्त्रागत्रकान्कुशान् ॥११ आचार्यश्छेद्येदेतानोषधे मन्त्रमुचरेत्। क्लेद्येद्वामकर्णान्तं त्रिश्चैवादितिरुचरेत् ॥१२ क्षुरेणेति च तीङ्णेन ताम्रयुक्तेन चैव हि। क्रेंदितान्सुत लादाय मातुईस्ते निवेदयेत्।।१३

विन्यसेत्ताञ्छमीपणैः सहाऽऽनडुहगोमये। येनावपत्प्रथमं स्याद्येन धाता द्वितीयकः ॥१४ तृतीये येन भूयश्च सर्वे रेव चतुर्थकम्। एवं च दक्षिणे कृत्वा त्रिवारं तूत्तरे तथा।।१४ यत्क्षुरेणेति मन्त्रेण क्षुरधारां जलेन च। निमृज्येन्मर्भ तत्कृत्वा नापिताय प्रदापयेत्।।१६ यावन्तः प्रवरास्तस्य शिखामध्ये च पार्श्वयोः। पश्चातपूर्वे तथा पञ्चप्रवराणां शिखाः समृताः ॥१७ अभ्यञ्जयेत्कुमारं तमानयेद्प्रिसंधौ। ततः स्विष्टकृतं हुत्वा होमशेषं समापयेत्।।१८ यदुक्तं च यथाकाले कुर्यात्संस्कारकर्भ च। असामर्थ्यात्कृतं नो चेद्विधिस्तस्य करं भवेत्।।१६ प्रायश्चित्तं विधायाऽऽदावेकैकस्य च कर्मणः। कृत्वाऽऽदौ कुच्छ्मेकैकं लुप्तकर्माणि कारयेत्।।२० मन्त्रमेकं जपेत्तत्र तत्तत्कर्मणि एव हि। विधिवचौलकर्भेवं कृत्वा स्यादुपनायनम्।।२१ चौलकर्मादितश्चैवं यावद्वैवाहिकं भवेत्। तावस्याङ्गीकिको द्यग्निरिति वेद्विदो विदुः।।२२ इत्याख्वलायनसमृतो चौल(चूड़ाकरण)कर्मप्रकरणम्।

॥ दशमोऽध्यायः॥ अथीपनयनप्रकरणम् ब्राह्मणस्याष्ट्रमे वर्षे विहितं चोपनायनम्। सप्तमे चाथ वा कुर्यात्सर्वाचार्यमतं भवेत्।।१ कृत्वाऽऽभ्युर्यिकं श्राद्धमावाह्य कुलदेवताः । मण्डपाद्यर्चनं कृत्वा भोजयेच द्विजान्स्वयम् ॥२ अथापरेद्युरभ्यज्ज्य कुमारं भोजये**त्त**तः। वपेद्भुक्तवतः केशान्मात्रासहैकभाजने ॥३ चेळाङ्गस्थापिते ये च शिखे हे तेऽपि वापयेत्। सकेशेऽपि कुमारस्य हित्वैकां सध्यमस्थिताम् ॥४ आसीनस्यान्तिके स्नातं कुमारमुपवेशयेत्। पितुश्च प्राङ्मुखस्येह प्रत्यङ्मुखमलंकृतम् ॥५ धृत्वाऽञ्जलि कुमारस्य सुवर्णफलसंयुतम्। मुहूर्तकालपर्यन्तमसमीक्ष्य परस्परम् ॥६ ध्यायन्देवान्सुमुहूर्ते मुहूर्ते पितुरञ्जलौ । द्त्वा फलपसौ तस्य निद्ध्यात्पाद्योः शिरः॥७ शिरः स्पृशेत्पिता तस्य स्वाङ्के तमुपवेशयेत्। यो यज्ञेन पठेत्सूक्तमाचार्यो ब्राह्मणैः सहः ॥८ आज्यसंस्कारपर्यन्तं प्राणायामादिपूर्वकम्। कृत्वा नवं ततो द्यात्कोपीनं कटिसूत्रकम् ॥६ धारियत्वा ततो दद्याद्वाससी युवमित्यृचा। एकं स्यात्परिधानार्थमेकं प्रावरणाय हि ॥१०

इच्छन्ति केचिदैणेयमृक्सामाभ्यां तथाऽजिनम्। उपवीतं ततो द्<mark>याद्यज्ञोपवीतमन्त्रतः ।।११</mark> आचम्याथ वटुर्गच्छेत्पुरतश्चोत्तरे गुरोः। दृष्ट्रा पात्रं तथाऽऽगत्य दृक्षिणे तूपवेशयेत्।।१२ कृत्वाऽऽज्याहुतिपर्यन्तं बर्हिरास्तरणादिकम्। कुमारः पूर्ववद्गच्छे दुदगप्रेगु(ग्नेर्गु)रोश्च हि।।१३ आचार्यः प्राङ्मुखस्तिष्ठेद्वटुः प्रत्यङ्मुखस्तथा । आचार्यः पूरयेत्तत्र कुमारस्याञ्जलौ जलम् ॥१४ सजले चाञ्जलौ तस्य गन्धपुष्पाणि चाऽऽवपेत्। सुवर्ण च यथाशक्ति फलैः क्रमुकजैः सह ॥१४ आचार्यस्याञ्जलौ ब्रह्मा पूर्येत्सलिलं च तत्। आचार्यो मन्त्रमुचार्य तत्सवितुर्वृणीमहे ॥१६ कुमारस्याञ्जलौ चैव निनयेत्त्वस्य चाञ्जलिम्। ध्यायन्कुमार आदित्यमर्घ्यपात्रे निवेद्येत्।।१७ देवस्य त्वेति गृह्णीयात्साङ्गुष्ठं करमस्य च। असौ शर्मेति दीर्घायुर्भवत्विति वदेत्पिता ॥१८ अथ वाऽसौ पदे नाम संबुद्ध्या वाऽस्य नामकम्। उचार्य शर्म दीर्घायुर्भवेत्येके वदन्ति हि ॥१६ एवं त्रिः पूर्ववचैव मन्त्रोऽन्यः स्यात्करप्रहे । सविता तेऽयमेकः स्थादग्निराचार्य एव च ॥२० ईक्षयेद्वदुरादित्यं देवं सवितृमन्त्रतः। आवर्तयेत्कुमारं तं पूर्वार्धर्चे न चैव हि ॥२१

पाणिभ्यामुत्तरेणांसौ पाणी वाऽस्य हृदि स्पृशेत्। एवं कृत्वा पुनश्चामुं दक्षिणे बटुमानयेत्।।२२ तूष्णीं समिधमादाय निद्ध्याद्नले च ताम्। मन्त्रेणाग्नय इत्यत्र वदन्त्येके महर्षयः ॥२३ ओष्ट्रो विलोमको कृत्वा पाणिद्वयतलेन च। त्रिवारं प्रतिमन्त्रेण तेजसा मेति चैव हि ॥२४ सूत्रोदितान्मयीत्यादीन्मन्त्रांस्तिष्टञ्जपेदथ । मानस्तोकेऽनया भाले त्रिपुण्ड्रं धारयेत्क्रमात्।।२५ हृदि नाभौ तथा बाह्वोर्मस्तके चापि केचन। त्र्यायुषं ताञ्जपेन्मन्त्रानुपस्थायों च मे स्वरः ॥२६ पुरतः पितुरासीनो ब्रह्मचारी कुशासने। गायत्रीमनुगृह्वीयादुपांशु प्रत्यगाननः ॥२७ पूर्ववदुपविश्यांसावन्वाच्य जानु दक्षिणम्। फलाक्षतमुवर्णं च गुरवे तन्निवेद्येत्।।२८ अधीहीत्यादिकं मन्त्रां समुनार्य यथाविधि । नमस्कुर्याद् गुरोः पादौ धृत्वा हस्तद्वयेन च ॥२६ ब्राह्मणोऽहं भवानीह गुरोऽहं ते प्रसादतः। गायत्री(त्री)मामनुब्रूहि शुद्धात्मा सर्वदाऽस्मि हि ॥३० संगृह्य पाणी पाणिभ्यां स्वस्य च ब्रह्मचारिणः। वाससाऽऽच्छादनं कृत्वा गायत्रीमनुवाचयेत् ॥३१ उचार्य प्रणवं चाऽऽदौ भुर्भुवः स्वस्ततः परम् । पच्छ(पाद)मर्धमृचं चैव तं यथाशक्ति वाचयेत् ॥३२

पाणिना हृद्यं तस्य स्षृष्ट्रा मम व्रतं जपेत्। प्राणायाभं ततः कृत्वा ब्रह्मचार्येव नेतरः ॥३३ आबष्य मेखलां तस्य प्रावेपामेत्यृचं जपेत्। एषक्षेत्यनया दण्डं धारयित्वादिशेद्वतम् ॥३४ ब्रह्मचर्यादिकं भिक्षां ददात्वित्यन्त एव च। ततः स्विष्टकृतं हुत्वा होमशेषं समाप्य च ॥३४ याचयेत्प्रथमां भिक्षां पितरं मातरं च वा। पितरं यदि याचेत भवान्भिक्षां ददात्विति ॥३६ भवतीति पदं चोक्त्वा भिक्षां देहीति याचयेत्। मातरं चात्र एवेति गत्वा पात्रं करान्तिके ॥३७ तण्डुलान्सफलान्द्द्याद्गिक्षार्थं जननी तु च । होमार्थं तण्डुलान्मात्रे द्त्त्वा शेषं गुरोरथ ॥३८ याचिता तत्र या भिक्षा गुरवे तां निवेदत्। पितेव गुरुराचार्यो भवेत्सद्भिरुदाहृतः ॥३६ यस्मात्पुरोहितो ब्रह्मा होता च सह याज्ञिकम्। उक्त्वा वेद्मधीष्वात्र यस्माद्दिशति वै पिता ॥४० तदाचार्यपदं तत्र जायते ब्राह्मणेऽपि हि । पिता माता तथाऽऽचार्याखयो मान्या सदैव हि ॥४१ अन्येऽपि श्रोत्रिया वृद्धा वेद्विद्याप्रदास्तथा। दद्याद्विभवसारेण कर्माङ्गत्वेन दक्षिणाम् ॥४२ सुवर्णाम्वरधान्यानि सद्योऽनन्तफलं लभेत्। न ददाति द्विजो होत्रे लोभाचज्ञाङ्गदक्षिणाम्।।४३

वित्ते सति कृतं कर्म निष्फलं स्याद्धनक्षयः। धनिनोऽयं निषेधः स्याद् व्रतहीनस्य चैव हि ॥४४ असमर्थो नमेत्सचोद्त्वाऽक्षतफलादिकम्। विप्रेभ्योदक्षिणां दत्त्वा गृह्णीयादाशिषः स्वयम् ॥४५ यथाविभवसारेण हेतवे यज्ञसाक्षिणः। आसार्यं न हि किंचित्स्यान्नैत्यकं कर्म चैव हि ॥४६ ब्रह्मचारिण एवात्र सायं संध्या विधीयते। ब्रह्मचारी ततः कुर्यात्सायंसंध्यां यथाविधि ॥४७ अग्निकार्यं तथा होमं तस्मिन्नग्री विधीयते। नो चेत्स्यात्पूर्ववत्कुर्यादाचार्यः स्थण्डिलादिकम् ॥४८ पूर्णपात्रनिधानान्तमनलस्थापनादिकम्। निर्वपेन्मातृतः प्राप्तांस्तडुलान्सद्सर्पतेः। सवितुख ततस्तूष्णीमृषीणां मन्त्रतः क्रमात् ॥४६ श्रपयित्वौदनं कुर्यादाघारान्तं हुनेद्थ । सद्सरपतिमन्त्रेण गायत्र्यर्षिभ्य एव च ॥५० चर्वाहुतित्रयं दत्त्वा कुर्यात्स्वष्टकृदादिकम्। भोजयित्वा द्विजान्वेदसमाप्तिरस्य चोत्तरे ॥४१ निर्विच्नेन त्रिवारं तु पिताऽस्य ब्रह्मचारिणः। वसेदसौ त्रिरात्रं तु क्षारादिव्रतमाचरेत्।।५२ प्रातःसंध्यामुपास्याग्निकार्यं कृत्वा परेऽहनि । मध्याह्रे चाऽऽचरेत्संध्यां ब्रह्मयज्ञाद्नन्तरम् ॥५३

उपाकरणपर्यन्तं साविज्या ब्रह्मयज्ञकम्। ततोऽग्निमील इत्यादि जपेद्वेदान्स्वशक्तितः ॥ ४४ चतुर्थदिवसे कुर्यान्मेधाजननकं च हि। संध्यादिकं विधायाथ गच्छेत्पालाशसंनिधौ ॥४४ कलशान्स्थापयेत्तत्र चतुष्कोणेषु चैव हि। पलाशं पूजयेत्तत्र वसन्तं च यथाविधि ॥५६ श्रद्धां मेधां च वे प्रज्ञां पूजयेच्छ्रद्धयेत्यृचा । गुन्धपुष्पाञ्चतेश्चेव धूपदीपादिभिस्तथा ॥५७ प्रदक्षिणात्रयं कुर्यादाचार्यः सुश्रवं पठन्। निनयेज्जलधाराश्च सहैव ब्रह्मचारिणा ॥४८ मेखलामजिनं दृण्डं वस्तं यज्ञोपवीतकम्। एकैकं धारयेत्तत्र क्रमेणैवं त्यजेदथ ॥५६ आचार्याय च ते द्दाद्वाससी ब्रह्मचार्यथ । नवं चैवात्र कौपीनं धारयेत्पुनरेव हि ॥६० विप्रेभ्यः कलशान्द्याद् गृह्वीयादाशिषः शुभाः। यथाचारं तथा कुर्यादेवकोत्थापनं च हि ॥६१

इत्याश्वलायनस्मृताव्यनयनप्रकरणम् ।

॥ एकादशोऽध्यायः ॥ अथ महानाम्न्यादिव्रतत्रयप्रकरणम् ।

महानाम्रीव्रतं कुर्यात्पूर्णाब्दे चोत्तरायणे। गुक्रपक्षे गुभेऽहि स्यादुपनायनवच हि ॥१ महाव्रतं द्वितीये तु भवेत्तत्पूर्ववच हि। संपूर्णे च तृतीयेऽब्दे तथा चोपनिषद् वतम्।।२ मासे पूर्णे तथा कुर्यात्क्रमाचैतद्व्रतत्रयम्। कुर्यात्परिददाम्यात(म्यन्त'मुपनायनहोमवत् ॥३ चर्वाहुतित्रयं हुत्वा जुहुयात्तिलमिश्रितम्। अनुप्रवचनीयोक्ता देवताश्च ततः स्मृताः ॥४ महानाम्रीभ्यः स्वाहेति साविज्या स्नानमिष्यते। महाव्रताय चाथोपनिषदे तत्र तत्र तु ॥ १ वस्नादीनि तथाऽन्यत्र द्त्वा चाऽऽज्याहुतीरथ । चर्वाहुतिग्रयं हुत्वा मौञ्जी दण्डं च धारयेत् ॥६ ततः स्विष्टकृतं हुत्वा होमशेषं समापयेत्। विदामघवनाथान्त(?) इत्यारम्भे जपेद्थ ॥७ नत्वा गुरुमथाऽऽदित्यमीक्षयेद्ब्रह्मचार्यथ । उत्तवाऽऽचार्यमधीहीति भोजयेच्छक्तितो द्विजान् ॥८

इत्याश्वलायनस्मृतौ महानाम्न्यादिव्रतत्रय[प्रकरण]म्।।

॥ द्वादशोऽध्यायः ॥अथोपाकर्मप्रकरणम् ।

श्रवणे स्यादुपाकर्म हस्ते वा श्रावणस्य तु । नो चेद्भाद्रपदे वाऽपि कुर्याच्छिष्यैगुरुः सह ॥१ प्रहदोषादुपाकर्म प्रथमं न भवेद्यदि । उक्तकालेऽथ वाऽप्वाढे कुर्याच्छरदि वाऽपि वा।।२ अकाले नैव तत्कुर्यादुपाकर्म कथंचन। अकृत्वा नोद्वहेत्कन्यां मोहाचेत्पतितो भवेत्।।३ अनारभ्योक्तकाले च वेदान्कन्यां य उद्घहेत्। नूतनो ब्रह्मचारी स्यात्सर्वकर्मबहिष्कृतः ॥४ कात्वा नित्यक्रियां कुर्याद्वीं श्रेव समर्चयेत्। 'उपाकर्मणि चोत्सर्गे गौतमादीश्च सप्त वै।।४ आङ्यसंस्कारपर्यन्तमुपलेपादि पूर्ववत्। सक्तूंस्तेनाथ संकुर्यातथालीस्थान्दिधसंयुतान् ॥६ त्रिः प्रोक्ष्य स्थापयेतस्थालीं बर्हिष्याज्यस्य दक्षिणे। कुर्यादग्निमलंकुत्य चक्षुष्यन्तं च पूर्ववत् ॥७ सावित्र्यादीन्दशाऽऽज्येन जुहुयादाहुतीरथ। केचिद्यज्ञोपवीतस्य होममिच्छन्ति चात्र हि ॥८ उत्सर्गेऽप्येवमेवं स्याद्वह्वचानामयं विधिः। ततः स्विष्टकृतं हुत्वा द्धिसक्तुभिरेव च ॥६

प्राशयेद्दधिसक्त्रंश्च गुरुः शिष्यान्समाशयेत्। दानं यज्ञोपवीतस्य धारणं च विधीयते ॥१० ब्रह्मचारी च मौञ्जीवद्वारयेदजिनादिकम्। निषिच्यापः शरावे तु अभिमार्जनमुच्यते ॥११ प्रणवेन च वै सर्वे कुर्युस्ते दर्भपाणयः। विधिनाऽनेन तां ब्र्यादादावों भूर्भुवः स्वरोम् ॥१२ त्रिवारं चैव सावित्रीं पादमर्धमृचं क्रमात्। अग्निमील इदं सूक्तं वाचयेद्ब्रह्मचारिणम्।।१३ क्रमेण संहितारण्यं ब्राह्मणं सूत्रमेव च। याजुषं साम चाथवंमङ्गानि च यथाक्रमम्।।१४ अध्यापयित्वा रुद्रादिहोमशेषं समापयेत्। ततश्चाभ्यासयेद्वेदं स्वाध्याये ब्रह्मचारिणम् ॥१५ तत आरभ्य षण्मासं गुरुसेवान्तरं च हि [?]। उपनीतोऽभ्यसेद्वेदं यथाश्रुत्युक्तमार्गतः ॥१६ नियमेन च षण्मासमृग्वेदादिकमेव हि ॥१७ इत्याश्वलायनस्मृतावुपाकर्म[प्रकरण]म्।

त्रयोदशोऽध्यायः ॥
 अथोत्सर्जनप्रकरणम् ।

उत्सर्गं च द्विजः कुर्यात्षण्मास इद्मादितः। दाह्यार्थं (दीर्घार्थं) च हितं चैतद्धीतानां च छन्द्साम्।।१ पुष्पे चैवोपलेपादि कृत्वा चोत्पवनावधि । संस्कृत्य सक्तुवचान्नं चक्षुष्यन्तं च पूर्ववत् ॥२ सप्त चाऽऽज्याहुतीहु त्वा सक्तुस्थाने हुनेचरुम्। हुत्वा स्विष्टकृतं चैव अभिघायं यथाविधि ॥३ कर्मोत्सर्गे भवेत्सर्वमुपाकरणवच हि। प्रतिवर्षं द्विजैः कार्यं प्राशनं माजनं विना ॥४ तपंयेद्देवताः सर्वाः साविज्यादि य(दीर्य)थाक्रमम्। अत्र चैवापि सर्वेऽपि ब्रह्मयज्ञाङ्गदेवताः ॥४ जुहुयाद्रुद्रभागादीन्होमशेषं समापयेत्। विशेषं चाऽऽहुराचार्याः केचिद्यज्ञविदो विदुः ॥६ उपाकर्मणि चोत्सर्गे पुनश्चापि यथाविधि । नै<mark>त्यकं तर्पणं कु</mark>त्वा ब्रह्मयज्ञपुरःसरम्।।७ इत्याश्वलायनस्मृतावुत्सर्जन[प्रकरण]म् ।

॥ चतुर्दशोऽध्यायः॥

अथ गोदानादित्रयप्रकरणवर्णनम्।

गोदानं षोडशे वर्षे कुर्यात्तदुद्गायने। केचिद्विवाहकाले च ग्रुभ मासि वदन्ति हि ॥१ कृत्वाऽऽभ्युद्यिकं श्राद्धमुपलेपेन पूर्ववत्। विधायोपरि समिधमन्वाधानादिकं च हि ॥२ चौलोक्ताज्याहुतीहु त्वा चौलवच्छ्मश्रुवापनम्। स्नापयेद्वाससी द्यायुवं वस्नाणि मन्त्रतः ॥३ अञ्जनं कुण्डलादीनि दण्डान्सानि च धारयेत्। आयुष्यमिति वै सूक्तं पठन्गच्छेच्छिवालयम्।।४ पुनरागत्य संतिष्ठदाधाय समिधं च ताम्। स्मृतमित्यादिकान्मन्त्राञ्जपित्वा प्रक्षिपेत्स्वयम्।।४ कृत्वा तु स्नातकः पश्येत्समावर्तनकं भवेत्। मनाग्ने प्रत्यृचं हुत्वा समिधश्च दश स्वयम् ॥६ स्वृष्ट्रा पादौ नमस्कुर्याद्गुरोर्द्स्वेति तत्फलम्। न नक्तमिति चानुज्ञालब्धस्तेन यथोदितम्।।७ ततः स्विष्टकृतं कृत्वा होमशेषं समापयेत्। लभेदाज्ञां विवाहार्थं गुरुर्निर्मुच्य मेखलाम्।।८ समावृत्तस्य वै मौर्झी होमान्ते चैव बह्वुचः। उदुत्तमं मुमुग्धीति मन्त्रेणानेन मोचवेत् ॥६ इत्याश्वलायनस्मृतौ गोदानादित्रय[प्रकरण]म्।

अथ पश्चद्शोऽध्यायः ॥
 अथ विवाहप्रकरणम् ।

सर्वेषामाश्रमाणां च गृहस्थाश्रम उत्तमः। तमेवाऽऽश्रित्य जीवन्ति सर्वे चैवाऽऽश्रमा इह ॥१ कुलजां सुमुखी स्वा(स्व)ङ्गी सुवासां च मनोहरम्। सुनेत्रां सुभगां कन्यां निरीक्ष्य वरयेद्वुधः ॥२ स्नातकाय सुशीलाय कुलोत्तमभवाय च। द्द्याद्वेद्विदे कन्यामुचिताय वराय च ॥३ आचार्यः स्नातकादीनां मधुपर्कार्चनं चरेत्। स्वगृह्योक्तविधानेन विवाहे च महासखे ॥४ मधुनाऽऽज्येन वा युक्तं मधुपर्काभिधं द्धि। द्घ्यलाभे पयो बाह्यं मध्वलाभे तु वै गुडः ॥४ निद्ष्यात्तं नवे कांस्ये तस्योपरि पिधाय च । वेष्टयेद्विष्टरेणैव मधुपर्कं तदुच्यते ॥६ प्राणानायम्य संकल्प्य विष्टराद्यर्चनं भवेत्। त्रिसिर्बू याद्हं वर्ष्म मन्त्रेणानेन विष्टरम्।।७ पाद्यमध्यं तथा द्रवा द्द्यादाचमनीयकम्। पिवेजालं चामृतोपस्तरणमसीति मन्त्रतः ॥८ आच(चा)मेन्मधुपर्कोऽयं मित्रस्येति निरीक्षयेत्। देवस्य त्वेति तङ्चादञ्जली प्रतिगृह्य च ॥६

तद्वेक्ष्य करे सब्ये धृत्वा मन्त्रं जपेन्मधु। अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां त्रिस्तदेवाऽऽलोडयेद्वरः ॥१० मधुपर्कं क्षिपेत्किचिद्वसवस्त्वेति पूर्वतः। भूतेभ्यस्वोत्क्षिपेन्त्रिस्तं निद्ध्याद्भवि भाजनम्।।११ कर्ताऽऽदाय सकृद्धस्ते मधुपर्कं वरस्य च। जपेद्थविराजोऽथ प्राशयेत्पुनराचमेत् ॥१२ पूर्ववच विधानं स्यान्मन्त्रोऽन्यः प्राशने भवेत्। उक्तं सूत्रे विजानीयात्तृतीये प्राशने तथा ॥१३ उत्तराचमनं पीत्वा सत्यमित्युद्कं पिबेत्। द्विराचम्योत्सृजन्माता रुद्राणां मन्त्रतो वरः ॥१४ ततः कर्ताऽर्चयेदेनं गन्धपुष्पाक्षतादिभिः। वराय वाससी द्यादुपवीतादिकं च हि ॥१५ वरये बतुरो विप्रान्क्रन्यकावरणाय च। कन्यासमीपमागत्य विश्रगोत्रपुरःसरम् ॥१६ नाम ब्रुयुर्वरस्याथ प्रितामहपूर्वकम्। प्रपौत्रपौत्रपुत्रेषु चतुर्थ्यन्तं वराय च ॥१७ गोत्रे चैवाथ संबन्धे षष्टी स्याद्वरकन्ययोः । वरे चतुर्थी कन्यायां विभक्तिर्द्वितीयैव हि ॥१८ श्रावयेयुः प्रसुग्मन्तासूक्तं कन्यां कनिकदत्। देवीमृचं पठन्तश्च नयेयुस्ते हि वै वरम् ॥१६ प्राङ्मुखी कन्यका तिष्ठेद्वरः प्रत्यङ्मुखस्तथा । वस्नान्तरं तयोः कृत्वा मध्ये तु वरकन्ययोः ॥२०

परस्परमुखं पश्यनमुहूर्ते चाक्षतान्क्षिपेत्। वरमूध्नीति कन्याऽऽदौ कन्यामूर्धिन वरस्तथा ।।२१ गाथामिमां पठेयुस्ते ब्राह्मणा झृक्च वा इदम्। क्षिपेयुस्तेऽक्षतान्विप्राः शिरसोरुभयोरपि ॥२२ तिष्ठेत्प्रत्यङ्मुखी कन्या प्राङ्मुखः स्याद्वरस्तथा। मन्त्रेणानृक्षराश्चेव भवेत्स्थानविपर्ययः ॥२३ अक्षतारोपणं कुर्यात्पूर्ववचैव कन्यका। श्रियो मे कन्यका ब्र्याद्भप्रजाय स्याद्वरस्तथा ॥२४ त्रिवारमेवं क्रत्वा तु कन्यां द्यात्ततः पिता। शिष्टाचारानुसारेण वदन्त्येके महर्षयः ॥२४ लक्ष्मीरूपामिमां कन्यां प्रद्देद्वि(वि)ष्णुरूपिणे। तुभ्यं चोदकपूर्वां तां पितृणां तारणाय च ॥२६ वरगोत्रं समुचार्य कन्यायाश्चेव पूर्ववत्। एषा धर्मार्थकामेषु न त्याज्या स्वीकृता ह्यतः ॥२७ दाता वदेदिमं मन्त्रं कन्या तारयतु स्वयम्। अक्षतारोपणं काय मन्त्र उक्तो महर्षिभिः ॥२८ इहापि पूर्ववरकुर्यादक्षतारोपणं सकृत्। यज्ञो मे कन्यकामन्त्रः पशवो मे वरस्य च ॥२६ ईशानकोणतः सूत्रे वेष्टयेत्पञ्चधा तयोः । परि त्वेत्यादिभिर्मन्त्रैः कुर्यात्तच चतुर्गुणम् ॥३० रक्षाथ दक्षिणे हस्ते बध्नीयात्कङ्कणे तयोः। विश्वेत्ता साविकं [तेतिवै]पुंसः कन्यायास्तद्धवीतथा [१]॥३१ 308

कन्याये वासंसी दद्याद्यविमत्यनया वरः। तयोरुभे ते बध्नीयान्नीललोहितमित्यृचा ॥३२ बष्नीयात्कन्यकाकण्ठे सूत्रं मणिसमन्वितम्। याङ्गल्यतन्तुनाऽनेन मन्त्रोण स्यात्सदा सती ॥३३ पुण्याहं स्वस्ति वृद्धिं च त्रिसिर्त्र्याद्वरस्य च। अनाधृष्टमुभौ मन्त्रावापो ह्यानः प्रजां तथा ॥३४ नमस्कुर्यात्ततो गौरीं सदा मङ्गलदायिनीम्। तेन सा निर्मला लोके भवेत्सौभाग्यदायिनी ॥३४ दंपती तु ब्रजेयातां होमार्थं चैव वेदिकाम्। वरस्य दक्षिणे भागे तां वघूमुपवेशयेत्।।३६ आघारान्तं ततः कुर्यादुपलेपादि पूर्ववत्। सूत्रोक्तविधिना कर्म सर्व कुर्यात् चैव हि ॥३७ अग्न आयूंषि तिस्रोऽत्रत्वमर्यमा प्रजापते। हुत्वा त्वाज्याहुतीरेवं सूत्रोक्तं पाणिपीडनम् ॥३८ वरिकः प्रोक्षयेहाजाञ्छूर्पस्थानभिघारयेत्। अभिघार्याञ्जलिं तस्याः पूरयित्वाऽभिघारयेत् ॥३६ अञ्जलीन्पूरयेद्धृत्वा लाजान्वध्वा विवाहिके। विछिन्नवह्निसंधाने पतिर्छाजान्द्विरावपेत् ॥४० हुत्वा लाजांस्तथा होमं हुत्वा कुर्यात्प्रदक्षिणम्। सोदकुम्भस्य चैवाग्नेरश्मानमवरोहयेत् ॥४१ विधिरेष विवाहस्य प्रत्याहुतिप्रदक्षिणम्। सन्त्रोऽर्थसणं वर्णं पूषणं लाजहोमके ॥४२

अवशिष्टान्वरो लाजाञ्छूर्पकोणेन चैव हि । अभ्यातमं जुहुयायात्तूष्णोमिति यज्ञविदां मतम्।।४३ यदि वद्धे शिखे स्यातां कन्यकावरयोरिप । प्रत्यृचं च शिखे बद्ध्वा तूष्णी वरस्य मोचयेत्।।४४ इष इत्यादिभिर्मन्त्रौरीशान्यां चालयेद्वधूम्। गत्वा पदानि सप्ताथ संयोज्य शिरसी च ते ॥४५ कुम्भस्य सलिलं सिञ्चेदुभयोः शिरसोः स्वयम्। सौभाग्यजननीं देवीं समृत्वा दाक्षायणीं शिवाम्।।४६ ततः स्विष्टकृदादि स्याद्धोमशेषं समापयेत्। अहः शेषं च तिष्ठेतां मौनेनैव तु दंपती ॥४७ ध्रुवं चारुन्धतीं दृष्ट्रा विस्रजेतामुभौ वचः। पतिपुत्रवती चाऽऽशीस्तयोर्द्वाद्यथोचितम्।।४८ अनेन विधिनोत्पन्नो विवाहाग्निरिति स्मृतः । स एव स्याद्जस्राख्य इति यज्ञविदो विदुः ॥४६ ॥४६ दिवा वा यदि वा रात्रौ कन्यादानं विधीयते । तदानीमेव होमं तु कुर्याद्वैवाहिकं च हि ॥५०

इति विवाहहोमविधि वर्णनम्।

वध्वा सह गृहं गच्छेदादायाप्नि तमप्रतः। सूत्रोक्तविधिना चेह प्रियामूढां प्रवेशयेत्।।५१ प्रतिष्ठाप्यानलं कुर्याचक्षुष्यन्तं च पूर्ववत्। भृग्भिश्च जुहुयादाज्यमानः प्रजां चतसृभिः ॥५२ समञ्जन्त्वेतया प्राश्य द्धि तस्यै प्रयच्छति । अनक्ति हृद्ये तस्या द्ध्नाऽलाभे घृतं च तत्।।५३ मन्त्रलोपादि होमान्तं कृत्वा स्विष्टकृदादिकम्। हुत्वा व्याहृतिभिश्चात्र पत्नी वामे समानयेत्।।५४ नवोढामानयेत्पत्नीं वामं वामं त इत्यृचा। वाममद्येत्यृचा चैके ततः पूर्णमसीवि च ॥ १४ यदि काळवशात्कर्तुं पृथग्घोमद्वयं न चेत्। द्वयमप्येककाले वा कर्तव्यं कर्म केचन ॥५६ कुम्भस्य जलसिक्तान्तं कृत्वा सर्वं तदादितः। प्रत्यृचं जुहुयादाज्यमानः प्रजां चतसृभिः ॥५७ समझन्त्विति चाऽऽरभ्य सर्वपूर्ववदाचरेत्। स्वस्थानीयवधूं वामे पूर्णमस्यादिकं चरेत्।।५८ रात्रावहनि वा दानं कन्यायाः स्वीकृतं यदा । तदानीमेव होमः स्याद्विवाहस्य च सिद्धये ॥५६ यावत्सप्तपदीमध्ये विवाहो नैव सिध्यति । सद्योऽतो होममिच्छन्ति सन्तः सायमुपासनम्।।६० विवाहश्चेद्भवेद्रात्रौ सार्धयामद्वयाद्धः। तदैवोपासनं कुर्यात्केचिद्गृद्यविदो विदुः।।६१

नित्यहोमे तु कालः स्याद्रात्रौ नाडीनवात्मकः। द्विगुणः स्याद्विवाहे तु प्रवदन्ति महर्षयः ॥६२ दंपती नियमेनव ब्रह्मचर्यव्रतेन तु। वैवाहिकगृहे तौ च निवसेतां चतुर्दिनम् ॥६३ चतुर्थी(र्थ)त्रिदिव(न)स्यान्ते यामे वा चैव दंपती। उमामहेश्वरौ नत्वा वंशदानं प्रदापयेत् ॥६४ भोजनं शयनं स्नानं तथैकत्रोपवेशनम्। गृहप्रवेशपर्यन्तं दंपत्योर्भुनयो विदुः ॥६५ वध्वा सह वरो गच्छेत्स्वगृहं पश्चमे दिने। गृह्योक्तविधिना चैव देशधर्मेण वाऽपि च ॥६६ नान्दीश्राद्धं द्विजः कुर्यात्स्वस्तिवाचनपूर्वकम्। गृहप्रवेशमारभ्य पितर्यपि च जीवति ॥६७ स जीवत्पितृको नान्दीश्राद्धं चेत्कुरुते द्विजः। पितुश्चैव पितृणां तु प्रवद्नित महर्षयः ॥६८ प्रथमोद्वाहपर्यन्तं पुत्रस्यैव क्रियासु च। नान्दीश्राद्धं पिता कुर्यादत ऊर्ध्वं सुतः स्वयम् ॥६६ चत्वारो ब्राह्मणा देवे पित्रये चाष्टादश समृताः। नान्दीश्राद्धं वदन्त्येके मुनयः पञ्च वाऽपि च ॥७० विवाहे चोपनयने गर्भाधानादिके तथा। अन्वाधाने शतं विप्रान्भोजयेदक्षिणान्वितान् ॥७१ विवाहोत्सवयज्ञेषु दैवे पित्र्ये च कर्मणि। प्रारब्धे सूतकं नास्ति प्रवदन्ति महर्षयः ॥७२

प्रारम्भकर्मणश्चेव क्रियाप्रारम्भकस्य च । क्रियावसानपर्यन्तं न तस्याऽऽशौचमिष्यते ॥७३ प्रारम्भो वरणं यज्ञे संकल्पो व्रतसत्रयोः । नान्दीश्राद्धं विवाहादौ श्राद्धे पाकपरिक्रिया ॥७४ नान्दीश्राद्धे कृते चैव विवाहे चोत्सवादिषु। न कुर्यादुपवासं च छन्दसां वै तपोव्रतम्।।७४ अपसन्यं स्वधाश्राद्धं नदीस्नानं रावेक्षणम्। वर्जयेत्तर्पणं चैव देवकोत्थापनावधि ॥७६ नान्दीश्राद्धे कृते मोहाच्छ्राद्धं प्रत्याब्दिकादिकम्। सपिण्डः कुरते यश्चेद्पमृत्युं व्रजेद्ध् वम्।।७७ अलाभे सुमुदूर्तस्य विद्नं यः कुहते यदि । स्वधया तु विवाहस्य न स पश्येच्छुभं कचित्।।७८ विध्नमाचरते यस्तु यज्ञस्योद्वाहकस्य च। यात्रायाश्चेव धर्मस्य स याति नरकं ध्रुवम् ॥७६ उढाया दुहितुश्चात्रं नाद्याद्विप्रः कथंचन । अज्ञानाचिद् भुङ्जीत नरकं प्रतिपद्यते ॥८०

इत्याश्वलायनस्मृतौ विवाहप्रकरणम्।

॥ षोडशोऽध्यायः ॥

अथ पत्नीकुमारोपवेशनप्रकरणम्।

संस्कार्यः पुरुषो वाऽपि स्त्री वा दक्षिणतो भवेत्।
संस्कारकस्तु सर्वत्र तिष्ठेदुत्तरतः सद्।।।१
धर्मकार्येषु सर्वेषु व्रतोद्यापनशान्तिषु ।
वामे स्त्री दक्षिणे कर्ता स्थालीपाके तथेव च ।।२
मार्जने चाभिषेके च कन्यापुत्रविवाहके ।
आशीर्वचनकाले च पत्नी स्यादुत्तरे सद्।।।३
विच्छित्रविह्मसंधाने कन्यादाने वरार्चने ।
नवोद्याप्रवेशे पत्नी दक्षिणे स्वयमुत्तरे ।।४
आरभ्याऽऽधानकं कर्म यावन्मौद्धीनिबन्धनम् ।
कर्ता स्यादुत्तरे तावत्पत्नी पुत्रस्य दक्षिणे ।।४
पत्नी विना न तत्कुर्यात्संस्कारं कर्म यच्छिशोः ।
परन्यां चेव तु जीवन्त्यां विधिरेष उदाहतः ।।६
इत्याश्वलायनस्मृतौ पत्नीकुमारोपवेशन[प्रकरण]म् ।

।। सप्तदशोऽत्यायः ॥
अथाधिकारिनियमप्रकरणम् ।
सुतसंस्कारकर्माणि पिता कुर्यात्सभार्यकः ।
तद्भावेऽधिकारी च कुर्यादेव स चापि हि ॥१

पिता यरय मृतश्चेत्स्याद्धिकारी पितामहः।
तद्भावे तु वै भ्राता पितृव्यो गोत्रजो गुरुः॥२
त्रतबन्धे विवाहे च कन्यायाश्चापि व तथा।
सपत्नीको वाऽपत्नीकः सोऽधिकारी भवेदिह ॥३
संस्कार्यस्य च वै यस्य यदि माता विपद्यते।
पत्नी विनेति नियमः सद्भिश्चैवात्र नोच्यते॥४
गृहस्थो ब्रह्मचारी वा योऽधिकारी स एव हि।
संस्कुर्याद्थ वा (तत्र)ब्राह्मणो ब्रह्मसंभवम्॥५

इत्याखुळायनस्मृताधिकारिनियम[प्रकरण]म्।

।। अष्टादशोऽध्यायः ।। अथ नान्दीश्राद्धे पितृप्रकरणम् । अथ नान्दीश्राद्धपूर्वककर्माण्याह ।

आधाने पुंसि सीमन्ते जातनामिन निष्क्रमे। अन्नप्राशनके चौले तथा चैनोपनायने।।१ ततश्चैन महानाम्नि तथैन च महान्रते। अथोपनिषद्गोदाने समान्तनकेषु च।।२ विवाहे नियतं नान्दीश्राद्धमेतेषु शस्यते। प्रवेशं च ननोढायाः स्वस्तिनाचनपूर्वकम्।।३

८४यायः] विवाहहोमोपरिवर्ज्यप्रकरणवर्णनम्।

अन्यान्यत्र वदन्त्येके नान्दीश्राद्धं महर्षयः। यागे च प्रथमे वेदस्वीकारे च महामखे॥४ मातृवर्गीदितः कुर्यात्पितुर्मातामहस्य च। नवैते पितरो वृद्धिश्राद्धे सद्भिरदीरितम्॥५ कन्यादाने च वृद्धौ च प्रपितामहपूर्वकम्। नाम संकीर्तयेद्विद्धांस्तञ्चावरोहणं(ण)क्रमात्॥६ इति नान्दीश्राद्धे पितरः [तृप्रकरणम्]।

॥ एकोनविंशोऽध्यायः ॥

अथ विवाहहोमोपरिवर्ज्यप्रकरणम्।

नान्दीश्राद्धे कृते यावदेवकोत्थापनं भवेत्।
ब्रह्मयज्ञश्च वै श्राद्धं वेदाध्ययनमेव च ॥१
शवेक्षणं स्वधाकारं श्मश्रुकेशनिकृन्तनम्।
सीमातिक्रमणं चैव श्राद्धभोजनमेव च ॥२
न कुर्याच्छुभकर्ता च सपिण्डा अपि चैव हि।
यस्तु वै कुरुते मोहाद्युभं स च वे लभेत्॥३
विवाहे चोपनयने कृते चौले सुतस्य च।
स्यजेत्पण्डांस्तिलाञ्छाद्धे करकं चाब्दमध्यतः॥४

मातापित्रोर्मृ ताहे च गयाश्राद्धे महालये। दद्यात्पिण्डान्कृतोद्वाहः श्राद्धे ष्वन्येषु वर्जयेत्॥१ नान्दीश्राद्धे कृते विप्रस्तथाचेव तु पैतृके। प्रेतिष्पण्डे प्रदत्ते तु नैव कुर्यादुपोषणम्॥६ इति विवाहहोमोपरिवर्ज्य[प्रकरण]म्।

॥ अथ विंशोऽध्यायः॥

अथ प्रेतकर्मविधिप्रकरणम्

प्रेतक मीरसः पुत्रः पित्रोः कुर्याद्यथाविधि ।
तद्भावेऽधिकारी स्यात्सिपण्डोवाऽन्यगोत्रजः ॥१
याम्ये चैव तु विप्रस्यः शिरः कृत्वा मृतस्य च ।
प्राच्यां वाऽथ द्हेदेष विधिः स्याद्बह्वृचस्य तु ॥
दहनादि सिपण्डान्तं कुर्याज्ज्येष्ठोऽनुजेः सह ।
ज्येष्ठश्चेत्संनिधौ न स्यात्कुर्यात्तद्नुजोऽपि वा ॥३
ईषद्वस्वावृतं प्रेतं शिखासूत्रसमन्वितम् ।
दहेन्मत्रविधानेन नैव नग्नं कदाचन ॥४
प्रथमेऽहिन कर्ता स्याद्यो द्द्याद्ग्निमौरसः ।
सर्वं कुर्यात्सिपण्डान्तं नान्योऽन्यं द्(न्यह)हनं विना ॥४

स्वगोत्रो वाऽन्यगोत्रो वा यदि स्त्री यदि वा पुमान्। प्रथमेऽहनि यो द्चात्स दशाहं समापयेत्।।६ अपुत्रश्चेन्मृतस्यै(श्चै)वं विधिरुक्तो महर्षयः । दाहं पुत्रवतः कुर्यात्पुत्रः स्या(त्रश्चे)त्संनिधौ भवेत्।।७ पुत्रं विनाऽग्निदोऽन्यश्चेदसगोत्रो यदा भवेत्। क्यां इशाहमाशीचं स चापि हि सपिण्डवत् ॥८ पुत्राभावेऽग्निदः क्षुर्यात्सक्छं प्रेतकर्म च । तस्मापुत्रवतोऽन्यश्चेद्विना दाहाग्निसंचयम्।।६ अस्थिसंचयनाद्वीग्ज्येष्टश्चेदागतः सुतः । वासो धृत्वाऽऽदितः कर्म ज्येष्टः कुर्याद्यथाविधि ॥१० अस्थिसंचयनादृध्वं ज्येष्ठश्चैवाऽऽतगतोऽपि चेत्। कुर्याद्गिनप्रदः पुत्रो दशाहान्तं स कर्म च ॥११ संस्कृतस्यानुमन्त्रेण येन केनापि चैव हि। संस्कृयांच पुनः प्रेतं तिलाङ्गांजा[झल्या]दिकं चरेत्।।१२ नवश्राद्धानि वै पश्च विषमाहेषु पश्चसु। दशाहाभ्यन्तरे कुर्युर्वह्वचारचैव याजुषाः ॥१३ अतीतानञ्जलीन्पण्डान्द्स्वा चैव तद्।दितः। अथ वाऽऽद्याहिकं सर्वं ज्येष्ठः कुर्याद्यथाविधि ॥१४ क्रियमाणे सुते पित्रोः प्रेतकर्माणि दूरतः। दशाहाभ्यन्तरे पुत्रस्तथाऽन्यत्र स्थितो यदि ॥१५ श्रुतस्थाने सुतः कुर्यात्सक्छं प्रेतकर्म च । षोडशं च सपिण्डं च दहनास्थिक्रियां विना ॥१६

नैव तत्र शवोत्पत्तिर्दर्भवनिथर्विधीयते । तस्यामेवाञ्जलिं द्चाद्शाहान्तं यथाविधि ॥१७ द्ग्धस्य बिधिना चान्तर्इशाहानि कृतानि चेत्। प्रेतकर्माण्यथैकस्मिन्कुर्यात्सर्वाणि वै दिने ॥१८ समाप्य तु दशाहान्तं सकलं प्रेतकर्म च। अपरेचुस्ततः कुर्यात्वोडशं च सिपण्डनम् ॥१६ पुत्रः पौत्रः प्रपौत्रः स्त्री भ्राता तज्जा द्त्तकः। प्रेतकार्येऽधिकारी स्यात्पूर्वाभावेऽथ गोत्रजः॥२० कृत्वाऽऽदो वपनं स्नानं शुद्धाम्बरधरः शुचिः। धृत्वा चैवाऽऽदिकं[मं]वासः प्रेतकार्यं समाचरेत्।।२१ प्रेतकम द्विजः कुर्याद्गोत्रनामपुरःसरम्। बह्वचो विधिनाऽनेन तत्तनमत्रेण चैव हि ॥२२ मौझीबन्धनकाले च व्रताचरणकर्मसु। यज्ञे च मरणे पित्रोर्गयायां ख्रीरिमध्यते ॥२३ सपिण्डमरणे चव पुत्रजन्मनि वै तथा। स्नानं नैमित्तिकं शस्तं प्रवद्नित महर्षयः ॥२४ सिपण्डमरणे स्नायादुद्व्यां च प्रसृतिकाम्। इत्युक्तो मुनिभिश्चैव सर्ववर्णेष्वयं विधिः ॥२४ कस्यापि मुक्तिः प्रेतत्वाद्वृषोत्सर्गं विना न हि। स्त्रीणां चैव वृषोत्सर्गं कुर्यादेकादशेऽहनि ॥२६ वृषोत्सर्गं विना प्रेतः पिशाचत्वान्न मुच्यते। पुमांश्चाप्यथ वा नारी विधवा सधवाऽपि वा ॥२ ७

एको दिष्टविधानेन कुर्याच्छादानि षोडश। ततोरुद्रगणाख्यानि वस्वाख्यानि तथैव च ॥२८ धर्माख्यं चैव षट्त्रिंशच्छ्राद्धान्येकादशेऽहनि । कुर्याद्विधिवदेतानि द्वादशाहे सपिण्डनम्।।३६ यावन कियते पित्रोदीहादि प्रेतकम च। संध्यामात्रं विना कर्म नान्यत्कुर्यात्कदाचन ॥३० उर्ध्वमेतदशाहाचेत्पितुः स्यादहनं यदि । दहनाहस्तदारभ्य पुत्राणां दशरात्रकम्।।३१ विना पुत्रवतोऽन्येषामाशीचं त्रिदिनं भवेत्। प्राग्न्यादीनां तु नैव स्यात्कर्तुः स्याद्याहिणोऽपि च। पितृत्वं च प्रयातस्य श्रूयते मरणं पितुः। श्रवणादिदशाहं स्यादाशौचं मुनयो विदुः ॥३३ सपिण्डीकरणं पित्रोर्भवेत्कालान्तरेऽपि चेत्। अतीतान्यपि वै कुर्यान्मासिकानि यथाविधि ॥३४ कालप्राप्तानि चान्यानि कुर्यात्प्रथमवत्सरे। न कुयाद्वत्सरादूर्ध्वं प्रवदन्ति महर्षयः ॥३४ प्रितामहपर्यन्तं प्रेतस्यैव सुताद्यः। सपिण्डीकरणं कुर्युस्तदृर्ध्वं न हि सर्वथा ॥३६ पितुः सपिण्डनं कुर्यात्त्रिभिः पितामहादिभिः। तदेव हि भवेच्छस्तं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥३७ पिता विपद्यते चैव विद्यमाने पितामहे। तत्र देयास्त्रयः पिण्डाः प्रपितामहपूर्वकाः ॥३८

पिण्डौ दस्वा तु द्वावेव पितुः पितामहस्य च। ततस्तु तिपतुरचैकं प्रेतस्यैकं विधीयते ॥३६ त्रयाणामपि पिण्डानामेकेनापि सपिण्डने। **पितृत्वमश्**नुते प्रेत इति धर्मो व्यवस्थितः ॥४० पितामहस्तथा वाऽपि विद्यते प्रपितामहः। तृतीयस्यैव ते देयास्त्रयः पिण्डाः सपिण्डने ॥४१ प्रेतस्य पितरश्चैव विद्यन्तेऽपि त्रयो यदि। षोडशश्राद्धपर्यन्तं कुर्यात्सर्वं यथाविधि ॥४२ पितृणां मध्य एकश्चेत्म्प्रयते चेत्सपिण्डनम् [?]। सह कुर्यात्तदाऽने(न्ये)न नान्यथा मुनयो विदुः ॥४३ सपिण्डीकरणं न स्याद्यावन्नोपनयादिकम्। अब्दादूर्ध्वं न दुष्येत केचिदाहुर्म् तुत्रयात्।।४४ निषेधो मुनिभिः प्रोक्तः सपिण्डानयनं च हि। चौलोपनयनादौ चेन्नाधिकारः सुतस्य च ॥४४ यथा पितुस्तथा सातुः सपिण्डोकरणे विधिः। स यथा स्याद्पुत्रायाः पत्या सह सपिण्डने ॥४६ पुत्रोषु विद्यमानेषु दूरतः प्रेतसिक्कयाम्। असपिण्डः सपिण्डो वा न कुर्याइहनं विना ॥४७ जीवत्स्वेव हि पुत्रेषु प्रेतश्राद्धानि यानि च। स्नेहेन वाऽर्थलाभेन कुरुतेऽन्यो वृथा भवेत्।।४८ येन केनापि पुत्रेण ऋतं चेदौरसं[सो]न चेत्। सपिण्डीकरणे चेव शस्तं स्थानमुनयो विदुः ॥४६

पितुः पुत्रेण चैकेन पिण्डसंयोजने कृते। पुनः संयोजनं तस्य न कुर्याद्दूरगः सुतः ॥५० थेन केन विना पुत्रं प्रेतकर्म कृतं यदि। पुत्रः कुर्यात्पुनः सर्वे विना दाहास्थिसंचयम्।।५१ चाण्डालेन हतो विग्नः षडब्देनैव शुध्यति । यदि तेन शवं सृष्टं तद्धेनैव शुध्यति ॥५२ शर्व चैव स्वृशेच्छूद्रो यदि चापि प्रमादतः। आप्नुयाच्छुद्धिसब्देन वहम[न्न]ब्द्रायेण च ॥५३ प्रायश्चित्तं विधायाऽऽदौ दहेत्प्रेतं यथाविधि । अन्यथा कुरुते यस्तु स च गच्छेदधोगतिम् ॥५४ खट्टोपर्यन्तरिक्षे वा विप्रश्चेनमृत्युमाप्नुयात्। तस्याव्दमाचरेदेकं तेन पूतो भवेत्तथा ॥४४ प्रायश्चित्तं विना यस्तु क्रिय[कुरु]ते दहनक्रियाम्। निष्फलं प्रेतकार्यं स्याद्वदन्त्येवं महर्षयः ॥५६ कर्त् चेद्रिधसंस्कारं प्रमादान्न हि शक्यते। अस्थिशुद्धिकरान्मन्शान्धृत्वा दर्भानुदीरयेत् ॥५७ द्ग्धस्य विधिनाऽशीति[स्थीनि] भावयित्वा जले क्षिपेत्। तिलाञ्जल्यादिकं सर्वं कुर्याखेतस्यकर्म च ॥५८ साग्निकं सधवां चैव दहेदौपासनाग्निना। विधुरं विधवां ब्रह्मचारिणं च कुशाग्निना ॥५६ पत्नी वाऽथ पतिर्वा स्यान्मृत्युकाले न संनिधौ। प्रायश्चित्तेन सद्योऽग्निमृत्पाद्य तेन संदहेत्।।६०

प्रायश्चित्तविधिर्नोक्तो यत्र स्याद्गृह्यकर्मणि। चतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन होमव्याहृतिभिश्च हि ॥६१ दर्शमारभ्य शुक्ले स्यान्मृतश्चोपासनाहुतीः। चतुश्चतुस्तिलैः सद्यो जुहुयात्तद्दिनावधि ॥६२ कुष्णे मृताहमारभ्य द्शाविध तदाहुतीः। हुत्वा स्यात्पूर्ववत्कता दहेदौपासनामिना ॥६३ निधनं च सहात्मेनं दंपत्योर्गतयोश्च हि। वासनाग्निशिलाचित्तिचतुश्चैकेन मन्त्राणम् [१] ॥ दूर तिलोदकं तथा पिण्डान्नवश्राद्धं पृथक्पृथक्। अश्यिशुद्धिर्वृषोत्सर्ग एक एव भवेद्द्वयोः ॥६५ षोडशं च सपिण्डं च तथा मासानुमासिकम्। एकस्मिन्नेव काले तु तयोः कार्य प्रथमपृथक् ।।६६ भर्त्रा सह मृता नारी सह तेन सपिण्डनम्। द्विधा कृत्वा त्रिधा चैकं द्वितीयं च त्रिधा तथा ॥६७ भागांस्त्रीन्प्रथमे पिण्डे पितृणां सह योजयेत्। संयोजयेत्तथा भागान्मातृपिण्डैः सहान्तरान् ॥६८ सपिण्डीकरणादूध्वं क्रमात्पित्राद्यस्त्रयः। मात्राद्यस्तथा तिस्रः श्राद्धकर्मसु चैव हि ॥६६ सहानुमृतयोः पित्रोः श्राद्धे चैव क्षयाहके। शाकपाकादिकं चान्नं तयोः कुर्यात्पृथक्पृथक्।।७० यदि कर्तुं न शक्येत कालातीतभयादि । अन्नपात्रं पृथक्कुर्यादिति वेदविदो विदुः ॥७१

एकमेव!भवेदत्र प्रायश्चित्तं तिलोदकम्। एकस्मिन्नेव काले तु द्विजः स्तुतिप्रदक्षिणम्।।७२ विश्वदेवादिकं सर्वमर्चयन्तु पृथक्पृथक्। पितुरादौ ततो मातुः कुर्यात्संकलपपूर्वकम्।।७३ अमा चाप्यष्टकापे(प)क्षमनुक्रान्तियुगादयः। वैधृतिश्च व्यतीपातः श्राद्धकालाः प्रकीर्तिताः ॥७४ गजच्छायोपरागादि श्रोत्रियागमनं च हि। नवधान्यफलोत्पत्तिरन्यश्चालभ्ययोगता ॥७५ नैमित्तिका इमे प्रोक्ताः श्राद्धकाला महर्षिभिः। शक्तितः कुरुते श्राद्धं स याति परमां गतिम्।।७६ महानदीषु सर्वासु पुण्यतीर्थासु (र्थेषु) चैव हि । श्राद्धं विधीयते तच नैमित्तिकमुदाहतम्।।७७ पुत्रवर्गादिकामेष्टिस्तत्तत्काले विधीयते। पश्चम्यां प्रोष्ठपद्यादि वर्षतीं चैव वार्षिकम्।।७८ नित्यं नैमित्तिकं काम्यं यत्र कामप्रचोदितम्। सूतके मृतके चैव नैव कुर्यात्कथंचन ।।७६ स्तकं मृतकं चैव पुत्रादीनां च संनिधौ। त्रिदिनं पक्षिणी चाथ सद्य इत्यनुवर्तते ॥८० स्मृतितस्तु न जानीयादितरेषां महर्षिणाम्। द्शाहं तावदाशौचं सापिण्ड्यमनुवर्तते ॥८१ भवेत्तदृर्ध्वमेकाहं तत्पश्चात्स्नानतः शुचिः। पित्राद्यस्रयश्चेवं तथा तत्पूर्वजास्त्रयः ॥८२

1 1 1 1 2 2 .

सप्तमः स्यात्स्वयं चैव तत्सापिड्यं वुथैः समृतम्। सापिण्ड्यं चो(सो)दुकं चैव सगोत्रं तच वै क्रमात्।।८३ एकैकं सप्तकं चैकं सापिण्ड्यक मुदाहतम्।।८४ सपिण्डानां तथाऽशौचं संनिधौ स्याचथोदितम्। दूरतस्थाद्विजानीयादेशकालान्तरादिप ॥८५ मासत्रये त्रिरात्रं स्यात्षण्मासं पक्षिणी भवेत्। अहस्तु नवमाद्वींगूर्ध्वं स्नानेन शुध्यति ॥८६ पर्वतश्च (१य) महानद्या व्यवधानं भवेदादि । त्रिंशद्योजनदूरं वा सद्यः स्नानेन शुध्यंति ॥८७ यत्र वाडिप श्रुतं पित्रोर्भरणं दूरतोऽथ वा। भवेदशाहमाशौचं पुत्राणामेव निश्चितम्।।८८ संनिधौ सोद्काशौचं भवेत्र स्याद्संनिधौ। अतश्रानुपनीतस्य मृत (ता) शौचं न हि कचित्।।८६ दीक्षितश्चा (स्या)ऽऽहिताम्रि(ग्ने)श्च स्वाध्यायनिरतस्य च। वृतस्याऽऽमिन्त्रतस्येह नाशौचं विद्यते कचित्।।६० संप्रक्षालितपादस्य श्राद्धे विप्रस्य चैव हि । गृहानुत्रजपर्यन्तं न तरयाशीचिमव्यति(ते) ॥६१ बन्धं ग (त) तस्य विप्रस्य नित्यशौच (र) परस्य (द) च। सदा चैवाऽत्मनिष्टस्य नाशीचं विद्यते कचित्।।६२

इत्याश्वलायनस्पृतौ प्रेतकर्मविधिप्रकरणम्।

एकविंशोऽध्यायः ॥
 अथ लोके निन्दाप्रकरणम् ।

क्रियाहीनस्य मूर्वस्य पराधीनस्य नित्यशः। नीचसेवारतस्यैतस्त (वं स) दाऽशौचं तदोच्यते ॥१ सदाचारपरिश्रष्टो विप्रस्यै (श्चै व भवेदादि । कर्मभ्रष्टः स विज्ञेयो निन्द्यकर्मरतः सदा ॥२ माहिषेयश्च वैकुण्ठो वृष्ठेयश्चं गोलकः। निन्चाश्च ते हि लोके स्युः कथं जातीरतदो(तिरथो)च्यते ॥३ महिषी सोच्यते भार्या भगेनार्जित या धनम्। तस्यां यो जायते पुत्रो माहिषेयः सुतः स्पृतः ॥४ रजस्वला च या कन्या यदि स्यादविवाहिता। वृषली वार्षलेयः स्याजातस्तस्यां स्य (स) चैव हि ॥५ विवाहिताससंयोगां मोहाचेदुद्दहेद् द्विजः। भूयन्तीमुद्वतीं चाभिगोमयेनानुहेपयेत् (१) ॥६ सूत्रमशंवरादीनि परिहत्याभिषेचयेत्। पह्नवैः पश्चिभिर्गव्यैः पावमानीभिरेव च (?)।।७ प्रायश्चित्तं विधातव्यं कूश्या[ध्मा]ण्डं होममाचरेत्। पुनस्तामुद्रहेत्रोक्तां विधिवत्पूर्वजः पतिः ॥८ संभोगात्पूर्व एव स्यादुक्तोऽयं ग्रुनिभिर्विधिः। ब्रात्यस्तोमं जपेदन्यः प्रायश्चित्तपुरःसरम् ॥६

ऊर्ध्वं चेत्पतिसंयोगो जायते तां परित्यजेत् । संतानश्चेद्भवंत्तस्यां निन्द्य स्यात्पतितः पतिः ॥ अज्ञातश्च द्विजो यस्तु विधवामुद्रहेचिद्। परित्यज्य च वं तां च प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥११ अन्दमेकं विधायाऽदाववकीर्ण[र्णि] व्रतं चरेत्। पुत्रश्चेजायते तस्यामेको गोलक उच्यते ॥१२ विधवायाः सुतस्यं श्वीव गोलकः कुण्ड इत्यथ । त्रयश्चैव हि निन्द्याः स्युः सर्वधर्मवहिष्कृताः ॥१३ संस्कार्य[यौ]विधिवचोक्तं की मुनिभिः कुण्डगोलकौ। युगान्तरे समर्ध [धर्म] स्यात्कलौ निन्दा इतिस्मृतः ॥१४ परिव(वि)त्त्यां सुतः कुण्डो व्यभिचारसमुद्भवः। गोलको विधवां च निषिद्धः स्यात्कली स्मृतः ॥१५ वार्षलेयश्च वे कुण्डो गोलकः शूद्रयोनिजः। तज्जश्चापि हि निन्दाः स्युमोहिषेयश्च विप्रजः ॥१६ एभिः सह वसेदेषां याजनं कुहतेऽथ वा। वित्तमेषां द्विजा यस्तु भुङ्के सोऽपि हि तत्समः ॥१७ एतेवां याजनं यस्तु बाह्यणः कुस्ते यदि । स याति नरकं घोरं यावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥१८ अद्विजानां चाध्ययनं याजनं च प्रतिप्रहम्। बाह्यणो नैव गृह्वीयादिति प्राहुर्मुनीश्वराः ॥ ८ इति [आश्वलायनस्पृतौ]लोके निन्दाप्रकरणम्।

॥ द्वाविंशोऽध्यायः ॥अथ वर्णधर्मप्रकरणम् ।

सर्वेषां चेव वर्णान । मुत्तमो ब्राह्मणो यतः । क्षेत्रस्य(क्षस्त्त्रतु) पालयेद्विप्रं विप्राज्ञाप्रतिपालकः ॥१ सेवां चैव तु विप्रस्य शूद्रः दुर्याद्यथोदितम्। सर्वेषां चापि वै मान्यो वेरविद् द्विज एव हि ॥२ यजनादोनि कर्माणि कुर्यादहरहर्द्धिजः। धर्मोऽयं द्विजवर्यस्य परमानन्ददायकः ॥३ रणे धीरो भवेत्क्षत्त्री(त्त्रो)जयाद्राज्यं च वैरिणः। पालयेदु ब्राह्मणान्सम्यक्परं तेनेव जेष्यति ॥४ शूद्र: कुर्याद् द्विजस्यैव सेवामेव कुषि तथा। सुखं तेन लभेनूनं प्रवदन्ति महर्षयः ॥४ ब्राह्मणः क्षत्त्रियो वाऽपि स्वधर्मणानुवर्तयेत् । नाऽऽचरेत्परधर्मं च धर्मनाशाय चाऽत्मनः ॥६ स्नानेन च वहिः शुद्धिरात्मज्ञानेन चान्तरा। सत्कर्मणा द्विजः शुद्धः सर्वकर्मसु चैन हि ॥७ स्वधर्मनियतो विप्रः कुरते पातकं यदि। स्वधर्मेणैव शुद्धेन(ध्येत) नान्यथा शुचितामियात् ॥८ न स्पृशन्तीह पापानि ब्राह्मणं वेद्पारगम्। कदाचित्कुरुते मोहात्पद्मपत्रे यथा जलम्।।६

द्वाविशो-

अशुचि वै स्पृशेःक्षःतः कर्मकाले कचिद् द्विजः। प्रक्षालिताङ्विराचम्य कर्म कर्तुमथाईति ॥१० ज्रुम्भकारविकारः स्यात्स्रुत्वाऽधोवातनिर्मितः। श्लेष्मोत्सारो भवेत्कर्मकाले चाभ्यज्य शुध्यति (!) ॥११ न च तस्या(स्मा)दधो वायुः कर्मकाले द्विजस्य यत्। कृत्वा शौचं द्विराचम्य शिष्टं कर्म समापयेत् ॥१२ उद्क्यां सुतिकां चंव पतितं शवमन्त्यजम्। श्वकाकरासभान्स्ट्रुग सवासा जलमाविशेत्।।१३ त्रत्रष्टृष्टिनः स्पृशयस्तु स्नानं तस्य विधीयते । तदूर्षं तु समाचम्य व्यवहारे शुचिः स्मृतः ॥१४ उच्छिष्टस्पर्शनं चेत्स्यादश्नतो याजकस्य च। अनं पात्रस्थमश्नीयान्नान्यं दद्यात्कथंचन ॥१५ कुरुते त्रतभङ्गं यो द्विजश्चैव विशेषतः। स गच्छेन्नरकं चाऽऽशु प्रवदन्ति महर्षयः ॥१६ वेद्विद् द्विजहस्तेन सेवां(वा)संगृह(ह्य,ते यदि। न तस्य वर्धते धर्मः श्रीरायुः क्षीयते ध्रुवम् ॥१७ यस्य कस्य नरो यस्तु व्रते निष्ठुरभाषगम्। द्विजस्येह विशेषं च स च गच्छेदधोगतिम् ॥१८ कुरते योऽपमानं च ब्राह्मणस्य विशेषतः । तस्याऽऽयुः क्षीयते नूनमायुर्छक्ष्मीश्च संततिः॥१६ उचालयोपविष्टस्य मा(ष्टःस्यान्मा)न्यानां पुरतो यदि । गच्छेत्स विपदं नूनिमह चामुत्र चैव हि ॥२०

परदेवार्चको विप्रस्तद्धीनो भवेद्यदि ।

मासत्रयं तद्भाशी जीवच्छ्रद्रत्वमाप्नुयात् ॥२१

यश्च कर्मपरित्यागी पराधीनस्तथैव च ।
अधीतोऽपि द्विजश्चैव स च शूद्रसमो भवेत् ॥२२
अनधीत्य द्विजो वेदानन्यत्र कुरुते श्रमम् ।

स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छिति सान्वयः ॥२३

संतुष्टो येन केनाह(पि)सदाचारपरायणः ।

पराधीनो द्विजो न स्यात्स तरेद्रवसागरम् ॥२४

इत्यारवलायनधर्मशास्त्रे वर्णधर्मप्रकरणम्।

शिविंशोऽध्यायः ॥अथ श्राद्धप्रकरणम् ।

अथ चैव द्विजः कुर्याच्छ्राद्धं पित्रोर्म् तेऽहिन ।
तत्पार्वणविधानेन पितृयज्ञः स उच्यते ॥१
होमं कृत्वाऽथर्यूर्वेद्धुः सायं विप्रान्निमन्त्रयेत् ।
प्रातश्चेत्तान्परेयुर्वा श्राद्धाहे वेदपारगान् ॥२
प्रातरीपासनाग्नेस्तु श्राद्धपाकार्थमुरुमुकम् ।
नीत्वाऽन्नं सकछं कृत्वा पुनः संमीलयेदुभौ ॥३
ततो म[मा]ध्याहिकं स्नानं कृत्वा संध्यामुपास्य च ।
निमन्त्रितान्समाहूय क्रमादेवपितन्द्ध [तृद्धि]जान् ॥४

प्राणानायम्य संकल्प्य श्राद्धार्थमनुवेद्येत्। कुशाक्षतितरैर्युक्तं जरुपात्रे प्रपूर्वे च ॥५ आत्मनश्चेव शुद्धरार्थं द्रव्यस्य गृहशुद्धये । द्विजेः सह पठेत्सूक्तं प्रायश्चित्तार्थमेव हि ॥६ नतं सूक्तं शुचीवोऽग्निः शुचित्रततमश्च हि । उद्ग्न इत्यथैतोनु त्रयो मन्त्राः क्रमेण तु ॥७ केचि च इविदो इात्वा सूक्तानि कथयन्ति हि। पुरुषं चास्य वामस्य ममाग्ने वर्च इत्यथ ॥८ सौम्यं च वैष्णवं रुद्रं पावसान्यसथापि वा। अमृग्भिश्च पावमानीभिर्जलं चैवाभिमन्त्रयेत्।।ह श्राद्धोपयोगिकं द्रव्यमपक्वं पक्रमेव वा। सर्वं चैव स्मरेद्वि[रन्वि] धणुं जलेन प्रोक्षये बहुम् ॥१० ततः संस्तूय तान्विप्रान्समस्तेतिपठन्नयेत्। पुरतश्चापयेतेषां हिरण्यं सकुशं च हि ॥११ लब्धा[ब्ध्वाऽंऽ]ज्ञामपसव्येन श्राद्धं कर्तुं पितुर्मम । आचम्यासून्नियम्याथ द्दात्संकल्य वे क्षणम्।।१२ देवानां क्षालयेत्पादौ मण्डले चतुरस्रके। पितृ<mark>णां वर्तु</mark>लं[ले]च<mark>ैव</mark> प्राङ्गणे रविदीपके ॥१३ ईशान्यां त्वाचमेत्कर्ता देवाः प्राच्यामथोत्तरे। पितरश्च पवित्राणि स्वस्वस्थाने त्यजेद्थ ॥१४ आचम्य गृहमागत्य ब्राह्मणानुपवेशयेत्। प्राक्मुखौ द्वा उदक्संस्थौ प्राक्संस्थांस्वीनुदृङ्मुखान् ॥१५ निरुष्य प्रकिरेद्वायुं तिलान्निऋ तिकोणतः। पठन्नपहतामन्त्रमसव्येन चाष्ट्रमु ॥१६ पितृणां पुरतः सिञ्चेज्जलं पठन्नुदीरताम्। सन्येन पुरतो देवे गायच्या चैवमेव हि ॥१७ श्राद्धकाले गयां ध्यात्वा ध्यात्वा देवं गदाधरम् । वस्वादीं स्र पितृन्ध्यात्वा ततः श्राद्धं समाचरेत्।।१८ देवानामासनं दद्यातक्षणे चाऽऽवाहयेदथ । कुशाञ्छिरसि देवानां विश्वे देवास इत्यृचा ॥१६ विश्वे देवाः सक्रन्मन्त्रमुचायं प्रोक्षयेद्भवम्। अर्घ्यार्थं चाऽऽसाद्येद् हे पात्रे दैवे कुशान्विते ॥२० ·आगच्छन्तु महाभागा विश्वे देवा महावलाः। ये चात्र विहिताः श्राद्धे सावधाना भवन्तु ते ॥२१ पूर्वाग्रैः मं)दैविके पात्रे दक्षिणामं तु पैतृके(कम्)। अधश्चोपरि पात्राणां कुशान्दैवे च पैतृके ॥२२ गायत्र्या प्रोक्ष्येत्पात्रे कृत्वा तान्निश्चिपेद्यवान् ॥२३ यवोऽसि धान्यराजो वा वाहणो मधुसंयुतः। निर्णोदः सवपापानां पवित्रमृषिभिः स्मृतम् ॥२४ गन्धाक्षतकुशांश्चेव क्षिपेदर्घं निवेद्येत्। या दिव्या इति मन्त्रेण हस्ते हस्तं पिधापयेत् ॥२४ निद्ध्याद्र्घ्यपात्रेषु देवानामभिसंमुखे । पितृणामर्घ्यपात्राणि तानि वै पै(पि)त्संमुखे ॥२६

देवार्चा दक्षिणादि स्यात्पादजान्वंसमूर्धनि । शिरोंसजानुपादेषु वामाङ्गादिषु पैतके ॥२७ अर्चतानेन मन्त्रोण गन्धदिभिरथार्चयेत्। युवासुवासामन्त्रेण दद्यादाच्छादनं ततः ॥२८ यथौक्तविधिना देवान्समभ्यच्यं तदाज्ञया। पितृणामर्चनं कुर्याद्पसन्येन चैव हि ॥२६ आसनं च क्षणं दत्त्वा पितृनावाह येद्थ । उसन्तस्त्वेति मन्त्रोण प्रति पितरमिष्यथ(ते) ॥३० आयन्तु न इमं मन्त्रमुचरेत्सकृदेव हि। सन्येन प्रोक्ष्य गायज्या पात्रान्यु[ण्यु]त्तानि कारयेत् ॥३१ क्षिप्त्वा तिलानपः पूर्व शं नो देवीं समुचरेत्। पुनस्तेषु च पात्रेषु तिलोऽसोत्यावपेत्तिलान् ॥३२ गन्धपुष्पकुशादीनि क्षिप्त्वा चैव तु पूबवत्। स्वधाऽध्यं इति ब्रूयात्त्रिः सन्येन तु निवेदयेत्।।३३ सव्यं कृत्वा गृहीतेन पाणिना दक्षिणेन तु। द्द्यात्पितरिदं तेऽर्घ्यं या दिन्यामन्त्रमुचरेत् ॥३४ एवं पितामहे चैव तथैव प्रपितामहे। द्त्वाऽर्घ्यं सिललं द्यात्पुनिष्ठिषु करेषु च ॥३४ पात्रद्वयं[य]कृतं तोयं पितृपात्रो प्रसिच्य च। पात्रस्थं पुत्रकामी चेन्मुखं तद्[तेना]नुलेपयेत् ॥३६ पितृभ्यः स्थानमसीति न्युब्जं वोत्तानमेव वा। रतीयं पिहितं कुर्यादुत्तानोपरि भाजनम् ॥३७

स्थापितं प्रथमं पात्रं तस्थानं न हि चालयेत्। .जलसेचनपर्यन्तं पिण्डदानं पुनश्च हि ॥३८ पितृपाणिष्वपो दद्याद्पसब्येन वै ततः। नमो व इति मन्नोण पितृ श्रेवार्चयेत्तिलैः ॥३६ गन्धादिभिः समभ्यच्यं पितृपूजां समापयेत्। मण्डलानि समानानि कारयेदेवपूर्वकम् ॥४० द्वे तु चतुरस्रे तु ततो वृत्तानि पैत्के। प्रमाणं मण्डलस्योक्तं यावत्पात्रमितं भवेत् ॥४१ अन्तर्धाय कुशांस्तेषु प्रक्षिपेच यवांस्तिलान् । पात्राण्यासाद्येत्तेषु हेमरौत्यमयानि च ॥४२ तद्भावे तु पर्णानि कद्ल्या नि शुभानि च। परिस्तरेत्कुशाद्येश्व पात्राणि पितृपूर्वकम् ॥४३ पितृयज्ञचरोरन्नमादायाक्तं घृतेन तु। अमी करिष्य इत्येतान्पृष्ट्रोक्तः क्रियतामिति ॥४४ न भवेत्पितृयज्ञश्चेद्गृह्यामौ पचनं भवेत्। अग्नौकरणहोमं तु कुर्यादी पासनानले ॥४४ गृह्याग्नी पचनं पिण्डं पितृयज्ञो न चैव हि। अग्नौकरणं गृद्याग्नौ न कुर्यादिति केचन ॥४६ कालद्वयेऽपि कुरुते नित्यहोमं द्विजो यदि । स चाग्नीकरणं कुर्यात्प्रातहोंमो विधीयते ॥४७ गृह्याग्निर्यस्य चेन्न स्यात्तस्याग्नौकरणं कथम्। श्राद्धार्थमन्नमादाय जुहुयात्पितृपाणिषु ॥४८

संगृह्याऽऽहुतिमेकां च घृताभ्यक्तां विगृह्य च। सोमायेति तु मन्त्राभ्यां जुहुयात्कुशपाणिना ॥४६ स्रुवेण चाऽऽज्यमादाय तदाभावेऽथ वा क्र्रोः। पितृणामेव पात्राणि तूष्णीमेवाभिघारयेत् ॥६० अनं पाणिहुतं यच निद्ध्यात्तत्स भाजने। गत्वाऽन्यत्र समाचम्य पुनश्चोपविशेद्थ ॥५१ देवपात्रादितश्चाऽऽज्यं सच्येनैवाभिघारयेत्। मूर्धानमिति मन्त्रेण सर्वपात्राणि चैव हि ॥५२ आमास्विद्यादिकान्मन्त्रान्स्वयमेव जपन्न हि [पेद्थ]। पत्नी चाप्यथ वा पुत्रः शिष्यो वा परिवेषयेत्।।४३ अन्नं च पायसं भक्ष्यमाज्यं च व्यञ्जनादिकम्। द्द्यादेवाऽऽद्तिः सर्वं सूपमन्ते च पैतृके ॥५४ पात्रश्थं प्रोक्षयेदन्नं गायत्र्या चाभिमन्त्र्य च। पाणिभ्यां भाजनं धृत्वा पृथ्वी ते पात्रमुचरेत् ॥५५ इदं विष्णुरनेनान्ने द्विजाङ्गुष्ठं निवेद[श]येत्। स्वहादितः समुचार्यं गयायां दत्तमस्त्विति ॥५६ ये देवास इमं मन्त्रमुचार्याथ च पेतृके। संत्रोक्ष्य पूर्ववचाननं प्राचीनावीत्यतः परम् ॥५७ परिविष्टेषु चान्नेषु हुतशेषं निधाय च। द्द्याद्त्रं पितृभ्योऽपि पूर्ववत्पितृनामभिः ॥ ४८ ये चेहेति च वे मन्त्रां समुचार्यं ततः परम्। देवांस्तुत्वा पितृंश्चेव ब्रह्मनिष्ठान्मुनीश्वरान् ॥५६

परिवेषे च[षेचन]पर्यन्तं कारियत्वा यथाविधि। समृत्वा हरिहरी चैव पितृणां मुक्तिहेतवे॥ देवान्पितृन्समुद्दिश्य क्रियमाणं हि कर्म यत्। पितृणां मुक्तये सर्वं ब्रह्मणे विनिवेद्येत् ॥६० न्यूनं चैवातिरिक्तं च मन्त्रादीनां भवेद्यदि। तद्दोषपरिहारार्थं गायत्रीं समुदीरयेत्।।६१ ततश्चेवापसन्येन मधु वाता जपेदथ । आपोशनार्थमुद्कं पितृपूर्वं निवेद्येत् ॥६२ ईशानादिपदं स्तुत्वा तिष्ठन्तुदङ्मुखश्च हि। दैवे पित्रये समुचार्य तत्सचामृतमस्तिवति ॥६३ निनयेत्सि छिछं चैव द्विजानां पुरतो जलम्। प्रीयतामिति मन्त्रेण पितृरूपी जनार्दनः ॥६४ अमृतोपस्तरणमसीत्युत्तवा मन्त्रं पिबेजलम्। प्राणाहुति च गृह्वीयात्क्रमान्मन्त्रेश्च पञ्चभिः ॥६५ नासदासीति सूक्तानि भुञ्जानाञ्ज्रावयेद्द्विजान्। क्रुगुष्वेत्यादिस्कानि रक्षोध्नानि च पञ्च वै।।६६ अग्निमीलेऽनुवाकश्च पितृस्तुतिमुदीरताम्। पवित्राणि च सूक्तानि यावद्त्राह्मणभोजनम्।।६७ इच्छातृप्तेषु विप्रेषु गायत्री समुदीरयेत्। तृप्ताः स्थ इति तान्यृष्ट्वा ह्यपसन्येन पैतृके ॥६८ सध्वक्षद्वीत्रति मन्त्रं वै मधुसंपन्नमित्यथ । पृथग्भुक्तवतो विप्राननं पिण्डार्थमुद्धरेत् ॥६९

तान्पृच्छेदन्न[थ] संपन्नं शेषं कि क्रियतामिति। लब्ध्वा चैषामनुज्ञां च सहेष्टेर्भुञ्ज[ज्य]तामिति॥७० उच्छिष्टपुरतो भूमौ जलदर्भा स्तिलान्सिपेत्। ये अग्निद्ग्धामन्त्रोण सर्वान्नं किचिदुत्क्षिपेत्।।७१ उत्तराचमनात्पूर्वं पिण्डदानं विधीयते । अर्ध्व वा केचिदिच्छन्ति तच संकल्पपूर्वकम्।।७२ आग्नेयप्रवणे रेखां लिखेद पहता इति। तामभ्युक्ष्य जलेनाथ कुशानास्तीर्य तच तु ॥७३ अपस्तत्रापसन्येन शुन्धतामिति सेचयेत्। तत्र पिण्डत्रयं दद्याचे च त्वा पितृपूर्वकम्।।७४ अत्रेति चानुमन्त्रयाथ यथोव[थावद्व]र्तयेदुद्क्। आप्रदक्षिणमावर्त्य कुर्याद्वायुनिरोधनम्।।७५ पुनश्चाऽऽवर्तयेतद्वद्मी मद्नत चैव हि। मक्ष्येच्च चरोः शेषमाद्यायेदिति केचन ॥७६ उपवीती समाचम्य प्राचीनावीत्यतः परम्। पिण्डोपरि जलं सिञ्चेच्छुन्धन्तामिति पूर्ववत्।।७७ अभ्यङ्क्षेति च वै तैलं द्दाःदङ्क्षेति चाञ्जनम्। नामसंबन्धगोत्रादि समुच्चार्य यथाक्रसम्।।७८ एतद्व इति मन्जेण प्रतिपिण्डं वरं शुअम्। सन्येन चार्चयेत्पिण्डान्गंधपुष्पाक्षतादिभिः॥७६ धूपं दीपं च नैवेदां ताम्बूलं चैव दक्षिणाम्। दस्या तिष्ठन्तुपस्तूयास्त्राचीनावीतिना ततः ॥८०

नमो व इति मन्त्रो वै मनश्चैव पठेदिति । मनोन्विति त्रिभिर्मन्त्रैः किंचित्पिण्डान्प्रवाह्येत् ॥८१ परेतनेति मन्त्रं वै जपेत्पिण्डान्तिके ततः। औपासनान्तिके गत्वा जपेद्ग्नेतमित्युचम्।।८२ पिण्डं तं प्रारायेत्पत्नीं पुत्रार्थी मध्यमं हि चेत्। आधत्तेति च मन्त्रेण धत्ते गर्भ कुमारकम् ॥८३ नो चेदतिप्रणीतेऽग्नावप्सु वा तान्क्षिपेद्थ। गिण्डप्रारानपक्षे तु विशेषः कथ्यतेऽधुना ॥८४ तावन प्राशयेतिपण्डं न हि श्राद्धविसर्जनम्। पिण्डप्रक्षेपणं चाम्रावप्सु चापि तथैव हि ॥८४ पिण्डदानं च वै श्राद्धे यत्र कुत्रापि वा भवेत्। गयायां च ऋतं मत्वा ह्यात्मनेति निवेद्येत् ॥८६ प्रक्षालितकरान्विप्रानाचान्तानुपवेशयेत्। जलद्रभाक्षतान्द्त्वा तथैव पैतृके तिलान् ॥८७ तत्पाणिष्वक्षतान्द्त्वा ततो विप्राशिषो भवेत्। स्वस्तीत्युत्तवा मया दत्तं श्राद्धमक्षय्यमस्त्वित ॥८८ दक्षिणां च ततो द्याद्यथाविभवसारतः। दक्षिणारहितं यच्च तच्छाद्धं निष्फलं भवेत्।।८६ चालयित्वा तु पात्राणि स्वस्तीत्युत्तवाऽक्षतांस्तिलान्। तत्तत्थाने क्षिपेदेषु प्रकिरेदन्नमप्यथ ॥६० असंस्क्रतेति वै पित्र्ये दैवे चासोमपा इति। दक्षिणां च ततो दस्वा पितृसंतुष्टिहेतवे ॥ ११

विसृजेत्पितृपात्रस्थं पिण्डानां पुरतो जलम्। स्वधोच्यतामनेनैव ततः पिण्डान्समुच्चरेत्।।६२ वाजे वाजेऽथ मन्त्रेण कुर्याच्छ्राद्धविसर्जनम्। सन्यमंसं पितृणां च देवानां दक्षिणं स्पृशेत्।।६३ पठेदुचैरिमं मन्त्रमामा वाजस्य चैव हि। प्रदक्षिणत्रयं कुर्वन्भुञ्जतः पितृसेवितान् ॥६४ जलमर्चनपात्रस्थान्विसृजेदक्षतादिकान्। पुरतस्तेन पुत्रः स्युर्याति ब्रह्मपदं च हि ॥६४ ब्रह्मत्वं च प्रयातेभ्यो गृह्वीयादाशिषः शुभाः। भवत्प्रसादतो भूयाद्धनधान्यादिकं मम ॥६६ दातारो नोऽभिवर्धन्तां वेदाः संततिरेव नः। श्रद्धा च नो मा व्यगमद् बहु घे(दे)यं च नोऽस्त्विति ॥१७ अनं च नो बहु भवेदतिथींश्च लभेमहि। याचितारश्च नः सन्तु मा च याचिष्म कंचन ॥६८ ततो विप्रास्तथैवेति प्रतिवचनमाद्रात्। वः पदं निर्दिशोयुस्ते ब्राह्मणाश्चैव नः पदे ॥६६ स्वादुषं सद् इत्युत्तवा मन्त्रानुच्चेः पठेद्थ । दक्षिणाभिमुखित्तिष्ठेद्विप्राणां पुरतश्च हि ॥१०० इहैवेति पठेन्मन्त्रं भुक्तवद्गिद्धिजैः सह। संतुष्टा आशिषो द्युर्भुक्तिमुक्तिप्रदाः शुभाः ॥१०१ आयुः प्रजां धनं विद्यां स्वर्गं मोक्षं सुखानि च। प्रयच्छन्तु तथा राज्यं प्रीता नृणां पितासहाः ॥१०२

तेभ्यश्चेवाऽऽशिषो लब्धा नमस्कुर्याद्द्रिजांस्तथा। अभ्यज्याऽऽज्य द्विजानां च पादान्प्रक्षालयेत्क्रमात्।।१०३ अद्य मे सफलं जन्म सवत्पादाब्जवन्दनात्। अद्य मे वंशजाः सर्वे याता वोऽनुमहाद्दिवम् ॥१०४ ताम्बूछं च ततो द्याद्यथाविभवसारतः। कृताञ्जलिपुटो भूत्वा प्रार्थयेत्ताननेन च ॥१०५ पत्रशाकादिदानेन क्लेशिता यूयमीहशाः। तत्क्लेशजातं चित्तात्तु विस्मृत्य क्षन्तुमईथ ॥१०६ वसिष्ठसदशा यूयं सूर्यपर्वसमा तिथिः। आसनादि नमस्कारो भवत्सत्कार एव हि ॥१०७ यस्य समृत्या च नामोक्या तपोयझक्रियादिषु। न्यूनं संपूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥१०८ मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं द्विजोत्तमाः। श्राद्धं भवति संपूर्णं प्रसादाद्भवतां मस ॥१०६ अनेन पितृयज्ञेन प्रीयतां भगवानिह। मया भत्तया कृतं सर्वं तत्सद्ब्रह्मार्पणं भवेत्।।११० वसिष्ठासस्ततो देवा वसिष्ठश्च जपेदिसौ। पितृस्तुतिकरां गाथामिदं पितृभ्य एव च ॥१११ सन्त्राव्छृण्वत(न्त) इत्येतान्संतुष्टाः पितरो गृहे । द्त्वाऽभीष्टफलं वर्तुं (तुंः) प्रयान्तीद्मनुत्रमम् ॥११२ अनेन विधिना चैव यः श्राद्धं कुरुते द्विजः। भुत्तवेह लक्छान्कामान्सोऽपि सायुज्यमाप्नुयात्।।११३ इत्याख्यायनवर्षेशाखे श्राद्धप्रकरणम्।

चतुर्विशोऽध्यायः । अथ श्राद्धोपयोगिप्रकरणम् ।

पितृयज्ञमकृत्वा तु पित्रोरेकाब्दिकं यदि। यज्ञान्यः कुरुते पञ्च स याति नरकं घ्रुवम् ॥१ कुरुते ब्रह्मयज्ञं च श्राद्धात्पूर्वं मृतेऽहिन । निराशाः पितरस्तस्य श्राद्धान्नं न लभन्ति ते ॥२ तर्पणं कुरुते पित्रोः श्राद्धात्पूर्वं मृतेऽहिन । निराशाः पितरस्तस्य स च गच्छेदधोगतिम्।।३ कुर्यात्पञ्च महायज्ञात्रिवृत्ते श्राद्धकर्मणि। पित्रोराब्दिक एवाऽऽहुराचार्याः शौनकाद्यः ॥४ अनिप्रको यदा ज्येष्ठः कनिष्ठः सामिको यदि । अग्नीकरणहोसन्तु ज्येष्ठः कुर्यात्कथंचन ॥४ कनिष्ठस्य च गृह्याग्नावग्नाकरणहोमकम्। तदाज्ञयाऽप्रजः कुर्यादिति केचिद्वदन्ति हि ॥ई संसृष्टा भातरो यत्र श्राद्धे स्युर्यदि चैव हि। तत्रायं मुनिभिः प्रोक्तो विधिनैवान्यथा भवेत्।।७ वहुचो ब्रह्मचारी वा तथैवानग्निकोऽपि वा। अग्नौकरणहोमाख्यं कुर्याच्चैव पितुः परे ॥८ पब्जै(श्व) वा स्युद्धिजाः शस्ता द्वौ च पित्रोमृ तेऽहिन । द्वी दैवेऽथ त्रयः पित्र्य एकको वोभयत्र तु ॥६ चत्वारश्चेद् द्विजाः श्राद्धे दैवे चैको भवेत्तदा। त्रयः पित्रये भवन्त्येके वदन्त्येव हि संकटे ॥१०

अथ वाऽपि त्रयो वाऽपि एकः स्यात्पित्यु त्रिषु । द्रौ देवे चैव तु स्यातां विप्रावेके वदन्ति हि ॥११ द्वितीयाऽऽवाह्ने षष्ठी संकल्पे चाऽऽसने क्षणे। चतुर्थ्याच्छादने चान्ने शेषाः संबुद्धयः स्पृताः ॥१२ अन्नदाने विशेषः स्यात्संबुद्धिः प्रथमाऽथ वा। अन्ते(न्ये) चैव चतुर्थी तु वदन्त्येके महर्षयः ॥१३ देवानामासनं दद्यादक्षिणे चाऽऽविकं कुशान्। कृत्वा द्विगुणभुग्नांस्तान्पितृणां वाम एव हि १४ विशान्त्रिमन्त्रयेच्छाद्धे वहुचान्वेदपारगान्। तद्भावे तु चैवान्यशाखिनो वाऽपि चैव हि ॥१४ मन्त्रेश्चैव स्वशाखोक्तैः कर्म कुर्याद्यथाविधि। अन्यथा कर्महानिः स्याद्वह्वानामयं विधिः ॥१६ कर्मणां याजुषादीनां स्वस्वशाखा न विद्यते । ऋक्शाखाविहितं कर्म समानं सर्वशाखिनाम्।।१७ बह्वृचानां तु यत्कर्म यदि स्यादन्यशाखया। पुनश्चैवापि तत्कर्म कुर्याद् बह्वचरााखया ॥१८ हित्वा स्वस्य द्विजो वेदं यस्त्वधीते परस्य तु। शाखारण्डः स विज्ञेयः सर्वकर्मबहिष्कुतः ॥१६ रोगादिरहितो विप्रो धर्महो वेदपारगः। भुझीयस्दमलं श्राद्धे साम्निकः पुत्रवानपि ॥२० पितृमानेव भुञ्जीयाच्छ्राद्धमिन्दुक्षये द्विजः। नृप्ताः स्युः पितरस्तेन दाता स्वर्गसवाप्तुयात् ॥२१

श्राद्धकर्ता न भुङ्गीयात्परश्राद्धे विधुक्षये। भुक्के चेत्पितरो यान्ति दाता भोक्ताङ्यधोगतिम्।।२२ द्शेष्टि(शाष्ट)का व्यतीपातो(ता) वैधृतिश्च महालयः। युगाश्च मनवः अम्द्रकालाः संकान्तयस्तथा ॥२३ गजच्छायोपरागञ्च षष्टी या कपिला तथा। अर्थोदयादयश्चैव श्राद्धकालाः स्वृता बुधैः ॥२४ संभूते च नवे धान्ये श्रोत्रियो गृहमागते। आचार्याः केचिदिच्छन्ति श्राद्धं तीर्थं च सर्वदा ॥२५ श्राद्धकालेषु सर्वेषु कुर्योच्छ्राद्धं च शक्तितः। विशेषतो मृताहे तु पित्रोश्चैव विधीयते ॥२६ मोहान कुरते श्राद्धं मातापित्रोस् तेहऽनि । निराशाः पितरो यान्ति दुर्गिति चापि वे सुतः ॥२७ अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा यी मृताहमतिक्रमेत्। स याति नरकं घोरं यावदाभूतसंख्वम्।।२८ अतिक्रमं(मो) सृताहस्य दोषः स्यात्मृतकं विना । न कुर्याच्छ्राद्धसाशीचे प्रवद्नित महर्षयः॥२६ आचरेहिधिवच्छाद्धं मातापित्रोम् तेऽहिन। पितरस्तेन कुप्यन्ति गच्छन्ति पद्युत्तमम्।।३० सदाचारपरो विप्रः कृपालुः श्राद्धकृत्रथा। आत्मनिष्ठीऽर्घछोकेषु तारयेत्तरति स्त्रयम् ॥३१ इस्याख्यायनपर्यसाखे श्राद्धोपयोगित्रकरणम्। सबाप्तेयं छब्बाश्वहायमस्हितः।

ॐ तत्सद्बहाणे नमः।

॥ अथ ॥

॥ बोधायनस्मृतिः॥

---:尜::尜:---

श्रीगणेशाय नमः।

प्रथमः प्रश्नः।

तत्र प्रथमोऽध्यायः।

अथादौ सशिष्टधर्मलक्षणम्।

उपदिष्टो धर्मः प्रतिवेदम् ॥१ तस्यानुव्याख्यास्यामः ॥२

स्मार्तो द्वितीयः ॥३ तृतीयः शिष्टागमः ॥४

शिष्टाः खळु विगतमत्सरा निरहंकाराः कुम्भीधान्या-

अलोलुपा दन्भदर्पलोभमोहकोधविवर्जिताः ॥४

धर्मेणाधिगतो येषां वेदः सपरिवृ हणः।

शिष्टास्तद्नुमानज्ञाः श्रुतिप्रत्यक्षहेतवः, इति ॥६

तद्भावे द्शावरा परिषत्।।७ अथाप्युदाहरन्ति।।८

चातुर्वेद्यं विकल्पी च अङ्गविद्धर्मपाठकः।

आश्रमखासयो विप्राः पर्वदेषा दशावरा ॥६

पथा वा स्युख्यो वा स्युरेको वा स्याद्निन्दितः। प्रतिवक्ता तु धर्मस्य नेतरे तु सहस्रशः॥१० यथा दाहमयो हस्ती यथा चर्ममयो मृगः। ब्राह्मणश्चानधीयानखयस्ते नामधारकाः ॥११ यद्वदन्ति तमोमृढा मूर्खा धर्ममजानतः। तत्यापं शतधा भूत्वा बक्तृन्समधिगच्छति ॥१२ बहुद्वारस्य धर्मस्य सूक्सा दुरनुगा गतिः। तस्मान वाच्यो हाकेन बहुज्ञेनापि संशये।।१३ धर्मशास्त्ररथाल्ढा वेदखड्गधरा द्विजाः। क्रीडार्थमपि यद्नूयुः स धर्मः परमः स्पृतः ॥१४ यथाऽश्मनि स्थितं तोयं मारुतोऽर्कश्च नारायेत्। तद्वत्कर्तरि यत्पापं जलवत्संप्रतीयते ।।१५ शरीरं बलमायुश्च वयः काछं च कर्म च। समीक्य धर्मविद्वुद्धया प्रायश्चितानि निर्दिशेत्।।१६ अव्रतानाममन्त्राणां जातिमात्रोपजीविनाम्। सहस्रशः समेतानां परिषत्त्वं न विद्यते, इति ॥१७

पञ्चधा विप्रतिपत्तिः।।१८

पश्चधा विप्रतिपत्तिर्दक्षिणतस्तथोत्तरतः ॥१६

यानि दक्षिणतस्तानि व्याख्यास्यासः॥२०

यथैतद्रुपेतेन सह भोजनं श्विया सह भोजनं पर्युषितभोजनं-मातुलपिरुष्वसृदुहिरुगमनमिति ॥२१ अथोत्तरत ऊर्णाविकयः सीधुपानमुभयतोद् द्विर्च्यवहारआयुधीयकं समुद्रसंयानमिति ॥२२
इतरित्तरिसम्कुर्वन्दुष्यतीतरित्तरिसम् ॥२३
तत्र तत्र देशप्रामाण्यमेव स्यात् ॥२४
मिथ्येतिदिति गौतमः ॥२५
उभयं चैव नाऽऽद्रियेत शिष्टस्पृतिविरोधदर्शनात् ॥२६
प्राग्विनशनात्प्रत्यकालकाद्वनादक्षिणेन हिमवन्तमुद्दस्पारियात्रमेतदार्यावर्तं तिस्मन्य आचारः स प्रमाणम् ॥२७
गङ्गायमुनयोरन्तरिमत्येके ॥२८
अथाप्यत्र भाह्नविनो गाथामुदाहरिन्त ॥२६
पश्चात्सन्ध्रविधरणी सूर्यस्योदयनं पुरः ।
यावत्कृष्णा विधावन्ति तावद्धि ब्रह्मवर्चसमिति ॥३०

अवन्तयोऽङ्गमगधाः सुराष्ट्रा दक्षिणापथाः उपावृत्सिन्धुसौवीरा एते संकीर्णयोनयः ॥३१

आरट्टान्कारस्करान्पुण्ड्रान्सीवीरान्वङ्गकलिङ्गान्प्रानूनानिति-च गत्वा पुनः स्तोमेन यजेत, सर्वष्टष्ट्या वा ॥३२ अथाप्युदाहरन्ति ॥३३

पद्भ्यां स कुरुते पापं यः कलिङ्गान्त्रपद्यते ।

श्रृषयो निष्कृति तस्य प्राहुर्वेश्वानरं हिनः ॥३४

बहूनामिप दोषाणां कृतानां दोषनिर्णये ।

पिनन्नेष्टि प्रशंसन्ति सा हि पाननमुत्तमम्, इति ॥३४

अथाप्युदाहरन्ति ॥३६ वैधानरीं त्रातपतीं पवित्रेष्टिं तथैव च । ऋतावृतौ प्रयुद्धानः पापेभ्यो विप्रयुच्यते-पापेभ्यो विष्रयुच्यते, इति ॥३७ इति प्रथमप्रश्ने प्रथमोऽध्यायः।

> अथ प्रथमपूरने द्वितीयोऽध्यायः। अथ ब्रह्मचारिधर्मवर्णनम्।

अष्टाचत्वारिशहर्षाणि पौराणं वेदब्रह्मचर्यम् ॥१
चतुर्विशति द्वादश वा प्रतिवेदम् ॥२
संवत्सरावमं वा प्रतिकाण्डम् ॥३
श्रहणान्तं वा जीवितस्यास्थिरत्वात् ॥४
कृष्णकेशोऽभीनाद्धीतेति श्रुतिः ॥६
नास्य कर्म नियक्कन्ति किंचिदा मौक्षिवन्धनात् ॥
शृत्या शूद्रसमो श्रेष यावद्धदेन जायत, इति ॥६
गर्भादि संख्या वर्षाणां तद्ष्टमेषु ब्राह्मणमुपनयीत ॥७
त्र्यधिकेषु राजन्यम् ॥८ तस्मादेकाधिकेषु वैश्यम् ॥६
वसन्तो प्रीष्मः शरदित्यृतवो वर्णानुपृत्येण ॥१०
गायश्रीत्रिष्टुञ्जगतीभिर्यथाक्रमम् ॥११
आ पोडशादाद्वाविशादाचतुर्विशादित्यना(न)त्यय एषां क्रमेण॥

मौद्धी धनुर्ज्या शाणीति मेखलाः ॥१३

कृष्णक्रवस्ताजिनान्यजिनानि ॥१४

मूर्घेळलाटनासाम्रप्माणा याज्ञिकस्य वृक्षस्य दण्डा-

विशेषाः पूर्वोक्ताः ॥१४

भवत्वृवां भिक्षामध्यां याच्चान्तां भिक्षां चरेत्सप्ताक्षरां-

क्षां च हिं च न वर्धयेत् ॥१६

भवत्पूर्वां ब्राह्मणो भिध्ते भवन्यध्यां राजन्यो भवदन्त्यां-

वैश्यः सर्वेषु वर्णेषु ॥१७

ते ब्राह्मणाद्याः स्वकर्मस्थाः ॥१८

सद्ाऽरण्यात्समिध आहृत्याऽऽद्ध्यात् ॥१६

सत्यवादी हीमाननहंकारः पूर्वीत्थायी जघन्यसंवेशी ॥२०

सर्वत्राप्रतिहतगुरुवाक्योऽन्यत्र पातकात् ॥२१

यावदर्थसंभाषी स्वीभिः ॥२२

नृत्तगीतवादित्रगन्धमाल्योपानच्छत्रधारणाञ्चनाभ्यञ्चनवर्जी॥

दक्षिणं दक्षिणेन सन्यं सन्येन चोपसंगृह्णीयादीर्घमायुः-

स्वर्ग चेप्सन् ॥२४

काममन्यस्मै साधुवृत्ताय गुरुणाऽनुज्ञातः ॥२५

असावहं भो इति श्रोत्रे संस्कृत्य मनःसमाधानार्थम् ॥२६

अधस्ताज्जान्वोरापद्भ्याम् ॥२७

नाऽऽसीनो नाऽऽसीनाय न शयानो न शयानाय नाप्यतो-

नाप्यताय ॥२८

शक्तिविषये मुहूतंमपि नापूयतः स्यात् ॥२६

सिमद्धार्युद्कुम्भपुष्पान्नहस्तो नाभिवाद्येद्यवान्यद्प्येवं युक्तम् ॥
न समवायेऽभिवाद्नमत्यन्तराः ॥३१
भ्रातृपत्नोनां युवतीनां च गुरुपत्नीनां जातवीर्यः ॥३२
नौशिलाफलककुञ्जरप्रासादकटेषु चक्रवत्सु चादोषं सहाऽऽसन म्
प्रसाधनोच्छादनस्नापनोच्छिष्टभोजनानीति गुरोः ॥३४

डच्छिष्टवर्जनं तत्पुत्रेऽनूचाने वा ॥३६ प्रसाधनोच्छादनस्नापनवर्जनं च तत्पत्न्याम् ॥३६ धावन्तमनुधावेद्गच्छन्तमनुगच्छेत्तिष्ठन्तमनुतिष्ठेत् ॥३७ नाप्सु ऋाधमानः स्नायात् ॥३८

दण्ड इव प्रवेत ॥३६ अत्राह्मणाद्य्यसमापदि ॥४० गुश्रूषाऽनुत्रज्या च यावद्ध्ययसम् ॥४१ तयोस्तदेव पावनम् ॥४२ श्रातृपुत्रशिष्येषु चैवम् ॥४३ मृत्विक्थशुरपितृव्यमातुलानां तु यवीयसां-

प्रत्युत्थायाभिभाषणम् ॥४४

प्रत्यभिवादं इति कात्यः ॥४५ शिशावाङ्गिरसे दर्शनात् ॥४६ धर्मार्थौ यत्र न स्याताम् ॥४७

धर्मार्थी यत्र न स्यातां शुश्रूषा वाऽपि तद्द्विधा । विद्यया सह मर्तव्यं न चैनामूषरे वपेत् ॥४८ अग्निरिव कक्षं दहति ब्रह्म पृष्ठ(ष्ट)मनादृतम् । तस्माद्वे शक्यं न ब्रूयाद् ब्रह्म मानमकुर्वतामिति ॥४६ एवास्मै वचो वेदयन्ते ब्रह्म वे मृत्यवे प्रजाः प्रायच्छत्तस्मै-ब्रह्मचारिणमेव न प्रायच्छत्सोऽब्रवीदस्तु मह्ममप्येतस्मिन्भाग-

इति यामेव रात्रिं समिधं नाऽऽहराता इति ॥५० तस्माद् ब्रह्मचारी यां रात्रि समिधं नाऽऽहरत्यायुष एव-तामवदाय वसति तसाद्बह्यचारी समिधमा-हरेन्नेदायुषोऽवदाय वसानीति ॥५१ दीर्घसत्रं ह वा एष उपैति यो ब्रह्मचर्यमुपैति स-यामुपयन्समिधमाद्धाति सा प्रायणीयाऽथ यां-स्नास्यन्सोद्यनीयाऽथ या अन्तरेण सच्या एवास्य ताः ॥५२ ब्राह्मणो वे ब्रह्मचर्यमुपयंश्चतुर्धा भूतानि प्रविशत्यप्नि-पदा मृत्युं पदाऽऽचार्यं पदाऽऽत्मन्येव चतुर्थः पादः-परिशिष्यते स यद्ग्री समिधमाद्धाति य एवास्याग्री-पाद्स्तमेव तेन परिक्रीणाति तं संस्कृत्याऽऽत्मन्धत्ते स-एनमाविशत्यथ यदात्मानं द्रित्रीकृत्याह्रीभूत्वा भिक्षते ब्रह्मचयं चरति य एवास्य मृत्यौ पादस्तमेव तेन परिक्रीणाति-तं संस्कृत्याऽऽत्मन्धत्ते स एनमाविशत्यथ यदाचार्यवचः-करोति य एवास्याऽऽचार्ये पाद्स्तमेव तेन परिक्रीणाति तं-संस्कृत्याऽऽत्मन्धत्ते स एनमाविशत्यथ यत्स्वाध्यायमधीते-य एवास्याऽऽत्मनि पादस्तमेव तेन परिक्रीणाति तं-संस्कृत्याऽऽत्मन्धत्ते स एनमाविशति न ह वै स्नात्वा-भिक्षेतापि ह वै स्नात्वा भिक्षां च्रत्यपि ज्ञातीनामरानायापि-पितृणामन्याभ्यः क्रियाभ्यः स यदन्यां भिक्षितव्यां न-विन्देतापि वा स्वयमेवाऽऽचार्यजायां भिक्षेताथो स्वां मातरं-नैनं सप्तम्यभिक्षिताऽतीयात् ॥ १३

भेक्ष्य(क्ष)स्याचरणे दोषः पावकस्यासिक्ष्यने । सप्तरात्रमकृत्वेतद्वकीणिव्रतं चरेत् ॥५४ तमेवं विद्वांसमेवं चरन्तं सर्वे वेदा आविशान्ति यथा ह वा-अग्निः समिद्धो रोचत एवं ह वा एष स्नात्वा रोचते य एवं-विद्वान्त्रद्वाचर्यं चरतीति ब्राह्मणमिति ब्राह्मणम्(मिति) ॥५५

इति प्रथमप्रश्ने द्वितीयोऽध्यायः।

अथ प्रथमप्रमने तृतीयोऽध्यायः। अथ स्नातकधर्मवर्णनम्।

अथ स्नातकस्य ॥१ अन्तर्वास उत्तरीयम् ॥२
वैणवं दण्डं धारयेत् ॥३ सोदकं च कमण्डलुम् ॥४
द्वियद्वोपवीती ॥५
डण्णीषमजिनमुत्तरीयमुपानहो छत्रं चौपासनं दर्शपूर्णमासौ ॥६
पर्वसु च केशस्मश्रुलोमनखवापनम् ॥७ तस्य वृत्तिः ॥८
ब्राह्मणराजन्यवैश्यरथकारेष्वामं लिप्सेत ॥६
भेक्षं वा ॥१० वाग्यतस्तिष्ठेत् ॥११
सर्वाणि चास्य देवपितृसंयुक्तानि पाकयञ्चसंस्थानिभूतिकर्माणि क्वांतेति ॥१२
एतेन विधिना प्रजापतेः परमेष्टिनः परमर्थयः परमाकाष्टां गण्छतीति ह स्माऽऽह बौधायनः ॥१३
इति प्रथमपूरने तृतीयोऽध्यायः ॥

अथ प्रथमपृश्ने चतुर्थोऽध्यायः। अथ कमण्डलुचर्याभिधानवर्णनम्।

अथ कमण्डलुचर्यामुपदिशन्ति ॥१ क्रागस्य दक्षिणे कर्णे पाणौ विप्रस्य दक्षिणे। अप्सु चैव कुशस्तम्बे पावकः परिपठ्यते ॥२ तस्माच्छीचं कृत्वा पाणिना परिमृजीत पर्यग्निकरणं हि तत् ॥३ उद्दीप्यस्य जातवेद इति पुनर्दाहाद्विशिष्यते ॥४ तत्रापि किचित्संसृष्टं मनसि मन्येत कुशैर्वा तृणैर्वा प्रज्वाल्य प्रदक्षिणं परिदहनम् ॥४ अत उर्ध्व खवायसप्रभृत्युपहतानामिनवर्ण इत्युपदिशन्ति॥६ मृत्रपुरीषलोहितरेतःप्रमृत्युपहतानामुत्सर्गः।।७ भग्ने कमण्डली व्याहतिभिः शतं जुहुयाज्जपेद्वा ॥८ भूमिभूसिमगान्माता मात्रमप्यगात्। भूयास्म पुत्रैः पशुभियों नो द्वेष्टि स भिद्यतामिति ॥६ कपालानि संहत्याप्यु प्रक्षिप्य सावित्रीं दशावरां कृत्वा पुनरेवान्यं गृह्णीयात्।।१० वरूणमाश्रित्यतत्ते वरूण पुनरेतु मोमिति अक्षरं ध्यायेत्।।११ शूद्राद्गृह्य शतं कुर्याद्वश्याद्धशतं स्मृतम्। क्षत्तियात्पश्वविशस्तु ब्रांग्रणादशकीर्तिताः ॥१२ अस्तिमत आदित्य उदकं गृह्वीयात्र गृह्वीयादिति मीयांसन्ते ब्रह्मवादिनः ॥१६

गृह्णीयादित्येतद्परम् ॥१४ यावदुदकं गृह्णीयात्तावत्प्राणमायच्छेत्, अग्निह वे ह्युदकं गृह्णाति ॥१५

कमण्डलूबकेनाभिषिक्तपाणिपादो बाबदाई तावद्शुचिः परेषामात्मानमेव पूर्तं करोति नान्यत्कर्म कुर्वितिति विज्ञायते ॥१६ अपि वा प्रतिशीचमा मणिवन्धाच्छुचिरिति बौधायनः ॥१७ अथाप्युदाहरन्ति ॥१८

कमण्डलुर्द्विजातीनां शौचार्थं विहितः पुरा। ब्रह्मणा मुनिमुख्येश्च तस्मात्तं धारयेत्सदा॥१६

ततः शौचं ततः पानं संध्योपावनमेव च । निर्विशङ्को न कर्तव्यं यदीच्छेच्छ्रे य आत्मनः । कुर्याच्छुद्धे न मनसा न चित्तं दूषयेद्बुधः ॥२०

सह कमण्डलुनोत्पन्नः स्वयंभूस्तस्मात्कमण्डलुना चरेत्।।२१ मृत्रपुरीषे कुर्वन्दक्षिणे हस्ते गृह्वाति सन्य आचमनीय-मेतित्सध्यति साधूनाम्।।२२

यथा हि सोमसंयोगाच्चमसो मेध्य उच्यते । अपां तथैव संयोगान्नित्यो मेध्यः कमण्डलुः ॥२३ पितृदेवाग्निकार्येषु तस्मात्तं परिवर्जयेत् ॥२४ तस्माद्विना कमण्डलुना नाध्वानं व्रजेन्न सीमान्तं

तस्माद्वना कमण्डलुना नाष्वान व्रजन्न सामान्य न गृहाद्गृहम् ॥२४

पदमपि न गच्छेदिषुमात्रादित्येके ॥२६

यदिच्छेद्धर्मसंततिमिति बौधायनः ॥२७ ऋग्विघेनेति वाग्वदति (?)॥२८

इति प्रथमप्रश्ने चतुर्थोऽष्यायः ॥४

अथ प्रथमप्रश्ने पञ्चमोऽध्यायः। अथ शुद्धिप्रकरणवर्णनम्।

अथातः शौचाधिष्ठानम् ॥१
अद्भिः शुध्यन्ति गात्राणि बुद्धिर्झानेन शुध्यति ।
अहिंसया च भूतात्मा मनः सत्येन शुध्यति, इति ॥२
मनःशुद्धिरन्तःशौचम् ॥३
विहःशौचं व्याख्यास्यामः ॥६
कौशं सूत्रं वा त्रिखिवृद्यज्ञोपवीतम् ॥६ आ नाभेः ॥६
दक्षिणं बाहुमुद्धृत्य सव्यमवधाय शिरोऽवद्ध्यात् ॥७
विपरीतं पितृभ्यः ॥८ कण्ठेऽत्रसक्तं निवीतम् ॥६
अधोऽवसक्तमधोवीतम् ॥१०
प्राह्ममुख उद्ह्मुखो वाऽऽसीनः शौचमारभेत शुचौ
देशे दक्षिणं बाहुं जान्वन्तरा कृत्वा प्रक्षाल्य पादौ
पाणी चाऽऽमणिर्बन्धात् ॥११
पाद्प्रक्षाल्नोच्छेषणेन नाऽऽचामेत् ॥१२
यद्याचामेद्भूमौ स्नावियत्वाऽऽचामेत् ॥१३

त्राह्मेण तीर्थेनाऽऽचामेत्।। अङ्गुष्टमूढं ब्राह्मं तीर्थम् ।।१६ अङ्गुष्टाग्रं पित्र्यम् ।।१६ अङ्गुल्यग्रं देवम् ।।१७ अङ्गुलिमूलमार्षम् ।।१८ नाङ्गुलीभिनं सबुद्बुदाभिनं सफेनाभिनीष्णाभिनं क्षाराभिनं लवणाभिनं कलुषाभिनं विवर्णाभिनं दुर्गन्थरसाभिनं हसन्न जलपन्न तिष्ठन्न विलोकयन्न प्रह्मो न प्रणतो न मुक्तिशाखो न प्राष्ट्रतकण्ठो न वेष्टितशिरा न त्वरमाणो नायज्ञोपवीती न प्रसा-रितपादो न बद्धकक्ष्यो न बहिर्जानुः शब्दमकुर्व-श्विरपो हृद्यंगमाः पिवेत् ।।१६

त्रिः परिमृजेत् ॥२० हिरित्येके ॥२१

सक्रदुभयं शूद्रस्य खियाश्च ॥२२

अथाप्युदाहरन्ति ॥२३

, गताभिह द्यं विप्रः कण्ठ्याभिः क्षत्त्रियः शुचिः।

वेश्योरद्धिः प्राशिताभिः स्यात्खीशुद्धौ स्वृश्य चान्ततः, इति ॥२४ दन्तवद्दन्तसक्तेषु दन्दवत्तेषु धारणा । स्रस्तेषु तेषु नाऽऽचामेत्तेषां संस्नाववच्छुचिः, इति ॥२४

अथाप्युदाहरन्ति ॥२६

दन्तवद्दन्तलग्नेषु यचाप्यस्तर्भुत्वे अवेत्।

आचान्तस्यावशिष्ठं स्यामिगिरन्नेव तच्छुचिः, इति ॥२७

बान्यद्भिः संखुश्य पादौ नाभि शिरः सच्यं पाणिसनन्तः॥२८

तेजसं चेदादायोच्छिष्टी स्यात्तदुद्स्याऽऽचम्याऽऽदा-

885

स्यन्नद्भिः प्रोक्षेत् ॥२६ अथ चेदन्नेनोन्छिष्टी स्यात्तदुद्स्याऽऽचम्याऽऽदास्य न्नद्भिः प्रोक्षेत् ॥३०

अथ चेदद्भिरुच्छिष्टी स्यात्तदुद्स्याऽऽचम्याऽऽदास्यन्नद्भिः प्रोक्षेत्।।३१ एतदेव विपरीतममत्र ।।३२ वानस्पत्ये विकल्पः ।।३३ तैजसानामुच्छिष्टानां गोशकृन्मृद्धस्मभिः परिमार्जन-मन्यतमेन वा ॥३४ ताम्ररजतसुवर्णानामम्लैः ॥३५ अमन्त्राणां दहनम् ॥३६ वैणवानां गोमयेन ॥३८ दारवाणां तक्षणम्।।३७ फलमयानां गोवालरज्ज्वा ॥३६ कृष्णाजिनानां बिल्वतण्डुलैः ॥४० कुतपानामरिष्टैः ॥४१ और्णानामादित्येन ॥४२ श्रोमाणां गौरसर्षपकल्केन ॥४३ मृदा चेळानाम् ॥४४ चेळवचर्मणाम् ॥४५ तैजसवदुपलमणीनाम् ॥४६ 💎 दाह्वद्स्थ्नाम् ॥४७ क्षीमवच्छङ्खशृङ्गशुक्तिद्नतानाम्, पयसा वा ॥४८ चक्षुर्वाणानुक्लयाद्वा मृत्रपुरीपासृवशुक्रकुणपस्षृष्टानां पूर्वोक्तानामन्यतमेन त्रिःसप्तकृतवः परिमार्जनम् ॥४६ अतेजसानामेवंभूतानामुत्सर्गः ॥५० वचनाद्यज्ञे चमसपात्राणाम् ॥५१ न सोमेनोच्छिष्टा भवन्तीति श्रुतिः ॥५२ कालोऽग्निर्मनसः शुद्धिरुद्काद्यपहेपनम्। अविज्ञातं च भूतानां पड्विधं शौचमुच्यते. इति ॥६३

अथाप्युदाहरन्ति ॥५४ कालं देशं तथाऽऽत्मानं द्रव्यं द्रव्यप्रयोजनम्। उपपत्तिमवस्थां च विज्ञाय शौचं शौचज्ञः कुशलो धर्मेप्युः समाचरेत् ॥५५ नित्यं शुद्धः कारुहस्तः पण्यं यच्च प्रसारितम्। ब्रह्मचारिगतं भैक्षं नित्यं मेध्यमिति श्रुतिः ॥६६ वत्सः प्रसवणे मेध्यः शकुनिः फलशातने । स्त्रियश्च रतिसंसर्गे श्वा मृगब्रहणे शुचिः ॥५७ आकराः शुचयः सर्वे वर्जयित्वा सुराकरम्। अदूष्याः सतता धारा वातोद्धूताश्च रेणवः ॥५८ अमेध्येषु च ये वृक्षा उप्ताः पुष्पफलोपगाः। तेषामपि न दुष्यन्ति पुष्पाणि च फलानि च ॥६६ चैत्यवृक्षं चितिं यूपं चण्डाळं वेदविक्रयम्। एतानि ब्राह्मणः स्रुष्ट्रा सचेलो जलमाविशेत्।।६० आत्मशय्याऽऽसनं वस्तं जायाऽपत्यं कमण्डलुः। शुचीन्यात्मन एतानि परेषामशुचीनि तु ॥६१ आसनं शयनं यानं नावः पथि तृणानि च। श्वचण्डालपतितस्पष्टं माहतेनैव शुध्यति ॥६२ खलक्षेत्रेषु यद्धान्यं कूपवापीषु यज्जलम्। अभोज्यादिप तद्भोज्यं यच्च गोष्टगतं पयः ॥६३ त्रीणि देवाः पवित्राणि त्राह्मणामकल्पयन्। अदृष्ट्यद्विनिणिक्तं यद्य वाचा प्रशस्यते ॥६४

आपः पवित्रा भूमिगता गोतृप्तिर्यासु जायते। अञ्याप्तार्चेद्मेध्येन गन्धवर्णरसान्विताः ॥६४ भूमेस्तु संमार्जनप्रोक्षणोपलेपनावस्तरणोल्लेखनैर्यथा-स्थानं दोषविशेषात्प्रायत्यम् ॥६६ अथात्युदाहरन्ति ॥६७ गोचर्ममात्रमव्विन्दुर्भूमेः शुध्यति पतितः। समूढमसमूढं वा यत्रामेध्यं न छक्ष्यत, इति ॥६८ परोक्षमधिश्रितस्यान्नस्यावद्योत्याभ्युक्षणम् ॥६६ तथाऽऽपणे(णी)यानां च भक्ष्याणाम्।।७० वीभत्सवः शुचिकामा हि देवा नाश्रद्धानाय हविर्जुषन्त इति ॥७१ शुचेरश्रद्धानस्य श्रद्धानस्य चाशुचेः। मीमांसित्वोभयं देवाः सममन्नमकल्पयन् ॥७२ प्रजापतिस्तु तानाह न समं विषमं हि तत्। हतमश्रद्धानस्य श्रद्धापृतं विशिष्यत, इति ॥७३ अथाप्युदाहरन्ति ॥७४ अश्रद्धा परमः पाप्मा श्रद्धा हि परमं तपः। तस्मादश्रद्धया दत्तं हविर्नाश्नितत देवताः ॥७४ दृष्टुाद्त्वाऽपि वा मूर्वः स्वर्गं न हि स गच्छति। शङ्काविहतचारित्रो यः स्वाभिप्रायमाश्रितः ॥७६ शास्त्रातिगः समृतो मूर्खो धर्मतन्त्रोपरोधनादिति ॥७७ रााकपुष्पफलमूलौपधीनां तु प्रक्षालनम् ॥७८

शुष्कं तृणमयाज्ञिकं काष्ठं छोष्टं वा तिराकृत्याहोरात्रयोरदग्दक्षिणामुखः प्रावृत्य शिर उचरेद्वमेहेद्वा ॥७६
मूत्रे मृदाऽद्विः प्रक्षाछनम् ॥८० त्रिः पाणेः ॥८१
तद्वत्युरीषे ॥८२ पर्यायात्रिक्षः पायोः पाणेश्च ॥८३
मूत्रवद्रेतसः उत्सर्गे ॥८६
नीवीं विस्तस्य परिधायाप उपस्पृशेत् ॥८६
आर्द्रतृणं गोमयं भूमं वा समुपस्पृशेत् ॥८६
नाभेरधःस्पर्शनं कर्मयुक्तो वर्जयेत् ॥८७
उध्वं वे पुरुषस्य नाभ्यमध्यमवाचीनममेध्यमिति श्रुतिः ॥८८
शूद्राणामार्याधिष्ठितानामध्मासि मासि वावपनमार्थवदाचमनकलपः ॥८६
वैश्यः कुसीद्मुपजीवेत् ॥६०
पञ्चविंशतिस्त्वेव पञ्चमापकी स्थात् ॥६१
अथाप्युदाहरन्ति ॥६२

यः समर्घमृणं गृह्य महार्घं संप्रयोजयेत्।
स व वार्षुपिको नाम सर्वधर्मेषु गहितः।।६३
वृद्धिं च भ्रूणहत्यां च तुलया समतोलयत्।
अतिष्ठद् भ्रूणहा कोट्यां वार्षुषिः समकम्पतः, इति।।६४
गोरक्षकान्वाणिजकांस्तथा कारकुशीलवान्।
प्रेष्यान्वार्षुषिकांश्चेव विप्राब्ल्ट्रह्रवदाचरेत्।।६५
कामं तु परिलुन्कृत्याय कदर्याय नास्तिकाय पापीयसेपूर्वी दश्वाताम्।।६६

अयज्ञेनाविवाहेन वेद्स्योत्साद्नेन च। कुलान्यकुलतां यान्ति ब्राह्मणातिक्रमेण च ॥६७ ब्राह्मणातिक्रमो नास्ति मूर्खे मन्त्रविवर्जिते। ज्वलन्तमग्रिमुत्सृज्य न हि भस्मनि हूयते।।६८ गोभिरखँख यानैख कृष्या राजोपसेवया। कुलान्यकुलतां यान्ति यानि हीनानि मन्त्रतः ॥६६ मन्त्रतस्तु समृद्धानि कुलान्यस्पधनान्यपि । कुलसंख्यां च गच्छन्ति कर्पन्ति च महाद्यशः ॥१०० वेदः कृषिविनाशाय कृषिर्वेदविनाशिनी। शक्तिमानुभयं कुर्यादशक्तस्तु कृषिं त्यजेत्।।१०१ न वे देवान्पीवरोऽसंयतात्मा रोरूयमाणः ककुदी समश्नुते। चलत्तुन्दी रसभः कामवादी कृशास इत्यणवस्तत्र यान्ति ॥१०२ यद्यौवने चरति विभ्रमेण सद्घाऽसद्घा याद्यशं वा यदा वा। उत्तरे चेद्वयिस साधुवृत्तस्तदेवास्य भवति नेतराणि ॥१०३ सोचेत मनसा नित्यं दुष्कृतान्यनुचिन्तयन्। तपस्त्री चाप्रमादी च ततः पापात्प्रमुच्यते ॥१०४

स्पृशन्ति विन्दवः पादौ य आचामयतः परान्। न तैरुच्छिष्टभावः स्यात्तुल्यास्ते भूमिगैः सहेति ॥१०४

सिषण्टेष्वादशाहम् ॥१०६ सिषण्डेष्वादशाहमाशौचिमिति जननमरणयोरिधकृत्य-वदत्यृत्विग्दीक्षितब्रह्मचारिवर्जम् ॥१०७ सिषण्डता त्वा सप्तमात्सिषण्डेषु ॥१०८

आ सप्तमासादा दन्तजननाद्वोदकोपस्पर्शनम्। पिण्डोदकित्रया प्रेते नात्रिवर्षे विधीयते ॥१०६ आ दन्तजननाद्वाऽपि दहनं च न कारयेत्। अप्रतासु च कन्यासु प्रतास्वेके ह कुर्वते ॥११० छोकसंब्रहणार्थं हि तदमन्त्राः खियो मताः। स्त्रीणां कृतविवाहानां त्र्यहाच्छुध्यन्ति बान्धवाः ।।१११ यथोक्तेनैव कल्पेन शुध्यन्ति च सनाभयः, इति ॥११२ अपि च प्रिवामहः पितामहः पिता स्वयं सोद्यां भ्रातरः-सवर्णायाः पुत्रः पौत्रः प्रपौत्रस्ततपुत्रवर्जं तेषां च-, पुत्रपौत्रमविभक्तदायं सपिण्डानाचक्षते ॥११३ विभक्तदायानपि सकुल्यानाचक्षते ॥११४ असत्स्वन्येषु तद्गामी ह्यथीं भवति ॥११४ सपिण्डाभावे सकुल्यः ॥११६ तद्भावे पिताऽऽचार्योऽन्तेवास्यृत्विग्वा हरेत्।।११७ तद्भावे राजा तत्स्वं त्रैविद्यवृद्धेभ्यः संप्रयच्छेत्।।११८ न त्वेव कदाचित्स्वयं राजा ब्राह्मणस्यमाद्दीत ।।११६ अथाप्युदाहरन्ति ॥१२०

ब्रह्मस्वं पुत्रपौत्रक्तं विषमेकाकितं हरेत्।
न विषं विषमित्याहुई ह्यस्वं विषमुच्यते।।१२१
तस्माद्राजा ब्राह्मणस्वं नाऽऽददीत परमं ह्येतद्विषं
यदुब्राह्मणस्वमिति।।१२२
जननमरणयोः संनिपाते समानो दशरात्रः।।१२३

अथ यदि दशरात्रात्संनिपतेयुराद्यं दशरात्रमाशौचमा-नवमाद्दिवसात् ॥१२४ जनने तावस्मातापित्रोदशाहमाशौचम्।।१२५ मातुरित्येके तत्परिहरणात् ।।१२६ पितुरित्यपरे शुक्रप्राधान्यात् ।।१२७ अयोनिजा ह्यपि पुत्राः श्रूयन्ते मातापित्रोरेव तु-संसर्गसामान्यात् ॥१२८ मरणे तु यथा बालं पुरस्कृत्य यज्ञोपवीतान्यपसन्यानि-कृत्वा तीर्थमवतीर्थ सकृत्सकृत्त्रिर्निमज्ज्योन्मज्ज्योत्तीर्था-ऽऽचम्य तत्प्रत्ययमुद्कमासिच्यात एवोत्तीर्थऽऽचम्य गृह-द्वार्यङ्गारमुद्किसिति संस्पृश्याक्षारलवणाशिनो दशाहं-कटमासीरन्।।१२६ एकाद्श्यां द्वाद्श्यां वा श्राद्धकर्म ॥१३० शेषक्रियायां लोकोऽनुरोद्धव्यः ॥१३१ अत्राप्यसपिण्डेषु यथासन्नं त्रिरात्रमहोरात्रमेकाहमिति कुर्वीत।।३३ आचार्योपाध्यायतत्पुत्रेषु त्रिरात्रम् ॥१३३ ऋत्विजां च ॥१३४ शिष्यसतीर्थ्यसब्रह्मचारिषु त्रिरात्रमहोरात्रमेकाहमिति कुर्वीत।। गर्भस्रावे गर्भमाससंमिता रात्रयः स्त्रीणाम् ॥१३६ परशवोपस्पर्शनेऽनिभसंधिपूर्वं सचेलोऽपः स्पृष्ट्रा सद्यः शुद्धो-भवति ॥१३७ अभिसंधिपूर्वं त्रिरात्रम् ॥१३८ भृतुमत्यां च यस्ततो जायते सोऽभिशस्त इति व्याख्या-

तान्यस्ये व्रतानि ॥१३६

वेद्विक्रयिणं यूपं पतितं चितिमेव च ।
स्पृष्ट्वा समाचरेत्स्नानं श्वानं चाण्डालमेव च ॥१४०

त्राह्मणस्य त्रगद्वारे पूयशोणितसंभवे।

कृमिक्त्पचते तत्र प्रायश्चित्तं कथं भवेत्।।१४१

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दिध सर्पिः कुशोदकम्।

ज्यहं स्नात्वा च पीत्वा च कुमिद्षः शुचिभवेत्।।१४२

शुनोपहतः सचेलोऽवगाहेत ॥१४३

प्रक्षाल्य वा तं देशमित्रना संस्पृश्य पुनः प्रक्षाल्य पादौ-

चाऽऽचम्य प्रयतो भवति ॥१४४

अथाप्युदाहरन्ति ॥१४५

शुना दष्टस्तु यो विद्रो नदीं गत्वा समुद्रगाम्। प्राणायामशतं कृत्वा घृतं प्राश्य विशुध्यति ॥१४६ सुवर्णरजताभ्यां वा गवां शृङ्गोदकेन वा। नवैश्व कलशैः स्नात्वा सद्य एव शुचिर्भवेत्, इति॥१४७

अभक्ष्याः पशवी मान्याः ॥१४८

क्रव्यादाः शकुनयश्च ॥१४६ तथा कुक्रुटसूकरम् ॥१५०

अन्यत्राजाविभ्यः ॥१५१

भक्ष्याः श्वाविड्गोधाशशास्यकवः च्छपखड्गाः खड्गवर्जाः

पश्च पश्चनखाः ॥१५२

तथर्यहरिणपृषतमहिषवराहकुलङ्गाः कुलवङ्गवर्जाः पञ्ज-

द्विखुरिणः ॥१४३

पक्षिणस्तित्तिरिकपोतकपिञ्जलवाधींणसमयूरवारणा-

वारणवर्जाः पञ्च विष्किराः ॥१५४

मत्स्याः सहस्रदंष्ट्रश्चिलिचिमो वर्मिन्नहच्छिरोमशकरिरोहि-

तराजीवाः ॥१५५

अनिर्दशाहसंधीनीक्षीरमपेयम् ॥१५६

विवत्सान्यवत्सयोश्च ॥१५७

आविकमौष्ट्रिकमैकशकमपेयम् ॥१५८

अपेयपयःपाने कुच्छ्रोऽन्यत्र गज्यात् ॥१५६

गन्ये तु त्रिरात्रमुपवासः ॥१६०

पर्युषितं शाकयूषमांससर्पि श्रतधानागुडद्धिमधुसक्तुवर्जम् ॥

शुक्तानि तथा जातोगुडः ॥१६२

श्रावण्यां पौर्णमास्यामाषाढ्यां वोपाकृत्य तेष्यां माध्यां-

वोत्सृजेयुरुत्सृजेयुः ॥१६३

इति प्रथमप्रश्ने पञ्चमोऽध्यायः।

अथ प्रथमप्रश्ने षष्टोऽध्यायः। अथ यज्ञाङ्गविधिनिरूपणम्।

शुचिमध्वरं देवा जुषन्ते ॥१

शुचिकामा हि देवाः शुचयश्च ॥२ तदेषाऽभिवदति ॥३ शुची वो हत्या मरुतः शुचीनां शुचि हिनोम्यध्वरं शुचिभ्यः। भृतेन सत्यमृतसाप आयब्छुचिजनमानः शुचयः पावकाः, इति ॥४

अहतं वाससां शुचिस्त(चि त)स्माद्यत्किचेज्यासंयुक्तं स्यात्सर्व तर्हतैर्वासोभिः कुर्यात् ॥६ प्रक्षािळतोपवातान्यिङ्गिशानि वासांसि पत्नीयजमाना-वृत्विजश्चपरिद्धीरन् ॥६ एवं प्रक्रमादृध्वेम् ॥७ दीर्घसोमेषु सत्रेषु चैवम्।।८ यथासमाम्नातं च।।६ यथैतद्भिचरणीयेव्विष्टिपशुसोमेषु लोहितोब्णीषा लोहित-वाससश्चर्तवजः प्रचरेयुश्चित्रवाससश्चित्रासङ्गा-वृषाकपाविति च ॥१० अग्न्याधाने क्षौमाणि वासांसि तेषामलाभे कार्पासिका-न्यौर्णानि वा भवन्ति ॥११ मृत्रपुरीषलोहितरेतःप्रभृत्युपहतानां मृदाऽद्गिरिति प्रक्षालनम्।। वासोवत्तार्प्यवृकलानाम् ॥१३ वरुकलवत्कुष्णाजिनानाम् ॥१४ न परिहितमधिरूढमप्रक्षािलतं प्रावरणम्।।१५ नापल्पूलितं मनुष्यसंयुक्तं देवत्रा युब्ज्यात् ॥१६ घनाया भूमेरुपघात उपलेपनम् ॥१७ सुविरायाः कर्षणम् ।।१८ हिन्नाया मेध्यमाहृत्य प्रच्छाद्नम् ।।१६ चतुर्भिः शुध्यते भूमिर्गोभिराक्रमणात्खननाहृहनाद्भिवर्षणात्।।२० <mark>पश्चमाचोप</mark>लेपनात्षष्ठात्कालात् ॥२१ असंस्कृतायां भूमौ नयस्तानां तृणानां प्रक्षालनम् ॥२२ परोक्षोपहतानामभ्युक्षणम् ॥२३ एवं क्षुद्रसमिधाम् ॥२४ महतां काष्टानामुपघाते प्रक्षाल्यावशोषणम् ॥२५

वहूनां तु प्रोक्षणम् ॥२६

दारुमयाणां पात्राणामुच्छिष्टसमन्वारब्धानामवलेखनम् ॥२७

उच्छिष्ठछेपोपहतानामवतक्षणम्।।२८

मृत्रपुरीषलोहितरेतः प्रभृत्युपहतानामुत्सर्गः ॥२६

तदेतदन्यत्र निर्देशात् ॥३०

यथैतद्गिनहोत्रे ध(घ)मोंचिद्रष्टे च द्धिध(घ)में च कुण्ड-

पायिनामयने चोर्त्सारीणामयने च दाक्षायणयज्ञे चेंडाद्घे च

चतुश्रके च ब्रह्मौदनेषु च तेषु सर्वेषु दभैरिद्धिः प्रक्षालनम् ॥३१

सर्देष्वेव सोमभक्षेष्वद्भिरेव मार्जालीये प्रक्षालनम् ॥३२

मूत्रपुरीषलोहितरेतः प्रभृत्युपहतानामुत्सर्गो मृण्मयानां-

पात्राणाम् ॥३३

मृण्मयानां पात्राणामुच्छिष्टसमन्वारब्धानामवकूलनम् ॥३४

उच्छिष्टलेपोपहतानां पुनर्दहनम् ॥३४

मूत्रपुरीषलोहितरेतः प्रभृत्युपहतानामुत्सर्गः ॥३६

तैजसानां पात्राणां पूर्ववत्परिमृष्टानां प्रक्षालनम् ॥३७

परिमार्जनद्रव्याणि गोशक्रनमृद्धस्मेति ॥३८

मूत्रपुरीषलोहितरेतः प्रभृत्युपहतानां पुनः करणम्।।३६

गोमूत्रे वा सप्तरात्रं परिशायनम् ॥४०

महानद्यां वैवम् ॥४१

अश्ममयानामलाबुबिल्वविनाडानां गोवालैः परिमार्जनम् ॥

नडवेणुशरकुशब्यूतानां गोमयेनाद्भिरिति प्रक्षालनम् ॥४३

त्रीहीणामुपघाते प्रक्षाल्यावशोषणम् ॥४४

बहूनां तु प्रोक्षणम् ॥४५ तण्डुलानामुत्सर्गः ॥४६
एवं सिद्धहविषाम् ॥४७
महतां श्ववायसप्रभृत्युपहतानां तं देशं पुरुषान्नसुद्घृत्य
पवमानः सुवजन इति एतेनानुवाकेनाभ्युक्षणम् ॥४८
मधूदके पयोविकारे पात्रात्पात्रान्तरानयने शौचम् ॥४६
एवं तैलसर्पिषी उच्छिष्टसमन्वारच्ये उदकेऽवधायोपयोजयेत् ॥
अमेध्याभ्याधाने समारोप्याग्नि मधित्वा पवमानेष्टिः ॥५१
शौचदेशमन्त्राष्ट्दर्थद्रव्यसंस्कारकालभेदेषु पूर्वपूर्वप्राधान्यं
पूर्वपूर्वप्राधान्यम् ॥५२

इति प्रथमप्रश्ने षष्टोऽध्यायः।

अथ प्रथमप्रश्ने सप्तमोऽध्यायः। अथ पुनः यह्नाङ्गविधिवर्णनम्।

उत्तरत उपचारो विहारः ॥१ तथाऽपवर्गः ॥२ विपरीतं पित्र्येषु ॥३ पादोपहतं प्रक्षाल्येत् ॥४ अङ्गमुपरपृश्य सिचं वाऽप उपरपृशेत् ॥५ एवं छेदनभेदनखननिरसनपित्र्यराक्षसनैऋ तरौद्राभिचरणीयेषु ॥६ न मन्त्रवतायज्ञाङ्गेनाऽऽत्मानमभिपरिहरेत् ॥७ अभ्यन्तराणि यज्ञाङ्गानि बाह्या सृत्विजः ॥८ पत्नीयजमानावृत्विग्भ्योऽन्तरतमौ ॥६ यज्ञाङ्गेभ्य आज्यमाज्याद्वींषि हविभ्यः पशुः पशोः सोमः सोमादग्नयः ॥१० यथाकर्मित्वजो न विहारादिभपर्यावर्तेरन् ॥११ पाङ्मुखःचेदक्षिणमंसमभिपयांवर्तेत ॥१२ प्राक्मुखः सन्यम् ॥१३ अन्तरेण चात्वालोत्करौ यज्ञस्य तीर्थम् ॥१४ आ चात्वालादाहवनीयोत्करौ ॥१४ ततः कर्तारो यजमानः पत्नी च पृपद्यरन्, विसंस्थितेः ॥१६ संक्षिते च संचरोऽनुतकरदेशात् ॥१७ नाप्रेाक्षितमपूपन्नं क्विनं काष्ठं समिधं वाऽभ्याद्ध्यात् ॥१८ अम्रेणाऽऽह्वनीयं ब्रह्मयजमानौ पुपद्यते॥१६ जघनेनाऽऽहवनीयमित्येके ॥२० दक्षिणेनाऽऽह्वनीयं ब्रह्मायतनं तमपरेण यजमानस्य ॥२१ उत्तरां श्रोणिमुत्तरेण होतुः ॥२२ उत्कर आग्नीध्रस्य ॥२३ जघनेन गाईपत्यं पत्न्याः ॥२४ तेषु काले काल एव दर्भान्संस्तृणाति ॥२४ एकैकस्य चोदकमण्डलुरुपात्तः स्यादाचमनाथः ॥२६ व्रतोपेतो दीक्षितः स्यात् ॥२७ न परपापं वदेत्र ऋद्धेत्र रोदेन्मूत्रपुरीषे नावेक्षेत ॥२८ अमेध्यं दृष्ट्रा जपति ॥२६ अबद्धं मनो दिरद्धं चक्षुः सूर्यो ज्योतिषां श्रेष्ठो दीक्षे मा मा हासीरिति ॥३० इति पृथमपृश्ने सप्तमोऽध्यायः।

अथ प्रथमप्रनेऽष्टमोऽध्यायः।

अथ ब्राह्मणादिवर्णनिरूपणम्।

चत्त्रारो वर्णा ब्राह्मणक्षत्त्रियविद्शूद्राः॥१
तेषां वर्णानुपूर्वेण चतस्रो भार्या ब्राह्मणस्य॥
तिस्रो राजन्यस्य॥३ हे वैश्यस्य॥४ एका शूद्रस्य॥४
तासु पुत्राः सवर्णानन्तरासु सवर्णाः॥६
एकान्तरद्वयन्तरास्यम्बष्टोप्रनिषादाः॥७
पूतिलोमास्वायोगवमागधवेणक्षत्त्रपुल्कसकुमकुटवैदेहकचाण्डालाः॥८ अम्बष्टात्रथमायां स्वपाकः॥६
उम्राद् द्वितीयायां वैणः॥१०
निषादात्तृतीयायां पुल्कसः॥११ विपर्यये कुमकुटः॥१२
निषादेन निषाद्यामा पश्चमाज्ञातोऽपहन्ति शूद्रताम्॥१३
तमुपनयेत्षष्ठं याजयेत्॥१४
सप्तमो विकृतबीजः समबीजः सम इत्येषां संज्ञाः कमेण
निपत्तन्ति॥१४

इति प्रथमप्रश्नेऽष्टमोऽध्यायः।

तान्सावित्रीपरिश्रंष्टान्त्रात्यानाहुमनीषिण' त्रात्यानाहु-

र्मनीषिण इति ॥१६

अथ प्रथमप्रश्ने नवमोऽध्यायः।

अथ संकरजातिनिरूपणम्।

रथकाराम्बष्ठसूतोष्रमागधायोगववणक्षत्तृपुल्कस-

कुक्कुटवैदेहकचण्डालश्वपाकश्रभृतयः ॥१

तत्र सवर्णासु सवर्णाः ॥२

त्राह्मणात्क्षत्त्रियायां त्राह्मणो वैश्यायामम्बष्टः

शुद्रायां निषादः ॥३ पारशव इत्येके ॥४

क्षत्त्रियाद्वरयायां क्षत्त्रियः शूद्रायामुनः ॥६

वैश्याच्छुद्रायां रथकारः १६

शूद्राद्वरयायां मागधः क्षत्रियायां क्षत्ता ब्राह्मण्यां चण्डालः ॥७

वैश्यात्क्षत्रियायामायोगवो ब्राह्मण्यां वैदेहकः ॥८

क्षत्त्रियाद्त्राह्मण्यां सृतः ॥६

तत्राम्बष्टोत्रसंयोगे भवत्यनुलोमः ॥१०

क्षज्वैदेहकयोः प्रतिलोमः ॥११

उद्राज्जातः क्षत्त्र्यां श्वपाकः ॥१२

बैदेहकाद्म्बष्टायां वैणः ॥१३ निषादाच्छूद्रायां पुल्कसः ॥१४

शूद्रानिषाद्यां कुक्कुटः ॥१५

वर्णसंकरादुत्पन्नात्यानाहुर्भनीिषणो त्रात्यानाहुर्भ-

नीषिण इति ॥१६

इति प्रथमप्रश्ने नवमोऽध्यायः ।

अथ प्रथमप्रश्ने दृशोऽध्यायः। अथ राजधर्मवर्णनम्।

षड्भागभृतो राजा रक्षेत्रजाम् ॥१ ब्रह्म वै स्वं महिमानं ब्राह्मणेब्वद्धाद्ध्ययनाध्यापनयजन-याजनदानप्रतिष्रहसंयुक्तं वेदानां गुप्त्यै ॥२ क्षत्त्रे बलमध्ययनयजनदानशस्त्रकोशभूतरक्षणसंयुक्तं क्षत्त्रस्य वृद्धेच ॥३ विट्स्वध्ययनयजनदानकृषिवाणिज्यपशुपालनसंयुक्तं कर्मणां वृद्धेच ॥४ शूद्रेषु पूर्वेषां परिचर्या ॥५ पत्तो ह्यसृज्यन्तेति ॥६ सर्वतोधुरं पुरोहितं वृणुयात् ॥७ तस्य शासने वर्तेत ॥८ संग्रामे न निवर्तेत ॥६ न कर्णिभिनं दिग्धैः प्रहरेत्।।१० भीतमत्तोनमत्तप्रमत्तविसंनाहस्त्रीवालवृद्धब्राह्मणैर्न युध्येत ॥११ अन्यत्राऽऽततायिनः ॥१२ अथाप्युदाहरन्ति ॥१३ अध्यापकं कुले जातं यो हन्यादाततायिनम्। न तेन भ्रूणहा भवति मन्युस्तं मन्युमृच्छति, इति ॥१४ सामुद्रशुल्को वरं रूपमुर्धृत्य दशपणं शतम् ॥१५ अन्येषामपि सारानुरूष्येणानुपहत्य धर्म्य प्रकल्पयेत् ॥१६ अब्राह्मणस्य प्रनष्टस्वामिकं रिक्थं संवत्सरं परिपाल्य राजा हरेत्।।१७

अवध्यो वे ब्राह्मणः सर्वापराघेषु ॥१८ ब्राह्मणस्य ब्रह्महत्यागुरुतलपगमनसुवर्णस्तेयसुरापानेषु कुसिन्धभगसृगालसुराध्वजास्तप्तेनायसा ललाटेऽङ्क-यित्वा विषयात्रिर्धमनम् ॥१६

क्षत्त्रियादीनां ब्राह्मणवधे वधः सर्वस्वहरणं च ॥२०

तेषामेव तुल्यापकृष्टवधे यथाबलमनुरूपान्दण्डान्प्रकल्पयेत्।।२१

क्षत्त्रियवधे गोसहस्रम् ॥२२ क्षत्त्रियवधे गोसहस्रम्बभैकाधिकं राज्ञ उत्तरुजेद्धे-रनिर्यातनार्थम् ॥२३ शतं वैश्ये दश शूद्र भृषभश्चात्राधिकः ॥२४ शूद्रवधेन स्त्रीवधो गोवधश्च व्याख्यातोऽन्यत्राऽऽत्रेय्या

धेन्वनडुहोश्च वधे धेन्वनडुहोरन्ते चान्द्रायणं चरेत्।।२६ आत्रेय्या वधः क्षत्त्रयवधेन व्याख्यातः।।२७ हंसभासवर्हिणचक्रवाकप्रचलाककाकोल्क्रमण्डूक-दिन्निकडेरिकाश्ववश्च नकुलादीनां वधे शूद्रवत्।।२८ लोकसंप्रहणायं यथा दृष्टं श्रुतं वा साक्षी साक्ष्यं ब्रूयात्।।२६ पादो धर्मस्य कर्तारं पादो गच्छति साक्षिणम्। पादः सभासदः सर्वान्पादो राजानम्च्छति।।३० राजा भवत्यनेनाश्च मुज्यन्ते च सभासदः। एनो गच्छति कर्तारं यत्र निन्द्यो ह निन्द्यते।।३१

वधात्।।२६

साक्षिणं त्वेवमुद्दिष्टं यहात्पृच्छेद्विचक्षणः। यां रात्रिमजनिष्ठास्त्वं यां च रात्रिं मरिष्यसि ॥३२ एतयोरन्तरा यत्ते सुकृतं सुकृतं भवेत्। तत्सर्वं राजगामि स्याद्नृतं ब्रुवतस्तव ॥३३ त्रीनेव च पितृन्हन्ति त्रीनेव च पितामहान्। सप्त जातानजातांश्च साक्षी साक्ष्यं मृषा वदन्।।३४ हिर्ण्यार्थेऽनृते हन्ति त्रीनेव च पितामहान्। पञ्च पश्वनृते हन्ति दश हन्ति गवानृते ॥३४ शतमश्वानृते हन्ति सहस्रं पुरुषानृते। सर्वं भूम्यनृते हनित साक्षी साक्ष्यं मृषा वदन् ॥३६ चत्वारो वर्णाः पुत्रिणः साक्षिणः स्युरन्यत्र श्रोत्रिय-राजन्यप्रव्रजितमानुष्यहीनेभ्यः ३७ स्मृतौ प्रधानतः प्रतिपत्तिः ॥३८ अतोऽन्यथा कर्तपत्यम् (?) ३६ द्वादशरात्रं तप्तं पयः पिबेत्कूष्माण्डेर्वा जुहुयादिति कूष्माण्डेर्वा जुहुयादिति ॥४०

इति प्रथमप्रश्ने दशमोऽध्यायः।

अयाष्ट्रविवाहप्रकरणवर्णनम्।

अष्टी विवाहाः ॥१ श्रुतशीले विज्ञाय ब्रह्मचारिणेऽर्थिने दीयते स ब्राह्मः ॥२ आच्छाद्यालंकुत्येषा(तथा) सह धर्मश्चरंतामिति प्राजापत्यः ॥३ पूर्वां लाजाहुतिं हुत्वा गोमिथुनं कन्यावते दद्यात्स आर्षः ॥४ दक्षिणासु नीयमानास्वन्तर्वेद्युत्विजे स दैवः ॥५ धनेनोपतोच्याऽऽसुरः ॥६ सकामेन सकामाया मिथः संयोगो गान्धवः॥७ प्रसह्य हरणाद्राक्षसः ॥८ सुप्तां मत्तां प्रमत्तां वोपयच्छेदिति पैशाचः ॥६ तेषां चत्वारः पूव ब्राह्मणस्य ॥१० तेष्वपि पूर्वः पूर्वः श्रेयान् ॥११ उत्तरेषामुत्तरोत्तरः पापीयान् ॥१२ अत्रापि षष्ठसप्तमौ क्षत्त्रधर्मानुगतौ तत्प्रत्ययत्वारक्षस्त्रस्य ॥१३ पञ्चमाष्टमी वैश्यशूद्राणाम् ॥१४ अयन्त्रितकलत्रा हि वैश्यशूद्रा भवन्ति ॥१५ कर्षणशुश्रुवाधिकृतत्वात् ॥१६ गान्धर्वमप्येके प्रशंसन्ति सर्वेषां स्नेहानुगतत्वात् ॥१७ यथायुक्तो विवाहः। यथा युक्तो विवाहस्तथा युक्ता प्रजा भवतीति विज्ञायते ॥१८

अथाप्युदाहरन्ति ॥१६

क्रीता द्रव्येण या नारी सा न पत्नी विधीयते। सा न दैवे न सा पित्र्ये दासीं तां काश्यपोऽव्रवीत्।।२० शुल्केन ये प्रयच्छन्ति स्वसुतां छोभमोहिताः। आत्मविक्रयिणः पापा महाकिल्विषकारकाः।।२१ पत्तन्ति नरके घोरे घनन्ति चाऽऽसप्तमं कुछम्। गमनागमनं चैव सर्वं शुल्को विधीयते (१)।।२२

पौर्णमास्यष्टकामावास्याग्न्युत्पातभूमिकम्पश्मशानदेशपति-श्रोत्रियेकतीर्थ्यप्रयाणेष्वहोरात्रमनध्यायः ॥२३ वाते पृतिगन्धे नीहारे च नृत्तगीतवादित्ररुदितसामशब्देषु तावन्तं कालम् ॥२४

स्तनियत्तुवर्षिविद्युत्सैनिपाते ज्यहमनध्यायोऽन्यत्र वर्षाकालात्।। वर्षाकालेऽपि वर्षवर्जमहोरात्रयोश्च तत्कालम् ॥२६ पिज्यप्रतिष्रहभोजनयोश्च तिद्दवसशेषम् ॥२७ भोजनेष्वाजीर्णान्तम् ॥२८

पाणिमुखो हि ब्राह्मणः ॥२६ अथाप्युदाहरन्ति ॥३० भुक्तं प्रतिगृहीतं च निर्विशेषमिति श्रुतिः ॥३१ पितयुपरते त्रिरात्रम् ॥३२

द्वयमु ह वै सुश्रवसोऽन्चानस्य रेतो ब्राह्मणस्योध्वं नाभे-रधस्तादन्यत्स यदूर्धं नाभेस्तेन हैतत्प्रजायते यद्ब्राह्मणानु-पनयति यद्ध्यापयति यद्याजयति यत्साधु करोति- सर्वाऽस्येषा प्रजा भवत्यथ यदवाचीनं नाभेस्तेन हास्यौरसी
प्रजा भवति तस्माच्छ्रोत्रियमनूचानमप्रजोऽसीति न वदन्ति ॥
तस्माद् द्विनामा द्विमुखो विप्रो द्विरेता द्विजनमा चेति ॥३४
श्रूद्वापपात्रश्रवणसंदर्शनयोश्च तावन्तं काल्यम् ॥३६
नक्तं शिवाविरावे नाधीयीत स्वप्नान्तम् ॥३६
अहौरात्रयोश्च संध्योः पर्वसु च नाधीयीत ॥३७
न मांसमरनीयाश्च स्त्रियमुपेयात् ॥३८
पर्वसु हि रक्षःपिशाचा व्यभिचारवन्तो भवन्तीति विज्ञायते ॥
अन्येषु चाद्भुतोत्पातेष्वहोरात्रमनध्यायोऽन्यत्र मानसात् ॥४०
मानसेऽपि जननमरणयोरनध्यायः ॥४१
अथाप्युदाहरन्ति ॥४२
हन्त्यष्टमी द्युपाध्यायं हन्ति शिष्यं चतुर्दशी ॥
हन्ति पश्चदशी विद्यां तस्मात्पर्वणि वर्जयेत्तस्मात्पर्वणि-

इति प्रथमप्रश्न एकादशोऽध्यायः।

वर्जयेदिति।।४३

अथ द्वादशोऽध्यायः। अथ पूर्वोक्तानेकविधप्रकरणवर्णनम्।

यथा युक्तो विवाहः ॥१ अष्टौ विवाहाः ॥२ क्षत्त्रियवधे गोसहस्रम् ॥३ षड्भागभृतो राजा रक्षेत् ॥४ रथकाराम्बद्धः ॥६ चत्वारो वर्णाः ॥६

उत्तरत उपचारो विहारः ॥७ मृष्मयानां पात्राणाम् ॥८

शुचिमध्वरं देवा जुषन्ते ॥६ अभक्ष्याः पश्चो म्राम्याः ॥१०

सपिण्डेज्वादशाहम् ॥११ गोचर्ममात्रम् ॥१२

नित्यं शुद्धः काहहस्तः ॥१३ अथातः शौचाधिष्ठानम् ॥१४

कमण्डलुर्द्धिजातीनाम् ॥१५ अथ कमण्डलुचर्यामुपदिशन्ति ॥

अथ स्नातकस्य ॥१७ धर्मार्थौ यत्र न स्याताम् ॥१८

अष्टाचत्वारिशद्वर्षाणि ॥१६ पञ्चधा विप्रतिपत्तिः ॥२०

उपदिष्टो धर्मः प्रतिवेदम् ॥२१

इति प्रथमप्रश्ने द्वादशोऽध्यायः। समाप्तोऽयं प्रथमः प्रश्नः।

....

अथ द्वितीयः प्रश्नः । तत्र प्रथमोऽध्यायः । अथ प्रायश्चित्तप्रकरणवर्णनम् ।

अथातः प्रायश्चित्तानि ॥१ भ्रूणहा द्वादश समाः ॥२ कपाली खट्वाङ्गी गर्दभचमवासा अरण्यनिकेतनः श्मशाने ध्वजं शवशिरः कृत्वा कुटी कारयेत्तामावसेत्सप्तागाराणि भेक्षं चरन्स्वकर्माऽऽचक्षाणस्तेन प्राणान्धारयेदलब्धोपवासः ॥ अख़्बमेधेन गोसवेनाप्तिष्ठुता वाःखेत ॥३ अख़्बमेधावखुथे वाऽऽत्मानं प्लावयेत् ॥४ अखाप्युदाहरन्ति ॥५

अमला ब्राह्मणं हत्वा दुष्टो भवति धमतः। भृषयो निष्कृतिं तस्य वदन्त्यमतिपूर्वके ॥६ मतिपूव घ्नतस्तस्य निष्कृतिनीपलभ्यते । अपगूर्य चरेत्कुच्छ्मतिकुच्छ्रं निपातने ॥७ कुच्छुं चान्द्रायणं चैव लोहितस्य प्रवर्तने । तस्मान्नेवापगुरेत न च कुर्वीत शोणितमिति ॥८ नव समा राजन्यस्य ॥६ तिस्रो वैश्यस्य ॥१० संवस्सरं शूद्रस्य ॥११ स्त्रियाश्च ॥१२ ब्राह्मणवदात्रेय्याः ॥१३ गुरुतल्पगस्तप्ते लोहशयने शयीत ॥१४ सृसिं वा ज्वलन्तीं ऋष्येत् ॥१५ लिङ्गं वा सवृषणं परिवास्याञ्जलावाधाय दक्षिणाप्रतीच्यो-र्दिशमन्तरेण गच्छेदा निपतनात् ॥१६ स्तेनः प्रकीर्य केशान्सैध्रकं युसलमादाय स्कन्धेन राजानं गच्छेदनेन मां जहीति तेनैनं हन्यात् ॥१७ अथाप्युदाहरन्ति ॥१८

स्कन्धेनाऽऽदाय मुसलं स्तेनो राजानमन्वियात् । अनेन शाधि मां राजनक्षत्त्रधर्ममनुस्मरन् ॥१६ शासने वा विसर्ग वा स्तेनो मुन्येत किल्बिषात् । अशासनात्तु तद्राजा स्तेनादाप्नोति किल्बिषमिति ॥२० सुरां पीत्वोष्णया कार्यं दहेत्।।२१ अमला पाने कुच्छ्राब्दपादं चरेत्पुनरुपनयनं च ॥२२ वपनव्रतनियमलोपश्च पूर्वानुष्टितत्वात् ॥२३ अथाप्युदाहरन्ति ॥२४

अमत्या वारुणीं पीत्वा प्राश्य मूत्रपुरीषयोः। ब्राह्मणः क्षत्त्रियो वैश्यः पुनः संस्कारमहति ॥२४ सुराधाने तु यो भाण्डे अपः पर्युधिताः पिवेत्। शङ्खपुष्पीविपक्वेन षडहं क्षीरेण वर्तयेत्।।२६ गुक्प्रयुक्तश्चे निस्रयेत् गुरुखीनकुच्छ्रां खरेत्।।२७ एतदेवासंस्कृते ॥२८

ब्रह्मचारिणः शवकर्मणा व्रतावृत्तिरन्यत्र मातापित्रोराचार्याच ॥ स चेद्व्याधीयीत कामं गुरोरुच्छिष्टं भैषण्यार्थे सर्वं प्राश्नीयात् ॥ येनेच्छेत्तेन चिकित्सेत्।।३१

स यदाऽगतिः स्यात्तदुत्थायाऽऽदित्यमुपतिष्ठेत ॥३२

हंसः ग्रुचिषदिति ॥३३

एतया दिवा रेतः सित्तवा त्रिरपो हृद्यंगमाः पिबेद्रेतस्याभिः॥

यो ब्रह्मचारी खियमुपेयात्सोऽवकीणीं ॥३४

स गर्दभं पशुमालभेत ॥३६

नेश्रः तः पशुपुरोडाशश्र रक्षोदेवतो यमदेवतो वा ॥३७ शिश्नात्प्राशित्रमप्ववदानैश्चरन्तीति विज्ञायते ॥३८ अपि वाऽमावास्यायां निश्यग्रिमुपसमाधाय द्विहोसिकीं

परिचेष्टां कृत्वा हे आज्याहुती जुहोति — ॥३६

कामावकीर्णोऽस्म्यवकीर्णोऽस्मि कामकामाय स्वाहा ॥४० कामाभिद्रुग्धोऽस्म्यभिद्रुग्धोऽस्मि कामकामाय स्वाहेति ॥४१ हुत्वा प्रयताञ्जलिः कवातिर्यङ्ङग्निमभिमन्त्रयेत ॥४२ सं मा सिश्वन्तु महतः समिन्द्रः सं बृहस्पतिः।

सं माऽयमिः सिञ्चत्वायुषा च बलेन चाऽऽयुष्मन्तं करोतु मेति ॥ अथास्य ज्ञातयः परिषद्युद्पात्रं निनयेयुरसावहमित्थंभूत इति ॥ चरित्वाऽपः पयो घृत मधु लवणमित्यारब्धवन्तं ब्राह्मणा

त्रू युश्चरितं त्वयेखोमितीतरः पूखाह चरितनिर्वेशं सवनीयं कुर्युः ॥४५

सगोत्रां चेद्मत्योपयच्छेद्भर्तृवदेनां विश्वयात् ।।४६ पूजाता चेत्कृच्छ्राब्दपादं चरित्वा यन्म आत्मनोनिन्दा-ऽभूत्युनरिश्चक्षुरदादिति एताभ्यां जुहुयात् ।।४७ परिवित्तः परिवेत्ता या चैनं परिविन्दति ।

सर्वे ते नरकं यान्ति दातृयाजकपश्वमाः ॥४८ परिवित्तः परिवेत्ता दाता यश्चापि याजकः ।

कुच्छूद्वादशरात्रेण स्त्री त्रिरात्रेणं शुध्यति, इति ॥४६ अथ पतनीयानि—॥५०

समुद्रसंयानम् ॥५१ ब्रह्मस्वन्यासापहरणम् ॥५२ भूम्यनृतम् ॥५३ सर्वपण्यैर्व्यवहरणम् ॥ शूद्रसेवनम् ॥५४ शूद्राभिजननम् ॥५५

तद्पत्यत्वं च । १६६ एषामन्यतमत्क्रु(मं क्र)त्वा ॥ १७

चतुर्थकालामितभोजिनः स्युरपोऽभ्युपेयुः सवनानुकल्पम् । स्थानासनाभ्यां विहरन्त एते त्रिभिर्वषस्तद्पघ्नन्ति पापमिति॥ यदेकरात्रेण करोति पापं कृष्णं वर्ण ब्राह्मणः सेवमानः। चतुर्थकाल उदकाभ्यवायी त्रिभिर्वर्षेरतद्पहन्ति पापम्, इति ॥४६ अथोपपातकानि—॥६०

अगन्यागमनं गुर्वीसखी गुरुसखीमपपात्रां पतितां च गत्वा भेषजकरणं प्रामयाजनं रङ्गोपजीवनं नाट्याचार्यता गोमहिषीरक्षणं यचान्यद्प्येवं युक्तं कन्यादूषणमिति ॥६१ तेषां तु निर्वेशः पतितवृत्तिद्वीं संवत्रारौ ॥६२ अथाशुचिकराणि—॥६३

चूतमभिचारोऽनाहिताग्नेरुव्छवृत्तिता समावृत्तस्य मैक्षचर्या तस्य चैव गुरुकुले वास ऊर्ध्व चतुभ्यो मासेभ्यस्तस्य चाध्यापनं नक्षत्रनिर्देशश्चेति ॥६४

तेषां तु निर्वेशो द्वादश मासान्द्वादशार्धमासान्द्वादश द्वादशा-हान्द्वादश षडहान्द्वादश ज्यहान्द्वादशाहं षडहं ज्यहमहोरात्र-मेकाहमिति यथा कर्माभ्यासः ॥६४

अथ पतिताः ॥६६

समवसाय धर्माश्चरेयुरितरेतरयाजका इतरेतराध्यापका मिथो विवहमानाः पुत्रान्संनिष्पाद्य ब्रूयुर्विप्रव्रजतास्मभ्य

एवमार्यान्संप्रतिपत्स्यथेति ॥६७

अथापि न सेन्द्रियः पतति ॥६८

तदेतेन वेदितव्यमङ्गहीनो हि साङ्गं जनयेत् ॥६६

मिथ्येतदिति हारीतः।।७०

द्धिधानीसधर्माः स्त्रियः स्युर्यो हि द्धिधान्यामप्रयतं पय

आतच्य मन्थित न तच्छिष्टा धर्मकृत्येषूपयोजयन्ति ॥७१ एवमग्रुचि गुक्लं यन्निर्वर्तते न तेन सह संप्रयोगो विद्यते ॥७२ अग्रुचिशुक्कोत्पन्नानां तेषामिच्छतां प्रायिश्वितिः ॥७३ पत्तनीयानां तृतीयोंऽशः स्त्रीणामंशस्तृतीयः ॥७४ अथाप्युदाहरन्ति ॥७५

भोजनाभ्यञ्जनाहानाद्यद्न्यत्कुरुते तिलेः।
श्विष्ठायां कृमिर्भूत्वा पितृभिः सह मज्जतीति।।७६
पितृन्वा एष विक्रीणीते।।७७ यस्तिलान्विक्रीणीते प्राणान्वा एष विक्रीणीते यस्तण्डुलान्विक्रीणीते।।७८
सुक्रुतांशान्वा एष विकीणीते यः पणमानो दुहितरं ददाति।।७६
तृणकाष्ठमविक्रतं विक्रेयम्।।८० अथाप्युदाहरन्ति।।८१
पश्वश्चैकतोदन्ता अश्मा च लवणोद्धृतः।

एतद्बाह्मण ते पण्यं तन्तुश्चारजनीकृत, इति ॥८२ पातकवर्जं वा बश्रुं पिङ्गलां गां रोमशां सिर्पवाऽवसिच्य कृष्णोस्तिलेरवकीर्यान्चानाय द्यात् ॥८३ कृष्माण्डेवां द्वादशाहम् ॥८४ यद्वांचीनमेनो श्रूणहत्यायास्तस्मान्युच्यत, इति ॥८५ पातकाभिशंसने कृष्ण्यः ॥८६ तद्ब्दोऽभिशंसितुः ॥८७

संवत्सरेण पतित पतितेन समाचरन्। याजनाध्यापनाद्यौनान्न तु यानासनाशनादिति।।८८ अमेध्यप्राशने प्रायश्चित्तिनैंष्पुरीष्यं तत्सप्तरात्रेणावाप्यते।।८६ अपः पयो घृतं पराक इति प्रतित्र्यहमुख्णानि स तप्तकुच्छः।।६० ज्यहं प्रातस्तथा सायमयाचितं पराक इति क्रच्छः ॥६१ प्रातः सायमयाचितं पराक इति त्रयश्चत्रात्राः स एष स्त्रीबालवृद्धानां कृच्छः ॥६२ यावत्सकृदाददीत ताबदश्नीयात्पूर्ववत्सोऽतिकृच्छः ॥६३ अब्भक्षस्तृतीयः स कृच्छातिकृच्छः ॥६४ कृच्छ्रे त्रिषवणमुदकोपस्पर्शनम् ॥६४ अधः शयनम् ॥६६ एकवस्त्रता ॥६० केशश्मश्रुलोमनखवापनम् ॥६८ एतदेव स्त्रयाः केशवपनवर्जम् ॥६६

इति द्वितीयप्रश्ने प्रथमोऽध्यायः।

अथ द्वितीयप्रश्ने द्वितीयोऽध्यायः।

अथ दायविभागवर्णनम्।

नित्योदकी नित्ययज्ञोपनीती नित्यस्वाध्यायी वृषलान्नवर्जी। मृतौ च गच्छन्विधिवच जुह्नन ब्राह्मणरच्यवते ब्रह्मलोकात्॥१

मनुः पुत्रेभ्यो दायं व्यभजदिति श्रुतिः ॥२ समशः सर्वेषामविशेषात् ॥३ वरं वा रूपमुद्धरेष्ठ्येष्ठः ॥४ तस्माज्ज्येष्ठं पुत्रं धनेन निरवसाययन्तीति श्रुतिः ॥६ दशानां वैकमुद्धरेष्ठ्येष्ठः ॥६ सममितरे विभजेरन् ॥७ पितुरनुमत्या दायविभागः सति पितरि ॥८

Sच्याय:] दायविभागवर्णनम्, औरसादिपुत्राणां वर्णनञ्च १८०७

चतुर्णां वर्णानां गोश्वाजावयो ज्येष्ठांशः ॥६ नानावर्णस्त्रीपुत्रसमवाये दायं दशांशान्कृत्वा चतुरस्तीन्द्वा-वेकमिति यथाक्रमं विभजेरन् ॥१० औरसे तृत्पन्ने सवर्णास्त्रतीयांशहराः ॥११ सवर्णापुत्रानन्तरापुत्रयोरनन्तरापुत्रश्चेद्गुणवान्स ज्येष्ठांशं हरेत् ॥१२

गुणवान्हि शेषाणां भर्ता भवति ॥१३
सबर्णायां संस्कृतायां स्वयमुत्पादितमौरसं पुत्रं विद्यात् ॥१४
अथाप्युदाहरन्ति—॥१४
अङ्गादङ्गात्संभवसि हृद्याद्धि जायसे ।
आत्मा व पुत्रनामाऽसि स जीव शरदः शतमिति ॥१६
अभ्युपगम्य दुहितरि जातं पुत्रिकापुत्रमन्यं दौहित्रम् ॥१७
अथाप्युदाहरन्ति ॥१८

आदिशेत्प्रथमे पिण्डे मातरं पुत्रिकासुतः । द्वितीये पितरं तस्यास्तृतीये च पितामहमिति ॥१६ मृतस्य प्रसूतो यः क्षीबन्याधितयोर्वाऽन्येनानुमते

मृतस्य प्रसूता यः क्षाबन्यााधतयावाऽन्यनानुमत स्वे क्षेत्रे स क्षेत्रजः ॥२०

स एष द्विपिता द्विगोत्रश्च द्वयोरिप स्वधारिक्थभाग्भवति ॥२१ अथाप्युदाहरन्ति ॥२२

द्विपितुः पिण्डदानं स्यात्पिण्डे पिण्डे च नामनी। त्रयश्च पिण्डाः षण्णां स्युरेतं कुर्वन्न मुद्यतीति।।२३ मातापितृभ्यां दत्तोऽन्यतरेण वा योऽपत्यार्थे परिगृह्यते स दत्तः ॥२४

सदृशं यं सकामं स्वयं कुर्यात्स कृत्रिमः ॥२५ गृहे गृहोत्पन्नोऽन्ते ज्ञातो गृहजः ॥२६

मातापितृभ्यामुत्सृष्टोऽन्यतरेण वा योऽपत्यार्थे परिगृह्यते सोऽपविद्धः ॥२७

असंस्कृतामनतिसृष्टां याभुपयच्छेत्तस्यां यो जातः

स कानीनः ॥२८

या गर्भिणी संस्क्रियते विज्ञाता वाऽविज्ञाता वा तस्य यो

जातः स सहोढः ॥२६

मातापित्रोईस्तात्कीतोऽन्यतरेण वा योऽपत्यार्थे परिगृह्यते स क्रीतः ॥३०

क्वीवं त्यत्तवा पतितं वा याऽन्यं पति विन्देत्तस्यां पुनभ्वां यो जातः स पौनर्भवः ॥३१

मातापितृविहीनो यः स्वयमात्मानं द्वात्स स्वयंद्तः ॥३२ द्विजातिप्रवराच्छूद्रायां जातो निषादः॥३३

कामात्पारशव इति पुत्राः ॥३४ अथाप्युदाहरन्ति ॥३५

औरसं पुत्रिकापुत्रं क्षेत्रजं दत्तकृत्रिमौ।

गृहजं चापविद्धं च रिक्थभाजः प्रचक्षते ॥३६

कानीनं च सहोढं च क्रीतं पौनर्भवं तथा।

स्वयंदत्तं निषादं च गोत्रभाजः प्रचक्षते ॥३७

तेषां प्रथम एवेत्याहौपजङ्घनिः ॥३८ इदानीमहमीर्घामि स्त्रीणां जनक नो पुरा। यतो यमस्य सद्ने जनयितुः पुत्रमन्नुवन् ॥३६ रेतोधाः पुत्रं नयति परेत्य यमसादने। तस्माद्रार्थां (तु)रक्षन्ति विभ्यतः पररेतसः ॥४० अप्रमत्ता रक्षथ तन्तुमेतं मांवःक्षेत्रे पर(रे)बीजानि वाप्सुः। यनियतुः पुत्रो भवति सौपराये मोघं वेत्ता कुरुते तन्तुमेतमिति ॥४१ तेषामवाप्तव्यवहाराणामंशान्सोपचयान्सुनिगुप्ता-न्निद्ध्युरा व्यवहारप्रापणात् ॥४२ अतीतव्यवहारान्त्रासाच्छाद्नैर्विभृयुः ॥४३ अन्धजड्क्रीबन्यसनिन्याधितादींश्च ॥४४ अकर्मिणः ॥४४ पतिततज्ञातवर्जम् ॥४६ न पतितैः संव्यवहारो विद्यते ॥४७ पतितामपि तु मातरं विभृयादनभिभाषमाणः ॥४८ मातुरलंकारं दुहितरः सांप्रदायिकं लभेरन्नन्यद्वा ॥४६ न स्नीस्वातन्त्र्यं विद्यते ॥५० अथाप्युदाहरन्ति ॥५१ पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने। पुत्रस्तु स्थाविरे भावे न स्त्री स्वातन्त्र्यमईतीति ॥५२ निरिन्द्रिया हादायाश्च खियो मता इति श्रुतिः ॥५३ भर्तृहिते यतमानाः स्वर्गं छोकं जयेरन् ॥५४

व्यतिक्रमे तु कुच्छः ॥५५ शूद्रे चान्द्रायणं चरेत् ॥५६ वैश्यादिषु प्रतिलोमं कुच्छातिकुच्छादीश्चरेत् ५७ पुंसां ब्राह्मणादीनां संवत्सरं ब्रह्मचर्यम् ॥५८ शूद्रं कटाग्निना दहेत्।।६६ अथाप्युदाहरन्ति ।।६० अब्राह्मणस्य शारीरो दण्डः संप्रहणे भवेत्। सर्वेषामेव वर्णानां दारा रक्ष्यतमा धनात् ॥६१ न तु चारणदारेषु न रङ्गावतरे वधः। संसर्जयन्ति तान्ह्येतान्निगुप्तांश्चालयन्त्यपि ॥६२ श्चियः पवित्रमतुलं नैता दुष्यन्ति कर्हिचित्। मासि मासि रजो ह्यासां दुरितान्यपकर्षति ॥६३ सोमः शौचं ददत्ता(दौ ता)सां गन्धर्व शिक्षितां गिरम्। अग्निश्च सर्वभक्षत्वं तस्मान्निष्कल्मषाः स्नियः ॥६४ अप्रजां दशमे वर्षे स्वीप्रजां द्वादशे त्यजेत्। मृतप्रजां पञ्चदशे सद्यस्विप्रयवादिनीम् ॥६५ संवत्सरं प्रेतपत्नी मधुमांसमद्यलवणानि वर्जयेद्धः शयीत ६६ षण्मासानिति मौद्गल्यः ॥६७ अत ऊर्ध्वं गुरुभिरनुमता देवराज्जनयेत्पुत्रमपुत्रा ॥६८ अथाप्युदाहरन्ति ॥६६ वशाचोत्पन्नपुत्रा च नीरजस्का गतप्रजा। नाकामा संनियोज्या स्यात्फलं यस्यां न विद्यत, इति ॥७० मातुलपिवृष्यसा भगिनी भागिनेयी स्तुषा मातुलानी

सिखवधूरित्यगम्याः ॥७१

अगम्यानां गमने कुच्छातिकुच्छी चान्द्रायणमिति

प्रायश्चित्तिः ॥७२

एतेन चण्डालीव्यवायो व्याख्यातः।।७३

अथाप्युदाहरन्ति ॥७४

चण्डालीं ब्राह्मणो गत्वा भुत्तवा च प्रतिगृह्य च। अज्ञानात्पतितो विप्रो ज्ञानात्तु समतां ब्रजेत्।।७४

पितुर्गुरोर्नरेन्द्रस्य भार्या गत्वा प्रमादतः।

गुरुतल्पी भवेत्तेन पूर्वोक्तस्तस्य निश्चयः, इति ॥७६

अध्यापनयाजनप्रतिप्रहैरशक्तः।

क्षत्त्रधर्मेण जीवेत्प्रत्यनन्तरत्वात् ॥७७

नेति गौतमोऽत्युत्रो हि क्षत्त्रधर्मो ब्राह्मणस्य ॥७८

अथाप्युदाहरन्ति ॥७६

गवार्थे ब्राह्मणार्थे वा वर्णानां वाऽपि संकरे।

गृह्णीयातां विप्विशौ शखं धर्मव्यपेक्षया।।८०

वैश्यवृत्तिरनुष्ठेया प्रत्यनन्तरत्वात् ॥८१

प्राक्पातराशात्कर्षी स्यात्।।८२

अस्यूतनासिकाभ्यां समुष्काभ्यामतुद्त्रारया-

मुहुर्मुहुरभ्युच्छन्दयन् ॥८३

भार्यादिरमिस्तिस्मिन्कर्मकरणं प्रागग्न्याधेयात् ॥८४

अग्न्याधेयप्रभृत्यथेमान्यजस्राणि भवन्ति यथैतद्गन्या-

धेयमग्निहोत्रं दर्शपूर्णमासावाप्रयणमुद्गयनदक्षिणाय-

नयोः पशुश्चातुर्मास्यान्यृतुमुखे षड्होता वसन्ते ज्योति-ष्टोम इत्येवं क्षेमपापणम् ॥८५ अथाप्युदाहरन्ति ॥८६ न दिवा स्वप्नशीलेन न च सर्वान्नभोजिना । कामं शक्यं नभो गन्तुमारूढपतितेन वा ॥८७ दैन्यं शाष्ट्यं जह्यं च वर्जयेत् ॥८८ अथाप्यत्रोशनसम्ब वृषपर्वणश्च दुहित्रोः संवादे गाथा-मुदाहरन्ति ॥८६

स्तुवतो दुहिता त्वं वे याचतः प्रतिगृह्णतः । अथाहं स्तूयमानस्य दृद्तोऽप्रतिगृह्णतो दृद्तोऽप्रतिगृह्णत, <mark>इति</mark>

इति द्वितीयप्रश्ने द्वितीयोऽध्यायः।

अथ द्वितीयप्रश्ने तृतीयोऽध्यायः। अथ देवादितर्पणविधिवर्णनम्।

तपस्यवगाहनम् ॥१ देवतास्तर्पयित्वा पितृत्र्पणम् ॥२ अनुतीर्थमप उत्सिञ्चति ॥३ ऊर्ज वहन्तीरिति ॥४

अथाप्युदाहरनित ॥५

स्रवन्तीष्वनिरुद्धासु त्रयो वर्णा द्विजातयः। प्रातरुत्थाय कुर्वीरन्देवर्षिपितृतर्पणम्।।६ निरुद्धासु न कुर्वीरत्नंशभाक्तत्र सेतुकृत्। तस्मात्परकृतान्सेतून्कृपांश्च परिवर्जयेदिति।।७ अथाप्युदाहरन्ति।।८

उद्धृत्य वाऽपि त्रीन्पिण्डान्कुर्यादापत्सु नो सदा। निरुद्धासु तु मृत्पिण्डान्कूपात्त्रीनब्घटांस्तथेति ॥६ बहुप्रतिप्राह्यस्याप्रतिप्राह्यस्य वा प्रतिगृह्यायाज्यं वा याज-यित्वाऽनाश्यात्रस्य वाऽन्नमशित्वा तरत्समन्दीयं जपेदिति॥१० अथाप्युदाहरन्ति॥११

गुरुसंकरिणश्चैव शिष्यसंकरिणश्च ये।
आहारमन्त्रसंकीणां दीर्घं तम उपासत इति।।१२
अथ स्नातकत्रतानि।।१३
सायं प्रातर्थदशनीयं स्यात्तेनान्नेन वैश्वदेवं बित्मुपहृत्य
ब्राह्मणश्चित्त्रियविद्शूद्रानभ्यागतान्यथाशक्ति पूजयेत्।।१४
यदि बहूनां न शक्नुयादेकस्मै गुणवते दद्यात्।।१५
यो वा प्रथममुपगतः स्यात्।।१६
शूद्रश्चेदागतस्तं कर्मणि नियुक्ज्यात्।।१०
श्रोत्रियाय वाऽप्रं द्धात्।।१८
ये नित्या भाक्तिकाः स्युस्तेषामनुपरोचेन संविभागो विहितः।।
न त्वेव कदाचिद्दस्वा भुञ्जीत।।२०
अथाप्यत्रान्नगीतौ श्लोकावुदाहरन्ति।।२१
यो मामद्त्वा पितृदेवताभ्यो भृत्यातिथीनां च सुहुज्जनस्य।
संपन्नमश्नन्विषमित्त भोहात्तमद्म्यहं तस्य च सृत्युरिन्म।।२२

हुताग्निहोत्रः कृतवैश्वदेवः पूज्यातिथीनभृत्यजनावशिष्टम्। तुष्टः श्रुचिः श्रद्दधद्ति यो मां तस्यामृतं स्यां स च मां भुनक्ति ॥२३ सुब्राह्मणश्रोत्रियवेदपारगेभ्यो गुर्वर्थनिवेशौषधार्थवृत्ति-क्षीणयक्ष्यमाणाध्ययनाध्वसंयोगवैश्वजितेषु द्रव्यसंविभागो यथाशक्ति कार्यो बहिर्वेदि भिक्षमाणेषु कृतान्नमितरेषु ॥२४ सुप्रक्षालितपादपाणिराचान्तः शुचौ संवृते देशेऽन-मुपहृतसूपसंगृह्य कामक्रोधद्रोहलोभमोहानपहत्य सर्वाभि-रङ्गुलीभिः शब्दमकुर्वन्प्राश्नीयात् ॥२५ न पिण्डरोषं पात्र्यामुत्सृजेत् ॥२६ न पिण्डशेषं पात्र्यामुत्सृजेत्।।२७ मांसमत्स्यतिलसंसृष्टप्राशनेऽप उपसृश्याग्निमभिमृशेत्।।२८ अस्तमिते च स्नानम् ॥२६ पालाशमासनं पादुके दन्तधावनमिति वर्जयेत्॥३० नोत्सङ्गेऽन्नं भक्षयेत् ॥३१ आसन्ध्यां न भुङ्गीत ॥३२ वैणवं दण्डं धारयेत् ॥३३ रुक्मकुण्डले च ॥३४ पदा पाद्स्य प्रक्षालनमधिष्ठानं च वर्जयेत् ॥३४ न बिहुर्मालां धारयेत् ॥३६ सूर्यमुद्यास्तमये न निरीक्षेत ॥ नेन्द्रधनुरिति परसमै ब्र्यात् ॥३८ यदि त्र्यान्मणिधनुरित्येव त्र्यात्।।३६ पुरद्वारीन्द्रकीलपरिधावन्तरेण नातीयात् ॥४० घ्लेङ्खयोरन्तरेण न गच्छेत् ॥४१ वत्सतन्ति च नोपरि गच्छेत् ॥४२

भस्मास्थिरोमतुषकपाळावस्थानानि नाधितिष्ठेत् ॥४३ गां धयन्तीं परसमे न प्रब्र्यात् ॥४४ नाधेनुमधेनुरिति ब्रूयात् ॥४५ यदि त्र्याद्धेनुंभव्येत्येव त्र्यात् ॥४६ शुक्ता रुक्षाः परुषा वाचो न ब्रूयात् ॥४० नैकोऽध्वानं त्रजेत् ॥४८ न पतितैर्न स्त्रिया न शूद्रेण ॥४६ न प्रतिसायं व्रजेत् ॥६० न नग्नः स्नायात् ॥५१ न नक्तं स्नायात् ॥५२ न नदीं बाहुकस्तरेत् ॥५३ न कूपमवेक्षेत ॥ ५४ न गर्तमवेक्षेत ॥ ५५ न तत्रोपविशेद्यत एनमन्य उत्थापयेत्।।५६ पन्था देयो ब्राह्मणाय गवे राज्ञे ह्यचक्षुषे। वृद्धाय भारतप्ताय गर्भिण्यै दुर्बलाय च ॥५७ प्रभूतैधोदकयवससमित्कुशमाल्योपनिष्क्रमणमाढ्यजना-कुलमनलससमृद्धमार्यनभूयिष्ठमदस्युप्रवेश्यं प्राममावसितुं यतेत धार्मिकः ॥ ४८ उद्पानोद्के मामेबासणो वृषलीपतिः। उषित्वा द्वादश समाः शूद्रसाधर्म्यमृच्छति ॥५६ पुररेणुकुण्ठितशरीरस्तत्परिपूर्णनेत्रवद्नश्च। नगरे वसन्सुनियतात्मा सिद्धिमवाप्त्यतीति न तदस्ति ॥६० रथाश्वगजधान्यानां गवां चैव रजः शुभम्। अप्रशस्तं समृहन्याः श्वाजाविखरवाससाम् ॥६१ पूज्यान्यूजयेत् ॥६२

स्टिषिविद्वशृपवरमातुलश्वशुरित्वजः।

एतेर्घ्याः शास्त्रविद्विताः स्मृताः कालविभागशः।।६३

ऋषिविद्वशृपाः प्राप्ताः क्रियारम्भे वर्रात्वजौ।

मातुलश्वशुरौ पूज्यौ संवत्सरगतागताविति।।६४
अग्न्यगारे गवां मध्ये ब्राह्मणानां च संनिधौ।
स्वाध्याये भोजने चैव दक्षिणं बाहुमुद्धरेत्।।६५
उत्तरं वासः कर्तव्यं पश्चस्वेतेषु कर्मसु।
स्वाध्यायोत्सर्गदानेषु भोजनाचमनयोस्तथा।।६६
हवनं भोजनं दानमुपहारः प्रतिष्रहः।
बहिर्जानु न कार्याणि तद्वदाचमनं स्मृतम्।।६०
अन्ने श्रिताति भूतानि अन्नं प्राणमिति श्रुतिः।
तस्मादन्नं प्रदातव्यमन्नं हि परमं हविः।।६८
हुतेन शाम्यते पाषं हुतमन्नेन शाम्यति।
अन्नं दक्षिणया शान्तिमुपयातीति नः श्रुतिरिति।।६६

इति द्वितीयप्रश्ने तृतीयोऽध्यायः।

अथ द्वितीयप्रश्ने चतुर्थोऽध्यायः । अथ सन्ध्योपासनविधिवर्णनम् । अथातः संध्योपासनविधि व्याख्यास्यामः ॥१ तीथं गत्वाऽप्रयतोऽभिषिक्तः प्रथतो वाऽनभिषिकः-

प्रक्षालितपादपाणिरप आचम्य सुरभिमत्याऽिक्छङ्गा-भिर्वारुणीभिर्हिरण्यवर्णाभिः पावसानीभिव्याहितिभि-रन्येश्च पवित्रेरात्मानं श्रोक्ष्य प्रयतो भवति ॥२ अथाप्युदाहरनित ॥३ अपोऽवगाहनं स्नानं विहितं सार्ववर्णिकम्। मन्त्रवस्रोक्षणं चापि द्विजातीनां विशिष्यत इति ॥४ सर्वकर्मणां चैवाऽऽरम्भेषु प्राक्संध्योपासनकाळाचैतेनैव पवित्रसमृहेनाऽऽत्मानं ॥५ प्रोक्ष्य प्रयतो भवति ॥५ अथाप्युदाहरन्ति ॥६ द्रभेष्वासीनो द्रभान्धारयमाणः सोद्केन पाणिना-प्रत्यङ्मुखः सावित्रीं सहस्रकृत्व आवर्तयेत्॥७ प्राणायामशो वा शतकृत्वः ॥८ उभयतः प्रणवां ससप्तव्याहृतिकां मनसा वा द्शकृत्वः ॥६ त्रिभिश्च प्राणायामैस्तान्तो ब्रह्महृद्येन ॥१० वारुणीभ्यां रात्रिमुपतिष्ठते ॥११ इमं मे वरुण तत्त्वा यामीति द्वाभ्याम् ॥१२ एवमेव प्रातः प्राङ्मुखस्तिष्ठन् ॥१३ मैत्रीभ्यामहरूपतिष्ठते मित्रस्य चर्षणीधृतो मित्रो जनान्या-तयतीति द्वाभ्याम् ॥१४ सुपूर्वामपि पूर्वामुपक्रम्योदित आदित्ये समाप्नुयात् ॥१४ अनस्तमित उपक्रम्य सुपश्चाद्पि पश्चिमाम् ॥१६ संध्ययोध संपत्तावहोरात्रयोश्च संतत्ये ॥१७

अपि चात्र प्रजापतिगीतौ श्लोकौ भवतः—॥१८ अनागतां तु ये पूर्वामनतीतां तु पश्चिमाम्। संध्यां नोपासते विप्राः कथं ते ब्राह्मणाः स्मृताः ॥१६ सायं प्रातः सदा संध्यां ये विप्रा नो उपासते। कामं तान्धार्मिको राजा शूद्रकर्मसु योजयेदिति ॥२० तत्र सायमतिक्रमे राज्युपवासः ॥२१ प्रातरतिक्रमेऽहरूपवासः ॥२२ स्थानासनफलमवाप्नोति ॥२३ अथाप्युदाहरन्ति— २४ यदुपस्यकृतं पापं पद्भ्यां वा यत्कृतं भवेत्। बहुभ्यां मनसा वाऽपि वाचा वा यत्कृतं भवेत् ॥२५ सायं संध्यामुपस्थाय तेन तस्मात्प्रमुच्यते ॥२६ राज्या चापि संधीयते न चैनं वरुणो गृह्णाति ॥२७ एवमेव पातरूपस्थाय रात्रिकृतात्पापात्पुमुच्तते ॥२८ अहा चापि संधीयते मित्रश्चेंनं गोपायत्यादित्यश्चेनं स्वर्ग लोकमुन्नयति ॥२६ स एवमेवाहरहरहोरात्रयोः संधिषूपतिष्ठमानो ब्रह्मपूतो ब्रह्मभूतो ब्राह्मणः शास्त्रमनुवर्तमानो ब्रह्मलोकमभिजय-तीति विज्ञायते ब्रह्मलोकमभिजयतीति विज्ञायते ॥३०

इति द्वितीयपूरने चतुर्थोऽध्यायः।

अथ द्वितीयप्रश्ने पञ्चमोऽध्यायः।

अथ मध्याह्यसानविधिवर्णनम् अथ हस्तौ प्रक्षाल्य कमण्डलुं मृत्पिण्डं च संगृह्य तीर्थ गत्वा त्रिः पादौ प्रक्षालयते त्रिरात्मानम् ॥१ अथ हैके ब्रुवते ॥२ श्मशानमापो देवगृहं गोष्ठं यत्र च ब्राह्मणा अप्रक्षाल्य पादौ तन्न प्रवेष्टव्यमिति ॥३ अथापोऽभिप्रपद्यते ॥४ हिरण्यशृङ्गं वरुणं प्रपद्ये तीर्थं मे देहि याचितः। यन्मया भुक्तमसाघूनां पापेभ्यश्च प्रतिप्रहः ॥५ यन्मे मनसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम्। तन्म(न्न) इन्द्रो वरुणो बृहस्पतिः सविता च पुनन्तु पुनः पुनरिति ।।६ अथ।ञ्जलिनाऽप उपहन्ति ।।७ सुमित्रा न आप ओषधयः [संत्विति] ॥८ तां दिशं निरुक्षति यस्यामस्य दिशि द्वेष्यो भवति-दुर्मित्रास्तरमे भूयासुर्योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विषम इति ॥६ अथाप उपसृश्य त्रिः प्रदक्षिणमुद्कमावर्तयति यद्पां क्रूरं यदमेध्यं यदशान्तं तदपगच्छतादिति ॥१० अप्सु निमज्ज्योन्म<mark>ज्</mark>ज्य ॥११ नाप्सु सतः प्रयमणं विद्यते न वासः पल्पूलनम् ॥१२ नोपस्पर्शनम् ॥१३

यद्युपरुद्धाः स्युरेतेनोपतिष्ठते नमोऽप्रयेऽप्सुमते नम इन्द्राय

नमो वरुणाय नमो वारुण्ये नमोऽदुभ्य इति ॥१४

उत्तीर्याऽऽचन्तः पुनराचामेत् ॥१४ आपः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पृता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्म पूता पुनातु माम्।।१६ यदुच्छिष्टमभोज्यं यद्वा दुश्चरितं मम। सर्वं पुनन्तु मामापोऽसतां च प्रतिप्रहं स्वाहेति ॥१७ पवित्रे कृत्वाऽद्भिर्मार्जयित आपो हि ष्टा मयोभुव इति तिसृभिर्हिरण्यवर्णाः शुचयः पावन्त इति चतसृभिः ॥१८ पवमानः सुवर्जन इत्येतेनानुवाकेन मार्जियत्वा-ऽन्तर्जलगतोऽघमर्षणेन त्रीन्प्राणायासान्धारयित्वोत्तीर्य वासः पीडियत्वा प्रक्षाििकतोपवातान्यक्विष्टानि वासांसि परिधायाप आचम्य द्र्भेष्वासीनो दुर्भान्धारयमाणः प्राङ् मुखः सावित्री सहस्रकृत्व आवर्तयेच्छतकृतवोऽपरि-मितकृत्वो वा दशावरम् ॥१६ अथाऽऽदित्यमुपतिष्ठत उद्वयं तमसस्परि उदु त्यं चित्रं तचक्षुद्वेवहितं य उदगादिति ॥२० अथाप्युदाहरन्ति ॥२१ प्रणवो व्याहृतयः सावित्री चेत्येते पञ्च ब्रह्मयज्ञा-अहरहब्राह्मणं किल्विषात्पावयन्ति ॥२२ पृतः पञ्चभिर्वहायज्ञैरथोत्तरं देवतास्तर्पयति ॥२३ अग्निः प्रजापतिः (?)। अग्निः प्रजापतिः सोमो रुद्रोऽदितिर्बृ हस्पतिः सर्पा-इत्येतानि प्राग्द्वाराणि दैवतानि सनक्षत्राणि सप्रहाणि-

साहोरात्राणि समुहूर्तानि तर्पयामि ॥२४ ओं वस्र्रेश्च तर्पयामि ॥२५ ॥२५ ओं पितरोऽर्यमा भगः सविता त्वष्टा वायुरिन्द्राग्नी-इत्येतानि दक्षिणद्वाराणि देवतानि सनक्षत्राणि सम्रहाणि साहोरात्राणि सुसुहूर्तानि तर्पयामि ॥२६ ओमादित्यांश्च तर्पयामि ॥२० ओं वसवो वरुणोऽज एकपादहिर्वृध्न्यः पृषाऽश्विनौ-यम इत्येतान्युदग्द्वाराणि देवेतानि सनक्षत्राणि समहाणि साहोरात्राणि समुहूर्तानि तर्पयामि ॥२८ ओं विश्वान्देवांस्तर्पयामि ॥२६ ओं साध्यांश्च तर्पयामि ॥३० ओं ब्रह्माणं तर्पयामि ॥३१ ओं प्रजापतिं तर्पयामि ॥३२ ओं चतुर्मुखं तर्पयामि ॥३३ ओं हिरण्यगर्भं तर्पयामि ॥३४ ओं स्वयं भुवं तर्पयामि ॥ ओं ब्रह्मपार्षद्ांस्तर्पयामि ॥३६ ओं परमेष्ठिनं तर्पयामि ॥ ओं ब्रह्मपार्षदीश्च तर्पयामि ॥३८ ओमर्गिन तर्पयामि ॥३६ ओं वायुं तर्ययामि ॥४० ओं वरुणं तर्पयामि ॥४१ ओं सूर्यं तर्पयामि ॥४२ ओं चन्द्रमसं तर्पयामि ॥४३ ओं नक्षत्राणि तर्पयामि ॥४४ ओं सद्योजातं तर्पयामि ॥४५ ओं भूः पुरुषं तर्पयामि ॥४६ ओं भुवः पुरुषं तर्पयामि ॥४७ ओं स्वः पुरुषं तर्पयामि ॥४८ ओं भूर्भुवःस्वः पुरुषं तर्पयामि ओं भूस्तर्पयामि ॥५० ओं भुवस्तर्पयामि ॥५१ ओं स्वस्तर्पयामि ॥५२ ओं महस्तर्पयामि ॥५३

ओं जनस्तर्पयामि ॥५४ ओं तपस्तर्पयामि ॥५५ ओं सत्यं तर्पयामि ॥५६ ओं भवं देवं तर्पयामि ॥५७ ओं शर्व देवं तर्पयामि ॥५८ ओमीशानं देवं तर्पयामि ॥५६ ओं पशुपति देवं तर्पयामि ।।६० ओं रुद्रं देवं तर्पयामि ॥६१ ओमुत्रं देवं तर्पयामि ॥६२ ओं भीमं देवं तर्पयामि ॥६३ ओं महान्तं देवं तर्पयामि ॥६४ ओं भवस्य देवस्य पत्नी तर्पयामि ॥६५ ओं शर्वस्य देवस्य पत्नी तर्पयामि ॥६६ ओमीशानस्य देवस्य पत्नी तर्पयामि ॥६७ ओं पशुपतेर्देवस्य पत्नी तर्पयामि ॥६८ ओं रुद्रस्य देवस्य पत्नीं तर्पयामि ॥६६ ओमुब्रस्य देवस्य पत्नीं तपैयामि ॥७० ओं भीमस्य देवस्य पत्नीं तर्पयामि ॥७१ ओं महतो देवस्य परनीं तर्पयामि ॥७२ ओं भवस्य देवस्य सुतं तर्पयामि ॥७३ ओं शर्वस्य देवस्य सुतं तर्पयामि ॥७४ ओमीशानस्य देवस्य सुतं तर्पयामि ॥७५ ओं पसुपतेर्देवस्य सुतं तर्पयामि ॥७६ ओं रुद्रस्य देवस्य सुतं तर्तयामि ॥७७ ओमुब्रस्य देवस्य सुतं तर्पयामि ॥७८ ओं भीमस्य देवस्य सुतं तर्पयामि ॥७६ ओं महतो देवस्य सुतं तर्पयामि।।८० ओं रुद्रांश्च तपयामि।।८१ ओं रुद्रपार्षदुांस्तर्पयामि ॥८२ ओं विघ्नं तर्पयामि ॥८३

ओं विनायकं तर्पयामि ॥८४ ओं स्थूलं तर्पयामि ८६ ओं हस्तिमुखं तर्पयामि ॥८८ ओमेकदुन्तं तर्पयामि।।६० ओं सनत्कुमारं तर्पयामि ॥६४ ओमिद्रं तर्पयामि ६६ ओं षण्मुखं तर्पयामि ६८ ओं महासेनं तर्पयामि ॥१०० ओं स्कन्द्पार्षद्ांस्तर्पयामि ॥१०२ ओं स्कन्द्पार्षदीश्च तर्पयामि ॥१०३

ओमादित्यं तर्पयामि ॥१०४ ओमङ्गारकं तर्पयामि ॥१०६ ओं बृहस्पतिं तर्पयामि ॥१०८ ओं शनैश्चरं तर्पयामि ॥११० ओं केतुं तर्पयामि ॥११२ ओं नारायणं तर्पयामि ११४ ओं गोविन्दं तर्पयामि ११६ ओं वामनं तर्पयामि १२०

ओं बीरं तर्पयामि ॥८४ ओं वरदं तर्पयामि ८० ओं वक्रतुण्डं तर्पयामि।।८६ ओं लम्बोद्गं तर्पयामि ॥६१ ओं विघ्नपाषेदांस्तर्पयामि।।६२ ओं विघ्नपार्षदीश्च तर्पयामि।।६३ ओं स्कन्दं तर्पयामि ॥६५ ओं षष्ठीं तर्पयामि ॥६७ ओं विशाखं तर्पयामि ॥६६ ओं सुब्रह्मण्यं तर्पयामि ॥१०१

ओं सोमं तर्पयामि ॥१०५ ओं बुधं तर्पयामि ॥१०७ ओं शुक्र तर्पयामि ॥१०६ ओं राहुं तर्पयामि ॥१११ ओं केशवं तर्पयामि ॥११३ ओं माधवं तर्पयामि ॥११४ ओं विष्णुं तर्पयामि ॥११७ ओं मधुसूदनं तर्पयामि ॥११८ ओं त्रिविक्रमं तर्पयामि ॥११६ ओं श्रीधरं तर्पयामि ॥१२१ ओं हृषीकेशं तर्पयामि ॥१२२ ओं पद्मनाभं तर्पयामि ॥१२३ ओं दामोद्रं तर्पयामि ॥१२४ ओं श्रियं देवीं तर्पयामि ॥१२५

ओं सरस्वतीं देवीं तर्पयामि ॥१२६ ओं पुष्टिं तर्पयामि ॥१२७ ओं तुष्टिं तर्पथामि ॥१२७ ओं विष्णुं तर्पथामि ॥१२८ ओं गरुत्मन्तं तर्पयामि ॥१३० ओं विष्णुंपार्षदांश्च तर्प० ॥१३१ ओं विष्णुपार्षदीश्च तर्पयामि ॥१३२ औं यमं तर्पयामि ॥१३३ ओं यमराजं तर्पयामि ॥१२४ ओं धर्मं तर्पयामि १३४ ओं धर्मराजं तर्पयामि ॥१३६ ओं कालं तर्पयामि १३७ ओं नीलं तर्पयामि ॥१३८ ओं मृत्युंजयं तर्पयामि ॥१३६ ओं बैवस्वतं तर्पयामि ॥१४० ओं चित्रगुप्तं तर्पयामि ॥१४१ ओमोदुम्बरं तर्पयामि ॥१४२ ओं वैवस्वतपार्षदांस्तर्प० ॥१४३ ओं वैवस्वत पार्षदीख्य तर्पयामीति ॥१४४ ओं भूमिदेवांस्तर्पयामि ॥१४५ ओं काश्यपं तर्पयामि ॥१४६ ओमन्तरिक्षं तर्पयामि ॥१४७ औं विद्यां तर्पयामि ॥१४८ ओं धन्वन्तरिं तर्पयामि ॥१४६ ओं धन्वन्तरिपार्षदांश्च तर्पयामि ॥१५० ओं धन्वन्तरिपार्षदीश्च तर्पयामीति ॥१४१ अथ निवीतो ।।१५२ ओमृषीस्तर्पयामि ।।१५३ ओं महर्षीस्तर्पयामि ॥१५४ ओं परमधीस्तर्पयामि ॥१५५ ओं ब्रह्मधींस्तर्पयामि ।।१५६ ओं देवधींस्तर्पयामि ।।१५७ ओं राजधींस्तर्पयामि ।।१४८ ओं श्रुतधींस्तर्पयामि ।।१४६ ओं सप्तर्षीस्तर्पयामि ।।१६० ओं काण्डर्षीस्तर्पयामि ।।१६१ ओमृषिकांस्तर्पयामि ॥१६२ ओ मृषिपत्नीस्तर्पयामि १६३ ओमृषिपुत्रकांस्तर्पयामि ॥१६४ ओं कण्वं बौधायनं तर्प० ॥१६४

ओमापस्तम्बं सूत्रकारं तर्पयामि ॥१६६ ओं सत्याषाढं हिरण्यकेशिनं तर्पयामि ॥१६७ ओं वाजसनेयिनं याज्ञवल्क्यं तर्पयामि ॥१६८ ओमाश्वलायनं शौनकं तर्पयामि ॥१६९ ओं व्यासं तर्पयामि ।।१७० ओं प्रणवं तर्पयामि ।।१७१ ओं व्याहृतीस्तर्पयामि ।।१७२ ओं सावित्री तर्पयामि ।।१७३ ओं गायत्रीं तर्पयामि ॥१७४ ओं छन्दांसि तर्पयामि ॥१७४ ओमृग्वेदं तर्पयामि ॥१७६ ओं यजुर्वेदं तर्पयामि १७७ ओं सामवेदं तर्पयामि ॥१७८ ओमथर्वाङ्गिरसं तर्पयामि ॥१८६ ओमितिहासपुराणं तर्पयामि ।।१८० ओं सर्ववेदांस्तर्प० ।।१८१ ओं सर्वदेवजनांस्तर्पयामि ॥१८२ ओं सर्वभूतानि तर्पयामि ।।१८३ अथ प्राचीनावीती (?)।। अथ प्राचीनावीती ॥१८४ ओं पितृन्स्वधा नमस्तर्पयामि ॥१८५ ओं पितामहान्स्वधा नमस्तर्पयामि ॥१८६ कों प्रितामहान्स्वधा नमस्तर्पयामि ॥१८७ ओं मातृः स्वधा नमस्तर्पयामि ॥१८८ ओं पितामहीः स्वधा नमस्तर्पयामि ॥१८६ ओं प्रपितामहीः स्वधा नमस्तर्पयामि ॥१६० ओं मातामहान्स्वधा नमस्तर्पयामि ॥१६१ ओं मातुः पितामहान्स्वधा नमस्तर्पयामि ॥१६२ ओं मातुः प्रपितामहान्स्वधा नमस्तर्पथामि १६३

ओं मातमहीः स्वधा नमस्तर्पयामि १६४ ओं मातुः पितामहीः स्वधा नमस्तर्पयामि ॥१६५ ओं मातुः प्रपितामहीः स्वधा नमस्तर्पयामि ॥१६६ ओमाचार्यान्स्वधा नमस्तर्पयामि ॥१६७ ओमाचार्यपत्नीः स्वधा नमस्तर्ययामि ॥१६८ ओं गुरून्स्वधा नमस्तर्पयामि ॥१६६ ओं गुरुपत्नीः स्वधा नमस्तर्पयामि ॥२०० ओं सखीन्स्वधा नमस्तर्पयामि ॥२०१ ओं सखिपत्नीः स्वधा नमस्तर्पयामि ॥२०२ ओं ज्ञातीन्स्वधा नमस्तर्पयामि ॥२०३ ओं ज्ञातिपत्नीः स्वधा नमस्तर्पयामि ॥२०४ ओममात्यान्स्वधा नमस्तर्पयामि ॥२०४ ओममात्यपत्नीः स्वधा नमस्तर्पयामि २०६ ओं सर्वान्स्वधा नमस्तर्पयामि ॥२०७ ओं सर्वाः स्वधा नमस्तर्पयामीति ॥२०८ अनुतीर्थमप उत्सिञ्चति २०६ ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं पयःकीलालं परिस्नुतम्। स्वधा स्थ तर्पयत मे पितृन् । तृप्यत तृप्यतेति ॥२१० नैकवस्त्रो नाऽऽर्द्रवासा देवानि कर्माण्यनुसंचरेत् ॥२११ पितृसंयुक्तानि चेत्येकेषां पितृसंयुक्तानि चेत्येकेषाम् ॥२१२ इति द्वितीयप्रश्ने पश्वमोऽध्यायः।

अथ द्वितीयप्रश्ने षष्ठोऽध्यायः।

अथ पञ्चमहायज्ञाः, आश्रमधर्मनिरूपणञ्च।

अथ पश्च महायज्ञाः ॥१ तान्येव महाप्तत्राणि ॥२ देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति ॥३ अहरहः स्वाहा कुर्यादाकाष्टात्तथैतं देवयज्ञं समाप्नोति ॥४ अहरहः स्वधा कुर्यादोद्पात्रात्तथैतं पितृयज्ञं समाप्नोति ॥४ अहरहर्नमस्कुर्यादापुष्पेभ्यस्तथैतं भूतयज्ञं समाप्नोति ॥६ अहरहर्बाह्मणेभ्योऽत्रं दद्यादा मूलफलशाकेभ्यस्तथैतं मनुष्ययज्ञं समाप्नोति ॥७ अहरहः स्वाध्यायं कुर्यादा प्रणवात्तर्थेतं ब्रह्मयज्ञं समाप्नोति ॥८ स्वाध्यायो वे ब्रह्मयज्ञस्तस्य ह वा एंतस्य ब्रह्मयज्ञस्य वागेव जुहूर्मन उपमृचक्षुर्घ वा मेधा सुवः सत्यमवभृथः स्वर्गो लोक उद्यनं यावन्त ह वा इमां वित्तस्य पूर्णां ददस्वर्गं लोकं जयति तावन्तं लोकं जयति भूयांसं चाक्षय्यं चाप पुनर्मृत्युं जयति य एवं विद्वान्स्वाध्यायमधीते तस्मात्स्वाध्यायोऽध्येतव्य इति हि ब्राह्मणम् ॥६ अथाप्युदाहरन्ति ॥१०

तस्य ह वा एतस्य धर्मस्य चतुर्धा भेदंमेक आहुरहष्टत्वात् ॥१२ ये चत्वार इति कर्मवादः ॥१३

स्वभ्यक्तः सुहितः सुखे शयने शयानो यं यं क्रतुमधीते

तेन तेनास्येष्टं भवतीति ॥११

ऐष्टिकपाशुकसौमिकदार्विहोमानाम् ॥१४ तदेषाऽभिवदति ॥१४

ये चत्वारः पथयो देवयाना अन्तरा द्यावापृथिवी वियन्ति । तेषां यो अज्यानिमजीतिमावहात्तस्मे नो देवाः परिदत्तेह सर्व इति ॥१६

ब्रह्मचारी गृहस्थो वानप्रस्थः परिव्राजक इति ॥१७ ब्रह्मचारी गुरुशुष्ट्र्यामरणात् ॥१८

वानप्रस्थो वैखानसशास्त्रसमुदाचारः ॥१६

वैखानसो वने मृलफलाशी तपःशीलः [सवने]
पूदकमुपस्पृशञ्ज्ञामणकेनाग्निमाधायात्राम्यभोजी
देविपतृभूतमनुष्यिष्पृजकः सर्वातिथिः प्रतिषिद्धवर्जं
भेक्षमप्युपयुज्जीत न फालकृष्टमिधितष्ठेद्मामं च न
प्रविशेज्जिटलश्चीरार्जिनवासा नातिसांवत्सरं भुज्जीत ॥२०
परिव्राजकः परित्यज्य वन्धूनपरिष्रहः प्रव्रजेद्यथाविधि ॥२१
अर्ण्यं गत्वा शिखामुण्डः कौपीनाच्छादनः ॥२२

वर्षास्वेकस्थः ॥२३

काषायवासाः सन्नमुसले व्यङ्गारे निवृत्तरारावसंपाते भिक्षेत ॥२४

वाङ्मनःकर्मदण्डेर्भूतानामद्गोही ॥२४ पवित्रं विश्वच्छीचार्थम् ॥२६ उत्वृतपरिपृताभिरद्भिरकार्यं कुर्वाणः ॥२७

अपविध्य वैदिकानि कर्माण्युभयतः परिच्छिन्ना मध्यमं पदं संश्लिष्यामह इति वदन्तः ॥२८ ऐकाश्रम्यं त्वाचार्या अप्रजनत्वादितरेषाम् ॥२६ तत्रोदाहरन्ति ॥३० प्राह्णादिई वै कपिलो नामाऽऽसुर आस स एतान्भेदां-श्चकार देवैः स्पर्धमानस्तान्मनीषी नाऽऽद्वियेत ॥३१ अदृष्टत्वात् ॥३२ ये चत्वार इति ॥३३ कर्मवाद ऐष्टिकपाशुकसौमिकदार्विहोमाणाम् ॥३४ तदेषाऽभ्यन्च्यते ॥३४ एष नित्यो महिमा ब्राह्मणस्य न कर्मणा वर्धते कनीयान्। तस्यैवाऽऽत्मा पद्वित्तं विदित्वा न कर्मणा लिप्यते पापकेनेति ॥३६ स त्रूयात् ॥३७ येन सूर्यस्तपति तेज्सेद्धः पिता पुत्रेण पितृमान्योनियोनौ। नावेद्विन्मनुते तं बृहन्तम्। सर्वानुसुमात्मानं संपराय इति ॥३८ इमे ये नार्वाङ्न परश्चरन्ति न ब्राह्मणसो न सुतेकरासः। त एते वाचमभिपद्य पापया सिरीस्तन्त्रं तन्वते

अप्रजज्ञाय इति ॥३६

प्रजाभिरग्ने अमृतत्वमश्याम् ४० जायमानो वे ब्राह्मणिस्मिम्न् णैर्वा जायते ब्रह्मचर्येणिष्म्यो यज्ञेन देवेभ्यः प्रजया पितृभ्य इति ॥४१ एवमृणसंयोगादीन्यसंख्येयानि भवन्ति ॥४२ त्रयीं विद्यां ब्रह्मचर्यं प्रजातिं श्रद्धां तपो यज्ञमनुप्रदानम् ॥४३ य एतानि कुर्वते तैरित्सह स्मो रजो भूत्वा ध्वंसते-ऽन्यत्प्रशंसन्निति ॥४४

इति द्वितीयप्रश्ने षष्ठोऽध्यायः।

अथ द्वितीयप्रश्ने सप्तमोऽध्यायः।

शालीनयायावराणामात्मयाजिनां प्राणाहुति व्याख्यानम्।

अथ शालीनयायावराणामात्मयाजिनां प्राणाहुतीर्व्या-रूयास्यामः ॥१

सर्वावश्यकावसाने संसृष्टोपलिप्ते देशे प्राङ्गुख उपविश्य तद्भतमाह्रियमाणं भूर्भुवः स्वरोमिति उपस्थाय वाचं यच्छेत्॥२

न्यस्तमन्नं महाव्याहृतिभिः प्रदक्षिणमुद्कं परिविच्य सव्येन पाणिना विमुञ्जन्नमृतोपस्तरणमसीति पुरस्ताद्पः पीत्वा पञ्चान्नेन प्राणाहुतीर्जुहोति ॥३

प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि शिवो मा विशाप्रदाहाय प्राणाय स्वाहेति ॥४

पञ्चान्नेन प्राणाहुतीहु त्वा तूष्णी भूयो व्रतयेत्प्रजापति मनसा ध्यायनान्तरा वाचं विसृजेत् ॥५

ऽध्यायः]शालीनयायावराणामात्मयाजिनांप्राणाहुतिव्याख्यानम्१८३१

यद्यन्तरा वाचं विसृजेत्, भूर्भुवः स्वरोमिति जपित्वा पुनरेव भुङ्जीत ॥६ त्वक्केशनखकीटाखुपुरीषाणि दृष्ट्रा तं देशं पिण्डसुद्-धृत्याद्भिरभ्युक्ष्य भस्मावकीर्य पुनरद्भिः प्रोक्ष्य वाचा च प्रशस्तमुपयुञ्जीत ॥७ अथाप्युदाहरन्ति ॥८ आसीनः प्राङ्मुखोऽश्नीयाद्वाग्यतोऽन्नमकुत्सयन्। अस्कन्द्यंस्तन्मनाश्च भुत्तवा चाहिसुपखुशेदिति ॥६ सर्वभक्ष्यापूपकन्दमूलफलमांसानि दन्तैनविद्येत्।।१० नातिसुहितोऽसृतापिधानमसीत्युपरिष्टाद्पः पीत्वा-ऽऽचान्तो हृद्यदेशमिभमृशति ॥११ प्राणानां प्रन्थिरसि रुद्रो मा विशान्तकस्तेनान्नेना-ऽऽप्यायस्वेति ॥१२ पुनराचम्य दक्षिणे पादाङ्कुच्ठे पाणी निस्नावयति ॥१३ अङ्गुष्टमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं च समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणाति विश्वभुगिति ॥१४ हुतानुमन्त्रणमृध्वेहस्तः समाचरेत् ॥१४ श्रद्धायां प्राणेन निविश्यामृतं हुतं प्राणमन्नेनाऽऽप्याय-स्वेति पश्च ॥१६ ब्रह्मणि म आत्माऽसृतत्वायेत्यात्मानम् ॥१७ अक्षरेण चाऽऽत्मानं योजयेत्।।१८ सर्वक्रतुयाजिनामात्मयाजी विशिष्यते ॥१६ अथाप्युदाहरन्ति ॥२०

यथा हि तूलसैषीकम्।।२१ यथा हि तूलमैषीकमग्नौ प्रातं पृदीप्यते। तद्वत्सर्वाणि पापानि द्द्यन्ते ह्यात्मयाजिनः ॥२२ केवलाघो भवति केवलादी मोघमन्नं विन्दत इति ॥२३ स एवमेवाहरहः सायं प्रातर्जुहुयात् ॥२४ अद्भिर्वा सायम्।।२५ अथाप्युदाहरन्ति।।२६ अप्रे भोजयेद्तिथीनन्तर्वत्नीरनन्तरम्। बालवृद्धांस्तथा दीनान्व्याधितांश्च विशेषतः ॥२७ अद्त्वा तु य एतेभ्यः पूर्वं भुङ्क्ते यथाविधि । भुज्यमानो न जानाति न स भुङ्क्ते स भुज्यते ॥२८ पितृदैवतभृत्यानां मातापित्रोर्गुरोस्तथा। वाग्यतो विघसमश्नीयादेवं धर्मो विधीयत इति ॥२६ अथाप्युदाहरन्ति ॥३० अष्टी त्रासा मुनेर्भक्ष्याः षोडशारण्यवासिनः। द्वात्रिंशतं गृहस्थस्यापरिमितं ब्रह्मचारिणः ॥३१ आहिताग्निरनड्वांश्च ब्रह्मचारी च ते त्रयः। अश्नन्त एव सिध्यन्ति नैषां सिद्धिरनश्नतामिति ॥३२ गृहस्थो ब्रह्मचारी वा योऽनश्नंस्तु तपश्चरेत्। प्राणाग्निहोत्रलोपेन अवकीर्णी भवेतु सः ॥३३ अन्यत्र पृायश्चित्तात्पृायश्चित्ते तदेव विधानम् ॥३४

अथाप्युदाहरन्ति । १६६ अन्तरा प्रातराशं च सायमाशं तथैव च । सदोपवासी भवति यो न भुङ्क्ते कदाचन । १३६ प्राणाग्निहोन्नमन्त्रांस्तु निरुद्धे भोजने जपेत् । न्नेताग्निहोन्नमन्त्रांस्तु द्रव्यालाभे यथा जपेदिति । १३७ एवमेवाऽऽचरन्त्रह्मभूयाय कल्पते न्नह्मभूयाय कल्पत इति ।। इति द्वितीयपूश्ने सप्तमोऽध्यायः ।

अथ द्वितीयपृश्नेऽष्टमोऽध्यायः।
अथ श्राद्धाङ्गाग्नोकरणादि विधिनिरूपणम्।
पित्र्यमायुत्र्यं स्वर्ग्यं यशस्यं पुष्टिकर्म च ॥१
त्रिमधुस्त्रिणाचिकेतस्त्रिसुपणः पञ्चाग्नः षडङ्गविच्छीर्षको ज्येष्ठसामकः स्नातक इति पङ्क्तिपावनाः॥२
तदभावे रहस्यवित्॥३
ऋचो यजूषि सामानीति श्राद्धस्य महिमा॥४
तस्मादेवंविदं सपिण्डमप्याशयेत्॥५
राक्षोध्नानि च सामानि स्वधावन्ति यजूषि च ।
मध्यचोऽथ पवित्राणि श्राबयेदाशयञ्छनैः॥६
चरणवतोऽन्चानान्योनिगोत्रमन्त्रासंबन्धाञ्छुचीन्मन्त्रतस्त्र्यवरानयुजः पूर्वेद्यः पातरेव वा निमन्त्र्य सद्भीप-

इन्तेष्वासनेषु प्राङ्मुखानुपवेशयत्युद्ङ्मुखान्वा ॥७ अथैनांस्तिलमिश्रा अपः पृतिप्राह्य गन्धैमल्यैश्वालंकत्याग्नौ करिष्यामीत्यनुज्ञातोऽरिभुपसमाधाय संपरिस्तीयांग्नि मुखात्कृत्वाऽन्नस्यैव तिस्र आहुतीर्जुहोति ॥८ सोमाय पितृपीताय स्वधा नमः स्वाहा ॥६ यमायाङ्गिरस्वते पितृमते स्वधा नमः स्वाहा ॥१० अग्नये कव्यवाहनाय स्विष्टकृते स्वधा नमः स्वाहेति ॥११ तच्छेषेणान्नमभिघार्यात्रस्यैता एव तिस्रो जुहुयात् ॥१२ वयसां पिण्डं दद्यात् ॥१३ वयसां हि पितरः पृतिमया चरन्तीति विज्ञायते ॥१४ अथेतरत्साङ्कुष्ठेन पाणिनाऽभिमृशति ॥१५ ष्ट्रियवीसमन्तस्य तेऽग्निरूपद्रष्ट्रचंस्ते महिमा दत्तस्या-प्रमादाय पृथिवी ते पात्रं द्यौरिपधानं ब्रह्मणस्त्वा मुखे जुहोमि ब्राह्मणानां त्वा विद्यावतां प्राणापानयोर्जुहोम्य-क्षितमसि मा पितृणां क्षेष्ठा अभुत्रामुष्यिह्यों क इति।।१६ अन्तरिक्षसमन्तस्य ते वायुक्तपश्रोता यजूषि ते महिमा दत्तस्याप्रमादाय पृथिवी ते पात्र द्यौरिपधानं ब्रह्मणस्त्वा मुखे जुहोमि ब्राह्मणानां त्वा विद्यावतां प्राणापानयो-र्जुहोम्यक्षितमसि मा पितामहानां क्षेष्ठा अमुत्रामुष्मि-ह्रोँक इति ॥१७

चुसमन्तस्य त आदित्योऽनुख्याता सामानि ते महिमा दत्तस्याप्रमादाय पृथिवी ते पात्रं चौरपिधानं ब्रह्मणस्त्वा

मुखे जुहोमि ब्राह्मणानां त्वा विद्यावतां प्राणापानयो-र्जुहोम्यक्षितमसि मा प्रपितामहानां क्षेष्ठा असुत्राः मुष्मिल्लों क इति ॥१८ अथ वै भवति ॥१६ अथ वै भवति ॥२० अग्नौकरणशेषेण तदन्नमभिघारयेत्। निरङ्कष्ठं तु यहत्तं न तत्त्रीणाति वै पितृन्।।२१ उभयोः शाखयोर्मुक्तं पितृभ्योऽऽन्नं निवेदितम्। तदन्तरमुपासन्तेऽसुरा वै दुष्टचेतसः।।२२ यातुधानाः पिशाचाश्च प्रतिलुम्पन्ति तद्धविः। तिलादाने हादायादास्तथा क्रोधवशेऽसुराः ॥२३ काषायवासा यान्कुरुते जपहोसप्रतिप्रहान्। न तद्देवगमं अवति हन्यकन्येषु यद्धविः ॥२४ यच दत्तमनङ्कुष्ठं यचैव प्रतिगृह्यते। आचामति च यस्तिष्ठन्न स तेन समृध्यत इति ॥२५ आद्यन्तयोरपां प्रदानं सर्वत्र ॥२६ जपप्रभृति यथाविधानम्।।२७ शेषसुक्तमष्टकाहोमे ॥२८ द्दी दैवे पितृकार्ये त्रीनेकैकसुभयत्र वा। भोजयेत्सुसमृद्धोऽपि न प्रसङ्येत विस्तरे ॥२६ सिक्यां देशकाली च शौचं ब्राह्मणसंपदम्। पञ्चैतान्विस्तरो हन्ति तस्मात्तं परिवर्जयेत् ॥३० उरस्तः पितरस्तस्य वामतश्च पितामहाः। दक्षिणतः प्रपितामहाः पृष्ठतः पिण्डतर्कका इति ॥३१ इति द्वितीयप्रश्नेऽष्टमोऽध्यायः।

अथ द्वितीयपूरने नवमोऽध्यायः। अथ सत्पुत्रप्रशंसावर्णनम्।

प्रजाकासस्योपदेशः ॥१ प्रजनननिमित्ता समाख्येति ॥२

अश्विनावूचतुः ॥३

आयुषा तपसा युक्तः स्वाध्यायेज्यापरायणः ।

प्रजामुत्पाद्येद्युक्तः स्वे स्वे वर्णे जितेन्द्रियः ॥४

ब्राह्मणस्यर्णसंयोगिस्निभिर्भवति जन्मतः ।

तानि मुच्यात्मवान्भवति विमुक्तो धर्मसंशयात् ॥६

स्वाध्यायेन श्रृषीन्पूज्य सोमेन च पुरंदरम् ।

प्रजया च पितॄन्पूर्वाननृणो दिवि मोदते ॥६

पुत्रेण लोकाञ्जयति पौत्रेणाऽऽनन्त्यमश्नुते ।

अथ पुत्रस्य पौत्रेण नाकमेवाधिरोहतीति ॥७

विज्ञायते च ॥८

जायमानो वै ब्राह्मणिसिभिर्म्भ णवा जायते ब्रह्मचर्येणिकिंग्यो

यज्ञेन देवेभ्यः प्रजया पितृभ्य इति ॥६

एवमृणसंयोगं वेदो दर्शयति ॥१०

सत्पुत्रमुत्पाद्याऽऽत्मानं तारयति ॥११

सत्पुत्रमधिगच्छानस्तारयत्येनसो भयात् ॥१२ तस्मात्प्रजासंतानमुस्पाद्य फलमवाप्नोति ॥१३ तस्माद्यव्यान्प्रजामुत्पाद्येदौषधमन्त्रसंयोगेन ॥१४

सप्तावरान्सप्त पूर्वान्यडन्यानात्मसप्तमान्।

तस्योपदेशः श्रुतिसामान्येनोपदिश्यते ॥१५ सर्ववर्णभ्यः फलवस्वादिति फलवस्वादिति ॥१६

इति द्वितीयप्रश्ने नवमोऽध्यायः।

अथ १ हेतीयप्रश्ने दृशमोऽध्यायः। अथ संन्यासविधिवर्णनम्।

अथातः संन्यासिविधि व्याख्यास्यामः ॥१ सोऽत एव ब्रह्मचर्यवान्प्रव्रजतीत्येकेषाम् ॥२ अथ शालीनयायावराणामनपत्यानाम् ॥३ विधुरो वा प्रजाः स्वधर्मे प्रतिष्ठाप्य वा ॥४ सप्तत्या उद्ध्वं संन्यासमुपदिशन्ति ॥५ वानप्रस्वस्य वा कमीविरामे ॥६

एष नित्यो महिमा ब्राह्मणस्य न कर्मणा वर्धते नो कनीयान्। तस्यैवाऽऽत्मा पद्वित्तं विदित्वा न कर्मणा छिप्यते पापकेनेति॥७

अपुनभवं नयतीति नित्यः ॥८
महदेनं गमयतीति महिमा ॥६
केशश्मश्रुलोमनखानि वापयित्वोपकल्पयते ॥१०
यष्ट्यः शिक्यं जलपवित्रं कमण्डलुं पात्रमिति ॥११
एतत्समादाय प्रामान्ते प्रामसीमान्तेऽग्न्यगारे वाऽऽज्यं
पयो दधीति त्रिवृत्प्राश्योपविशेत् ॥१२

अपो वा ॥१३

ओं भूः सावित्रीं प्रविशामि तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥१४ ओं भुवः सावित्रीं प्रविशामि भर्गो देवस्य धीमहि ॥१५ ओं स्वः सावित्रीं प्रविशामि धियो यो नः प्रचोदयादिति ॥१६ पच्छोऽर्धर्चशस्ततः समस्तया च व्यस्तया च ॥१७ आश्रमादाश्रममुपनीय ब्रह्मपूतो भवतीति विज्ञायते ॥१८ अथाप्युदाहरन्ति ॥१६ आश्रमाद्।श्रमं गत्वा हुतहोसो जितेन्द्रियः। भिक्षाबलिपरिश्रान्तः पश्चाद्भवति भिक्षुक इति ॥२० स एष भिक्षुरानन्त्याय।।२१ पुराऽऽदित्यस्यास्तमयाद्गाहंपत्यमुपसमाधायान्व-हार्यपचनमाहृत्य ज्वलन्तमाहवनीयमुद्घृत्य गार्ह-पत्य आज्यं विलाप्योत्पूय स्नुचि चतुर्गृहीतं गृहीत्वा समिद्वसाहवनीये पूर्णांहुतिं जुहोति, ओं स्वाहेति।।२२ एतद्ब्रह्मान्वाधानमिति विज्ञायते॥२३ अथ सायं हुतेऽग्निहोत्र उत्तरेण गाईपत्यं तृणानि संस्तीर्य तेषु द्वंद्वं न्यि पात्राणि साद्यित्वा दक्षि-णेनाऽऽहवनीयं ब्रह्मायतने दर्भान्संस्तीर्य तेषु कृष्णा-जिनं चान्तर्धायैतां रात्रि जागर्ति ॥२४ य एवं विद्वान्त्रह्मरात्रिमुपोष्य त्राह्मणोऽग्नीन्समारोप्य प्रमीयते सर्वं पाप्मानं तरित तरित ब्रह्महत्याम् ॥२५ अथ ब्राह्मे मुहूर्त उत्थाय काल एव प्रार्रिप्तिहोत्रं जुहोति ॥२६

अथ पृष्ट्यां स्तीर्त्वाऽपः प्रणीय वैश्वानरं द्वाद्शकपालं निर्वपति सा प्रसिद्धे ष्टिः संतिष्ठते ॥२७ आह्वनीयेऽग्निहोत्रपात्राणि प्रक्षिपत्यमृण्मयान्य-नश्ममयानि ॥२८ गाईपत्येऽरणी ॥२६ भवतं नः समनसाविति आत्मन्यग्नीन्समारोपयते ॥३० या ते अग्ने यज्ञिया तनूरिति त्रिखिरेकैकं समाजिव्यति ॥३१ अथान्तर्वेदि तिष्ठन्, ओं भूर्भुवः स्वः संन्यस्तं मया संन्यस्तं मया संन्यस्तं मयेति त्रिरुपांशू त्वा त्रिरुचैः ॥३२ त्रिषत्या हि देवा इति विज्ञायते ॥३३ अभयं सर्वभूतेभ्यो मत्त इति चापां पूर्णमञ्जलिं निनयति॥३४ अथप्युदाहरन्ति ॥३४ अभयं सर्वभूतेभ्यो द्त्वा यश्चरते मुनिः। न तस्य सर्वभूतेभ्यो भयं चापि ह जायत, इति ॥३६ स वाचंयमो भव्वति ॥३७ सखा मा गोपायेति दण्डमाद्त्रे ॥३८ यद्स्य पारे रजस इति शिक्यं गृह्वाति ॥३६ येन देवाः पवित्रेणेति जलपवित्रं गृह्वाति ॥४० येन देवा ज्योतिष ध्वा उदायन्निति कमण्डलुं गृह्वाति ॥४१ सप्तव्याहतिभिः पात्रं गृह्णाति ॥ १२ यष्टयः शिक्यं जलपवित्रं पात्रमित्येतत्समाद्य यत्राऽऽपस्तद्गत्वा स्नात्वाऽप आचम्य सुरभिमत्या-ऽब्लिङ्गाभिर्वारणीभिर्हिरण्यवर्णाभिः पावमानीभि-

रिति मार्जियत्वाऽन्तर्जलगतोऽघमर्षणेन षोडश प्राणा-यामान्धारियत्वोत्तीर्य वासः पीडियत्वाऽन्यत्प्रयतं वासः परिधायाऽप आचम्य, ओं भूर्भुवः स्वरिति जलपवित्रमादाय तर्पयति ॥४३ ओं भूरतर्पयाम्यों भुवस्तर्पयाम्यों स्वस्तर्पयाम्यों महस्तर्पयाम्यों जनस्तर्पयाम्यों तपस्तर्पयाम्यों सत्यं तर्पयामिति ॥४४ देववत्पितृभ्योऽञ्जलिमादाय, ओं भूः स्वधों भुवः स्वधों

स्वः स्वधों भूर्भुवः स्वर्महर्नम इति ॥४४ अथोदुत्यं चित्रमिति द्वाभ्यामादित्यमुपतिष्ठते ॥४६ ओमिति ब्रह्म ब्रह्म वा एष ज्योतिर्य एष तपत्येष वेदो य एष तपति वेद्यमेवैतद्य एषं तपति एवमेवैष आत्मानं तर्पयत्यात्मने नमस्करोति ॥४७ आत्मा ब्रह्मात्मा ज्योतिः ॥४८

सावित्रीं सहस्रकृत्व आवर्तयेच्छतकृत्वोऽपरिमितकृत्वो वा ॥४६ ओं भूर्भु वः स्वरिति जलपवित्रमादायापो गृह्णाति ॥५० न चात अर्ध्वमनुद्धृताभिरद्भिरपरिस्नुताभिरपरिपृताभि-र्वाऽऽचामेत्।।५१ न चात डर्ष्यं शुक्रवासो धारयेत्।।५२

एकदण्डी त्रिदण्डी वा ॥५३ अथेमानि व्रतानि भवन्ति ॥५४ अहिंसा सत्यमस्तैन्यं मैथुनस्य च वर्जनम्। त्याग इत्येत्र पञ्चेवोपत्रतानि भवन्ति (हि) ॥५५

अक्रोधो गुरुशुश्रूषाऽप्रमादः शौचमाहारशुद्धिश्चेति ॥५६ अथ भैक्षचर्या ॥५७ ब्राह्मणानां शालीनयायावराणामपवृत्ते वैश्वदेवे भिक्षां लिप्सेत भवत्पूर्वां प्रचोदयेत् ॥६८ गोदोहमात्रमाकाङ्क्षेत् ॥५६ अथ भैक्षचर्यादुपावृत्य शुचौ देशे न्यस्य हस्तपादा-न्प्रक्षाल्याऽऽदित्यस्याम् निवेद्येत् ॥६० उदुरयं चित्रमिति ब्रह्मणे निवेद्यते ब्रह्मजज्ञानमिति विज्ञायते ॥६१ आधानप्रभृति यजमान एवाग्नयो भवन्ति तस्य प्राणो गाईपत्योऽपानोऽन्वाहार्यपचनो व्यान आह्वनीय उदानसमानौ सभ्यावसथ्यौ पश्च वा एतेऽग्नय आत्मस्था आत्मन्येव जुरोति स एष आत्मयज्ञ आत्मनिष्ठ आत्मप्रतिष्ठ आत्मानं क्षेमं नयतीति विज्ञायते ॥६२ भूतेभ्यो द्यापूर्वं संविभड्य शेषमद्भिः संस्पृश्योषध-वत्प्राश्नीयात् ॥६३ प्राश्याप आचम्य ज्योतिष्मत्याऽऽदित्यमुपतिष्ठते उद्वयं तमसस्परीति ॥६४ वाङ्म आसन्नसोः प्राण इति जपित्वा ॥६५ अयाचितमसंक्लृप्तमुपपन्नं यहच्छया । आहारसात्रं भुज्जीत केवलं प्राणयात्रिकमिति ॥६६

अथा युदाहरित ॥६७
अष्टी प्रासा मुनेर्भक्ष्याः घोडशारण्यवासिनः ।
द्वात्रिशतं गृहस्थस्यापरिमितं ब्रह्मचारिणः ॥६८
भेक्षं वा सर्ववर्णेभ्य एकान्नं वा दिजातिषु ।
अपि वा सर्ववर्णेभ्यो न चैकान्नं दिजातिष्वित ॥६६
अथ यत्रोपनिषद्माचार्या ब्रुवते तत्रोदाहरित ॥७०
स्थानमौनवीरासनसवनोपस्पर्शनचतुर्थषष्टाष्टमकालव्रतयुक्तस्य कणपिण्याकयावकद्धिपयोव्रतत्वं चेति ॥७१
तत्र मौनेयुक्तस्त्रेविद्यवृद्धराचार्येमुंनिभिरन्यैवाऽऽश्रमिभिवेहुश्रुतैर्दन्तान्संधायान्तर्मुख एव यावद्र्थं संभाषीत न
यत्र लोपो भवतीति विज्ञायते ॥७२

स्थानमौनवीरासनानामन्यतमेन संप्रयोगो न त्रयं संनिपातयेत् ॥७३

यत्र गतश्च यावन्सात्रमनुव्रतयेदापत्सु न यत्र छोपो भवतीति विज्ञायते ॥७४

स्थानमौनवीरासनसवनोपस्पर्शनचतुर्थषष्टाष्टमकालव्रत-युक्तस्य ॥७५

अष्टौ तान्यव्रतःनानि आपो मूळं घृतं पयः। हविर्वाह्मणकाम्या च गुरोर्वचनमौषधमिति॥७६ सायं प्रातरिव्रहोत्रमन्त्राञ्जपेत्॥७७

वारुणीभिः सार्यं संध्यासुपस्थाय मेंत्रीभिः प्रातः ॥७८

अनिप्ररित्तेकेतः स्याद्शर्माऽशरणो मुनिः ।

भैक्षार्थी प्राममिन्वच्छेत्स्वाध्याये वाचमुत्सृजेदिति ॥७६
विज्ञायते च ॥७६
परिमिता वा ऋचः परिमितानि सामानि परिमितानि
यज्ञंष्यथैतस्यैवान्तो नास्ति यद्ब्रह्म तत्प्रतिगृणत
आचक्षीत स प्रतिगर इति ॥८१
एवमेवैष आ शरीरिवभोक्षणाद्वृक्षमृिक्तो वेदसंन्यासी ॥८२
वेदो वृक्षस्तस्य मूलं प्रणवः प्रणवात्मको वेदः ॥८३
प्रणवं ध्यायेत् ॥८४
प्रणवो ब्रह्मभूयाय कलपत इति होवाच प्रजापितः ॥८५
सप्तव्याहृतिभित्रह्मभाजनं प्रक्षालयेदिति ॥८६
इति द्वितीयपृश्ने दशमोऽध्यायः ।

[एकदण्डी त्रिदण्डी वा ॥१

अथातः संन्यासविधि व्याख्यास्यामः ॥२
प्रजाकामस्योपदेशः ॥३
अथ वै भवत्यग्रीकरणशेषेण पित्र्यमायुष्यम् ॥४
यथा हि त्ल्यैषीकम् ॥६
अथ शालीनयायावराणाम् ॥६ अथेमे पश्च महायज्ञाः ॥७
अथ प्राचीनावीती ॥८ अग्निः प्रजापतिः ॥६
अथ हस्तौ प्रक्षाल्य ॥१०

अथातः सन्ध्योपासनविधि व्याख्यास्यामः ॥११
न पिण्डशेषम् ॥१२ तपस्यवगाहनम् ॥१३
अन्नाह्मणस्य शारीरो दण्डः ॥१४
नित्योदकी नित्ययज्ञोपवीती ॥१५ अथ पतनीयानि ॥१६
अथातः प्रायश्चित्तानि ॥१७]
कोष्ठान्तर्गतो ग्रन्थ एतत्प्रश्नगतप्रथमादि दशमान्तः ध्यायस्थादिममध्यमवाक्यानां व्युक्तमेण
परिगणनात्मक इतिवोध्यम् ॥
इति द्वितीय प्रश्नः ॥

अथ तृतीयः प्रश्नः । तत्र प्रथमोऽध्यायः ।

अथ शालीनयायावरादीनां धर्मनिरूपणम् ।
अथ शालीनयायावरचक्रचरधर्मकाह्मिणां नवभिर्मृ तिभिर्वर्तमानानाम् ॥१ तेषां तहर्तनाद्वृत्तिरित्युच्यते ॥२
शालाश्रयत्वाच्छालीनत्वम् ॥३
वृत्त्या वरया यातीति यायावरत्वम् ॥४
अनुक्रमेण चरणाचक्रचरत्वम् ॥५ ता अनुव्याख्यास्यामः ॥६
प्रनवर्तनी कौद्दाली ध्रुवा संप्रक्षालनी समूहा पालनी
शिलोब्ला कापोता सिद्धे च्लेति नवैताः ॥७

तासामेव वाडन्याडपि दशमी वृत्तिर्भवति ॥८ आ नववृत्तेः ॥६ केशश्मश्रुलोमनखानि वापयित्वोकल्पयते कृष्णाजिनं कमण्डलुं यष्टिं वीवधं कुतपहारमिति ॥१० त्रैधातवीयेनेष्ट्रा प्रस्थास्यति वैश्वानर्या वा ॥११ अथ प्रातरुदित आदित्ये यथासूत्रमग्नीन्प्रज्वाल्य गाईपत्य आज्यं विलाप्योत्पूय सुक्सुवं निष्ट्रप्य संमृज्य स्नुचि चतुर्गृहीतं गृहीत्वाऽऽहवनीये वास्तोष्पतीयं जुहोति ॥१२ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मानिति पुरोनुवाक्यासनूच्या १३ वास्तीष्पते शग्मया संसदा त इति याज्यया जुहोति ॥१3 सर्व एवाऽऽहिताग्निरित्येके ॥१४ यायावर इत्येके ॥१५ निर्गत्य प्रामान्ते प्रामसीमान्ते वाऽवतिष्ठते तत्र कुटीं मठं वा करोति कृतं वा प्रविशति।।१६ **कु**ष्णाजिनादीनामुपक्लप्तानां यस्मिन्नर्थे येन येन यत्त्रयोजनं तेन तेन तत्कुर्यात्।।१७ प्रसिद्धमत्रीनां परिचरणं प्रसिद्धं दर्शपूणमासाभ्यां यजनं प्रसिद्धः पञ्चानां महतां यज्ञानामनुप्रयोग उत्पन्नानामी-षधीनां निर्वापणं दृष्टं भवति ॥१८ विश्वेभ्यो देवेभ्यो जुष्टं निर्वपामीति वा तूष्णीं वा ताः संस्कृत्य साद्यति।।१६ तस्याध्यापनयाजनप्रतिप्रहा निवतन्तेऽन्ये च यज्ञक्रतव इति।।२० हिवष्यं च व्रतोपायनीयं दृष्टं भवति ॥२१

तद्यथा सर्पिर्मिश्रं दिधिमिश्रमक्षारलवणमिपिशितमपर्युषितम् ॥२२ ब्रह्मचर्यमृतौ वा गच्छिति ॥२३ पर्वणि पर्वणि केशश्मश्रुलोमनखवापनं शौचिविधिश्च ॥२४ अथाप्युदाहरन्ति ॥२४

श्रूयते द्विविधं शौचं यच्छिष्टैः पर्युपासितम् । बाह्यं निर्लेपनिर्गन्धमन्तः शौचमहिंसकम् ॥२६ अद्भिः शुध्यन्ति गात्राणि बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति । अहिंसया च भूतात्मा मनः सत्येन शुध्यतीति ॥२७ इति तृतीयप्रश्ने प्रथमोऽध्यायः ।

अथ तृतीयप्रश्ने द्वितीयोऽध्यायः। अथ षण्निवर्त्तन्यादिशृत्तीनां स्वरूपकथन वर्णनम्।

य(अ)थो एतत्विनवर्तनीति ॥१
षडेव निवर्तनानि निरुपहतानि करोति ॥२
स्वामिने भागमुत्सृजत्यनुज्ञातं वा गृह्णाति ॥३
प्राक्ष्पातराशात्कवीं स्थाद्स्यूतनासिकाभ्यां समुद्धाभ्यामतु
दक्षार्था मुहुर्मुहुरभ्युच्छन्दयन् ॥४
एतेन विधिना विनवर्तनानि करोतीति पिनवर्तनी ॥५
कौहालीति ॥६
जलाभ्याशे कुहालेन वा फालेन वा तीक्ष्णकाष्टेन वा खनति

Sध्याय:] षण्निवर्तण्यादिवृत्तीनां स्वरूपकथनवर्णनम् । १८४७

बीजान्यावपति ॥७ कन्दमूलफलशाकौषधीर्निष्पाद्यति ॥८ कुदालेन करोतीति कौदाली ॥६ ध्रुवया वर्तमानः शुक्लेन वाससा शिरो वेष्टयति भूत्यै त्वा शिरो वेष्टयामीति॥१० ब्रह्मवर्चसिमिति (मसि) ब्रह्मवर्चसाय खेति कृष्णाजिन-मादत्ते ॥११ अब्लिङ्गाभिः पवित्रम् ॥१२ बलमसि बलाय त्वेति कमण्डलुम् ॥१३ धान्यमसि पुष्टेच खेति वीवधम् ॥१४ सखा मा गोपायेति दण्डम् ॥१५ अथोपनिष्क्रम्य व्याहृतीर्जपित्वा दिशामनुमन्त्रणं जपति ॥१६ पृथिवी चान्तरिक्षं च चौश्च नक्षत्राणि च या दि्राः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च पान्तु मां पथि देवता इति ॥१७ मानस्तोकीयं जिपत्वा ग्रामं प्रविश्य गृहद्वारे गृहद्वार आत्मानं वीवधेन सह दर्शनात्संदर्शनीत्याचक्षते ॥१८ वृत्ते वृत्ते रवार्तायां तयैव तस्य ध्रुवं वर्तनाद्ध्रुवेति परिकीर्तिता ॥१६ संपूक्षालनीति ॥२० उत्पन्नानामोषधीनां पृक्षेपणम् ॥२१ निक्षेपणं नास्ति निचयो वा ॥२२ भाजनानि संप्रक्षाल्य न्युब्जतीति संप्रक्षालनी ॥२३ समूहेति ॥२४ अवारितस्थानेषु पथिषु वा क्षेत्रेषु वाऽप्रतिहतावकाशेषु वा यत्र यत्रीषधयो विद्यन्ते तत्र तत्र समूहन्या समुद्य ताभिर्दर्तयतीति समृहा ॥२४

पालनीति ॥२६ अहिंसिकेत्येवेदमुक्तं भवति ॥२७
तुषिवहीनांस्तण्डुलानिच्छति सज्जनेभ्यो बीजानि वा
पालयतीति पालनी ॥२८ शिलोब्छति ॥२६
अवारितस्थानेषु पथिषु वा क्षेत्रेषु वाऽप्रतिहतावकाशेषु वा
यत्र यत्रौषधयो विद्यन्ते तत्र तत्रैकैकं कणिशमुब्छियत्वा
काले काले शिलेवेत्यतीति शिलोब्छा ॥३० कापोतेति ॥३१
अवारितस्थानेषु पथिषु वा क्षेत्रेषु वाऽप्रतिहतावकाशेषु वा
यत्र यत्रौषधयो विद्यन्ते तत्र तत्राङ्गुलिभ्यामेकैकामोषधिमुब्छियत्वा संदर्शनात्कपोतवदिति कापोता ॥३२
सिद्धं च्छेति ॥३३

वृत्तिभिः श्रान्तो वृद्धत्वाद्धातुक्षयाद्वा सज्जनेभ्यः सिद्धमन्न मिन्द्रतीति सिद्धे न्द्रा ॥३४ तस्याऽऽत्मसमारोपणं विद्यते संन्यासिवदुपचारः पवित्रकाषायवासोवर्जम् ॥३५ वान्याऽपि वृक्षलतावल्ल्यौषधीनां च तृणौषधीनां च श्यामाकजर्तिलादीनां वन्याभिर्वत्यतीति वान्या ॥३६ अथाप्युदाहरन्ति ॥३७

मृगैः सह परिस्पन्दः संवासस्तेभिरेव च । तैरेव सहशी वृत्तिः प्रत्यक्षं स्वर्गलक्षणमिति ॥३८ इति तृतीयप्रश्ने द्वितीयोऽध्यायः।

Sध्यायः]पचमानकापचमानकभेदेन वानप्रस्थस्यद्वैविध्यवर्णनम्१८४**६**

अथ तृतीयप्रश्ने तृतीयोऽध्यायः। पचमानक।पचमानकभेदेन वानप्रखस्य द्वैविध्यवर्णनम्। अथ वानप्रस्मद्वैविध्यम् ॥१ पचमानका अपचमानकाश्चेति ॥२ तत्र पचमानकाः पञ्चविधाः॥३ सर्वारण्यका वैतुषिकाः कन्द्रमूलफलभक्षाः शाकभक्षाश्चेति ॥४ तत्र सर्वारण्यका नाम द्विविधा द्विविधमारण्यमाश्रयन्त इन्द्रावसिक्ता रेतोवसिक्ताश्चेति ॥८ तत्रेन्द्रावसिक्ता नाम वहीगुल्मलतारृक्षाणामानयित्वा श्रपयित्वा सायं प्रातरप्रिहोत्रं हुत्वा यत्यतिथित्रतिभ्यश्च दस्वाऽथेतरच्छे(शे)षभक्षाः ॥६ रेतोवसिक्ता नाम मासं व्याघ्रवृकश्येनादिभिरन्य-तमेन वा हतमानियत्वा अपियत्वा सायं प्रातरिप्र-होत्रं हुत्वा यत्यतिथित्रतिभ्यश्च दत्वाऽथेतर 🦻 (शे)-षभक्षाः ॥७ वैतुषिकास्तुषधान्यवर्जं तण्डुलानानयित्वा श्रपयित्वा

वैतुषिकास्तुषधान्यवर्जं तण्डुलानानयित्वा श्रपयित्वा सायं प्रातरप्रिहोत्रं हुत्वा यत्यति दिन्नतिभ्यश्च दत्त्वा-ऽथेतरच्छे(रो)षभक्षाः ।।८

कन्दमूलफलशाकभक्षाणामप्येवमेव ।:६ पञ्चेवापचमानकाः ॥१०

उन्मज्ज हाः प्रवृत्ताशिनो मुखेनाऽऽदायिनस्तोयाहारा वायुभक्षाश्चेति ॥११

तत्रोन्मज्जका नाम छोहाश्मकरणवर्जम् (१) ॥१२ हस्तेनाऽऽदाय प्रवृत्ताशिनः ॥१३ मुखेनाऽऽदायिनो मुखेनाऽऽददते ॥१४ तोयाहाराः केवलं तोयाहाराः ॥१५ वायुभक्षा निराहाराश्चेति ॥१६ वेखानसानां विहिता दश दीक्षाः ॥१७ यः स्वशास्त्रमभ्युपेत्य दण्डं च मौनं चाप्रमादं च ॥१८ वैखानसाः ग्रुध्यन्ति निराहाराश्चेति ॥१६ शास्त्रपरिप्रहः सर्वेषां ब्रह्मवैखानसानाम् ॥२० न दुह्यदंशमशकान्हिमवांस्तापसो भवेत्। वनप्रतिष्ठः संतुष्टश्चीरचर्मजलप्रियः।।२१ अतिथीन्पूजयेत्पूर्वं काले त्वाश्रममागतान्। देवविप्राग्निहोत्रे च युक्तस्तपिस तापसः ॥२२ कुच्छ्रां वृत्तिमसंहार्यां सामान्यां मृगपिक्षिभिः। तदहर्जनसंभारां काषायकटुकाश्रयाम्।।२३ परिगृह्य शुभां वृत्तिमेतां दुर्जनवर्जिताम्। वनवासमुपाश्रिस ब्राह्मणो नावसीदति ॥२४ मृगैः सह परिस्पन्दः संवासस्ते(स्त्वे)भिरेव च। तैरेव सदशी वृत्तिः प्रत्यक्षं स्वर्गलक्षणमिति ॥२५ इति तृतीयप्रश्ने तृतीयोऽध्यायः।

ऽध्यायः] ब्रह्मचारिण अभक्ष्यभक्षणे प्रायश्चित्त वर्णनम् । १८५१

अथ तृतीयप्रश्ने चतुर्थोऽध्यायः।

अथ ब्रह्मचारिण अभक्ष्यभक्षणे प्रायधित वर्णनम्। अथ यदि ब्रह्मचार्यव्रत्यमिव चरेत्मांसं वाऽश्नीया-तिख्यं वोपेयात्सर्वास्वेवाऽऽर्तिष्वन्तराऽगारेऽग्निमुप-समाधाय संपरिश्तीर्याग्निमुखांत्कृत्वाऽथाऽऽज्याहुती-रुपजुहोति ॥१ कामेन कृतं कामः करोति कामायैवेदं सर्वं यो मा कारयति तस्मै स्वाहा॥२ मनसा कृतं मनः करोति मनस एवेदं सर्वं यो मा कारयति तस्मै स्वाहा ॥३ रजसा कृतं रजः करोति रजस एवेदं सर्वं यो मा कारयति तसी स्वाहा ॥४ तमसा कृतं तमः करोति तमस एवेदं सर्वं यो मा कारयंति तस्मै स्वाहा ॥५ पाप्मना कृतं पाप्मा करोति पाप्मन एवेदं सर्वयो मा कार्यति तस्मै स्वाहा ॥६ मन्युना कृतं मन्युः करोति मन्यव एवेदं सर्वं यो मा कारयति तस्मै स्वाहेति।।७ जयप्रभृति सिद्धमा घेनुवरप्रदानात् ॥८ अपरेणारिन कृष्णाजिनेन प्राचीनप्रीवेणोत्तरलोमना प्रावृत्य वसति।।६

व्युष्टायां जघनार्धाद्वात्मानमपद्युष्य तीर्थं गत्वा प्रसिद्धं स्नात्वाऽन्तर्जलगतोऽघमर्षणेन षोडश प्राणा-यामान्धारियत्वाऽप्रसिद्धमाऽऽदित्योपस्थानात्कृत्वा-ऽऽचार्थस्य गृहानेति ॥१० यथाऽश्वमेधावभृथं एवमेवैतद्विजानीयादिति ॥११

इति तृतीयप्रश्ने चतुर्थोऽध्यायः ॥४

अथ त्रतीपप्रश्ने पश्चमोऽध्यायः। अथ अघमर्पणकल्पन्यख्यानवर्णनम्।

अथातः पवित्रातिपवित्रस्याघमर्षणस्य कर्ला व्याख्यामः॥१ तीर्थं गत्वा स्नातः ग्रुचिवासा उद्कान्ते स्थण्डिल-मुद्धृत्य सकृत्किन्नेन वाससा सकृत्पृणेन पाणिना-ऽऽदित्याभिमुखोऽघमर्षणं स्वाध्यायमवीयीत ॥२ प्रातः शतं मध्याह्रे शतमपराह्ये शतमपरिमितं वा ॥३ उदितेषु नक्षत्रेषु प्रसृतयावकं प्राश्नीयात् ॥४ ज्ञानकृतेभ्योऽज्ञानकृतेभ्यश्चोपपातकेभ्यः सप्तरात्रात्प्रमुच्यते ॥५ द्वाद्शरात्राद् श्रूणहननं गुरुतलपगमनं सुवर्णस्तैन्यं सुरापानमिति च वर्जयित्वैकविशतिरात्रात्तान्यपि तरित तान्यपि जयति ॥६

ऽध्यायः]आत्मकृतदुरितोपशमाय प्रसृतयावकस्य हवनविधिव०१८५३

सर्वं तरित सव जयित सर्वंक्रतुफलमवाप्नोति सर्वेषु तीर्थेषु स्नानो भवित सर्वेषु वेदेषु चीर्णव्रतो भवित स सर्वेदेवर्जातो भवत्या चक्षुषः पङ्क्ति पुनाति कर्माणि चास्य सिध्यन्तीति बौधायनः ॥७

इति तृतीयप्रश्ने पञ्चमोऽध्यायः ॥५

अथ तृतीयप्रश्ने षष्टोऽध्यायः।

आत्मृक्ततदुरितोपशमाय प्रसृतयावकस्य हवनविधिवर्णनम्।

अथ कमीभरात्मकृतैर्गुरुमिवाऽऽत्मानं मन्येताऽऽत्मार्थे
प्रसृतयावकं अपयेदुदितेषु नक्षत्रेषु ।।१
न ततोऽग्नौ जुहुयात् ।।२ न चात्र बलिकमं ।।३
अश्रुतं अप्यमाणं श्रुतं चाभिमन्त्रयेत ।।४
यवोऽिस धान्यराजोऽिस वारुणो मधुसंयुतः ।
निर्णोदः सर्वपापानां पित्रमृषिभिः स्मृतम् ।।६
घतं यवा मधु यवा आपो यवा अमृतं यवाः ।
सर्व पुनीथ मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम् ।।६
वाचा कृतं कर्मकृतं मनसा दुविच्चिन्तितम् ।
अलक्ष्मीं काल्रात्रीं च सर्व पुन(नी)थ मे यवाः ।।७
महापातकसंयुक्तं दारुणं राजिकित्विषम् ।
बाल्युद्धमधमं च सर्व पुन(नी)थ मे यवाः ।।८

सुवर्णस्तैन्यमत्रत्यमयाज्यस्य च याजनम्। ब्राह्मणानां परीवादं पुन(नी)थ मे यवाः ॥६ गणानं गणिकानं च शूद्रानं श्राद्धसूतकम्। चौरस्यात्रं नवश्राद्धं सर्वं पुन(नी)थ मे यवा इति ॥१० श्रप्यमाणे रक्षां कुर्यात् ॥११ नमो रुद्राय भूताधिपतये द्यौः शान्ता कृणुष्व पाजः प्रसितिं न पृथ्वीमित्येतेनानुवाकेन ॥१२ ये देवाः पुरःसदोऽग्निनेत्रा रक्षोहण इति पञ्चिभः पर्यायैः॥ मानस्तोके ब्रह्मा देवानामिति द्वाभ्याम् ॥१४ श्रतं च लघ्यश्नीयात्प्रयतः पात्रे निषिच्य ॥१५ ये देवा मनोजाता मनोयुजः सुदक्षा दक्षपितरस्ते नः पान्तु ते नोऽवन्तु तेभ्यो नमस्तेभ्यः स्वाहेति ॥१६ आत्मनि जुहुयात्।।१७ त्रिरात्रं मेधार्थी षड्रात्रं पीत्वा पापक्रच्छुद्धो भवति ॥१८ सप्तरात्रं पीत्वा भ्रूणहननं गुरुतरूपगमनं सुवर्णस्तैन्यं सुरापानमिति च पुनाति ॥१६ एकादशरात्रं पीत्वा पूर्वपुरुषकृतमपि पापं निर्णुदति ॥२० अपि वा गोनिष्कान्तानां यवानामेकविंशतिरात्रं पीत्वा गणान्पश्यति गणाधिपति पश्यति विद्यां पश्यति विद्याधिपति पश्यतीत्याह भगवान्त्रीधायनः ॥२१ इति तृतीयप्रश्ने षष्टोऽध्यायः।

वृतीयप्रश्ने सप्तमोऽध्यायः।

अथ कूष्माण्डहोमविधिवर्णनम्।

अथ कूष्माण्डेर्जुहुयाद्योऽपृत इव मन्येत यथा स्तेनो यथा श्रूणहैवमेष भवति यो योनौ रेतः सिश्वति यद्वाचीन-मेनो भ्रूणहत्यायास्तस्मान्मुच्यत इति ॥१ अंयोनौ रेतः सित्तवाऽन्यत्र स्वप्नादरेपो वा पवित्रकामः ॥२ अमावास्यायां पौर्णमास्यां वा केशश्मश्रुलोमनखानि वापयित्वा ब्रह्मचारिकल्पेन व्रतसुपैति ॥२ संवत्सरं मासं चतुर्विशत्यहं द्वादश रात्रीः पट् तिस्रो वा ॥४ न मांसमरनीयात्र स्त्रियमुपेयात्रोपर्यासीत जुगुप्सेतानृतात्।।४ पयोभक्ष इति प्रथमः करूपः ॥६ यावकं वोपयुञ्जानः कुच्छ्द्वादशरात्रं चरेत्।।७ भिक्षेद्वा तद्विघेषु यवागूं राजन्यो वैश्य आमिक्षाम्।।८ पूर्वाह्वे पाकयज्ञिकधर्मेणाग्निमुपसमाधाय संपरिस्तीर्या-<u>ऽऽग्निमुखास्कृत्वाऽथाऽऽज्याहुतीरुपजुहोति ॥६</u> यहेवा देवहेडनं यद्दीव्यनृणमहं बभूवाऽऽयुष्टे विश्वतो द्धदिति।।१० एतेस्विभिरनुवाकैः प्रत्यृचमाज्यस्य जुहुयात् ॥११ सिँहे व्याघ उत या पृदाकाविति चतस्रः सुवाहुतीः।।१२ अग्नेऽभ्यावर्तिन्नग्ने अङ्गिरः पुनरुजी सह रय्येति चतस्त्रो-Sभ्यावर्तिनीर्हु त्वा समित्पाणिर्यजमानलोकेऽवस्थाय

बैश्वानराय प्रतिवेदयाम इति द्वादशर्चेन सूक्तेनोपतिष्ठते ॥१३ यन्मया मनसा वाचा कृतमेनः कदाचन सर्वस्मा(त्तरमा)न्मेडितो मोग्धि त्वं हि वेत्थ यथातथं स्वाहेति॥१४ समिधमाधाय वरं ददाति ॥१४ जयप्रभृति सिद्धमा घेनुवरप्रदानात् ॥१६ एक एवाग्नी परिचर्य ॥१७ अथाग्न्याघेये ॥१८ यहेवा देवहेडमं यददीव्यन्तृणमहं बभूवाऽऽयुष्टे विश्वतो द्धदिति ॥१६ पूर्णाहुति हुत्वाऽग्निहोत्रमारप्त्यमानो दशहोत्रा हुत्वा दर्शपूर्णमासावारप्यमानश्चतुर्हीत्रा हुत्वा चातुर्मास्यान्या-रप्स्यमानः पञ्चहोत्रा हुत्वा पशुबन्धे षड्ढोत्रा सोमे सप्तहोत्रा ॥२० विज्ञायते च ॥२१ कर्मादिष्वेतेर्जुहुयात्पृतो देवलोकान्समरनुत इति हि ब्राह्मणिमिति हि ब्राह्मणम्।।२२ इति तृतीयप्रश्ने सप्तमोऽध्यायः।

अथ तृतीयप्रश्नेऽष्टमोऽध्यायः । अथ चान्द्रायणकल्पाभिधानवर्णनम् । अथातश्चान्द्रायणस्य कल्पं व्याख्यास्यामः ॥१ शुक्कचतुर्दशीग्रुपवसेत् ॥२

केशश्मश्रुलोमनखानि वापयित्वाऽपि वा श्मश्रूण्येवाहतं वासो वसानः सत्यं ब्रुवन्नावसथमभ्युपेयात् ॥३ तस्मिन्नस्य सकुत्प्रणीतोऽग्निर्रण्योर्निर्मन्थ्यो वा ॥४ ब्रह्मचारी सुहृत्प्रैषायोपकल्पी स्यात् ॥५ हविष्यं च व्रतोपायनीयम् ॥६ अग्निमुपसमाधाय संपरिस्तीर्याऽऽग्निमुखात्कृत्वा पकाज्जुहोति ॥७ अग्नये या तिथिः स्यान्नक्षत्राय सदैवताय ॥८ अत्राह गोरमन्वतेति चान्द्रमसीं पश्वमीं द्यावापृथिवीभ्यां षष्ठीमहोरात्राभ्यां सप्तमीं रौद्रीमष्टमीं सौरीं नवमीं वारणीं दशमीमैनद्रीमेकादशीं वैश्वदेवीं द्वादशीमिति ॥६ अथापराः समामनन्ति दिग्भ्यश्च सदैवताभ्य उरोरन्त-रिक्षाय सदैवताय नवो नवो भवति जायमान इति सौविष्टकृतीं हुत्वाऽथैतद्धविरुच्छिष्टं कंसे वा चमसे वा व्युद्धृत्य हविष्येव्यंञ्जनैरुपसिच्य पञ्चद्श पिण्डान् प्रकृतिस्थान्प्राश्नाति ।।१० प्राणाय त्वेति प्रथमम् ॥११ अपानाय त्वेति द्वितीयम् ॥११ व्यानाय त्वेति तृतीयम् ॥१३ उदानाय त्वेति चतुर्थम् ॥१४ समानाय स्वेति पञ्चमम् ॥१५ यदा चत्वारो द्वाभ्यां पूर्वं यदा त्रयो द्वाभ्यां द्वाभ्यां पूर्वी यदा द्वौ द्वाभ्यां पूर्वं त्रिभिरुत्तरमेकं सर्वैः ॥१६ निग्राभ्याः स्थेति ॥१७

अपः पीरवाऽथाऽऽज्यस्य जुहोति प्राणापान० वाड्यनः० शिरःपाणि० त्वक्चमे० शब्द० पृथिवी० अन्नमयप्राणमय— मनोमयविज्ञानमयानन्द्मया मे शुध्यन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहेति सप्तभिरनुवाकैः ॥१८ जयप्रभृति सिद्धमा धेनुवरप्रदानात्।।१६ सौरीभिरादित्यमुपतिष्ठते चान्द्रमसीभिश्चन्द्रमसम्।।२० अग्ने त्वं सुजागृहीति संविशञ्जपति ॥२१ त्वमग्ने व्रतपा असीति प्रवुद्धः ॥२२ स्त्रीशूद्रैर्नाभिभाषेत ॥२३ मूत्रपुरीषे नावेक्षेत ॥२४ अमेध्यं दृष्टा जपति ॥२५ अनद्धं मनो दरिद्रं चक्षुः सूर्यो ज्यौतिषां श्रेष्ठो दीक्षे मा मा हसीरिति ॥२६ प्रथमायामपरपक्षस्य चतुर्दश प्रासान् ॥२७ एवमेकापचयेनाऽऽमावास्यायाः ॥२८ अमावास्यायां त्रासो न विद्यते ॥२६ प्रथमायां पूर्वपक्षस्यैको ह्रौ हितीयस्याम् ॥३० एवमेकोपचयेनाऽऽपौर्णमास्याः ॥३१ पौर्णमास्यां स्थालीपाकस्य जुहोत्यग्नये या तिथिः रयान्नक्षत्रेभ्यश्च सदैवतेभ्यः ॥३२ पुरस्ताच्छ्रोणाया अभिजितः सदैवतस्य हुत्वा गां ब्राह्मणेभ्यो द्यात् ॥३३ तदेतचान्द्रायणं पिपीलिकामध्यं विषरीतं यवमध्यम् ॥३४ अतोऽन्यतरश्वरित्वा सर्वेभ्यः पातकेभ्यः पापकृच्छुद्धो भवति ॥३४

कामाय कामायैतदाहार्यमित्याचक्षते ॥३६ यं कामं कामयते तमेतेनाऽऽप्नोति ॥३७ एतेन वा ऋषय आत्मानं शोधियत्वा पुरा कर्माण्यसाधयन् ॥ तदेतद्धन्यं पुण्यं पुत्र्यं पौत्र्यं पशव्यमायुष्यं स्वग्यं यशस्यं सार्वकामिकम् ॥३६ नक्षत्राणां सूर्याचन्द्रमसोरेव सायुज्यं सलोकतामाप्नोति य उ चैनद्धीते य उ चैनद्धीते ॥४०

इति तृतीयप्रश्नेऽष्टमोऽध्यायः।

अथ तृतीयप्रश्ने नवमोऽध्यायः। अनश्नत्पारायणविधि व्याख्यानम्।

अथातोऽनश्नत्पारायणविधि व्याख्यास्यामः॥१ ग्रुचिवासाः स्याचीरवासा वा हविष्यमन्नमिच्छेद्पः फलानि वा ॥२

यामात्प्राचीं वोदीचीं वा दिशसुपनिष्क्रम्य गोमयेन गोचर्ममात्रं चतुरस्रं खण्डिलसुपलिप्य प्रोक्ष्य लवण— सुह्लिख्याद्भिरभ्युक्ष्याग्निसुपसमाधाय संपरिस्तीर्येताभ्यो देवताभ्यो जुहुयात् ॥३

अग्नये स्वाहा प्रजापतये स्वाहा सोमाय स्वाहा विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वयंभुवः ऋग्भ्यो यजुर्धः सामभ्योऽथर्वभ्यः श्रद्धारे प्रज्ञाये मेधाये श्रिये हिये सवित्रे सावित्र्ये सद्सस्पतयेऽनुमतये च हुत्वा वेदादिमारभेत सततमधीयीत नान्तरा व्याहरेश्र चान्तरा विरमेत्।।४ अथान्तरा व्याहरेद्थान्तरा विरमेत्त्रीन्प्राणायामानायम्य वृत्तान्तादेवाऽऽरभेत ॥१ अप्रतिमायां यावता कालेन न वेद तावन्तं कालं तद्धीयीत स यदा जानीयादुक्तो यजुष्टः सामत इति ॥६ तद्त्राह्मणं तच्छान्दसं तद्देवतमधीयीत ॥७ द्वादश वेदसंहिता अधीयीत।।८ यदनेनानध्यायेऽघोयीत यद्गुरवः कोपिता यान्यकार्याण भवन्ति ताभिः पुनीते ॥६ शुद्धमस्य पूर्व ब्रह्म भवति ॥१० अत ऊर्ध्व संचयः ॥११ अपरा द्वाद्श वेद्संहिता अधीत्य ताभिक्शनसी छोक-मवाप्नोति ॥१२ अपरा द्वादश वेदसंहिता अधीत्य ताभिर्वृ हस्पतेलंक-मवाप्नोति ॥१३ अपरा द्वादश वेदसंहिता अधीत्य ताभिः प्रजापतेर्छीक-मवाप्नोति॥ १४ अनश्नन्संहितासहस्रमधीयीत ब्रह्मभूतो विरजो ब्रह्म भवति ॥१४ संवत्सरं भैक्षं प्रयुक्षानो दिव्यं चक्षुर्रुभते ॥१६ षण्मासान्यावकभक्षश्चतुरो मासानुदकसक्तुभक्षो द्वौ मासौ

ऽध्यायः] याप्यकर्मणोपेतस्य निष्क्रयार्थं जपादिनिरूपणम् १८६१

फलमक्षो मासमब्भक्षो द्वाद्शरात्रं वा प्राश्निन्ध्रप्र— मन्तर्धीयते ज्ञातीन्पुनाति सप्तावरान्सप्तपूर्वानात्मानं पञ्चद्शं पङ्क्तिं च पुनाति ॥१७ तामेतां देवनिश्रयणीमित्याचक्षते ॥१८ एतया वे देवा देवस्त्रमगच्छन्नृषय श्रुषित्वम् ॥१६ तस्य ह वा एतस्य यज्ञस्य त्रिविध एवाऽऽरम्भकालः प्रातःसवने माध्यंदिने सवने ब्राह्मे वाऽपररात्रे ॥२० तं वा एतं प्रजापतिः सप्तर्षिभ्यः प्रोवाच सप्तर्षयो महाजज्ञवे महाजज्ञुर्बाह्मणेभ्यो ब्राह्मणेभ्यः ॥२१

इति वृतीयप्रश्ने नवमोऽध्यायः।

अथ तृतीयप्रश्ने दशमोऽध्यायः। अथ याप्यकर्मण्योपेतस्य निष्क्रयार्थं जपादिनिरूपणम्।

उक्तो वर्णधर्भश्चाऽऽश्रमधर्मश्च ॥१ अथ खल्वयं पुरुषो याध्येन कर्मणा मिथ्या चरत्ययाज्यं वा याजयत्यप्रतिप्राह्यस्य वा प्रतिगृह्वात्यनाश्यान्नस्य वाऽन्नमश्नात्यचरणीयेन वा चरति तत्र प्रायश्चित्तं कुर्यास कुर्यादिति मीमांसन्ते ॥२ न हि कर्म श्लीयत इति कुर्यादित्येव ॥३ पुनः स्तोमेन यजेत ॥४ पुनः सवनमागान्तीति ॥१ अथाप्युदाहरित ॥६ सर्व पाप्मानं तरित तरित व्रह्महत्यां यो ऽश्वमेधेन यजत इति ॥७
अग्निष्ठुता वाऽभिशस्यमानो यजेतेति ॥८
तस्य निष्क्रयाणि जपस्तपो होम उपवासो दानम् ॥६
उपनिषदो वेदादयो वेदान्ताः सर्वच्छन्दः सु संहिता मधून्य—
घमर्षणमथर्वशिरो रुद्राः पुरुषसूक्तं राजनरौहिणे बृहद्रथंतरे
पुरुषगतिर्महानाम्न्यो महावैराजं महादिवाकीर्त्यं ज्येष्ठ—
साम्नामन्यतमद्व(मं ब)हिष्पवमानः कूष्माण्ड्यः सावित्री
वेति पावनानि ॥१०

उपसन्नयायेन पयोव्रतता शाकभक्षता फलभक्षता मूल-भक्षता प्रसृतयावको हिरण्यप्राशनं घृतप्राशनं सोमपान-मिति मेध्यानि ॥११

सर्वे शिलोचयाः सर्वाः स्रवन्त्यः सरितः पुण्या हृदास्तीर्थान्यृषिनिकेतनानि गोष्ठक्षेत्रपरिष्कन्दा इति देशाः ।।१२
अहिंसा सत्यमस्तैन्यं सवनेषूद्कोपस्पर्शनं गुरुशुश्रूषा
त्रह्मचर्यमधःशयनमेकवस्नताऽनाशक इति तपांसि ।।१३
हिरण्यं गौर्वासोऽश्वो भूमिस्तिला घृतमन्नमिति देयानि ।।१४
संवत्सरः पण्मासाश्चस्वारस्यो द्वावेकश्चतुर्विशत्यहो
द्वादशाहः षडहरूयहोऽहोरात्र एकाह इति कालाः ।।१५
एतान्यवादेशे क्रियेरन् ।।१६

ऽच्यायः] चक्षुःश्रोत्रत्वऽद्याणमनोव्यतिक्रमादिषु प्रायश्चित्तम् १८६३

कृच्छ्रातिक्कुच्छ्रौ चान्द्रायणमिति सर्वप्रायश्चित्तः-सर्वप्रायश्चित्तिः ॥१८

इति तृतीयप्रश्ने दशमोऽध्यायः।

उक्तो वर्णधर्मश्चाऽऽश्रमधर्मश्च ।।१
अथातोऽनश्नत्पारायणविधिम् ।।२
अथातश्चान्द्रायणस्य ।।३ अथा कूष्माण्डेर्जुहुयात् ।।४
अथा कर्मभिरात्मकृतैः ।।१ अथातः पवित्रातिपवित्रस्य ।।६
अथा यदि त्रह्मचार्यत्रयमिव चरेत् ।।७
अथा वानप्रस्मद्वैविष्यम् ।।८ य(अ)थो एतत्पिण्नवर्त्तनीति ।।६
अथा शालीनयायावरचक्रचरधर्मकाङ्क्षिणाम् ।।१०
(इत्तरमेतहर्तते—अशीत्युत्तरशतश्लोकैः
समाप्तोऽयं दशखण्डयुक्तः तृतीयः प्रश्नः ।)
समाप्तोऽयं तृतीयः प्रश्नः ।

अथ चतुर्थः प्रश्नः। तत्र प्रथमोऽध्यायः।

अथ चक्षुःश्रोत्रत्वग्वाणमनोव्यतिक्रमादिषु प्रायश्चित्तम्। प्रायश्चित्तानि वक्ष्यामो नानार्थानि पृथक्पृथक्। तेषु तेषु च दोषेषु गरीयांसि छघूनि च।।१

यदात्र हि भवेद्युक्तं तद्धि तत्रैव निर्दिशेत्। भूयो भूयो गरीयः सु लघुष्वल्पीयसस्तथा (?) ॥२ विधिना शास्त्रदृष्टेन प्राणायामान्समाचरेत्। यद्यपश्चकृतं पापं पद्भ्यां वा यत्कृतं भवेत्।।३ वाहुभ्यां मनसा बाचा श्रोत्रत्वग्द्राणचक्षुषा ॥४ अपि वा चक्षुःश्रोत्रत्वग्द्याणमनोव्यतिक्रमेषु त्रिभिः प्राणायामैः शुध्यति ॥५ शुद्रान्नक्षीगमनभोजनेषु केवलेषु पृथक्पृथक्सप्ताहं सप्त सप्त प्राणायामान्धारयेत् ॥६ अभक्ष्याभोज्यत्पेयान्नाद्यप्राश्तनेषु तथाऽपण्यविक्रयेषु सधुमांसघृततैलक्षारलवणावरानवर्जेषु यचान्यद्धेवं युक्तं द्वादशाहं द्वादश द्वादश प्राणायामान्धारयेत्।।७ पातकपतनीयोपपातकवर्जेषु यज्ञान्यद्प्येवं युक्तमर्धमासं द्वादश द्वादश प्राणायामान्धारयेत् ॥८ पातकपतनीयवर्जेषु यद्यान्यद्प्येवं युक्तं द्वादश द्वादशाहा-न्द्वादश द्वादश प्राणायामान्धारयेत्।।६ पातकवर्जेषु यचान्यद्प्येवं युक्तं द्वाद्शार्धमासान्द्वाद्श द्वादश प्राणायामान्धारयेत्।।१० अथ पातकेषु संवत्सरं द्वादश द्वादश प्राणायामान्धारयेत्।। द्याद्गुणवते कन्यां निप्तकां ब्रह्मचारिणे।

अपि वा गुणहीनाय नोपरुन्ध्याद्रजस्वलाम्।।१२

Sध्याय:] विवाहात्प्राक् कन्यायारजोदर्शने दोषनिरूपणम् १८६४

त्रीणि वर्षाण्यृतुमतीं यः कन्यां न प्रयच्छति। स तुल्यं भ्रूणहत्याये दोषमृच्छत्यसंशयम् ॥१३ न याचते चेदेवं स्याद्याचते चेत्पृथक्पृथक् । एकेकस्मिन्नतौ दोषं पातकं मनुरन्नवीत्।।१४ त्रीणि वर्षाण्यृतुमती काङ्क्षेत पितृशासनम्। ततश्रतुर्थे वर्षे तु विन्देत सदृशं पतिम्। अविद्यमाने सदृशे गुणहीनमपि श्रयेत् ॥१५ बलाचेत्प्रहता कन्या मन्त्रैर्यदि न संस्कृता । अन्यस्मै विधिवहेया यथा कन्या तथैव सा ॥१६ निसृष्टायां हुते वाऽपि यस्यै भर्ता म्रियेत सः। सा चेद्धतयोनिः स्याद्गतप्रत्यागता सती ॥१७ पौनर्भवेन विधिना पुनः संस्कारमहिति ॥१८ त्रीणि वर्षाण्यृतुमतीं यो भार्यां नाधिगच्छति । स तुल्यं भ्रूणहत्याये दोषमृच्छत्यसंशयम् ॥१६ श्रृतुह्मातां तु यो भार्यां संनिधौ नोपगच्छति। पितरस्तस्य तन्मासं तस्मिन्रजसि शेरते ॥२० भृतौ नोपैति यो भार्यामनृतौ यश्च गच्छति। तुल्यमाहुस्तयोदींषमयोनी यश्च सिञ्चति ॥२१ भर्तुः प्रतिनिवेशेन या भार्या स्कन्द्येद्दुम्। तां प्राममध्ये विख्याप्य भ्रूणध्नीं निर्धमेद्गृहात्।।२२ भृतुस्नातां न चेर्गच्छेन्नियतां धर्मचारिणीम्। नियमातिक्रमे तस्य प्राणायामशतं स्मृतम् ॥२३

प्राणायासान्पवित्राणि व्याहृतीः प्रणवं तथा । पवित्रपाणिरासीनो ब्रह्म नैत्या मध्यसेत् ॥२४ आवर्तयेत्सदा युक्तः प्राणायामान्पुनः पुनः । आ केशान्तात्रखावाच तपस्तप्यत उत्तमम् ॥२५ निरोधाजायते वायुर्वायोरप्रिश्च जायते। तापेनाऽऽपोऽधिजायन्ते ततोऽन्तः शुध्यते त्रिभिः ॥२६ योगेनावाप्यते ज्ञानं योगो धर्मस्य लक्षणम्। योगमूला गुणाः सर्वे तस्माद्युक्तः सदा भवेत्।।२७ प्रणवाद्यास्तथा वेदाः प्रणवे पर्यवस्थिताः। प्रणवो व्याहृतयश्चेव नित्यं ब्रह्म सनातनम् ॥२८ प्रणवे नित्ययुक्तस्य व्याहृतीषु च सप्तसु । त्रिपदायां च गायज्यां न भयं विद्यते कचित् ॥२६ सव्याहृतिकां सप्रणवां गायत्रीं शिरसा सह। त्रिः पठेदायत प्राणः प्राणायामः स उच्यते ॥३० सव्याहृतिकाः सप्रणवाः प्राणायामास्तु षोडश । अपि भ्रूणहनं मासात्युनन्त्यहरहर्घु ताः ॥३१ एतदाद्यं तपः श्रेष्टमेतद्वर्मस्य लक्षणम्। सर्वदोषोपघातार्थमेतदेव विशिष्यत एतदेव विशिष्यत इति ॥३२

इति चतुर्थप्रश्ने प्रथमोऽध्यायः।

अथ चतुर्थप्रने द्वितीयोऽध्यायः। अथ पायश्चित्तविधिवर्णनम्।

प्रायश्चित्तानि वक्ष्यामो नानार्थानि पृथकपृथक्। तेषु तेषु च दोषेषु गरीयांसि लघूनि च ॥१ यदात्र हि भवेद्युक्तं तद्धि तत्रैव निर्दिशेत्। भूयो भूयो गरीयःसु लघुष्वल्पीयसस्तथा (१) ॥२ विधिना शाखरहेन प्रायश्चितानि निर्दिशेत्। प्रतिव्रहीष्यमाणस्तु प्रतिगृह्य तथैव च ॥३ ऋचस्तरत्समन्यस्तु चतस्रः परिवर्तयेत्। अभोज्यानां तु सर्वेषामभोज्यात्रस्य भोजने ॥४ ऋग्भिस्तरत्समन्दीयैर्मार्जनं पापशोधनम्। भ्रणहत्याविधिस्वन्यस्तं तु वक्ष्याम्यतः परम्।।५ विधिना येन मुच्यन्ते पतकेभ्योऽपि सर्वशः ॥६ प्रणायामान्पवित्राणि व्याहृतीः प्रणवं तथा। जपेद्घमर्षणं सूक्तं पयसा द्वाद्श क्षपाः ॥७ त्रिरात्रं वायुभक्षो वा क्वित्रवासाः प्छतः शुचिः। प्रतिषिद्धांस्तथाऽऽचारानभ्यस्यापि पुनः पुनः ॥८ वारुणीभिरुपस्थाय सर्वपापैः प्रमुच्यत इति ॥६ अथावकीर्ण्यमावास्यायां निश्यग्निमुपसमाधाय दार्विहोमिकीं परिचेष्टां कृत्वा द्वे आज्याहुती जहोति ॥१० कामावकीणोऽस्म्यवकीणोऽस्मि कामकामाय स्वाहा कामाभिद्रुखोऽस्मि कामकामाय स्वाहेति।।११

हुत्वा प्रयताञ्जिलेः (?) कवातिर्यङ्ङग्निमुपतष्ठेत ॥१२ सं मा सिश्चन्तु मरुतः सिमन्द्रः सं बृहस्पतिः । सं माऽयमग्निः सिश्चत्वायुषा च वलेन चाऽऽयुष्मन्तं करोतु मेति ॥१३

प्रति हास्मै सरुतः प्राणान्द्धाति प्रतीन्द्रो बलं प्रति बृहस्पतिर्ज्ञहावर्चसं प्रत्यग्निरितरत्सर्वं सर्वतनुर्भूत्वा सर्वमायुरेति त्रिरभिमन्त्रयेत त्रिष्या हि देवा इति विज्ञायते ॥१४

योऽपूत इव मन्येत आत्मानमुपपातकैः।
स हुत्वेतेन विधिना सर्वस्मापापात्प्रमुच्यते।।१६
अपि वाऽनाद्यापेयप्रतिषिद्धभोजने दोषवच कर्म
कृत्वाऽभिसंधिपूर्वमनभिसंधिपूर्व शूद्रायां च रेतः
सित्तवाऽयोनौ वाऽिं छङ्गाभिर्वाङ्गाभिश्चोपस्पृश्य
प्रयतो भवति।।१६ अधात्युदाहरित ।।१७
अनाद्यापेयप्रतिषिद्धभोजने विरुद्धधर्माचरिते च कर्मणि।

मतिप्रवृत्तेऽपि च पातकोपमैर्विशुध्यतेऽथापि च सर्वपातकः ॥१८

त्रिरात्रं वाऽप्युपवसंखिरह्नोऽभ्युपेयादपः। प्राणानात्मनि संयम्य त्रिः पठेद्घमर्षणम् ॥१६ यथाऽप्रवमेधावभृथ एवं तन्मनुरत्रवीत्॥२० विज्ञायते च ॥२१

चरणं पिवत्रं विततं पुराणं येन पूतस्तरित दुष्कृतानि । तेन पिवत्रेण शुद्धेन पूता अति पाप्मानमराति तरेम इति ॥

इति चतुर्थप्रश्ने द्वितीयोऽध्यायः।

अथ चतुर्थप्रने तृतीयोऽध्यायः।

प्रायश्चित्तविधिवर्णनम्।

प्रायश्चित्तानि वक्ष्यामो विख्यातानि विशेषतः। समाहितानां युक्तानां प्रमादेषु कर्थं भवेत् ॥१ ॐ पूर्वाभिव्याहृतोभिः सर्वाभिः सर्वपातकेष्त्राचामेत्। यत्त्रथममाचामति तेन वेंदुं प्रीणाति यदुद्वितीयं तेन यजुर्वेदं यत्तृतीयं तेन सामवेदम् ॥४ यत्प्रथमं परिमार्छि तेनाथर्ववेदं यद्द्वितीयं तेनेतिहास-पुराणम् ॥४ यत्सव्यं पाणि प्राक्षति पादौ शिरो हृद्यं नासिके चक्षुषी श्रोत्रे नाभि चोपस्पृशति तेनौषधिवनस्पतयः सर्वाश्च देवताः प्रीणाति ॥४ तस्मादाचमनादेव सर्वस्मात्पापारंप्रमुच्यते ॥६ अष्टौ वा समिध आद्ध्यात्।।७ देवकृतस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा ॥८ मनुष्यकृतस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा ॥६ पितृकृतस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा ॥१० आत्मकृतस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा ॥११ यहिवा च नक्तं चैनश्चक्रम तस्यावयजनमसि स्वाहा ॥१२ यत्स्वपन्तश्च जाप्रतश्चेनश्चकृम तस्यावयजनमसि स्वाहा ॥१३ यद्विद्वांसश्चाविद्वांसश्चेनश्चकृम तस्यावयवजनमसि स्वाहा ॥१४ एनस एनसोऽवयजनमसि स्वाहेति ॥१६ एतैरष्टाभिर्हु त्वा सर्वस्मात्पापात्प्रमुच्यते ॥१६ अथाप्युदाहरिन्त ॥१७ अधमर्षणं देवकृतं ग्रुद्धवत्यस्तरत्समाः । कूष्माण्ड्यः पावमान्यश्च विरजा मृत्युलाङ्गलम् ॥१८ दुर्गा व्याहृतयो रुद्धा महादोषविनाशना इति ॥१६ इति चतुर्थप्रश्ने तृतीयोऽध्यायः।

> अथ चतुर्थप्रश्ने चतुर्थोऽध्यायः। प्रायश्चित्तविधिवर्णनम्।

प्रायश्चित्तानि वक्ष्यामो विख्यातानि विशेषतः।
समाहितानां युक्तानां प्रमादेषु कथं भवेत्।।१
श्रृतं च सत्यं चेत्येतद्घमर्षणं त्रिरन्तर्जले पठन्सर्व-स्मात्पापात्प्रमुच्यते।।२
आऽयं गौः पृश्निरक्रमीदित्येतामृचं त्रिरन्तर्जले
पठन्सर्वस्मात्पापात्प्रमुच्यते।।३
द्रुपदादिव मुमुचान इत्येतामृचं त्रिरन्तर्जले पठन्सर्व-स्मात्पापात्प्रमुच्यते।।४
हंसः शुचिषदित्येतामृचं त्रिरन्तर्जले पठन्सर्वस्मात् पापात्प्रमुच्यते।।४

अपि वा सावित्री गायत्री पच्छोऽधेचेशस्ततः समस्मा—

मित्येतामृचं त्रिरन्तर्जले पठन्सवेस्मात्पापात्प्रगुच्यते ॥६
अपि वा व्याहतीर्व्यस्ताः समस्ताश्चेति त्रिरन्तजले

पठन्सर्वस्मात्पापात्प्रमुच्यते ॥७
अपि वा प्रणवमेव त्रिरन्तर्जले पठन्सर्वस्मात्पापात्प्रमुच्यते ॥

तदेतद्धर्मशास्त्रं नापुत्राय नाशिष्याय नासंवत्सरोषिताय

द्यात् ॥६

सहस्रं दक्षिणा ऋषभैकादशं गुरुप्रसादो वागुरुप्रसादो वा ॥१०

इति चतुर्थप्रश्ने चतुर्थोऽध्यायः।

अथ चतुर्थप्रश्ने पश्चमोऽध्यायः। कृच्छ्रसांतपनादि व्रतविधिवर्णनम्।

अथातः संप्रवक्ष्यामि सामर्ग्यजुरथर्वणाम् । कर्मभिर्येरवाप्नोति क्षिप्रं कामान्मनोगतान् ॥१ जपहोमेष्टियन्त्राद्येः शोधयित्वा स्वविग्रहम् । साधयेत्सर्वकर्माणि नान्यथा सिद्धिमश्नुते ॥२ जपहोमेष्टियन्त्राणि करिष्यन्नादितो द्विजः । शुक्कपुण्यादिनक्षेषु केशश्मश्रूणि वापयेत् ॥३ स्नायात्त्रिषवणं पायादात्मानं क्रोधतोऽनृतात्। स्रोशूद्रैर्नाभिभाषेत ब्रह्मचारी हविर्वतः॥४ गोविप्रपितृदेवेभ्यो नमस्कुर्याह्वा स्वपन्। जपहोमेष्टियन्त्रस्थो दिवास्थानो निशासनः ॥४ प्राजापत्यो भवेत्कुच्छ्रो दिवारात्रावयाचितम्। क्रमशो वायुभक्षश्च द्वादशाई ज्यहं ज्यहम्।।६ अहरेकं तथा नक्तमज्ञातं वायुभक्षणम्। त्रिवृदेष परावृत्तो वालानां कुञ्छू उच्यते ॥७ एकैकं प्रासमश्नीयात्पूर्वोक्तेन ज्यहं ज्यहम्। वायुभक्षरत्रयहं चान्यद्तिकृच्छ्रः स उच्यते।।८ अम्बुभक्षस्त्र्यहानेतान्वायुभक्षस्ततः परम्। कुच्छ्रातिकुच्छ्रस्तृतीयस्तु विज्ञेयः सोऽतिपावनः ॥६ ज्यहं ज्यहं पिबेदुष्णं पयः सर्पिः कुशोदकम्। वायुमक्षस्त्रयहं चान्यत्तप्तकुच्छ्ः स उच्यते ॥१० गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दिध सिप: कुशोदकम्। एकरात्रोपवासश्च कुच्छ्रः सांतपनः स्पृतः ॥११ गायत्र्याऽऽदाय गोसूत्रं गन्धद्वारेति गोमयम्। आप्यायस्वेति च क्षीरं दिधिकाव्णेति वै दिधि ॥१२ शुक्रमसि ज्योतिरसीत्याज्यं देवस्य त्वेति कुशोदकम्। गोमूत्रभागस्तस्यार्धं शकुत्क्षीरस्य तत्त्रयम् ॥१३ द्वयं दृष्नो घृतस्यैक एकश्च कुरावारिणः! एवं सांतपनः कुच्छूः श्वपाकमपि शोधयेत्।।१४

गोमूत्रं गोमयं चैव क्षीरं द्घि घृतं तथा। पञ्चरात्रं तदाहारः पञ्चगव्येन शुःयति।।१५ यतात्मनोऽप्रमत्तस्य द्वादशाहमभोजनम्। पराको नाम कुच्छ्रोऽयं सर्वपापप्रणाशनम्।।१६ गोमूत्रादिभिरभ्यस्तमेकैकं तं त्रिसप्तकम्। महासांतपनं कुच्छूं वदन्ति ब्रह्मवादिनः ॥१७ एकवृद्धया सिते पिण्डानेकहान्याऽसिते ततः। पक्षयोहपवासौ हौ तद्धि चान्द्रायणं स्मृतम्।।१८ चतुरः प्रातरश्नीयात्पिण्डान्विप्रः समाहितः। चतुरोऽस्तमिते सूयं शिद्युचान्द्रायणं चरेत्।।१६ अष्टावष्टौ मासमेकं पिण्डान्मध्यं दिने स्थिते। नियतात्मा हविष्यस्य यतिचान्द्रायणं चरेत्।।२० यथा कथंचित्पिण्डानां द्विजस्तिस्रस्वशीतयः। मासेनाश्ननहिबद्यस्य चन्द्रस्यति सलोकताम्।।२१ यथोद्यंश्चन्द्रमा हन्ति जगतस्तमसो भयम्। एवं पापाइयं हन्ति द्विजश्चान्द्रायणं चरन्।।२२ कणपिण्याकतकाणि यवाचामोऽनिलाशनः। एकत्रिपञ्च सप्तेति पापव्नोऽयं तुलापुमान् ॥२३ यावकः सप्तरात्रेण वृज्ञिनं हन्ति देहिनाम्। सप्तरात्रोपवासो वा दृष्टमेतन्मनीषिभिः ॥२४ पौषभाद्रपद्ज्येष्ठा आद्रीकाशातपाश्रयात्। त्रीब्छुक्कान्सुच्यते पापात्पतनीयादते द्विजः ॥२४

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दिध सर्पिः कुशोदकम्। यवाचांमेन संयुक्तो ब्रह्मकूचीऽतिपावनः ॥२६ अमावास्यां निराहारः पौर्णमास्यां तिलाशनः। शुक्रुकुष्णकृतात्पापानमुच्यतेऽव्दस्य पर्वभिः।।२७ भैक्षाहारोऽग्निहोत्रिभ्यो मासेनैकेन शुष्यति । यायावरवनस्थेभ्यो दशभिः पञ्चभिर्दिनैः ॥२८ एकाहधनिनोऽन्नेन दिनेनैकेन शुध्यति । कापोतवृत्तिनिष्ठस्य पीत्वाऽपः शुध्यते त्रिभिः॥२६ ष्मग्यज्ञः सामवेदानां वेद्स्यान्यतमस्य वा । पारायणं त्रिरभ्यस्येदनश्नन्सोऽतिपावनः ॥३० अथ चेत्वरते कर्तुं दिवसे मारुताशनः। रात्री जले स्थितो व्युष्टः प्राजापत्येन तत्समम् ॥३१ गायज्यष्टसहस्रं तु जपं कृत्वोत्थिते रवी। मुच्यते सर्वपापेभ्यो यदि न भ्रूणहा भवेत्।।३२ योऽत्रदः सत्यवादी च भूतेषु ऋपया स्थितः। पूर्वोक्तयन्त्रशुद्धे भ्यः सर्वेभ्यः सोऽतिरिच्यते ॥३३

अथ चतुर्थप्रश्ने पश्चमोऽध्यायः।

अथ चतुर्थप्रश्ने षष्टोऽध्यायः। अथ मृगारेष्टिः पनित्रेष्टिश्च वर्णनम्। समाधुच्छन्दसा रुद्रा गायत्री प्रणवान्विता । सप्त व्याहृतश्चेव जप्याः पापविनाशनाः ॥१ मृगारेष्टिः पवित्रेष्टिश्चिह्विः पावमान्यपि ॥२ इष्टयः पापनाशिन्यो वैश्वानर्या समन्विताः। इदं चैवापरं गुह्यमुच्यमानं निबोयत ॥३ मुच्यते सर्वपापेभ्यो महतः पातकाहते । पवित्रैमर्जिनं कुर्वन्स्द्रैकादशिकां जपन् ॥४ पावित्राणि घृतैर्जुह्नन्प्रयच्छन्हेमगोतिलान्। योऽश्नीयाद्यावकं पकं गोमूत्रे सशकुद्रसे। सद्धिक्षीरसर्पिष्के मुच्यते सोंऽहसः क्षणात् ॥४ प्रसृतो यश्च शूद्रायां येनागम्या च लङ्किता । सप्तरात्रात्प्रमुच्येते विधिनैतेन तावुभौ ॥६ रेतोमूत्रपुरीषाणां प्राशनेऽभोज्यभोजने। पर्याधानेज्ययोरेतत्परिवित्ते च भेषजम्।। अपातकानि कर्माणि कृत्वैव सुबहून्यपि। मुच्यते सर्वपापेभ्य इत्येतद्वचनं स ताम् ॥८ मन्त्रमार्गप्रमाणं तु विधानं समुदोरितम्। भारद्वाजादयो येन ब्रह्मणः साम्य(सम)तां गताः ॥६ प्रसन्नहृदयो विप्रः प्रयोगादस्य कर्मणः। कामांस्तांस्तानवाप्नीति ये ये कामा हृदि स्थिताः॥१० इति चतुर्थप्रश्ने षष्ठोऽध्यायः।

अथ चतुर्थपूरने सप्तमोऽध्यायः। अथ वेद पवित्राणामभिधानवर्णनम् निवृत्तः पापकर्मभ्यः प्रवृत्तः पुण्यकर्मसु । यो वित्रस्तस्य सिध्यन्ति विना यन्त्रैरपि क्रियाः ॥१ ब्राह्मणा ऋजवस्तस्माद्यदिच्छन्ति चेतसा। तत्तदासादयन्याशु संशुद्धा ऋजुकर्मभिः॥२ एवमेतानि यन्त्राणि तावत्कार्याणि धीमता। कालेन यावतोपैति विप्रहः शुद्धिमात्मनः ॥३ एभिर्यन्त्रेविशुद्धात्मा त्रिरात्रोपोषितस्ततः। तदारभेत येनधिं कर्मणा प्राप्तुमिच्छति ॥४ क्षापित्रं सहस्राक्षो मृगारांहोमुचौ गणौ। पावमानश्च कृष्माण्ड्यो वैश्वानर्य ऋचश्च याः ॥५ घृतीदनेन ता जुह्बत्सप्ताहं सवनत्रयम्। मीनव्रतो हविष्याशी निगृहीतेन्द्रिय ।।६ सिंहे म इत्यपां पूर्णे पात्रेऽवेक्ष्य चतुष्पथे। मुच्यते सर्वपापेभ्यो महतः पातकादपि ॥७ वृद्धत्वे यौवने बाल्ये यः कृतः पापसंचयः। पूर्वजन्मसु वाऽज्ञातस्तस्मादपि विमुच्यते ॥८ भोजयित्वा द्विजानन्ते पायसेन सुसर्पिषा । गोमूमितिलहेमानि भुक्तवद्भ्यः प्रदाय च ॥१ वित्रो भवति पूतात्मा निर्दग्धवृजिनेन्धनः। काम्यानां कर्मणां योग्यस्तथाऽऽधानादिकर्मणाम् ॥१० ँइति चतुर्थप्रश्ने सप्तमोऽध्यायः।

ऽध्यायः] गणहोसफलमेतंद्ध्यापनादौ फलनिरूपणश्व

अथ चतुर्थप्रश्नेऽष्टमोऽध्यायः। अथ गणहोमफलमेतद्ध्यापनादौ फलनिरूपणञ्च। अतिलोभात्रमादाद्वा यः करोति क्रियामिमाम्। अन्यस्य सो ऽहसाऽऽविष्टो गरगीरिव सीदति ॥१ आचार्यस्य पितुर्मातुरात्मनश्च क्रियामिमाम्। कुर्वन्भात्यक्विद्विप्रः सा कार्येषामतः क्रिया ॥२ क एतेन सहस्राक्षं पवित्रेणाकरोच्छुचिम्। अग्नि वायुं रविं सोमं यमादींश्च सुरेश्वरान् ॥३ यर्तिकचित्पुण्यनामेह त्रिषु छोकेषु विश्रुतम्। विप्रादि तत्क्रतं केन पवित्रक्रिययाऽनया ॥४ प्राजापत्यसिदं गुद्धं पापध्नं प्रथमोद्भवम्। समुत्पन्नान्यतः पश्चात्पवित्राणि सहस्रशः ॥४ योऽन्दायनतुंपक्षाहाञ्जुहोत्यष्टौ गणानिमान् । पुनाति चाऽऽत्मनो वंश्यान्दश पूर्वान्दशापरान् ॥६ ज्ञायते चामरेर्चुंस्थैः पुण्यकर्मेति भूस्थितः। देववन्मोदते भूयः स्वर्गलोकेऽपि पुण्यकृत्।।७ एतानष्टी गणान्होतुं न शक्तोति यदि द्विजः। एकोऽपि तेन होतव्यो रजस्तेनास्य नश्यति ॥८ सूनवो यस्य शिष्या वा जुह्नत्यष्टी गणानिमान्। अध्यापनपरिक्रीतैरंहसः सोऽपि मुच्यते ॥६ धनेनापि परिक्रीतैरात्मपापजिघांसया। हावनीया द्यशक्तेन नावसाद्यः शरीरघृक्।।१०

धनस्य क्रियते त्यागः कर्मणां सुकृतामि ।
पुंसोऽनृणस्य पापस्य विसोक्षः क्रियते कचित् ॥११
मुक्तो यो विधिनैतेन सर्वपापाणीसागरात् ।
आत्मानं मन्यते गुद्धं समर्थं कर्मसाधने ॥१२
सर्वपापाणीमुक्तात्मा क्रिया आरभते तु याः ।
अथत्नेनैव ताः सिद्धिं यान्ति गुद्धशरीरिणः ॥१३
प्राजापत्यमिदं पुण्यमृषीणां समुदीरितम् ।
इममध्यापयेन्नित्यं धारयेच्छृणुतेऽपि वा ॥१४
मुच्यते सर्वपापेभ्यो ब्रह्मछोके महीयते ।
यान्सिसाधियपुर्मन्त्रान्द्वादशाहानि ताञ्जपेत् ॥१४
घृतेन पयसा दध्ना प्राश्य निश्योदनं सकृत् ।
दशवारं तथा होमः सर्पिषा सवनत्रयम् ॥१६
पूर्वसेवा भवेदेषा मन्त्राणां कर्मसाधने ।
मन्त्राणां कमसाधन इति ॥१७

इति चतुर्थप्रश्नेऽष्टमोऽध्यायः।

अतिलोभात्त्रमादाद्वा ।।१ निवृत्तः पापकर्मभ्यः ।।२ समाधुच्छन्दसा रुद्राः ।।३ अथातः संप्रवक्ष्यामि ।।४ प्रायश्चित्तानि वक्ष्यामः ॥६ प्रायश्चित्तानि वक्ष्यामः ॥६ प्रायश्चित्तानि वक्ष्यामः ॥८

इति चतुर्थः प्रश्नः ॥ समाप्ताचेयं वौधायनस्मृतिः।

समाप्तश्चायं धर्मशास्त्रस्य (स्मृतिसन्दर्भस्य)
नृतीयोभागः ।
प्रत्य परिच्याः ।
प्रत्य परिच्याः ।

